हिन्दी के सीता-निर्वासन काव्य
तुलनात्मक अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी की
पी-एच0डी0 उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2002

शोध निर्देशक
डॉ0 ज्ञान प्रकाश तिवारी
रीडर, हिन्दी-विभाग
पं0 जे0एन0 महाविद्यालय, बाँदा

शोधार्थिनी
ममता पाण्डेय

शोध केन्द्र
पं0 जवाहर लाल नेहरु पी0जी0 कालेज, बाँदा

डॉ० ज्ञान प्रकाश तिवारी
रीडर, हिन्दी-विभाग
पं० जे०एन० महाविद्यालय, बाँदा

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री ममता पाण्डेय ने मेरे निर्देशन में हिन्दी के "सीता निर्वासन काव्य-तुलनात्मक अनुशीलन", पी-एच०डी० उपाधि हेतु शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। विश्वविद्यालीय परिनियमावली में वर्णित प्रावधान के अनुरूप इन्होंने 200 (दो सौ) दिनों में उपस्थित होकर यह शोध प्रबन्ध तैयार किया है। यह इनकी मौलिक रचना है।

डॉ० ज्ञान प्रकाश तिवारी
रीडर, हिन्दी-विभाग
पं०जे० एन० महाविद्यालय,
बाँदा

प्राक्कथन्

अनन्त हरि की अनन्त कथा का गायन श्रवण एवं रसास्वादन कवि कथावाचक साधु सन्त सह्रदय मर्मज्ञ रसिक अनन्त काल से करते चले आ रहे है। रामायण और महाभारत ऐसे प्राक्तन काव्य ग्रन्थ है, जो भारतीय संस्कृति के केन्द्र बिन्दु में है। रामकथा में आदर्श मनोरंजन, मर्यादा, लोकरंक्षण का भाव प्रबल रूप से अन्तर्निहित है। अतः कवियों ने युग परम्परा, रूचि प्रवृत्ति के अनुरूप इस कथा का गायन किया है।

सीता निर्वासिन की कथा वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड में है। जिसके विकास में पर्याप्त विवाद है, कि यह अंश प्रक्षिप्त है। किन्तु रामकथाकारों ने इस कथा को परम्परा के निर्वाह अथवा आधुनिक युग जीवन के विवृत्त के लिये इसका चयन किया है। एक नारी जो पति के वनवास के समय सारा सुख वैभव का परित्याग कर जंगलों में उसके सामीप्य हेतु खाक छानती रही सुख के अवसर पर पति द्वारा पुनः निर्वासिता बनाई गई जिसके मूल में चरित्र लाक्षन था। आधुनिक मनोविज्ञान के विकास और नारी अधिकारों के स्वरों के मुखरित होने पर सीता के चरित्र में अपने अस्मिता के रक्षा के लिये जो चिन्तन सम्बन्धी गुण व्यक्त हुये उनसे मैं बहुत उद्वेलित और व्यथित हुई मुझे दिशा मिली की पुरूष सत्तात्मक समाज में नारी को कहाँ और कैसी-कैसी बलि देनी पड़ती है। वैयक्तिक रूचि के कारण ही मैने सीता निर्वासन सम्बन्धी हिन्दी रामकाव्यों का तुलनात्मक अध्ययन वाल्मीकि रामायण एवं उत्तर रामचरित के विशेष सन्दर्भ में किया है मेरे इस प्रबन्ध को **डॉ. वेद प्रकाश द्विवेदी** कालेज अतर्रा जो उस समय विश्वविद्यालय की पाठ्य क्रम समिति के संयोजक भी थे ने अपना आर्शीर्वाद देकर पूर्ण करने में मेरी सहायता भी की है मैने इस शोध प्रबन्ध को सात अध्यायों में विभक्त किया है।

प्रथम अध्याय रामकथा के स्वरूप विकास एवं सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों की सूची से सम्बन्धित है। इसमें कहा गया है। कि वाल्मीकि रामायण से लेकर महाभारत संघिताएं, उपनिषद, आरण्यक, विभिन्न पुराण, संस्कृत के ललित श्रेण्यकाव्यों महाकाव्य, खण्डकाव्य, श्लेषकाव्य, विलोमकाव्य, चम्पूकाव्य एवं नाट्य विधाओं में रामकथा के स्वरूप का विकास संस्कृत के अतिरिक्त, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी के मध्य आधुनिक काल में प्रमुख रामकाव्यों की सूची एवं कथा की विशेषताएं दी गई है। इसी पृष्ठभूमि में वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में दी गई सीता निर्वासन की कथा भवभूति के उत्तर रामचरित में कथा का विकास आनन्द रामायण में सामप्रदायिक आग्रह के कारण सीता निर्वासन के कारणों में रजक प्रशंग लोकापवाद, आश्रम दर्शन इत्यादि की चर्चा की गई है।

द्वितीय अध्याय में हिन्दी के आधुनिक काल में प्राप्त एतद् विषयक प्रमुख काव्यों की कथावस्तु प्राशंगिक एवं आधिकारिक कथा का विवेचन कथा के मूल स्त्रोत एवं उसमें मौलिक उदभावनाओं का विश्लेषण है।

इन काव्यों का चयन के मूल में आधुनिक युगीन साहित्यक प्रवृत्तियां रही है। द्विवेदी युगीन, छायावादी युगीन, एवं परवर्ती काल के अनुरूप लिखे गए थे काव्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रत्येक काव्य की कथावस्तु देकर वाल्मीकि और उत्तररामचरित, के साथ उसकी तुलना की गई है। अन्त में सीता निर्वासन के

प्रारम्भिक अंश लोकापवाद से लेकर कथा के समापन तक प्रमुख घटनाओं का विश्लेषण और उसकी महत्ता निरूपित की गई है। देखा ये गया है कि सीमित मौलिक घटनाओं के साथ ही कवियों ने अपनी प्रतिभा का उपयोग कथा के विकास राम के अन्तद्वन्द्व सीता का विद्रोह चित्रित करने मे किया है।

तृतीय अध्याय पात्रों के चरित्र चित्रण से सम्बन्धित है इसके प्रारम्भ में प्राक्तन आचार्यों द्वारा वर्णित नायक, नायिका प्रतिनायिका, स्वरूप चित्रण के साथ आधुनिक युगीन पात्र प्रतिमान योजना चरित्र व्यक्तित्व विकास की आधुनिक अवधारणाओं की चर्चा कर आलोच्य काव्य में प्रयुक्त पात्रों का उल्लेख कथा, लिंग, प्रतीक, वर्गीय रूपों की दृष्टि से वर्गीकरण कर प्रमुख और गौण पात्रों का चरित्र चित्रण प्रस्तुत किया गया है। इस चरित्र चित्रण के मूल में कथा पात्र का आन्तरिक वाह व्यक्तित्व चिन्तन वैयक्तिक गुण दोषों का उल्लेख कर उसके विकास की सम्भावनाएं प्रस्तुत की गई है। इस दृष्टि से राम सीता, लक्ष्मण, अन्य पात्रों में भरत लवकुश वाल्मीकि तथा राम माताएं है पुरूष रूप में पिता पुत्र भाई सेवक तथा स्त्री रूप में पत्नी प्रेमिका, वधू, बहन, सखी, सेविका, भाभी रूपों की चर्चा की गई है। साथ ही पात्रों में आधुनिक मनोविज्ञान सम्मत उद्‌भुत सिद्धान्तों के अनुरूप राम सीता आदि के मानसिक संवेगो **इड, इगो, सुपर, इगो** जन्य अन्तर्द्वन्द्व का निरूपण हुआ है। अन्त में नारी के आधुनिक अस्मिता युक्त रूप की विशिष्ट चर्चा की गई है। देखा गया है कि द्विवेदी काल में लिखे गए काव्यों में नारी की सजगता तो है किन्तु स्वर दबा हुआ है। प्रगतिवादी काल में लिखे गए काव्यों में सीता को शोषिता एवं प्रणय वंचिता बताया गया है किन्तु अधिकार रक्षा का भाव नही। परिवर्तीकाल में विशेष रूप से अग्निलीक में सीता के अस्तित्व बोध की प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक भित्ति पर आधारित उसके चरित्र का प्रभामण्डल कितना उज्जवल है कि उनके तिरोभाव के बाद इस विद्रोह की आग को लेकर राम अपने जीवन की मशाल जलाकर तेजोद्रप्त होते है संभवतः नारी चरित्र के विकास की यह अन्तिम सीमा है।

चतुर्थ अध्याय रसभिव्यंजन से सम्बन्धित है प्रारम्भ में रस की महत्त्वता संक्षेप में विभाव, अनुभाव, संचारी भावों की चर्चा कर अंगीरस के रूप में करूण विप्रलम्भ की चर्चा की गई है। आलोच्य काव्यो की रसानुसार सैद्धान्तिक विश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि करूण रस को अंगी रूप में प्रयुक्त कर इन कवियों ने श्रंगार, वीर, अदभुत, रौद्र, भयानक, और यत्र-तत्र हास्य रस का प्रयोग किया है। करूण रस के मूल में भवभूत का उत्तर रामचरित रहा है। इन कवियों ने इस हेतु ऐसी घटनाओं का चयन किया है। पात्र के कायिक, वाचिक, सात्विक, चेष्टाओं के साथ चिन्ता, उद्वेग, अमर्ष, हर्ष जड़ता, असूया, श्रम, प्रणाय, उन्माद, इत्यादि संचारी भावों के उल्लेख से करूण रस की मार्मिक निष्पत्ति की है। संयोग एवं वियोग श्रंगार के कम ही स्थल प्राप्त होते है। लवकुश युद्र के समय वीर, भयानक, रौद्र रसों का अच्छा परिपाक हुआ है।

पंचम अध्याय में सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों के शिल्प विधान की चर्चा है। इस हेतु काव्यों में प्राप्त तत्सम, तद्‌भव, देशज, स्वनिर्मित शब्द विदेशज आदि का उल्लेख कर कवियों के शब्द भण्डार की विशिष्टता का उल्लेख है। संवाद योजना, लोकोक्तियां एवं मुहावरों से चमत्कार में अविवृद्वि शब्द शक्तियों द्वारा अर्थ चमत्कार एवं प्रतीयमान अर्थ की निष्पत्ति का वर्णन है। साथ मे इन काव्यों में प्रयुक्त शब्दालंकार और अर्थालंकार के उदाहरण देकर कहा गया है कि अनुप्रास, वक्रोक्ति, उपमा, रूपक, सन्देह, भ्रान्तिमान, प्रतीप,

व्यतिरेक, अर्थान्तरन्यास, निदर्शना, दृष्टान्त आदि अलंकार का सहज स्वाभाविक प्रयोग अभिव्यंजना में सहायक हुआ है। रसाभिव्यंजना के लिये प्रयुक्त ओज, प्रशाद, माधुर्य गुणों के उदाहरण भी प्रस्तुत किये गये है। छन्द की दृष्टि से आलोच्य काव्य बहुआयामी है। इसमें संस्कृत के वर्णवृत्त हिन्दी के मात्रिक छंद एवं आधुनिक युग के अनुकूल मुक्त छंद लय बद्ध एवं मुक्त रूप में प्रयोग किया है। कवियों ने इनके प्रयोग में ये ध्यान रखा है कि प्रवाह मयता में ये छन्द बाधक न सिद्ध हो। लयात्मकता के आग्रह के कारण कुछ नवीन छंदो का भी प्रयोग हुआ है। छंद बद्ध रचनाओं में वैदेही वनवास, अरूण रामायण, एवं मुक्त छंदो की दृष्टि से प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन अग्निलीक प्रमुख काव्य है काव्यों में अर्थ छवियां, रसिकों के चक्षुसु प्रत्यक्षीकरण हेतु प्रचलित नया मापदण्ड विम्ब विधान की दृष्टि से इन काव्यों की समीक्षा की गई है। कवियों ने पार्थिव आकस्मिक वस्तुओं के सहज गतिशील अलंकृत विम्बों को उन्मुक्त प्रयोग किया है। चाक्षुसु, स्पर्श, गंध, ध्वनि, एवं आस्वाद परक बिम्बों का उपयोग कवियों ने अभिव्यंजना के रूप में किया है। निष्कर्ष रूप में लिखा गया है कि सीता निर्वासन सम्बन्धी कुछ काव्यों की भाषा द्विवेदी की भाषा द्विवेदी युगीन भावधारा के अनुरूप है जिसमें वैदेही वनवास, लवकुश युद्व, रामराज्य प्रमुख है। छायावादी शिल्प विधान से प्रभावित काव्य प्रवाद पर्व, एवं सीता निर्वासन है। एवं आधुनिक कविता और उससे मिश्रित काव्य शिल्प के रूप में अग्निलीक का नाम लिया जा सकता है। इनका शिल्प विधान प्रौढ़ परिमार्जित है।

छठवें अध्याय आलोच्य काव्यों के सांस्कृतिक निरूपण से सम्बन्धित है प्रारम्भ में संस्कृति की परिभाषा सभ्यता से उसका अन्तर निरूपित कर सांस्कृतिक तत्वों की अवधारणा निश्चित की गई है। इस प्रकार सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में पारिवारिक महत्त्व पारिवारिक सम्बन्ध, संयुक्त परिवार और उसके स्वरूप पति पत्नी, भाभी, देवर, सास, वधू, माता, पुत्र एवं पारिवारिक मुखियां के स्वरूप की चर्चा की गई है। इसी प्रकार राजनीतिक व्यवस्था, उत्तराधिकार का स्वरूप, राज्याभिषेक, राजा के गुण एवं कर्तव्य मंत्रिमंडल न्याय एवं दण्ड व्यवस्था युद्व इत्यादि की चर्चा कर देखा गया है, कि ये काव्य सीमित आकार के होते हुये भी सांस्कृतिक तत्वों के उल्लेख में अत्यन्त सजल है।

अन्तिम अध्याय में उपसंहार का है जिसमें कथा, पात्र, नूतन घटनाओं का चयन रसाभिव्यंजन प्रणाली एवं शिल्प विधान की दृष्टि से आलोच्य काव्य ग्रन्थों की महत्त्वता पूर्व परम्परा को प्रदेय रूप में ग्रहण कर भविष्य विस्तार की सीमा और सम्भावनाओं पर प्रकाश डाला गया है।

यह शोध प्रबन्ध **डॉ. ज्ञान प्रकाश तिवारी** रीडर हिन्दी विभाग पं. जवाहरलाल नेहरू बांदा के कुशल निर्देशन में लिखा गया है। अतः शोध कर्त्री हृदय से उनके प्रति आभारी है। उनका परामर्श शोध कर्त्री की दृष्टि विस्तार में सहायक हुआ है। कथा एवं काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तों का सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक ज्ञान एवं शोध प्रविधि के रूप में सफल प्रयोग शोध कर्त्री को **डॉ. वेद प्रकाश द्विवेदी** अध्ययन एवं रीडर हिन्दी विभाग अतर्रा कालेज, अतर्रा से प्राप्त हुआ है। शोध प्रबन्ध के लेखन के आरम्भ से अन्त तक उनके उपादेय सहयोग का पाथेय के रूप में मुझे सहज ही प्राप्त हुआ है इस हेतु शोधार्थी किन शब्दों का प्रयोग कर अपना आभार प्रकट करे, समझ में नहीं आ रहा है। **श्री मती अनुराधा द्विवेदी** का स्नेहमयी सहयोग अपने पति **डा. वेद प्रकाश**

द्विवेदी के साथ निःस्वार्थ एवं निष्कपट भाव से अनवरत प्राप्त होता रहा है। उनके औदार्य के प्रति मै बहुत उपकृत हूं।

मैं अपनी आदरणीया माता जी के स्नेहिल स्नेह का आभार प्रकट करना चाहती हूं, जिनके संरक्षण में एवं ममता के विशाल वट वृक्ष के प्राश्रय में इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण किया है। श्रद्धेय माता जी का सहयोग अकथनीय रहा है एवं आरम्भ से लेकर समापन तक अनवरत प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन प्राप्त होता रहा है। मेरा यह शोध प्रबन्ध आदरणीय माता **श्रीमती कमला पाण्डेय** के चरणों में सादर समर्पित करते हुए मै हृदय से उनका आभार प्रकट करती हूं। मैं अपने आदरणीय पिता जी **श्री भगवान दीन पाण्डेय** का जो पग-पग में अपना प्रोत्साहन और संरक्षण देते रहे है। शोध प्रबन्ध में प्रयुक्त सामग्री की व्यवस्था हेतु की गई यात्राओं में अपना अनिर्वचनीय संरक्षण प्रदान किया है।

मेरा यह शोध प्रबन्ध **श्री राजा देवेन्द्र नाथ मिश्र** व **श्रीमती पूनम मिश्रा** के अपरिमित सहयोग एवं सानिध्य में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक प्रयुक्त सहायक सामग्री की उपलब्धता उनके अथक परिश्रम से ही सम्भव हुयी है उनके इस सहयोग का मै आभार प्रकट करती हूं। मै हृदय से आभार अपने बड़े भाई **श्री लखन प्रसाद पाण्डेय** का प्रकट करती हूं जिन्होने समय-समय पर मुझे सहयोग दिया। आभार प्रकट करते हुए मेरी लेखनी यहां एक पल के लिए रुक सी रही है जब मुझे अपने स्व.पति **श्री श्यामदत्त तिवारी** का स्मरण होता है हर क्षण जिन्होने मेरे मानस पटल पर विद्यमान रहकर मुझे सतत् प्रेरणा दी है। एवं अपने रागात्मक सम्बन्धों से प्रतिपल अग्रसर होने का पथप्रसस्त करते रहें हैं।

मेरे परमआदरणीय मामा **श्री रुद्रप्रसाद त्रिपाठी** प्राचार्य सेवासदन महाविद्यालय बुरहानपुर मध्यप्रदेश एवं प्रो. **श्री चन्द्रशेखर त्रिपाठी** सेवासदन महाविद्यायल बुरहानपुर का मै आभार प्रकट करती हूं जिनका कुशल मार्ग दर्शन मुझे प्राप्त हुआ। मेरे छोटे मामा **श्री कृष्ण चन्द्र त्रिपाठी** एड. उच्चन्यायालय इलाहाबाद की मै आभारी हुं जिन्होने पग-पग पर मुझे उत्साहित करते हुए अपना निःस्वार्थ सहयोग दिया। सेवासदन महाविद्यालय बुरहानपुर के हिन्दी विभागाध्यक्ष **डा. बीरेन्द्र स्वर्णकार** 'निर्झर' की हृदय से कृतज्ञ हूं जिन्होने शोध की प्रेरणा दी एवं हर संभव निःस्वार्थ सहयोग दिया है। पं.जे.एन. महाविद्यालय के रीडर हिन्दी विभाग **डा. चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित** जिनका समय-समय पर सम्बल एवं प्रोत्साहन मिलता रहा है। उनका मै हृदय से आभार प्रकट करती हूं।

कु. नेहा मेरे अमिट आशीषों की अधिकारी है जिसने पूरे उत्साह के साथ इस शोध प्रबन्ध की पाण्डुलिपि को टाइप करने में पूर्ण रुचि प्रर्दशित करते हुए अभिष्ट कार्य को समय सीमा के अन्दर पूर्ण किया मै उनके उज्जवल भविष्य की कामना करती हूं। मै दीक्षित कम्प्यूटर प्रशिक्षण संस्थान के प्रबन्धक **श्री अरुण दीक्षित** का हृदय से आभार प्रकट करती हूं। जिन्होने मेरे इस अभिष्ट कार्य को सम्पन्न करने में अपना सम्पूर्ण सहयोग प्रदान किया है। टाइपिंग के इस कार्य में **चि.रुपेश कुमार** का अभिष्ट सहयोग रहा है। मै उनका आभार प्रकट करते हुए उनके उज्जवल भविष्य की कामना करती हूं।

मेरे द्वारा लिखा गया यह शोध प्रबन्ध सुचारु रुप से पूर्ण करने में सहायक उन अनाम सहयोगियों का

मै हृदय से आभार प्रकट करती हूं। जिनका नाम प्रत्यक्ष रुप से उल्लिखित करना सम्भव नही हो सका है।

अन्त में इस ग्रन्थ के लिखने में जिन विद्वानों और मनीषियों के ग्रन्थो वाचिक अनुभवों का उपयोग किया है उनका उल्लेख यथा स्थान किया गया है। प्रमादि या त्रुटि वश जिनका नामोल्लेख नही हो सका है लेखिका हृदय से उनकी आभारी है।

शोधकर्त्री

ममता पाण्डेय

ममता पाण्डेय

विषयानुक्रमणिका

हिन्दी के सीता निर्वासन काव्य - तुलनात्मक अनुशीलन

अध्याय-प्रथम

रामकथा एवं सीता-निर्वासन की कथा परम्परा

- संस्कृत
- प्राकृत
- अपभ्रंश

पृष्ठ- 1-29

अध्याय-1

रामकथा एवं सीता निर्वासन की कथा परम्परा :-

मानव अपनी जीवन्त एवं रागात्मक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति आनादिकाल से करता चला आ रहा है। उसने प्रकृति और समाज में जिन महनीय व्यक्ति य तत्वों का साक्षात्कार किया उसकी अभिव्यक्ति विभिन्न काव्य रूपों के माध्यम से करता रहा है। रामचरित ऐसा ही कथा माध्यम है जिसमें युगानुरूप परिस्थिति सापेक्ष सांस्कृतिक तत्वों का निदर्शन कवियों ने किया है। क्योंकि रामचरित में जितनी उदात्तता, आदर्शमयता और गरिमा थी, वे भारतीय संस्कृति के ही नहीं, अपितु विश्व के किसी भी संस्कृति के वरेण्य आदर्श हो सकते हैं। उनमें अनन्त शक्ति अनन्त शील, अनन्त सौन्दर्य के दर्शन कवियों ने किये है। उनकी पत्नी सीता आदर्श नारी के रूप मे ही नहीं चित्रित है अपितु राम के विकास सोपान के अनुरूप शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित की गयी है। वे दया, ममता, त्याग, सुचिता, सहिष्णुता और अनन्त पति प्रेम जैसे दिव्यगुणों से सम्मिलित थी। कहना नही होगा कि सीता राम की यह कथा, धर्म की कथा ,लोक की कथा, ही नही सिद्ध हुई अपितु वे धर्म के रक्षक, धर्म के केतु और धर्म के सेतु भी बन गये हैं। यह कथा अयोध्या के एक सामान्य राजकुमार से महामानव तो दूसरी तरफ सगुण निर्गुण रूपों में अंशावतार से लेकर पूर्ण बृह्म के स्वरूप को प्राप्त हुई है।

यहां हम संक्षिप्त रूप में रामकथा के विकास की रूपरेखा अंकित कर सीता निर्वासिना की कथा परम्परा का विशिष्ट उल्लेख करेगे।

रामकथा का विकास :-

अनुश्रुतियें और साहित्यिक परम्परा वाल्मीकि रामायण को रामकथा का श्रोत स्वीकार करती है। वृहद धर्म पुराण में लिखा है-

"रामायणां महाकाव्यं आदौ वाल्मीकिनाकृतम्।/तन्मूलं सर्व काव्यानां इतिहास-पुराणयो:"।।[1]

यद्यपि वैदिक साहित्य में रामकथा को ढूढ़ने का प्रयास हुआ है। क्योकि यहां उससे सम्बन्धित पात्रों के नाम अनेक स्थान पर मिलते है। ऋग्वेद [2] में राम दुष्सीम प्रथवान और वेन नामक राजाओं के साथ आया है। कही मार्ग वेय [3], कही औपतस्विनि [4], कही क्रातुजातेय [5], और कही पुत्र के अर्थ [6] प्रयुक्त हैं।

इस प्रकार सीता कृषि की अधिष्ठाती [7]एवं सीता सावित्री युग्म रूप में प्रयुक्त है। इन सबसे इतना निष्कर्ष अवश्य निकाला जा सकता है कि वाल्मीकि रामायण में जिस सीता का वर्णन है, वह वैदिक सीता नही किन्तु उसकी जन्म कथा पर वैदिक सीता का प्रभाव अवश्य है। रामायण के अन्य पात्रों में इक्ष्वाकु [8] दशरथ [9], जनक [10] एवं कथा से सम्बन्धित विभिन्न स्थलों का उल्लेख है। ज्ञान और परम्परा के मूल श्रोत वेदों को ही मानकर श्री नीलकण्ठ शास्त्री ने मंत्र रामायण में डेढ़ सौ वैदिक मंत्रों को संकलित कर उन पर संस्कृत में वाक्य लिखकर वेदों में रामकथा के सूत्र खोज निकाले है। इसी संकलन का यत्किचिंत परिवर्तन एवं परिवर्धन पं. राम कुमार दास ने वेदों में रामकथा के रूप में किया है। रामकथा के सम्बन्ध में वे लिखते है कि वेदों में रामकथा तो एक अल्प संग्रह मात्र है। साथ ही स्मरण रखना चाहिए कि वेदों में उतनी रामकथा सुस्पष्ट रूप में मिल सकनी सम्भव है, जितनी कि प्रति

कल्प में एक ही रूप में होती है। परन्तु जो कथाएं, संवाद आदि कुछ हेर फेर के साथ हुआ करते है। वे शायद वेद में स्पष्ट न मिले-जैसे कि दशरथ का पुत्रेष्टि-यज्ञ, राम वन गमन, वालि वध, मारीच वध, लंकादहन, रावण वध, आदि तो सब कल्प में करीब-करीब एक ही तरह से होते है, इसलिए ऐसी कथाओं का तो संकलन स्पष्ट रूप से वेदों में है परन्तु धनुषभंग, परशुराम संवाद, वन मार्ग वर्णन, अंगद दौत्य, अन्य राक्षस युद्ध प्रतिकल्प में बदला करते है। इससे उनका स्पष्ट वर्णन वेद में नही मिल सकता [11] इसके विपरीत आधुनिक पाश्चात एवं पौरस्त्य विद्वानों ने वेदों में रामकथा का अभाव माना है। उनका मत है कि यदि वैदिक आर्यो को राम और भरत जैसे असमान्य शील और शक्ति सम्पन्न चरित्रों का ज्ञान होता है तो विस्तृत वैदिक साहित्य में अवश्य किसी न किसी अंश में उनका समावेश मिलता। पिता के सत्य की रक्षा के लिए उनकी इच्छा के विरूद्ध राज्य त्याग, और वनवास ग्रहण, राज्य को बड़े भाई की वस्तु समझ कर छोटे भाई द्वारा उसका परित्याग, किसी भी युग के सांस्कृतिक इतिहास में असाधारण घटनाएं होती है।

रामकथा से सम्बन्धित पात्रों के नाम तो वेदों में है किन्तु पारस्परिक सम्बन्ध नहीं जुड़ सका। बात यह है कि आर्य जाति के आरम्भिक सांस्कृतिक जीवन स्वरूप वैदिक साहित्य में मिलतें है। जो वेदोद्य प्रजापतियों द्वारा हुआ था, इसीलिये बृाह्मणों में वेदों को प्रजापत्य क्षति कहा गया है। उनको ऋषियों के मंत्र दृष्टा कहा गया है। लोगो का विश्वास है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है, जिसका दर्शन समय-समय पर अनेक ऋषियों ने किया है इन्ही का सम्पादन ज्ञान तथा कर्मकाण्ड की दृष्टि से कृष्ण द्वैपायन ने नये सिरे से किया, जिसके कारण एक ही स्थान पर अति प्राचीन सूक्त भी है। और नवीनतम प्रसंग भी एक अल्प मंत्र दूसरे प्रसंग में उल्लखित होने के कारण तदनुरूप अर्थ देने लगे, इसीलिए सम्भवतः वेदों में उल्लखित नाम मात्र नाम ही रह गये है। कथा से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रह गया, साथ ही पात्रों का परस्पर सम्बन्ध भी नहीं प्रगट हो पाया। प्रसिद्ध विद्वान डा. कामिल बुल्के ने इसी ओर संकेत करते हुए लिखा है कि वैदिक रचनाओं में रामायण के एकाध पात्रों के नाम आवश्य मिलते है। लेकिन न तो इनके पारस्परिक सम्बन्ध की कोई सूचना दी गयी है और न इनके विषय में किसी तरह रामायण की कथा वस्तु किंचित निर्देश किया गया है। ***** वैदिक काल में रामायण की रचना हुई थी अथवा रामकथा सम्बन्धी गाथायें प्रसिद्ध हो चुकी थी, इसका निर्देश समस्त, विस्तृत वैदिक साहित्य में कहीं भी नहीं पाया जाता। अनेक ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम रामायण के पात्रों के नामों से मिलते है, इससे इतना ही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ये नाम प्राचीन काल में भी प्रचलित थे।[12]

वाल्मीकि रामायण :-

वाल्मीकि रामायण रामकाव्य का बीज ग्रन्थ है। रामकथा सम्बन्धित मूल ग्रन्थ है। और भारत का आदि काव्य है। [13] इस कथा में राम का अयन यानी पर्यटन का वर्णन था। इसमें राम आदर्श मानव और वीर क्षत्रीय के रूप में प्रस्तुत किए गये है। कालान्तर में काव्योपजिवी कुशीलवों द्वारा इनकी कथा में पर्याप्त परिवर्तन, परिवर्धन और संशोधन किया गया। तथा राम-रावण के चरित्र को पूर्ण करने के लिए बालकाण्ड एवं उत्तरकाण्ड में पर्याप्त प्रक्षिप्त कथायें जोड़ दी गयी। [14]

वाल्मीकि रामायण की कथा के पूर्व कोई न कोई परम्परा अवश्य प्रचलित रही होगी। इस सन्दर्भ में

डा. वेद प्रकाश द्विवेदी के तुलसी परिवर्ती रामकाव्य परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन में लिखा गया है कि आदि कवि वाल्मीकि के अनेक शताब्दियों पूर्व राम कथा सम्बन्धी अनेक गाथाये प्रचलित हो चुकी थी किन्तु वह साहित्य काल के गर्त में चला गया। क्योकि इतना भव्य उदात्य चरित्र की कल्पना कर विशाल काव्य का प्रणयन किसी ठोस परम्परा की पृष्ठभूमि के बिना लगभग असंम्भव लगता है। राजसी सूत्रों द्वारा नाराशंसी गाथाओं की रचना राम कथा का प्रणयन कर उसका प्रचार किया जिसको काव्य रूप देने में वाल्मीकि सफल हो गये।[15]

चतुर्यविन्श साहसी इस काव्य का प्रस्फुटन वाल्मीकि के हृदय से व्याघ्र द्वारा क्रौंच मैथून में से एक के वध होने पर विवुलित करूणा के रूप में ब्रह्मा के वरदान स्वरूप हुआ था। शप्तकाण्डों एवं अनेक सर्गो से युक्त रामजन्म से लेकर विवाह, वन गमन, सीता हरण, रावण वध, एवं उनके स्वर्गारोहण तक की कथा का निबन्धन किया गया है, साथ ही रामकथा सम्बन्धी अन्य पात्रों की प्राशंगिक कथाओं का संक्षिप्त एवं विस्तृत वर्णन भी है। जैसे कामदहन, विश्वामित्र के वंशज, शिव-पार्वती प्रसंग, गंगा-आनयन, समुद्र-मंथन, वालि-सुग्रीव जन्म, रावण वंश विस्तार, मृग निमि ययाति हनुमत कथाऐं इत्यदि। इस सन्दर्भ में कहा जाता है सुगठित कथानक उदात्त एवं आदर्श पात्रों का चयन प्राकृतिक सुषमा का सूक्ष्म परिवेक्षण भावानुरूप शाब्दीसुषमा से सम्मिलित यह काव्य भारतीय साहित्य का उपजीवी ग्रन्थ बन गया।

महाभारत :-

महाभारत भारतीय वांगमय का उपजीवी ग्रन्थ है। इसमें अरण्य पर्व में द्रोणपर्व एवं शान्ति पर्व में रामकथा विन्यस्त है। महाभारत मे रामोपख्यान को रामायण का ही संक्षिप्त रूप कहा जाता है।[16]

पुराण साहित्य :-

वेदों का उपबृह्मण करने वाले पुराणों में रोचक एवं सरस आख्यानों में राजवंशावलियों को सुरक्षित रखा गया है। मार्कण्डेय पुराण, बृाह्मण तथा मत्स्य पुराण में औतारों के सन्दर्भ में राम की चर्चा है। हरिवंश, विष्णु, वायु, भागवत, एवं कर्म पुराण में सम्पूर्ण रामकथा है। अग्निपुराण, नारदीय पुराण में वाल्मीकि रामायण की ही संक्षिप्त कथा है। लिंग पुराण में इक्ष्वाकु वंश के परिपेक्ष्य में तथा स्कन्द पुराण के विभिन्न खण्डों में महात्म बताने वाले स्थलों के वर्णन मे रामकथा की आवृत्ति अनेक बार हुई है। पद्मपुराण के पाताल खण्ड में, विष्णुधर्मोवतार, नरसिंह वंहि, श्रीमद् देवी भागवत, वृह्त्तधर्म, कालिका एवं कल्कि पुराण में रामकथा के विविध रूप दिखाई देते है। इन पुराणों में अवतारवाद, आयोनिजा सीता, रजक प्रसंग, कुश लव युद्ध, राम सीता का पुर्वानुराग, विभि देवी देवताओं की उपासना तथा विभिन्न पात्रों की प्राशंगिक घटनाओं की कल्पना इन पुराणों राम कथा की विशेषतायें है।

संस्कृत ललित रामकथा :-

वाल्मीकि रामायण की आकर्षक कथावस्तु से आकृष्ट होकर परवर्ती अनेक कवियों ने रामकथा को आधार बनाकर महाकव्यों एवं नाटकों की सृष्टि की है। बाद में संस्कृत साहित्य बहुत कुछ निर्जिव क्रन्तिमता की श्रंखला में बंध गया, किन्तु रामकथा श्लेष काव्य, विलोम काव्य, चित्रकाव्य तथा श्रंगारिक खण्डकाव्य इस बात का प्रमाण देते है कि रामकथा की लोकप्रियता अक्षुण्ण रही थी।[17]

(क) महाकाव्य :-

इनके अन्तर्गत दो ढंग से कथा प्राप्त होती है-

(1) समग्र ग्रन्थ में रामचरित वर्णन (2) अन्य चरित्रों के साथ रामकथा। रामायण मंजरी (क्षेमेन्द्र) रामचरित (अभिनन्दन), जानकी हरण (कुमारदास), उदारराघव (शाकल्ल भल्लाचार्य),- रघुवीर चरित (मल्लिनाथ), श्री रामविजय (रूपनाथ उपाध्याय), राघवीय (महाकवि पणिवाद), रघुवंश (कालिदास), दशावतार चरित (क्षेमेन्द्र), नारायणीय (नारायणभट्ट)।

(ख) नाटक :-

राम के जीवन में अनेक नाटकीय घटनाओं का समावेश है जिससे नाटककार आकृष्ट हुए है। इन्होने रूचि के अनुसार कथा में परिवर्तन किया है, इसके लिए कुछ नवीन पात्रों की भी कल्पना की गयी है। श्रंगारिकता इनकी पहली विशेषता है।

प्रतिभा, अभिषेक (भास), महावीर चरित, उत्तर रामचरित (भवभूति), कुन्दमाला (दिंअनाग), अनर्घ राघव (मुरारि), प्रसन्न राघव (जयदेव), बाल रामायण (राजशेखर), हनुमन्नाटक, हनुमान महानाटक (हनुमान), आश्चर्य चूडामणि (शक्तिभद्र), अद्भुत दर्पण (महादेव कवि), मैथिली कल्याण (कवि हस्तमल्ल) उन्मत्त राघव (भास्कर) दूतांगद (सुभट), कुशलवोदय (छविलाल सूरी), इत्यादि प्रमुख नाटक है। डॉ. कामिल बुल्के ने रामाभ्युदय (व्यास मिश्र), जानकी परिणय (रामभद्र दीक्षित), उदार राघव छलित रामायण, कृत्वारावण, माया पुष्पक, स्वप्न दशानन, अभिनव राघव, रघुविलास, राघवाभ्युदय एवं रामाभ्युदय अप्राप्य नाटकों का उल्लेख किया है।

श्लेष काव्य :-

राघव पाण्डवीय प्रथम (धनंजय) राघव पाण्डवीय द्वितीय (माधव भट्ट), राघ. नैपथीय (हरदत्त सूरि), रामचरित (संध्याकर नंदी) - राघव पाण्डव यादवीय (चिदंवर)

विलोम काव्य :-

रामकृष्ण विलोम काव्य (सूर्यक कवि) यादव राघवीय (वेंकट ध्वरि), राघव यादवीय (लेखक अज्ञात है)।

चित्रकाव्य :-

रामलीलामृत (कृष्णमोहन) चित्रबन्ध रामायण (वेंकटेश)।

खण्डकाव्य :-

रामाभ्युदय (अन्नदा चरण तर्क चूडामणि, जानकी परिणय (चक्र कवि), श्री रामचरित (कोटिलिंग राजवंश के युवराज कवि), सीता स्वयंवर (हरिकृष्ण भट्ट), उत्तर रामचरित (राम पणिवाद)

सन्देश काव्य :-

हंसदूत (वेदान्त देशिक), भ्रमरदूत (रूद्रन्यायपंचानन), वातदूत कृष्णनाथ

ऐतिहासिक ग्रन्थ :-

रघुनाथभ्युदय (रामभद्राराम्बा), पृथ्वीराज विजय (जोनराज)।

व्याकरण काव्य :-

भट्टिकाव्य (महाकवि भट्टि), रावणार्जुनीयम् (भट्टभीम)।

चम्पूकाव्य :-

चम्पू रामायण (भोजराज), उत्तरामचरित चम्पू (बेंकट)।

पद्य साहित्य के अतिरिक्त गद्य साहित्य में भी रामकथा का बडे सम्मान के साथ ग्रहण हुआ है। कथा सरित्सागर, वृहत्कथा मंजरी तथा रामकथा (वासुदेव) आदि गद्य ग्रन्थों में रामकथा का आकर्षक रूप मिलता है।

(1) संस्कृत साहित्य में प्राप्त रामकथा को 3 वर्गों में विभक्त किया जा सकता है।[18] ऐसे कवि जिन्होने हृदय की सच्ची प्रेरणा पाकर साहित्य की सृष्टि की अतः उनकी कविता सरल, सरस तथा स्वाभाविक है।

(2) दूसरे वे कवि है जो काव्य शास्त्र के पंडित हैं तथा जिनमें काव्य का कथानक गौण शास्त्रीय अभिव्यजंना की प्रधानता है। बाह्य रूप को अलंकृत करना, श्लेष योजना कर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करना, व्याकरण शास्त्र के प्रति बन्धनों से काव्य को आवदध कर देना इनका प्रधान लक्ष्य है। इसकी भाषा क्लिष्ट एवं दीर्घ समासों से युक्त है।

(3) तीसरे वे कवि है जिनका प्रधान लक्ष्य कविता के माध्यम से लौकिक भोगविलासों का चित्रण करना है। अवतारी राम और सीता साधारण नायक, नायिका मात्र है। जहां कही अवसर मिला है इन्होने अपनी हृदयस्थ वासनाओं को शान्त किया है।

धार्मिक एवं साम्प्रदायिक साहित्य में रामकथा :-

अवतारवाद एवं भक्ति भावना का विकास होने पर रामकथा में अनेक परिवर्तन हुए। सीता राम कौन थे, उनके अवतार किस रूप में और क्यों हुए उनकी भक्ति किस प्रकार की जा सकती है, इस भावना से प्रेरित होकर विभिन्न धार्मिक एवं साम्प्रदायिक साहित्य की रचना हुई। उपनिषद, वैष्णव संहिताएं, स्तवराज और गीति एवं साम्प्रदायिक रामायणों में रामभक्ति का महात्म, उनकी रासलीलाएं एवं अवतार स्वरूप के साथ ही साथ राम पूजा का शास्त्रीय विवेचन किया गया। योग वासिष्ठ रामायण, भुसुण्डी रामायण, बृह्म रामायण, गायत्री रामायण, रामायण रहस्य, वेदान्त रामायण, अद्भुत रामायण, आनंन्द रामायण, अध्यात्म रामायण, रामतापनीयोपनिषद, रामोत्तर तापनोयोपनिषद, राम रहस्योपनिषद, सीतोषनिषद, रामस्तवराज, श्री सहसृ गीति के अतिरिक्त जैमतीय अश्वमेध के कुशलवोपाख्यान, मेरावण चरित, सहसृभुज रावण चरित्रम, सत्योपाख्यान इस दिशा के महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इन ग्रन्थों में रामकथा को भक्ति के सांचे में ढाला गया है। कुछ रामायणों की तालिका श्री रामदास गौड़ने हिन्दुत्व नायक ग्रन्थ में दी है।[19]

प्राकृत भाषा में रामकथा :-

प्राकृत कौन सी भाषा है, इसमें पर्याप्त मतभेद है किन्तु इसका प्रयोग पाश्चात्य विद्वानों ने निम्न अर्थो में किया है।[20] वे विशेष भाषायें जिनका भारतवर्ष में प्राकृत शब्द से उल्लेख किया गया है। मध्यम भारतीय युग की भाषायें साहित्यक और शिष्ट भाषा से भिन्न सहजन्य लोक भाषा। कुछ भी हो इन भाषाओं का बडा महत्व है। एक ओर से वर्तमान काल की नव्य भारतीय आर्य भाषायें और दूसरी ओर से प्राचीनतम भारतीय आर्य भाषा जैसे-

वेद की भाषा। इन दोनो स्वरूपों के बीच की जो भारतीय भाषा के इतिहास की अवस्था है, उसको इस प्राकृत नाम दे सकते है।[21] इस प्रकार प्राकृत मध्यकालीन भाषाओं का प्रतिनिधत्व करती है[22] इसकी तीन अवस्थाओं का उल्लेख विद्वानों ने किया है- प्रथम प्राकृत (पालि) द्वितीय प्राकृत (साहित्यक प्राकृत) तृतीय प्राकृत (अपभृंस)।

बौद्ध मतावलम्बी महात्मा बुद्ध को राम का अवतार मानते है। इसीलिए पालि भाषा में लिखे गये बौद्ध साहित्य में रामकथा मिलती है। त्रिपटिक के सुत्त पिटक के खुद्दक निकाय में अनेक जातक संगृहीत है। इनमें रामकथा सम्बन्धी अनेक जातक है। (1) दशरथ जातक (2) अनामकम जातक (3) दशरथ कथानक (4) देवधम्य जातक (5) जर्यादद्स जातक (6) साम जातक (7) वेसांतर जातक (8) शम्बुल जातक।

इसके अतिरिक्त लंकावतार सूत्र में लंकापति रावण एवं महात्मा बुद्ध के बाद विवाद का उल्लेख है किन्तु उसमें रामकथा का अभाव है। दशरथ जातक एवं देवधम्य जातक में रामकथा की पूरी रूपरेखा विद्यमान है और जब दिद्स जातक के अन्तर्गत राम का दण्डकारण्य जाना दिखलाया गया है। तथा सामजातक के कुछ अंश रामायण से बहुत कुछ मिलते जुलते है, और वेसातंर जातक की कथा से भी रामकथा का बहुत कुछ साम्य है। अनामक जातक में वनवास, सीताहरण, जटायु मृत्यु, बालि, सुग्रीव युद्ध, सेतु बन्धु सीता परीक्षा के संकेत मिलते है किन्तु पात्रो का नही उल्लेखित है- सबसे विवादास्पद दशरथ जातक है जो संबधियों की मृत्यु पर दुख न करने के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की गयी है। अनेक विद्वानों का मत है कि इस जातक में रामकथा का मूल रूप सुरक्षित है जिसका खण्डन डा. वुल्के ने किया है।[23]

द्वितीय एवं तृतीय प्राकृत में रामकथा जैन सम्प्रदायानुसार मिलती है। जिस प्रकार बौद्धों ने गौतम को राम का पुनरावतार स्वीकार किया है, उसी तरह जैनियों ने भी राम (पद्म) लक्ष्मण एवं रावण को जैन धर्मानुयायी महापुरूषों के रूप में वर्णित किया है। उनकी गणना त्रिशष्ठिशालका पुरूषों मे की गयी है राम, लक्ष्मण तथा रावण क्रमशः आठवें बलदेव, वासुदेव तथा प्रतिवासुदेव माने जाते है, प्राकृत एवं अपभ्रंस में निम्नलिखित राम साहित्य उपलब्ध होता है-

(1) प्राकृत :-

(1) पउम् चरियं- विमल सूरि

(2) सेतुबन्ध य रावणवध- प्रचरसेन

(3) चउपन्नमहापुस्सि के अन्तर्गत रामलखन चरियम्-शीलाचार्य।

(4) कहावती के अन्तर्गत रामायण-भद्रेश्वर

(5) सीया चरियं तथा राम लखन चरियं- भुवनतुंग सूरि

(6) वासुदेव हिंडी- संघदास

(2) अपभ्रंस :-

(1) पउम् चरिउ अथवा रामायण पुराण- स्वयंभू देव

(2) तिसट्ठी महापुरिस गुणालंकार अथवा महापुराण-पुष्पदन्त

(3) पद्म पुराण अथवा बलभद्र पुराण- रइघू

स्थूल दृष्टि से रामायण में दो सम्प्रदाय दृष्टिगत होते है- विमल सूरि की रामकथा, गुणभद्र की रामकथा। गुणभद्र की रामकथा ब्राहम्ण विरोधी दिखाई देती है। विमल सूरि की कथा अनेक सुन्दर वर्णनों से युक्त होने के कारण कवियों मे अधिक आदृत्य हुई है। साहित्यक दृष्टि से विमल सूरि एवं स्वयंभू देव के काव्य अविस्मरणीय है।

सारांश यह है कि रामायण, महाभारत, उपनिषाद, महाकाव्य सहिंताये, पुराण साहित्य, अन्य सम्प्रदायिक रामायणे, प्राकृत, अपभ्रंस भाषाओं में बौद्ध एवं जैन राम कथाये जिस रूप में मिलती है। उसमें कथा के विस्तार के साथ पात्रों के चरित्र चित्रण सम्बन्धी विचारधाराये भी विकसित होती रही है। [24]

हिन्दी में रामकथा वाल्मीकि रामायण और सम्प्रदायिक रामायणों का विशेष प्रभाव है हिन्दी के अधिकांश रामकाव्य हस्तलिखित रूप में विभिन्न ग्रन्थागारों में अप्रकाशित रूप में पड़े हुए है। यह काव्य सूची अत्यन्त विक्षिप्त है, अतः अत्यन्त संक्षिप्त रूप में इसे प्रस्तुत कर सीता निर्वासन सम्बन्धी सामग्री का विश्लेषण आगे किया जा रहा है।

हिन्दी में तुलसी से पूर्व रामानन्द विष्णुदास, ईश्वरदास की कथाऐं प्रमुख है। रामकथा को व्यवस्थित रूप देने का जो प्रयास तुलसी ने किया है वह उनकी भावित्री कारित्री का देवतन है। साथ ही इस कथा के चरम उत्कर्ष रूप को तुलसी ने दिखाकर इस क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित किया है। रामचरित मानष, गीतावली, रामलला नहछू, जानकी मंगल, कवितावली, वरवै रामायण, रायाज्ञाप्रश्न, उनके कथा प्रधान काव्य है जो भाव एवं शिल्प की दृष्टि से अद्वतीय है। तुलसी के पाश्चात हिन्दी में रीतिकाल युग का प्रारम्भ हो गया था। देश में मुगल शासन की स्थापना दिल्ली सम्राट के अनुसार सामन्तों की विलासता के उपकरण खोजने का प्रयास साहित्य में गतानुगतिक रूप को प्राश्रय मिला है। केशव की रामचन्द्रिका, अवध विलास, लाल दास रामायण, चिन्तामणि, रामवतार चरित्र, नरहरिदास, रामाश्वमेघ, नारायण दास, इस युग की महत्वपूर्ण रचनायें है। इस युग में प्राप्त रामकथा के सन्दर्भ में ये कहा जा सकता है कि राम के बाल्यजीवन, विवाह, चित्रकूट निवास, से रावण वध और फुटकर रचनाओं के रूप में प्रबन्ध काव्य और मुक्तक काव्यों की रचना हुई है। [25]

हिन्दी के आधुनिक काल की परिस्थितियां पूर्वकाल से भिन्न रही। ईस्टइण्डिया कम्पनी की स्थापना स्वतंत्रता, संग्राम, विक्टोरिया शासन की प्रतिष्ठा, देश की स्वतन्त्रता के लिये कांग्रेस के आन्दोलन, देश की स्वतन्त्रता प्रजातन्त्र शासन की स्थापना प्रमुख घटनायें है। इस दृष्टि से साहित्य में भारतेन्दु युग,द्विवेदी युग,छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नयी कविता, एवं गद्य के निबन्ध नाटक, कहानी उपन्यास आदि का विकास हुआ। इस युग के प्रमुख रामकाव्यों में रामचरित चन्द्रिका, रामचरित, चिन्तामणि (रामापति) संकेत (कौशल किशोर) वैदेही वनवास (हरिऔध) रावण (हरदयाल) रामराज्य (हरिशंकर शर्मा) भगवान राम (मनमोहन लाल) जानकी जीवन (राजाराम शुक्ल) अरूण रामायण (रामावतार पोद्दार) प्रमुख है। इस युग की रामकथा को कथा के रूप में पात्रवैशिष्ठय, युगबोध, काव्यरूप की दृष्टि से वर्गीकरण किया जा सकता है। [26]

ऊपर मर्यादावादी रामकथा के स्वरूप का निर्धारण करते हुए कुछ संक्षिप्त रूप से रामकथा कारो की सूची प्रस्तुत की गयी है। किन्तु यह अध्ययन तब तक अधूरा है जब तक रामकथा में रसिक भाव की चर्चा न की

जाये। भक्ति शास्त्रों में भक्ति के पंचधा भेदकर कान्ताभक्ति य मधुरा भक्ति को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। इसमें भगवान के माधुर्य रूप पर अनुरक्त होकर उपासना का विधान किया जाता है। कान्ताभाव से मुक्त होकर रसिक रूप में राम की उपासन का प्रारम्भ कब हुआ यह विवेचन अपेक्षित नहीं है, किन्तु पन्द्रहवी सदी के बाद काव्य में राम के ऐसे रूप की उपासना का रूप मिलता है जिसमें राम के लीला विहार की, और चित्रकूट में सीता राम की रास लीलाओं का विस्तृत वर्णन मिलने लगा है। राम रहस्योपनिषद श्री हनुमत संहिता, शिव संहिता, लोमश संहिता, अगस्त संहिता, महारामायण, भुसुण्डी रामायण, वृहद कोशल खण्ड, श्री राम नवरत्न सार समूह, इस धारा के उपजीव्य ग्रन्थ है। राम कथा को लेकर जो रसिक सम्प्रदाय बना उन्हें जानकी सम्प्रदाय, रहस्य सम्प्रदाय एवं सिया सम्प्रदाय का नाम मिलता है। हिन्दी में अग्रदास की ध्यान मंजरी, नाभादास का रामाष्टयाम, नेह प्रकाश, प्रेम परीक्षा, सिद्धान्त तत्व दीपिका, वालकृष्ण वाल अलि, सीतायन, रामप्रिया, युगल माधुरी प्रकाश रहस्य पदावली (कृपानिवास) राम पदावली, विरह सतक, उपासना सतक, कौशलेन्द्र रहस्य (रामचरण दास) रसिक प्रकाश (जीवाराम) सीता राम (स्नेह सागर) उभय प्रबोधक रामायण (वानादास एवं महाराज विश्वनाथ) जनकराज (किशोरी शरण उमापति शरण जानकी) प्रकाश रसिक (बिहारी) शील मणि (रामवल्लभ) इत्यादि सर्वाधिक कवि और उपासक हुये है। जिन्होने इस धारा के सैद्धान्तिक और व्यवहारिक रूप को पुष्ट किया है। कहना नहीं होगा कि इस रसिक सम्प्रदाय में कथा की कोई अधिक महत्वता नहीं है। मात्र राम की रासलीला बिहार के पद लिखकर अपनी उपासना को इन कवियों ने पुष्ट किया है। यहां यह कहा जा सकता है कि रामकथा के दो रूपों का विकास सहज ही रूप में दिखाई पडता है। राम की मर्यादावादी कथा प्रधान जिसमें राम की सम्पूर्ण कथा जन रक्षण हेतु उनके प्रयास वर्णित है। इसमें वाल्मीकि से लेकर आधुनिक युगीन रामकथायें आती है। पाली और अपभ्रंस का साहित्य भी इसी धारा में अनुश्रुत है। रामकथा की दूसरी धारा रसिक उपासकों की धारा है, जिसमें सीता राम की शक्ति और शक्तिमान के रूप में यह उपासना परम गोपनीय और भक्ति का चरम रूप कहा गया है।

रामकथा के भव्य और उदात्य रूप को प्रस्तुत करने के लिए यहां यह अपेक्षित है कि हिन्दीतर अन्य भारतीय भाषाओं में रामकथा के स्वरूप विकास की संक्षिप्त चर्चा कर ली जाये।

अन्य भारतीय भाषाओं में रामकथा :-

पहले कहा जा चुका है कि रामकथा ऐसे महानायक की कथा है जिसने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सारे भारत को एकता के सूत्र में बांध रखा है। हिन्दी के अतिरिक्त तमिल में, कम्ब रामायण, तेलगू में द्विपद रामायण, रंगनाथ रामायण, मलयालम में रामचरितम्, अध्यात्म रामायण कन्नड में तोरवै रामायण, मयरावण कालग, आदि प्रमुख विशिष्ट रामायणें है। जिनकी कथाये वाल्मीकि के आधार पर लिखी गयी है। बंगला साहित्य में कृत्तिवास रामायण, उडिया में सरलादास की रामायण, बलराम दाद की रामायण महत्वपूर्ण स्थान रखती है। [27]

निष्कर्ष यह है कि आसेत हिमालय अटक से लेकर कटक तक ही नहीं अपितु भारतवर्ष के बाहर चीन, मध्य ऐशिया, जावा, सुमात्रा, कम्बोडिया आदि देशों में रामकथा देशकाल परिस्थिति के अपुरूप विभिन्न रूपों में मिलती है। रामकथा के स्वरूप विकास को लेकर यह कहा जा सकता है कि वीर धार्मिक चरित्रवान राम की कथा ऐतिहासिक रूप में प्रारम्भ हुई, जिसे साहित्यक रूप संस्कृत के ललित श्रेन्य साहित्य में प्राप्त हुआ। उपनिषद्, पुराण

एवं सम्प्रदायिक रामायणों मे अवतारवाद एवं भक्ति भावना के प्रादुर्भाव स्वरूप राम के प्रारम्भ में विष्णु के अंश के रूप में कलअवतार कह कर उनकी कथा गाथा का गायन युगानुरूप दृष्टि से हुआ है। परिवर्ती रूप में भक्ति भावना के विकसित होने पर राम को जगदीश्वर, अज, अनन्त, चिदानन्द, परमेश्वर परमब्रह्म रूप में चित्रित कर उनकी अनन्त कथा का गायन अनादिकाल से कवि रसिक भक्त, साधु करते चले आ रहे है।

राम की कथा में जितनी उदात्तमयता, गरिमा, युग बोध के अनुरूप प्रतीक बनाने की सामर्थ उसकी पत्नी प्रिंया सहधर्मिणी शक्ति के रूप में यदि कोई रहा है तो वह सीता थी। सीता के चरित्र में अद्‌भुत विकास के सोपान दिखाई पडते है, वैदिक साहित्य में लांगल रूप में खीची जाने वाली सीताये कृषि की अधिष्ठाती के रूप में पूजित सीता तो रामकथा के रूप में आदर्श पत्नी और कर्तव्य निष्ठ सहचरी ही नहीं बनी अपितु आगे चलकर ब्रह्म की अह्लादिनी, संघिनी शक्ति की प्रतीक बनी जिसका एक मात्र स्वरूप था बृह्म की माया और उनसे पूर्ण मिलन का अधिकार सम्पन्ना शक्ति रूपा सीता है। यहां हम उनके मर्यादा वाली कथा के अन्तर्गत उत्तर जीवन से सम्बन्धित सीता निर्वासन के काव्य और उसमे वर्णित घटनाओं के परिवर्ती हिन्दी काव्य में प्रभाव एवं उल्लिखित आलोच्य काव्यों की साहित्यकि समीक्षा प्रस्तुत करेगे।

सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्य-स्वरूप एवं विकास :-

राम के चरित्र में अनन्त सौदर्य शील एवं चरित्र का समन्वय और उन्हें जन नायक के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय उनकी सहचरी लीलाभिवासिनी, धर्मपत्नी सीता को है। सीता ने अपने आदर्श एवं व्यवहार से कथा को ही गरिमा नहीं दी अपितु नारी समूह के सामने उज्जवल आदर्श उपस्थित किया है। इनका चरित्र बहुआयामी है। इसीलिए कवियों ने उनके चरित्र का गायन प्राक्तन और नवीन मनोभावों को पृष्ठभूमि के रूप में किया है। प्रस्तुत अध्याय में सीता निर्वासन सम्बन्धी कथाओं के श्रोत और उनके स्वरूप विकास की यहां चर्चा की जा रही है।

रामकथा के विकास के सन्दर्भ में वैदिक साहित्य में उल्खित सीता के श्रोतो की चर्चा की गई है। यहां सीता त्याग की और उनके उत्तर चरित की चर्चा की जा रही है। यद्यपि वर्तमान स्वरूप में प्राप्त वाल्मीकि रामायण की उत्तर कथा की सम्पूर्ण सामग्री को प्रक्षिप्त बताया गया है। किन्तु यहां उसकी चर्चा अपेक्षित नही है। सीता निर्वासन की सबसे विस्तृत चर्चा वाल्मीकि रामायण में मिलती है। जिसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है। इस कथा में गर्भवती सीता का आश्रम देखने का, दोहद और लोकापवाद की चर्चा है-

वाल्मीकि रामायण :- कथासार

महर्षि वाल्मीकि के वर्णन में धर्मज्ञ श्री राम परम सुन्दरी विदेह नन्दिनी देवी सीता का गर्भावस्था में परित्याग करके गंगा तट पर स्थित वन प्रदेश में भेज दिया गया था। रामकथा में सीता निवसिन कथा का चित्रण करते हुए आदि कवि वाल्मीकि लिखते है-

''किमिच्छसि वारारोहे कामः किं क्रियतां तव'' [28]

निर्वासन कथा में सीता जी द्वारा तपोवन देखने की तथा ॠषियों मुनियों के आश्रम में एक रात निवास करने की इच्छा प्रकट करती है-

''तथेति च प्रतिज्ञातं रामेणा किलष्ट कर्मणा।

विसृब्धा भव वैदेही श्रो गमिष्यस्य संशयम् ।।'' [29]

श्री राम सीता से इस अभिलाषा पर वन भेजने की प्रतिज्ञा करते है। एक बार श्री राम अन्तःपुर की सभा में बैठे थे वहां निजी गुप्तचर उपस्थित होता है। जिससे श्री राम प्रजा के बारे में जानकारी लेते है। गुप्तचर के द्वारा लंका विजय व रावण वध कि भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए प्रजा जन नही अघाते है। परन्तु प्रजा जनों के बीच रावण के द्वारा हरण की गई जानकी जी के लिए आपत्ति जनक अपवाद फैला हुआ है। वह कहते है कि युद्ध में रावण को मारकर पुनः सीता को प्राप्त करने में उनके मन में सीता के चरित्र को लेकर रोश य आमर्ष क्यों नही हुआ? अब हम लोगों को भी प्रायः अपनी स्त्रियों के ऐसे कुकृत्य को सहना पड़ेगा, क्योकि जैसा राजा करता है प्रजा भी उसी का अनुशरण करती है-

''यथा हि करूते राजा प्रजास्तमनुवर्तते'' [30]

भद्र नामक गुप्तचर सीता अपवाद को सुनकर श्री राम तीनों भाइयों को बुलाकर गुप्तचर की सूचना से अवगत कराते है। तथा दुखी मन से लक्ष्मण के समक्ष अग्निपरीक्षा लेने की पुनः पुष्टि करते है। देवी को पवित्र मानते हुए भी यदि प्रजा जनों के मध्य इस प्रकार का महान अपवाद फैलने लगा है। जिससे मेरे प्रति बहुत ही घृणा पूर्वक भाव है। लक्ष्मण जिस व्यक्ति की अपकीर्ति सर्वत्र व्याप्त होकर जन सामान्य के बीच चर्चा का विषय वन जाती है वह अधम लोक में गिर जाता है-

''अपकीर्तिस्य गीयेति लोके भूतस्थ कस्यचित्पतव्येवाधमाललोकान यावच्छद्धः प्रकीर्व्यते '' [31]

श्री राम लक्ष्मण को सम्बोधित करते हुए कहते है कि मै लोक निन्दा के भय से अपने प्रिय जनों को त्याग सकता हूं। सीता का परित्याग कौन सी बडी बात है। लोक निन्दा से बचने के लिये मै अपने प्राणों का भी परित्याग कर सकता हूं अतः हे लक्ष्मण तुम कल सबेरे ही सुमन्त्र के साथ देवी सीता को रथ में बैठाकर देश की सीमा के बाहर गंगा के उस पार तमसा नदी के दट पर जहां महात्मा वाल्मीकि आश्रम के निर्जन वनों में विर्सजित कर दो, किसी प्रतिउत्तर के मेरी इस आज्ञा का पालन करो। उन्हें आश्रम दिखाने का वचन भी दिया था। अतः उनकी इच्छा और मेरा वचन भी पूरा करो। लक्ष्मण देवी सीता से राम की प्रतिज्ञा कहते है, और उन्हें मुनि सेवित वनों व आश्रमों को दिखाने को कहकर तथा श्री राम का परित्याग आदेश सुनाते है कि आप मेरे सामने निर्दोष सिद्ध हो सकने के बाद भी महाराज ने लोकोपवाद से डरकर आपकों त्याग दिया है-

महाराज की आज्ञा मानकर आश्रमों के पास छोड़ दूंगा यहां से पास ही महर्षि वाल्मीकि का आश्रम स्थित है जो मेरे पूज्य पिता राजा दशरथ के मित्र भी है आप उन्ही की छत्रछाया में निवास करे।

देवी सीता निर्वासन की वेदना से कलप उठती है। विलाप करते हुये अपने भाग्य को कोषती है। आर्ष वचन लक्ष्मण से कहती निश्चय ही मैने पूर्व जन्म में ऐसा पाप किया होगा जिसके कारण मुझे पति वियोग को सहना पड़ रहा है। सम्पूर्ण जीवन शुद्ध आचरण करने पर भी महाराज ने मुझे त्याग दिया है मै स्वयं को गंगा जी के गोद में विसर्जित कर देना चाहती हूं। परन्तु यह भी नही कर सकती क्योकि मेरे गर्भ में राजवंश को आगे बढ़ाने वाले को धारण किये हूं। प्रिय लक्ष्मण तुम महाराज से कहना कि आपके हितार्थ ही वह जीवन को धारण किये हुए है। प्रजा जनों के बीच जो अपवाद फैल रहा है निःसन्देह उसे दूर करना मेरा कर्तव्य है। और यही पत्नी का धर्म है। मुझे वही

करना चाहिए जिससे महाराज की कीर्ति में कोई कमी न हो। स्त्रियों के लिए उसका पति ही देवता, गुरू है बन्धु है अपने प्राणो का उत्सर्ग करके भी महाराज का प्रिय करूगी-

''पतिर्हि देवता नार्याः पतिर्बन्धु पतिर्गुरूः।
प्रणैरपि प्रियं तस्माद् भर्तुः कार्य विशेषतः।।'' [32]

विलाप करते हुए जमीन पर गिर जाती है और लक्ष्मण को छोडकर जाते हुए देखती है। राम के द्वारा निर्वासन आदेश का कर्तव्य पालन कर शोक संतप्त मन से रथारूढ़ होकर अयोध्या लौट आते हैं। निर्जन वन में सीता के विलाप को सुनकर महर्षि वाल्मीकि पहुँच जाते हैं। जहाँ गंगा तट पर गहरे शोक में डूबी हुई देवी सीता विलख रही थीं। शोक संतृप्त सीता को अपनी मीठी वाणी से संत्वना देकर अपने आश्रम ले आते हैं। देवी सीता आश्रम में जाकर मुनि पत्नियों के साथ निवास करने लगती हैं।

इस प्रकार से मुनि आश्रम में मुनि पत्नियों के बीच निवास करते हुए देवी सीता के प्रसव का समय आ जाता है, और सीता दो सुन्दर कुमारों को जन्म देती हैं। महर्षि बाल्मीकि प्रशन्नचित मन से सूत ग्रह पहुँच कर दोनो सुन्दर कुमारों का नामाकरण संस्कार सम्पन्न करते हैं। एवं मुनि पत्नियाँ दोनो पुत्रों के संरक्षण का भार उठाती हैं। लव कुश के जन्म के समय में श्री राम के अनुज शत्रुघन भी उपस्थित रहते है-

''यामेव रात्रि शत्रुन्घः पर्णशालां समाविशत्।
तामेव रात्रि सीतापि प्रसूता दारक द्वयम्।।'' [33]

लवण वध के उपरान्त् शत्रुघन ने मधुपुरी बसाकर बारह वर्षो के उपरान्त वापस आने पर महर्षि के आश्रम पर विश्राम करते है। लक्ष्मण के द्वारा अश्वमेध यज्ञ का प्रस्ताव किया जाता है। राम स्वीकार कर अश्वमेध यज्ञ की तैयारी पूर्ण करने का आदेश देते है। जिसमें सुग्रीव विभीषण एवं समस्त राजाओं, ब्राह्मणों, ऋषियों, मुनियों, तपस्वियों को अमंत्रित किया जाता है। लक्ष्मण के संरक्षण में समस्त भूमण्डल में अश्व भ्रमण का कार्य पूर्ण होता है यज्ञ एक वर्ष से अधिक समय तक निरन्तर चलता है।

''संवत्सरमथों साग्रं वर्तते च हीयते'' [34]

यज्ञ में महर्षि वाल्मीकि अपने शिष्यों सहित पधारते है। महर्षि अपने दो शिष्यों को यज्ञशाला में भ्रमण कर रामायण गान का आदेश देते है।

'' स शिष्या वब्रवीद घृष्टौ युवागत्वा समाहितौ।
कृत्सृं रामायणं काव्यं गायतां परमां मुदा।।'' [35]

रामायण के शास्त्रीय गान का समाचार राम के कानो में भी पड़ता है। ऋषि वेषधारी कुमारों को सभा में बुलाकर गान सुनते हैं। रामायण गान से प्रसन्न होकर दोनो कुमारों को नौ-नौ हजार स्वर्ण मुद्रायें पारितोषक प्रदान करने के लिए भरत जी को सम्बोधित करते हैं। परन्तु युगल कुमारों ने पारितोषक लेने से मना करते हुए कहते हैं कि हम वनवासी कुमार हैं। कन्दमूल फल हमारा आहार हैं। वन में स्वर्ण आभूषणों का क्या कार्य? राम का राजदरबार एवं स्वयं राम आश्चर्य चकित होकर रामायण का परिचय एवं रचईता की जानकारी ज्ञात करते है। राज दरबार मे नियमित रामायण गान होता है, तभी राम को दोनो कुमारों का सीता पुत्र होने का परिचय प्राप्त होता है महर्षि वाल्मीकि

को राजदरबार में बुलाया जाता है। महर्षि राम के दरबार में सीता के साथ उपस्थित होकर शुद्ध चरित्र नारी होने की घोषणा करते है एवं सीता को शपथ ग्रहण करने को कहतें है। वह सदैव मन, वचन, और कर्म से तत्पर रही है। एवं सर्वथा आपके ही ह्दय में वास करने वाली है। परन्तु लोकोपवाद के भय से इसे अपने परित्याग दिया है। महर्षि कथन के उपरान्त राम हाथ जोड़कर जन समुदाय को सम्बोधित करते है। एक बार और भी अग्नि परीक्षा के रूप में मै परीक्षा ले चुका हूं। तभी इन्हें राज भवन में प्रवेश की अनुमति दी थी। और आज पुनः आपके द्वारा दिलायें गये विश्वास पर निःसन्देह इनकी पवित्रता पर मुझे पूरा विश्वास हो गया है। यद्यपि मुझे आपके वचनों का पूरा विश्वास है। परन्तु जन सामान्य के बीच में देवि अपनी पवित्रता को प्रमाणित करें तो मुझे ज्यादा प्रशन्नता होगी। देवी सीता हाथ जोड़कर प्रजा जनो से कहती है कि ''यदि मै श्री राम के सिवा किसी अन्य युवा पुरूष का चिन्तन किया हो, हो मां पृथ्वी अपनी गोद में स्थान दें।''

''यदि मैने मन वचन कर्म से केवल श्री राम की ही आराधना की हो यदि मै सत्य हूं तो मां पृथ्वी मुझे अपने गोद में स्थान दे।''

''यथाहं राघवादन्यं मनसापि न चिन्तये।
तथा में माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।। [36]
''मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्थये।
तथा में माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।। [37]

देवी सीता के शपथ करते तत्काल पश्चात पृथ्वी के गोद से एक दीप्तमान सिंहासन निकलकर आया इस सिंहासन पर मां पृथ्वी देवी प्रकट होती है। एवं देवि सीता का स्वागत कर अपने साथ भूतल में प्रवेश करती है। उपस्थित समूह स्वयं श्री राम भी शोक सन्तप्त हो देवी सीता का भूतल पर आश्चर्य जनक प्रवेश देखते रहे।

वाल्मीकि की ये कथा परिवर्ती साहित्य में क्षिटपुट परिवर्तन के साथ मिलती है। रघुवंश में गुप्तचर की चर्चा करते हुए इस कथा को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है-

रघुवंश रामायण :-

कालीदास जी रघुवंश में वर्णित रामकथा परम्परा समसामायिक कलानुरूप परिस्थितियों के आधार पर है। उनकी कथा पर कुछ परिवर्तन अवश्य प्रतिविम्बित होते है। कथा का प्रारम्भ सीता के शरीर में गर्भ के लक्षण देखकर राम सीता जी से उनकी इच्छा पूंछते है। तथा सीता जी अपनी इच्छा वन जाकर गंगातट के तपोवन एवं तपस्विनी सखियो, कन्याओं से मिलने की होती है। सीता को इच्छानुसार भेजने का वचन देती है। तदोपरान्त महल के सर्वोच्च छत पर भद्र नामक गुप्तचर का श्री राम के पास पहुंचता है। तथा श्री राम भद्र से पूछते है कि अयोध्या निवासी हमारे बारे में क्या कहते है। एवं उनकी अपने राजा के प्रति कैसी धारणा है। कुछ देर चुप रहने के उपरान्त भद्र नामक दूत साहस करके प्रजा जनों के बीच फैले लोकोपवाद का विवरण प्रस्तुत करता है-

''कलन्तन्दिागुरूणा किलैवमभ्याहं कीर्ति विपर्ययेण।
अयोधनेनास्य ईवाभितत्तं वैदेहि बन्धो र्द्दयं विदप्रे।। [38]

दूत के कथन को सुनकर राम को सीता पर अभियोग से अपार कष्ट होता है। राम सीता के निष्कासन

का तत्काल निर्णय लेते है। जिससे इस कलंक से छुटकारा पाया जा सके। भाइयों एवं परिजनों के द्वारा परित्याग का विरोध भी राम का अपने निश्चय पर अडिग रहते है। निठुरता के साथ सीता परित्याग का निश्चय करने पर भाइयों के द्वारा न ही समर्थन दिया जाता है न ही विरोध किया जाता है। स्वयं निर्णय के धनी श्री राम के द्वारा लक्ष्मण को एकान्त में ले जाकर गर्भिणी सीता को वन देखने के बहाने वाल्मीकि आश्रम तक छोड़ आने का आदेश दिया जाता है। रामाज्ञा को लक्ष्मण पित्र आज्ञा मानकर परशुराम के पित्र भक्त आचरणों का अनुशरण करते हुये गर्भिणी सीता को सुमन्त के साथ रथ में बैठाकर वन प्रदेश की ओर प्रस्थान करते है। सीता यात्रा की सुखद अनुभूति पति द्वारा उनका प्रिय किये जाने पर प्रशन्न होती है। लक्ष्मण के द्वारा सम्पूर्ण मार्ग पर कोई भी वृतान्त नही बताया जाता है। परन्तु आने वाली नियति की सूचना सीता के दाहिने नेत्र फडक कर विपत्ति की सूचना देते है। तत्पश्चात रथ गंगा नदी के किनारे पहुंचकर लक्ष्मण सीता को रथ से उतारकर नाव द्वारा दूसरे तट में पहुंचा देते है। तत्पश्चात परित्याग की सूचना सीता जी को देते है। सीता को अपने त्यागे जाने से असहनीय कष्ट होता है। परन्तु इसमें वह अपने पति श्री राम को दोष न देकर अपने ही भाग्य को दोषी मानती है। लक्ष्मण सीता को समझाते है, व वाल्मीकि आश्रम दिखाते हुए अपने आपको राजाज्ञा के वचन में बंधे होने की विवसता स्वीकार करते है। तथा सीता के पैरों में गिरकर अपने द्वारा किये कठोर व्यवहार की क्षमा कर देने की याचना करते है। सीता लक्ष्मण से प्रसन्न होकर बडे भाई के आदेश का अनुरागी होने का आर्शीवाद देती है। तथा अपने तीनो सासों के चरणों में प्रणाम निवेदन कर गर्भ स्थित पुत्र की भी सूचना लक्ष्मण के द्वारा अयोध्या भेजती है। तथा राम हेतु लक्ष्मण के द्वारा भेजे हुए सन्देश मे कवि की अभिव्यक्ति इस प्रकार होती है-

''श्रश्रूजनं सर्वमनुक्रमेण विज्ञापय प्रापितमत्प्रणामः
प्रजानिषेक मयि वर्तमानं सूनोरनुध्यायत चेतसंति।। [39]

''वाच्चस्त्वया मद्वचनात्स राजा वहौ विशुद्वामपि यत्समक्षम्।
मां लोकवाद श्रवणादहासीः श्रुतस्थ कि तत्सदृशं कुलस्य।।[40]

विषाद करती हुई सीता अपने जीवन मूल्य को समझती हुई केवल गर्भस्थ शिशु हेतु जीवन को सुरक्षित रखने का मर्म वचन दोहराती है। सीता लक्ष्मण से राम को सन्देशा भेजती है कि वह अपनी प्रजा एवं तपस्विनी समझकर सदैव मेरी रक्षा करते रहे। लक्ष्मण के जाते ही सीता का करूण कृन्दन पुनः शुरू हो जाता है। उनका रोना सुनकर वाल्मीकि उनके पास पहुंच जाते है। उन्हे देखकर सीता प्रणाम करती है। वाल्मीकि पुत्रवती होने का आर्शीवाद देते है। एवं सीता को बताते है कि तुम्हारे साथ हुए व्यवहार से मैं अपरिचित नही हूं। राम जो स्वयं तीनो लोको के कष्टों को हरते है, वह अपयश के डर से तुम्हारा परित्याग कर स्वयं कष्ट का कारण बन गये है। उनके इस व्यवहार से वाल्मीकि बहुत कुद्व होते है। तुम्हारे ससुर मेरे मित्र है, तथा तुम्हारे पिता अद्वितीय विद्वानों मे से एक है, तथा तुम स्वयं पति व्रताओं में सर्वश्रेष्ठ हो, अतः इसी आश्रम में तपस्वियों के साथ निर्भय होकर निवास करो। सीता आश्रम में कन्दमूल फल खाकर अपने पति के वंश को चलाने की इच्छा से तपस्वनियों की भांति जीवन बिताने लगती है।

इधर अयोध्या वापस पहुंचकर लक्ष्मण ने राम के सामने सीता का सन्देशा प्रस्तुत किया। जिससे राम

को अपार कष्ट होता है। राम अपने धर्म की विवशता बताते हुए संसारिक मोह को त्यागकर प्रजा की सेवा में समर्पित होते है। तथा उन्होने सीता की स्मृतियों को ह्रदयांगम कर दूसरी स्त्री का विचार भी मन में नही आने देते है। अश्वमेघ यज्ञ में राम के वाम अंग में सीता की स्वर्णमूर्ति प्रतिष्ठित होने से सीता के मन में उत्पन्न हुई परित्याग की कसक पूर्णतया से समाप्त हो जाती है। इसके बाद शुत्रघन के द्वारा लवणासुर का वध करके यमुना के किनारे मथुरा नामक नगरी बसायी जाती है। लवणासुर के वध यात्रा के दौरान शत्रुघन एक रात्रि का अतिथ्य वाल्मीकि के आश्रम पर प्राप्त करते है। तभी सीता के दोनों पुत्रों का जातक कर्म लव एवं कुश के द्वारा विधि विधान से किया जाता है। जिससे दोनों बालकों का नामाकरण भी इसी आधार पर होता है दोनों बालकों को सम्पूर्ण वेदवेदान्त की शिक्षा द्ेकर वाल्मीकि रामायण का गान करने मे पारंगत बनाते है। भरत, लक्ष्मण एवं शत्रुघन भी दो-दो पुत्रों के पिता बन गये थे। इधर शत्रुघन भी मथुरा और विदिशा का राज्य अपने दोनो पुत्रों शत्रुघाती एवं सुबाहु को सौपकर वापस अयोध्या आ जाते है। शम्बकू वध का वृतान्त आता है जिसमे एक ब्रहाण के बालक की मृत्यु हो जाने पर वह अपने मरे हुए पुत्र को राजद्वार के सामने रखकर राजा को कोसता है। बालक की अकाल मृत्यु से राम चिन्तित होते है। तब आकाशवाणी लौटकर सरयू तट के किनारे योगबल से शरीर छोड़कर बड़े भाई की प्रतिज्ञा की रक्षा करना तथा राम के द्वारा कुश को कुशावती का राज्य और लव को सारावती का राज्य सौपकर अपने अनुचरों सहचरों एवं अयोध्यावासियों सहित स्वर्गारोहण का वृतान्त वर्णित है। एवं अन्ततः श्लोको में अंशधारी अवतारों को अपने स्वरूप में परिवर्तित हो जाना तथा अयोध्यावासियों के लिए दूसरा स्वर्ग बनाना। उत्तरगिरी हिमालय पर हनुमान को तथा दक्षिणगिरि त्रिकूट पर अपनी कीर्ति स्तम्भ के रूप में स्थापित कर अपने विराट रूप में लीन हो जाते के उपरान्त कथा का समापन हो जाता है। वाल्मीकि और कालीदास की दुखान्त कथा के विपरीत उत्तर रामचरित की मूल कथा सुखान्त है। और इससे परवर्ती कवियों ने इस प्रकरण को सुखान्त य दुखान्त चित्रण करने की एक परम्परा मिल गयी है। लवकुश द्वारा रंग-मंच पर अयोध्यावासियों के समक्ष सीता चरित्र का अभिनय प्रस्तुत हुआ है। जिसे देख सभा सीता के सतीत्व पर विश्वास करने लगती है। हमारे आलोच्य काव्यों में वाल्मीकि के पश्चात उत्तर रामचरित की कथा का विशेष प्रभाव, अतः यहां उत्तर रामचरित की सीता निर्वासिन सम्बन्धी कथा संक्षेप में दी जा रही है।

उत्तर रामचरित :-

उत्तर रामचरित की सीता निर्वासन कथा का प्रारम्भ मंगल उच्चारण से प्रारम्भ होकर राजतिलक में सम्मिलित अतिथियों को विदा करने के उपरान्त वशिष्ट और उनकी पत्नी अरूधंती राज भवनों के साथ श्रंग ऋषि आश्रम में चले जाते है। अयोध्या में केवल राम और सीता का प्रवास होता है। श्रंगऋषि के आश्रम से वशिष्ट का सन्देशा अष्टवक्राचार के द्वारा राम को मिलता है। कि वह अयोध्या की प्रजा का पोषण, सुव्यवस्था के साथ करे। राम के द्वारा अष्टवक्राचार से सन्देशा भेजा जाता है-

''स्नेहं दयां च सौरव्यं च पदिवा जानकी मपि।

आराधनाये लोकनस्य मुऽचतों नान्ति में त्यथा।।'' [41]

लक्ष्मण के द्वारा राम को जन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की चित्रावली दिखाई जाती है। चित्रों को देखकर सीता के द्वारा राम से पुनः वन देखने को अनुनय किया जाता है। सीता के गंगा स्नान और वन देखने की

इच्छा का सम्मान करते हुए राम ने रथ तैयार करने का आदेश दिया। दुर्मख नाम का गुप्तचर राम के समक्ष प्रस्तुत होकर नगर के समाचार अवगत करवाते हुए सर्वत्र शान्ति एवं प्रजा के द्वारा राजा के प्रशंसा का सुन्दर हाल सुनाता है। परन्तु साथ में रावण के घर मे सीता निवास रह चुकने का लोकोपवाद की जन चर्चा को भी सूचित करता है। अतेव राम दुर्मख के द्वारा ही लक्ष्मण को आदेशित करते है कि सीता को रथ में बैठाकर वन में छोड़ दे। तथा शत्रुघन को यमुना तट वासी ऋषि मुनियों को अक्रान्त करने वाला पापी लवणासुर के वध हेतु भेज देते है। दुर्मुख के द्वारा लक्ष्मण के साथ रथ में सीता वन प्रस्थान की सूचना दी जाती है। तदोपरान्त वन देवी और वसन्ती तथा तपस्वनी आत्रेयी के आपसी वार्तालाप के दृश्य में वाल्मीकि आश्रम में दो मेधावी छात्रों की चर्चा की जाती है। जिन्हें ऋषि वाल्मीकि के द्वारा त्रयी विद्या से दिक्षान्त कर सुयोग्य बनाने का कार्य किया जा रहा है। इन तीनों के वार्तालाप में क्रौच के जोडे मे एक का व्याघ्र के द्वारा वध करने की कथा और महर्षि वाल्मीकि के वाणी से अनुष्टुप छन्द स्फुटित होकर रामायण रचना के वृतान्त का प्रसंग भी प्रकट होता है। आत्रेयी के द्वारा ही बताया जाता है। राम ने सीता का लोकोपवाद के भय से वन में छोडवाया था। और अश्वमेघ यज्ञ में पत्नी सीता के स्थान पर स्वर्ण सीता को प्रतिष्ठित करवाया है।

ब्राह्मण के पुत्र के मरने का वृतान्त प्रस्तुत है जिसको जीवित करने के लिए राम पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर दण्डिकारण्ड में तपरत शूद्र शम्बूक का वध करते है। ब्राह्मण का मरा हुआ पुत्र जीवित हो उठता है। दिव्यरूप धारण कर शम्बूक राम के पास उपस्थित होकर महर्षि अगस्त के प्रतिज्ञारत होने की सूचना देता है। लक्ष्मण के द्वारा गर्भवती सीता को वाल्मीकि आश्रम के निकट परित्यागकर जाने के उपरान्त सीता गंगा में कूद जाती है। गंगा और पृथ्वी के द्वारा सीता को पाताल ले जाने का वर्णन कर दो बालकों के जन्म की कथा आती है। एवं ग्यारह वर्ष होने के उपरान्त वाल्मीकि आश्रम में शिक्षाध्ययन हेतु पहुंचा दिया जाता है। राम के जन स्थान पहुंचने की सूचना प्राप्त होते ही गंगा सीता को लेकर गोदावरी के तट पर पहुंचाती है। तथा कहती है लव और कुश की बारही वर्षगाठ पर तुम अपने हाथों से पुष्प एकत्रकर सूर्य की आराधना करने की सलाह दी जाती है। गंगा के द्वारा सीता को अदृश्य रखने का उपाय किया जाता है। राम अपने पुष्पक विमान को उसी जगह उतारते है जहां अदृश्य सीता विद्यमान होती है। बसन्ती के द्वारा सूचना दी जाती है। सूचना को सुनकर राम और सीता को दोनो बच्चें द्वारा आक्रमण की सूचना दी जाती है। सूचना को सुनकर राम और सीता दोनो दुखी होते है। परन्तु सीता का गज सावक विजयी होता है। गज सावक को देखकर सीता को लव और कुश की स्मृति आती है। सीता का वियोग राम के हृदय को भी अहलादित करता है। तभी तमसा भी वहां पहुंचकर सीता निर्वासन करने के लिए राम को धिक्कारती है। राम मूर्छित हो जाते है। तब सीता अपने हाथों के मधुर स्पर्श से राम की चेतना को वापस लाती है। चैतन्य होने के उपरान्त राम बसन्ती को अश्वमेघ यज्ञ के बारे में बताते हुए कहते है, की मैने सीता के बदले स्वर्ण सीता की स्थापना की है। यह जानकर सीता का प्रेम राम के प्रति और अधिक बढ़ जाता है।

जनक कौशिल्या आदि वशिष्ठ और अरूधंती के साथ वाल्मीकि आश्रम पहुंचते है। जो सीता निर्वासन की पीड़ा से दुखी होते है। माता कौशिल्या को निष्कासन की पीड़ा अत्याधिक होती है। वह सीता निर्वासन के उपरान्त राम से बोलना तक छोड़ देती है। अन्य बालकों के साथ लव वहां पहुंचता है। जिसे देखकर उपस्थित सारे लोग

विभिन्न अनुमान पूर्ण तर्क करते है। तभी लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु के संरक्षण में अश्वमेघ यज्ञ का अश्व पहुंच जाता है। जिसे लव के द्वारा बांध लिया जाता है। चन्द्रकेतु के द्वारा घोड़ा छोड़ने हेतु कहने पर लव के द्वारा राम की कटु आलोचना की जाती है। कि ब्राहाण परशुराम का दमन कर और छिपकर बालि की हत्या करने वाले राम कहां के वीर योद्धा है। इस पर लव और चन्द्रकेतु के मध्य घमासान युद्ध होता है। उसी समय शम्बूक वध करने के उपरान्त लौटे राम दोनों के मध्य पुहंचकर युद्ध को बंद करवाते है। चन्द्रकेतु से राम का परिचय मिलने पर लव द्वारा प्रणाम किया जाता है। राम के पूंछने पर लव अपना और कुश का परिचय बताते हुए कहते है। जम्बकास्त्र हमें स्वमेव सिद्व हुआ है। उसी समय कुश भी पहुंचकर राम को प्रणाम करता है। दोनो बालकों को देखकर राम के मन का विश्वास बलवति होता है कि यह दोनो पुत्र मेरे ही पुत्र है। लवकुश के द्वारा राम को सीता और राम का प्रेम गीत सुनाया जाता है। जिसे सुनकर राम की व्याकुलता बढ़ जाती है। तभी वाल्मीकि वशिष्ट, कौशिल्या, आदि रानियां सब के आने की सूचना मिलती है। लक्ष्मण के द्वारा आश्रम में होने वाले काव्य रामायण के नाटक की सूचना दी जाती है। जिसे देखने के लिये राम प्रजा जनों के साथ पहुंच जाते है। नाटक के दृश्य में जैसे ही सीता निर्वासिन का दृश्य आता है। उसे देखकर सीता मूर्छित हो जाती है। पृथ्वी को भी बहुत दुख होता है। वह उत्तेजित स्वर से राम को कटु शब्द कहती है। गंगा के द्वारा समझाकर पृथ्वी को शान्त किया जाता है। तभी जम्बकास्त्र प्रकट होकर राम से बताते है। कि आपके आदेश से मै गर्भस्त्र शिशुवों को प्राप्त हो चुका हूं। नाटक की कथा आगे बढ़ने पर गंगा के द्वारा वाल्मीकि आश्रम में छोड़ने की कथा आने पर लक्ष्मण लवकुश को राम के पुत्रों के रूप में पहचान जाते है। तथा राम से उनका परिचय कहते है। गंगा और पृथ्वी के द्वारा सीता को ले जाते देखकर राम मूर्छित हो जाते है। तभी गंगा और पृथ्वी सीता को लेकर आश्रम में उपस्थित होती है। और सीता को अरून्धती के हाथों में सौंप देती है। अरून्धती के आदेश से सीता राम का स्पर्श करती है। जिससे राम की चेतना वापस आ जाती है। अरून्धती के द्वारा राम से सीता के पवित्र होने की पुष्टि गंगा और पृथ्वी के द्वारा किये जाने की सूचना राम और प्रजा जनों को दी जाती है। सबका समर्थन प्राप्त करने के उपरान्त अरून्धती ने सीता को राम के हाथ सौप देती है। लव और कुश भी वहां आ जाते है। सबका सुखपूर्ण मिलन हो जाता है।

कुन्दमाला, दशावचरित्, अध्यात्म रामायण, आनन्द रामायण में सीता निर्वासिन की कथा मिलती है। अध्यात्म और आनन्द रामायण की कथा की विशेषता ये है कि इसमें सीता त्याग की घटनाएं वास्तविक रूप में नही है। जबकि आनन्द रामायण में एक नये कारण का भी उल्लेख हुआ है। आनन्द रामायण की यह कथा इस प्रकार है।

आनन्द रामायण :-

सीता निर्वासिन कथा परम्परा का आनन्द रामायण में प्रस्तुत वर्णन पूर्णतया नवीन और अन्य रामायणों से भिन्न है। लेखक श्री रामदास जी ने जन्म काण्ड के प्रारम्भ से सीता के उपवन विहार का वर्णन करते हुए सीता के गर्भिणी होने का वर्णन किया है। कथा का प्रारम्भ गर्भावस्था के दूसरे मास का समय व्यतीत होते ही वशिष्ट के द्वारा सीता का पुन्सवन संस्कार कराया जाता है। गर्भ के पांचवे, छटवे माह में जनक आदि की उपस्थित में सीता का सीमान्तोनयन संस्कार सम्पन्न होता है। एक दिन जनक उनकी पत्नी सुमेधा सीता तथा राम एकान्त में बैठकर निर्णय करते है। कि वैदिक मतानुसार प्रसवकाल के समय पत्नी से विरक्त भाव रखने हेतु तथा धोबी धोबिन की व्यर्थ

व्यजंना के अनुरंजन हेतु पुनीता सीता को वाल्मीकि आश्रम भेजने का निर्णय लेते है। तथा पांच वर्ष बाद पुनः वापस बुला लेने का प्रण करते है। श्री राम की योजना अनुसार जनक महर्षि का आश्रम जाकर राम का गोपनीय निर्णय वाल्मीकि को बताते है। एक दिन एकान्त का समय पाकर कौशिल्या ने रामचन्द्र से कहा की सीता को शीघ्र कही अन्यत्र भेज देना चाहिये। तब राम जनक के साथ बनायी अपनी गोपनीय योजना को माता से बताते है। तथा सीता के वियोग से होने वाली पीड़ा को असहनीय कहते हुए पांच वर्ष के अन्दर ही पुनः अयोध्या वापस बुलाने की प्रतिक्षा करते हुए भविष्य में घटने वाली घटनाओं को बताते हुए कहते है। कि अयोध्या में वापस आने के उपरान्त तुम्हें अपनी पवित्रता प्रमाणित करनी होगी। इस प्रकार कवि का सीता वनवास वर्णन एक त्रासदी नही अपितु सुनयोजित योजना प्रतीत होती है।

कथा की परम्परा का निर्वाहन करते हुए कवि ने वाल्मीकि रामायण की ही भांति राम के दरबार का वर्णन किया है। यहां विजय नामक गुप्तचर पहुंचकर राज्य में सर्वत्र शान्ति और सुशासन का वर्णन करता है। परन्तु धोबी-धोबिन की कथा का वर्णन करते हुए गुप्तचर बताता है कि सीता को पुनः पत्नी बनाकर अयोध्या ले आने की यत्र-तत्र भर्तस्ना होती है। उपरोक्त संवाद के ज्ञात होते ही राम अपने मंत्रियों से मन्त्रणा कर लक्ष्मण को बुलाते है। एवं सीता निष्कासन का आदेश देते है। तथा वन विसर्जन के उपरान्त सीता की दाहिनी भुजा काट लाने का भी आदेश देते जिससे वे अयोध्यावासी को सीता परित्याग का विश्वास दिला सके।

आगे कैकेयी और राम का संवाद प्रसंग वर्णित है। जिसमें कैकेयी के द्वारा सीता से दिवाल पर रावण का अंगूठा बनवाकर शेष सम्पूर्ण चित्र कैकेयी के द्वारा ही बनाया जाता है। तथा राम से सम्पूर्ण चित्र सीता के द्वारा बनाये जाने की कुटिल सूचना दी जाती है। कैकेयी की कुटिलता को समझकर राम गुप्तचर की सूचना एवं सीता अपवाद के लिये गये निष्कासन निर्णय से कैकेयी को अवगत करवाते हुए लक्ष्मण के द्वारा हाथ काट लाने के निर्णय से अवगत करवाते है। तथा पुनः सीता से कैकेयी के महल का वृतान्त राम द्वारा बताया जाता है। तथा सीता के आश्चर्य मयी उद्घोष से रावण के पैर का अंगूठा मात्र दिवाल में अंकित करने की स्वीकरोक्ति करते हुए शेष अंकित चित्र से अनभिज्ञता प्रकट की जाती है।

राम के चले जाने पर कैकेयी बहुत प्रसन्न होती है। कि अब सीता के वियोग में दुखी राम राज्य छोड़ देगा, लक्ष्मण भी उनके साथ रहने लगेगे और मेरे पुत्र भरत को राज्य मिल जायेगा। इस कथन को पढ़कर लगता है कि सीता वनवास कैकेयी के कुचक्र का परिणाम है उपरोक्त कथा वृतान्त के उपरान्त कथा परम्परा की जोड़ते हुए देवी सीता का वन प्रदेश देखने की इच्छा करना ऋषियों-मुनियों के आश्रम में घूमने की इच्छा व्यक्त करना एवं श्री राम के द्वारा लक्ष्मण के साथ गंगा तट भेज देने का संकल्प व्यक्त करना प्रस्तुत है। प्रातः रथारूढ़ कराकर लक्ष्मण सीता के साथ यात्रा प्रारम्भ कर गंगा के किनारे महर्षि वाल्मीकि के आश्रम के पास पहुंचते है। वहां देवी सीता को रथ से उतारकर लक्ष्मण करूण स्वर में सीता जी से कहते है कि मां श्री राम ने लोकोपवाद के भय से आपका परित्याग कर दिया है। और आपको वन में छोड़ देने की आज्ञा दी है। अस्तु मै आपको यही छोड़कर श्री राम की आज्ञा का पालन करूंगा। इसमें मेरा कोई दोष नही है। सीता को छोड़कर लक्ष्मण वापस अयोध्या के लिये प्रस्थान कर देते है। उधर वाल्मीकि जी को सीता के आगमन की सूचना प्राप्त होते ही वह पालकी पर आरूढ़ कराकर देवी सीता को

अपने आश्रम में ले जाते है। आश्रम में मुनि पत्नियां सीता को सुख सुविधाओं का विशेष ध्यान रखती है। देवी सीता को अयोध्या मे उपलब्ध समस्त सुविधाएं आश्रम में भी प्राप्त होती है।

जन्म काण्ड में लवकुश के जन्म का वर्णन है। लक्ष्मण देवी सीता को छोड़कर वापस जाते हुये सोचते है कि मैने श्री राम की आज्ञा के अनुसार देवी सीता को वन विर्सजित कर दिया है। परन्तु दूसरी आज्ञा का पालन न कर पाने के कारण चिन्तित होते है। और राम के समक्ष अपने आपको प्रस्तुत करने की अपेक्षा आत्मदाह करने का निर्णय लेते है। लक्ष्मण के ऐसे निर्णय से भगवान श्री बृह्मा जी विश्वकर्मा को भेजते है। जो लकडहारा बनकर लक्ष्मण के पास पहुंचता है। और लक्ष्मण से चिता बनाने का कारण पूछंने पर लक्ष्मण के द्वारा राजाज्ञा उल्लघंन हो जाने का कारण बताया जाता है। लक्ष्मण की बात को सुनकर विश्वकर्मा जी के द्वारा तत्काल देवी सीता का हाथ बनाकर लक्ष्मण को दिया जाता है। जिसे लेकर लक्ष्मण निश्िंचत होकर अयोध्या पहुंचते है। और राम को दे देते है। तथा पुनः रामाज्ञा के अनुसार वह भुजा कैकेयी और प्रजा जनों को लक्ष्मण के द्वारा दिखाई जाती है। जिसमें कैकेयी की अति प्रशन्नता का वर्णन किया गया है।

कुछ समय के उपरान्त राम का कुश के जन्म का समाचार ज्ञात होता है। श्री राम लक्ष्मण के साथ पुष्पक विमान से वाल्मीकि आश्रम पहुंचते है। तथा नवजात शिशु का जाति संस्कार करते है। आश्रम में उपस्थित जनक के द्वारा श्री राम का सत्कार किया जाता है। तथा बालक का नामकरण भी राम की उपस्थिति में महर्षि के द्वारा किया जाता है। श्री राम अपने आश्रम पहुंचने के समाचार को गोपनीय रखने की राजाज्ञा प्रसारित कर उल्लघन करने वाले को यथोचित दण्ड देने की ताडना देकर वापस अयोध्या चले जाते है। राम के द्वारा अश्वमेघ यज्ञ करने का निश्चय किया जाता है। जिसमें पत्नी के स्थान पर कभी स्वर्ण की तो कभी कुश की सीता का निर्माण कराकर यज्ञ सम्पन्न किया जाता है। एवं गंगा जी के तटपर यज्ञशाला का निर्माण करवाया जाता है। यज्ञ के अश्व रक्षा की व्यवस्था का भार शत्रुघन को सौपते है। शत्रुघन पुष्पक विमान में आरूढ होकर अश्व के साथ यात्रा किया करते है। और जब श्री राम ने निन्यानवे यज्ञ पूर्ण हो जाते है तो अन्तिम सौवें यज्ञ की तैयारी हेतु उद्यत होते है।

इधर आश्रम में कुश का पालन पोषण महर्षि के सानिध्य में पूर्ण संस्कारिक ढंग से होता है। जनक व सुमेधा के द्वारा भी शिशु के पालन में पूर्ण सहयोग प्रदान किया जाता है। इस प्रकार आश्रम में कुश की शिक्षा-दीक्षा होती है। तदोपरान्त लव की उत्पत्ति कथा का वर्णन है। जिसमें देवी सीता के द्वारा कुश को अपने साथ जल भरने हेतु जाने में ले जाने के कारण वाल्मीकि कुश का पलना खाली देखकर किसी हिंसक पशु के द्वारा आहार बना लिये जाने के विचारों से भयातुर हो उठते है। तथा सीता की वेदना की कल्पना मात्र से विचलित होकर पुष्प के लव से अपने तपोवल के द्वारा लव की सृष्टि करते है। जो कुश का अनुरूप होता है। सीता वापस आकर कुश के समान लव के पलने में दूसरे बालक को पाकर आश्चर्य चकित होती है। और महर्षि से उस बालक के सम्बन्ध में पूंछती है। तब वाल्मीकि स्वयं आश्चर्य चकित होकर मन का सारा वृतान्त बताते हुए लव की सृष्टि का कारण स्पष्ट करते है। लव का प्रदुर्भाव होने के उपरान्त मुनि ने लव का जाति संस्कार समयावधि के अन्दर अनेकानेक विद्याओं से दीक्षित कर परिपूर्ण कर दिया धनुर्विद्या से पारंगत होकर दोनो बालक गायन विद्या की महारत प्राप्त कर वाल्मीकि द्वारा रचित राम चरित का गान करने लगे। वीणा के मीठे तानकी मधुरता से समस्त वृहाण्ड को अद्वितीय बना देते है।

सीता के द्वारा महर्षि वाल्मीकि से ऐसा वृत पूछती है। जिसमें कमल के फूलों की आवश्यकता होती है। जिनकी उपलब्धता अत्याधिक दुष्कर थी, परन्तु राम के दूतों के द्वारा रक्षित अयोध्या वाटिका के तालाब मे ही पर्याप्त पुष्प होते है। फैसले को सुनकर सीता वात्सल्य स्नेह से रक्षित कर पुष्प लाने की अनुमति देती है। प्रथम दिन में पुष्प प्राप्त करने में कोई परेशानी नही होती और दूसरे दिन रक्षक वहां उपस्थित थे, जो लव को निर्भीक भाव से पुष्प तोडते देख लव से उसका परिचय पूछते है। लव स्वयं को महर्षि का सेवक बताते है। जिस पर वह क्रुद्व होकर लव का मार्ग रोकता है। लव के हस्त लाघव प्रयोग मात्र से आगे आये हुए सैनिक राम के समक्ष अश्वमेघ यज्ञशाला में जा गिरत हैं। लव के पराक्रम से आह्त होने के उपरान्त सैनिकों ने राम से कह सुनाया, राम को आश्चर्य होता है। उन्होने सरोवर की रक्षार्थ सहस्त्रदूतों को पुनः नियुक्त किया। अगले दिन लव अपनी प्रतिज्ञानुसार पुनः पुष्प लेने सरोवर जा पहुंचता है। और लव के द्वारा अपने रण कौशल और प्रहारों से उन्हें विदीर्णकर विजय पूर्वक पुष्प ले जाया जाता है। राम ने कई दूतों को महर्षि के आश्रम भेजकर सन्देशा भिजवाया की लव हमारा अपराधी है, उसे आप हमारे पास भेज दीजिये य स्वयं उसे अपने साथ लेकर यज्ञ मंडप में उपस्थित होइए वाल्मीकि के द्वारा शिष्यों सहित उपस्थित होने का आश्वासन पाकर दूत वापस लौट गये। इस प्रकार लव के अतुल सौर्य के द्वारा सीता ने अपना व्रत पूर्ण किया। निन्यानवें यज्ञों के पूर्ण के उपरान्त यज्ञ में अश्व को छोड़ा गया। जो शत्रुघन के द्वारा रक्षित होता है वाल्मीकि के साथ यज्ञ मण्डप के कुछ दूर पर्ण कुटी बनाकर लव कुश एवं सीता ठहरे हुए थे। वाल्मीकि ने दोनो कुमारों को ऋषि भेष धारण कर रामायण गान करने की आज्ञा देते है। आगे की कथा वाल्मीकि रामायण के अनुसार चित्रित है। रामायण गान सुनने के उपरान्त सरोवर के एक रक्षक ने लव को पहचानकर श्री राम से बताया की यह बालक वही अशिष्ट बालक है जिसने आपके रक्षित तालाब से बलात् ही पुष्प तोड़कर ले जाया करता था। तथा सीता परित्याग के कारण आपकी बडी निन्दा भी करता था। इसलिये महाराज यह अवश्य दण्ड का भागी भी है। स्वरलय से रामायण का गान करने वाले दोनो बालकों पर राम प्रसन्न होकर दण्ड मुक्त कर देते है। परन्तु पुरस्कार राशि लेने से दोनो बालको द्वारा सर्वथा इन्कार कर देते है। दूसरे दिन गंगा तट पर खेलते हुए दोनो बालकों ने अश्वमेघ का घोडा बांध लेते है। शत्रुघन द्वारा सैनिक भेजे जंाते है। परन्तु लव कुश के सामने वह नही टिक पाते। यह समाचार जब राम ने सुना तो शत्रुघन के सहातार्थ हनुमान, सुग्रीव के साथ विशाल सेना भेज दिया। इस विशाल सेना को देखकर लव द्वारा मोहनास्त्र से सम्पूर्ण सेना को मोहित कर भरत और हनुमान जी को तथा सुग्रीव को मोहित अवस्था में सीता के सम्मुख ले जाते है। यह समाचार पुनः राम के पास पहुंचता है। तो वह लक्ष्मण को एकान्त में बुलाकर रावण से भी पराक्रमी मान चिन्तित होते है। लक्ष्मण राम को अश्वस्तकर युद्ध स्थल पहुंचते है।

लव के साथ लक्ष्मण ने सम्पूर्ण शक्ति से युद्ध किया। परन्तु लव पर काबू नही पा सके। अन्ततः लक्ष्मण ने ब्रह्मास्त्र के द्वारा लव को बांधकर राम के पास ले जाते है। रामचन्द्र लव को पहचानकर भी उसे मृत्यु दण्ड देने की आज्ञा देते है। लक्ष्मण राम को बताते है कि इसे अस्त्रों के द्वारा नही मारा जा सकता हमने और भरत जी ने प्रयास किये परन्तु एक भी चोट का निशान लगाने में असफल रहे। लक्ष्मण द्वारा लव से ही उसकी मृत्यु का कारण ज्ञात किया जाता है। लव ने अपनी मृत्यु का कारण जल से सींचे जाना बताया जाता है। जल से सीचे जाने पर उसकी लम्बाई विशाल काय हो जाती है, और वह पुनः युद्ध हेतु उद्वत होता है। कुश को ज्ञात होने पर वह अपना

धनुषवाण लेकर तत्काल यज्ञशाला पर पहुंचकर युद्ध के लिए राम को ललकारता है। कुश के साथ युद्ध करने पुनः लक्ष्मण आते है। परन्तु समस्त अस्त्र व्यर्थ हो जाते है। कुश लक्ष्मण के ऊपर गरूणास्त्र का प्रयोग करता है। जिसमें लक्ष्मण के प्राण रक्षार्थ राम उसका निवारण करते है। लक्ष्मण रथ से मूर्छित होकर गिर पडते है राम और कुश के बीच पारंगत अस्त्रों का तुमुल युद्ध होता रहा। कुश के हस्तलाघव को देखकर जन समुदाय विषमित हो जाता है। राम महर्षि के पास अपने मंत्री को भेजकर दोनो बालकों का परिचय ज्ञात करवाते है। महर्षि के द्वारा प्रतिउत्तर में कहला भेजा जाता है। दोनों शिष्य कल रामायण का गान करने हेतु दरबार में आयेगे, तब दोनो का परिचय स्वयंमेव ज्ञात हो जायेगा। दूसरे दिन दरबार में पुनः रामायण गान होता है। उसी समय हनुमानादि आ जाते है। जिससे भेद स्पष्ट हो गया कि ये दोनो अतुलनीय योद्धा कोई अन्य नही सीता देवि के ही पुत्र है। तब श्री राम ने लव कुश को दरबार से विदा करके चरो द्वारा मुनिको संदेशित करतें है कि स्वयं देवी सीता अपनी पवित्रता को स्पष्ट करे। एवं दूसरे दिन विराट सभा के आयोजन के साथ सीता महर्षि वाल्मीकि के साथ उस सभा में स्वयं को प्रस्तुत कर शपथ ग्रहण करती है। शपथ के उपरान्त पृथ्वी से दिव्य सिंहासन प्रकट होता है। तथा सीता को आरूढ़कर पाताल मार्ग में धीरे-धीरे प्रविष्ट होने लगता है। जिसमें राम पुनः पृथ्वी से सीता को लौटा देने के लिये कहते है। विवाह के समय मे सीता का कन्यादान नही हुआ था। इस समय कन्यादान कर अपनी सीता को वापस मागते है। परन्तु पृथ्वी के न सुनने पर राम का क्रोध करना, तथा लक्ष्मण से धनुष लाने के हेतु कहना, पृथ्वी से अपनी सीते को बलात् ही छीन लेने हेतु तैयार होते है। राम के क्रोध से विचलित पृथ्वी ने सीता को वापस कर दिया। तथा अनुनय विनय कर राम का क्रोध शान्त किया तथा अन्तर्ध्यान हो गई राम एवं सीता सानन्द अयोध्या नगरी में सुख पूर्वक निवास करने लगे।

अध्यात्म रामायण :-

अध्यात्म रामायण मे वर्णित सीता निर्वासन की कथा परम्परा इस प्रकार से है। अध्यात्म रामायण के अनुसार एक बार श्री राम सीता जी के साथ क्रीडावन में बैठे हुए थे। वहां देवी सीता ने देवताओं के द्वारा अपनी स्तुति किये जाने के सम्बन्ध में श्री राम को बताया कि देवताओं ने आपको वापस बैकुण्ठ लोक में बुलाने का निवेदन किया है। यदि मै आपके साथ रहूंगी तो आप कभी राज्य को छोड़कर बैकुण्ठ वापस लाने के लिए सर्वप्रथम आपको आना होगा। सीता जी के इस कथन को सुनकर श्री राम भविष्य का पूर्वाभास करवाते हुए कहते है कि लोकोपवाद के कारण मुझे तुम्हारा परित्याग करना पड़ेगा। तब तुम्हें वाल्मीकि आश्रम में निवास करना होगा आश्रम प्रवास के दौरान तुम्हारे दो पुत्रों लव कुश का जन्म होगा। तदोपरान्त हमारा पुर्नमिलन होगा, और जिस धरा की गोद से तुम अवतरित हुई हो उसी धरा के अंक में विलोपित होकर तुम बैकुण्ठ गमन करोगी। तुम्हारे प्रस्थान के उपरान्त भी शीघ्र बैकुण्ठ पहुंचूगा।

''भूमेर्विवर मात्रेण बैकुण्ठ यास्यासिद्रुतम् ।

पश्चादहं गमिष्याभिएव एव सुनिच्श्रयः।। [42]

अध्यात्म रामायण के अनुसार श्री राम राजदरबार में सभा जनों के मध्य हास्य विनोद कर रहे है। तभी विजय नामक गुप्तचर प्रवेश करता है। राम उससे उनके भाइयों माताओं व सीता के विषय में व पुरवासियों का अभिमत पूंछते है। श्री राम के पूछने पर गुप्तचर कहता है।

''किन्तु हत्वा दशग्रीवं सीतामहत्य राघवः।

अमर्ष पृष्ठतः कृत्वा एवं वेश्म प्रत्यपादयत्।। [43]

''अस्माकमपि दुष्कर्म पोषितां भर्षणं भवेत्।

यादगभवति वै राजा तादृश्यों नियत प्रजाः।। [44]

प्रजा का कथन है कि आपके द्वारा वस्तुतः बडे दुष्कर कार्य किये गये है। परन्तु रावण का वध करके उसके द्वारा अपहरित सीता को घर लाकर अपने साथ राज भावन में रखना निन्दनीय कार्य है। राम द्वारा सीता को इस प्रकार पुनः स्वीकार करने से हमें भी अपने परिजनों के दुश्चरित्र कार्यो को सहना पडेगा। क्योकि जैसा राजा करता है। प्रजा उसी का अनुशरण करती है। गुप्तचर की इस बात का समर्थन सम्पूर्ण दरबार ने किया। जिसे सुनकर श्री राम ने लक्ष्मण को बुलाकर सीता को वन में स्थिति वाल्मीकि आश्रम के पास छोड़ आने का आदेश दिया।

लक्ष्मण जी श्री राम की आज्ञापाकर सुमन्त्र के साथ सीता जी को रथ में बैठकार वन में ले जाते है और वाल्मीकि आश्रम के निकट छोड़ देते है। सीता जी से कहते है कि श्री राम ने लोकोपवाद के भय से आपको त्याग दिया है। इसमें मेरा कोई दोष नही है। लक्ष्मण के इस कथन पर सीता जी द्रवित होकर विलाप करने लगती है। महर्षि वाल्मीकि भविष्य में घटने वाली घटनाओं का पूर्वानुमान कर स्वयं सीता जी को अपने साथ आश्रम ले जाते है। और अपना आश्रय देते है। सीता मुनि पत्नियों के सानिध्य में आश्रम में निवास करने लगती है।

कथा का उत्तरार्द्ध छठवें सर्ग में लवणासुर का शत्रुघन के साथ युद्ध और वध का वर्णन है। साथ ही वाल्मीकि आश्रम पर सीता जी के दो पुत्रों के जन्म की कथा व उनकी सम्पूर्ण शिक्षा दीक्षा से लेकर विद्याध्ययन महर्षि वाल्मीकि के द्वारा की जाती है। एवं रामायण काव्य के सम्पूर्ण श्लोक पढ़ाकर कंठास्थ करा दिये जाते है। प्रायः दोनो सुन्दर कुमार वीणा बजाते हुए स्वर लय के साथ रामायण महाकाव्य का गान करते हुए वन में विचरण करते थे। इस प्रकार ऋषियों मुनियों के मध्य प्रशंसा के पात्र बनकर दोनो बालकों ने बहुत समय तक आश्रम में निवास करते है। श्री राम ने अपनी पत्नी देवी सीता की अनुपस्थिति में उनकी स्वर्ण मूर्ति बनवाकर बडी-बडी दक्षिणा वाले यज्ञ व अश्वमेघ यज्ञ किये। जिसमें यज्ञशाला का उत्सव देखने के लिए देशदेशान्तरों से ऋषि, मुनि, आचार्य, क्षत्रिय वैश्य, आदि आये थे। इनमें महर्षि वाल्मीकि के साथ में लव कुश भी यज्ञशाला में उपस्थित हुए-

''वाल्मीकिरपि सद्ग्रहा गायन्त्रों तौ फुशीलवौ।

जगाम ऋषिवाटस्य समीपं मुनिपुडवः।। [45]

यज्ञशाला में महर्षि वाल्मीकि लवकुश एवं मुनि समुदायों के बीच कई प्रकार के कथा आख्यानो की चर्चा होती है। लव और कुश को ज्ञानोपदेश देते हुए महर्षि कहते है कि तुम दोनो नगर के विभिन्न मार्गो चौराहो पर अपनी गान विद्या के द्वारा रामायण महाकाव्य का स्वर एवं लय से गान करते हुए विचरण करो। यदि राजा श्री राम स्वयं सुनने की इच्छा व्यक्त करते तो उनके सामने भी अवश्य गाना। गुरू की आज्ञा मानकर दोनों शिष्य लव और कुश अयोध्या नगर के विभिन्न मार्गो तथा सार्वजनिक स्थलों में श्री राम के पूर्व चरित्र का गान करते हुए विचरण करने लगते है। उन बालको की निराली गान विधि को सुनकर अयोध्यावासी कौतूहल वश सुनने लगते है। श्री राम दोनो बालकों की गायन विद्या से परिपूर्ण कथा को सुनने के हेतु उत्कंठित हो उठते है। दोनो बालकों को राजदरबार

में बुलवाया जाता है। अपने सामने दोनो बालकों को देखकर श्री राम स्वयं आश्चर्य चकित हो जाते है जो श्री राम के सदृश्य ही स्वरूपवान थे। दरबार में उपस्थित व्यक्तियों ने भी विस्मय होकर इस समानता के प्रति आपस में बाते करने लगते है। बल्कल् वस्त्र धारण किये हुए दोनो मुनि कुमारों ने पूर्व राम चरित्र का मधुर-मधुर औलाकिक गान प्रस्तुत किया। गान के समापन के उपरान्त श्री राम ने भरत को दोनो बालकों के लिए दस सहत्र स्वर्ण मुद्रावों का पारितोषिक देने हेतु आदेशित किया। परन्तु दोनो बालकों ने इस परितोष को लेने से सर्वथा इन्कार कर दिया। एवं राम से कहा कि महाराज इसे अन्यथा न समझे क्योकि हम वनवासी मुनिकुमार कन्दमूल फल में अपने जीवन का निर्वाह करने वाले है। हमें धन की आवश्यकता क्यों होगी। तदान्तर वह दोनो वापस यज्ञशाला स्थित पर्ण कुटी में महर्षि वाल्मीकि के निकट चले आये। लव कुश के उस आलौकिक एवं मधुरगान से जैसे राजा राम के अन्तस्तल को हिलाकर रख दिया था। लव कुश को देखने के उपरान्त वे समझ चुके थे कि दोनों पुत्र देवी सीता के ही पुत्र है। तथा महर्षि वाल्मीकि के साथ आये हुए है। राम शत्रुघन, हनुमान, भरत और लक्ष्मण को आदेश देते है कि देव तुल्य मुनि श्रेष्ठ वाल्मीकि के पास उनकी पर्णशाला में जाकर उन्हें आदर सहित सीता एवं लव कुश के साथ यहां लेकर आओं जिससे इस सभा में उपस्थित जनसमूह के सामने देवी सीता सपथ खाकर स्वयं को निष्कलंक घोषित करे। श्री राम का आदेश पाकर अंगद विभीषण आदि सब आश्चर्य चकित होते हुए महर्षि वाल्मीकि के समीप राम का सन्देश व आशय स्पष्ट करते है। श्री राम का सन्देश पाकर महर्षि वाल्मीकि ने तत्क्षण उपस्थित होने की स्वीकारोक्ति एवं देवी सीता निष्कलंक निष्पाप होने की पुष्टि करते है। कल ही वह जनसाधारण के सामने सपथ गृहण करेगी। तथापि स्त्री के लिए पति ही सबसे बडा देवता होता है-

''योषिंता परमं दैवं पतिरेव न संशयः।
तच्छुत्वा सहसा गत्वा सर्वे प्रोचुर्मुनेर्वचः।। [46]

वाल्मीकि का सन्देश प्राप्त करके आये हुए दूत तत्क्षण वापस लौटकर श्री राम को बताते है कि देवी सीता कल सभागार में प्रस्तुत होकर जन सामान्य के सामने अपने निश्कलंक होने की सपथ गृहण करेगी। तदान्तर दूसरे प्रातः श्री राम के अनुरोधानुसार जनसाधारण बृाह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, महर्षि एवं वानरों के समूह देवी सीता के सपथ गृहण को देखने के लिए उपस्थित हुए थे।

उपस्थित जन साधारण की सभा में महर्षि वाल्मीकि अपने साथ देवी सीता को लेकर उपस्थित होते है। वाल्मीकि ने श्री राम के सम्मुख पहुंचकर निवेदन किया की महाराज ये नारी जो मेरे साथ में सभा स्थित में उपस्थित हुई है। वह धर्मपरायणाः निष्कलंकनी देवी सीता आपकी धर्म पत्नी है। कुछ समय पूर्व आपने इन्हें लोकोपवाद से डरकर मेरे आश्रम के समीप छोड़ दिया था। आज इस सभा में प्रस्तुत होकर जन सामान्य के सामने अपना विस्वास दिलाना चाहती हैं। आप इन्हे आदेश दीजिए। मेरे साथ आये हुए वल्कल वस्त्रधारी दोनो मुनिकुमार लव और कुश है। जो देवी सीता के गर्भ से एक साथ उत्पन्न हुए है। मै सत्य कहता हूं कि यह दोनो आपकी सन्तान है। यदि देवी सीता में कोई दोष हो तो मुझे वर्षो से की हुई तपस्या का कोई फल प्राप्त न हो। श्री राम ने वाल्मीकि के ऐसे कथन को सुनकर कहा, हे मुनि श्रेष्ठ देवतुल्य महर्षि वाल्मीकि मुझे आपके वचनों पर सर्वथा विश्वास है क्योकि देवी सीता ने देवताओं के समक्ष अपनी पवित्रता की कठिन परीक्षा दी थी जिसके कारण ही मैने इन्हे अपने

सानिध्य में राजभवन में रखा था। सर्वथा पवित्र देवी सीता को निष्पाप होते हुए भी मैने लोकोपवाद के डर से त्याग दिया था। मेरे इस अपराध को क्षमा करे। उपस्थित प्रजाजनों के समक्ष देवी सीता ने हाथ जोड़कर कहा कि यदि मैने श्री राम के अतिरिक्त अन्य पुरूष का चिन्तन मन में नही किया हो तो माता पृथ्वी मुझे अपनी शरण दे। देवी सीता जी के इतना कहते ही भूमि तल से सूर्य की ज्योति धारण किये हुए अति अदभुत दिव्य सिंहासन प्रकट हुआ जिसमे माता पृथ्वी सीता को प्रेम पूर्वक बाहुबल में आबध्दकर उनका स्वागत किया तथा सिंहासन पर बैठा दिया। उसके पश्चात सिंहासन पर बैठे बैठे सीता ने स्वयं को रसातल में समाविष्ट कर लिया। उपस्थित जन सामान्य देव नाग, वानर चेतना शून्य होकर सीता जी का भूमि प्रवेश अद्भूत दृष्टि से देखते रह गये।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सीता निर्वासन के रूप में लोकापवाद की विशेष चर्चा है।

सीता निर्वासन के कारणों में रजक प्रसंग का भी विशेष योगदान है। लोकापवाद के रूप में चर्चित इस व्यक्ति को बाद में रजक य धोबी कहा गया है। जिसका उल्लेख वृहत कथा एवं कथा सरित्सागर में सुरक्षित है। कथा सरित्सागर की संक्षिप्त कथा इस प्रकार है। एक दिन अपने नगर में गुप्तवेश में घूमते हुए राजा ने देखा कि एक पुरूष अपनी स्त्री को हाथ से पकड़कर अपने घर से निकाल रहा है। और यह दोष दे रहा कि तू दूसरे के घर गई थी। इस पर वह स्त्री कहती है राम ने सीता को राक्षस के घर रहने पर भी नही छोडा यह मेरा पति राम से बढ़कर है क्योकि यह मुझे बंधु के गृह जाने पर ही अपने घर से निकाल रहा है। यह सुनकर राम को बहुत दुख हुआ और उन्होने लोकापवाद के भय से गर्भवती सीता को वन में छोड दिया। [47]

इसी का प्रभाव श्री मद् भागवत में दिखाई देता है। छद्म वेशधारी राम को पति पत्नी के माध्यम से लोकापवाद की चर्चा सुनकर गार्भिणी सीता का परित्याग वाल्मीकि आश्रम में लवकुश जन्म एवं राम दरबार में लवकुश को सौप सीता का पृथ्वी विवर में प्रवेश की घटनायें वर्णित है। [48]

पदम पुराण में सीता त्याग का अन्य कारण दिया गया है।

पद्म पुराण :-

पद्म पुराण के अनुसार रामकथा परम्परा में 95 पर्व से लेकर 109 पर्व तक कथा वर्णित है। यहां पर सीता निर्वासन के पूर्व स्वयं सीता दुःस्वप्न देखती है और स्वप्न के बारे में राम को बताया तब राम शान्ति के हेतु भगवन जिनेन्द्र की अर्चना कर महेन्द्रोदय उद्यान पर एकत्रित विशिष्ट प्रजाजन राम से कुछ निवेदन करना चाहते है। परन्तु उनका साहस कुछ कहने के लिए सामर्थ नही हो पाता है। परन्तु एकत्र प्रजाजन में से कुछ विशिष्ट लोग राम के समक्ष साहस कर सीता के सम्बन्ध में प्रचारित हो रही लोक निन्दा का वर्णन करते ऐसे व्यवहार को कोई दोष नही है। क्योकि राजा जैसा करता है उसी का अनुशरण प्रजा करती है।

''किं च याहशमुर्वीशः कर्म योगं निषेवेत।
स एव सहतेऽस्याकमपि तथा तुवर्तिनाम्।। [49]

प्रजाजनों के अनुरोध सुनकर रामचन्द्र अन्तः मन से अत्यधिक क्लान्त हो उठते है तब लक्ष्मण को बुलाकर सीता अपवाद का सारा वृतान्त बताते है। मिथ्या अपवाद पर लक्ष्मण को अत्यधिक क्रोध आता है। मिथ्या भाषियों के शील के समस्त गुणों को धारण करने वाले राम लक्ष्मण को शान्तकर लोकोपवाद के भय से सीता का

परित्याग करने का निश्चय करते है। तदोपरन्त कृतान्तवक्त्र सेनापति को बुलाकर उनके साथ सीता को जिन मन्दिर दिखाने के बहाने अटवी (जंगल) में भेज देते है। अटवी में पहुंचकर कृतान्तवक्त्र ने अपनी पराधीन वृत्तिपर अत्याधिक पश्च्ाताप करता है। तथा गंगा को पार करने उपरान्त सीता को रामचन्द्र का आदेश सुनाता है। आदेश के वज्राघात से सीता भूमि पर मूर्छित होकर गिर जाती है। पुनः होश आने पर कृतान्तवक्त्र के द्वारा राम को सन्देश देती है। कि जिस तरह लोकोपवाद के भय से मेरा परित्याग किया है, उस प्रकार कभी जैन धर्म को नही छोड देना। सीता के विलाप को सुनकर पुण्डरीकपुर नरेश जो सैन्य के साथ मार्ग से गुजर रहे थे सीता के पास पहुंचते है। वजृजंघ को सीता उन्हें चोर समझकर भयभीत हो जाती है। तथा अपने आभूषणादि उतारकर देने लगती है। परन्तु राजा वजृंजघ के सैनिक सीता को राजा का परिचय देते है। तब सीता वजृजंघ को अपना परिचय देकर अपने साथ घटित सारा वृतान्त बताती है। भामण्डल की बहेन दशरथ की पुत्र वधू और राम की पत्नी सीता हूं। सीता का करूण वृतान्त सुनकर राजा वजृजंघ सीता को प्रबोधित कर अपनी धर्म बहिन स्वीकार कर आदर के सहित पुण्डरीक पुर ले आता है। धर्म मर्मज्ञ राजा वजृजंघ की सान्त्वना से सीता को धैर्य मिलता है।

कृतान्तवक्त्र सेनापति सघन अटवी में सीता को छोड़कर वापस अयोध्या राम के सम्मुख पहुंचने पर राम उससे सीता का सन्देश पूछतें हैं, सेनापति के द्वारा सीता का सन्देश राम से बताया जाता है। वजृजंघ के राजमहैल में सीता के गर्भ से दो पुत्र अनंगलवण और लवणाकुंश की उत्पत्ति होती है। दोनो सुन्दर बालक विद्याध्यन की अवस्था सिद्धार्थ नामक एक प्रसिद्ध शुद्ध ह्रदय क्षुलल्क राजा वजृजंघ के घर आता है। वो विविध महाविद्याओं का ज्ञाता था। उसने दोनो बालकों को शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया। थोड़े ही समय में क्षुलल्क ने शस्त्र-शास्त्र एवं ज्ञान विज्ञान की कलाओं और गुणों की महारथ हासिल करा दी। दोनो बालक अपने सत्कर्मो व मधुर वचनों से समग्र भू मण्डल पर प्रसिद्धि प्राप्त करते है। राजा वज्रृजंघ ने दोनो कुमारों लवण का विवाह अपनी रानी लक्ष्मी से उत्पन्न शशि चूला नाम की पुत्री को अन्य वन्तित कन्याओं के साथ देने का निश्चय किया। अंकुश का विवाह अमृतवती रानी की पुत्री कनकमाला से, तब उसने राजा पृथु से वार्ता करने हेतु दूत प्रस्ताव भेजते है। लेकिन राजा पृथु विवाह का प्रस्ताव अस्वीकार कर दूत का अपमान करते है। राजा वजृजंघ क्रुद्ध होकर अपने पुत्रों और सेना के साथ युद्ध हेतु प्रस्थान कर देता है। राजा पृथु ने शत्रु की सेना लवण और अंकुश के साथ युद्ध कौशल से शत्रु की सेना का पराभव करते है। दोनो कुमारों की आक्रान्तक युद्ध शैली से शत्रु राजा पृथु भी लवण और अंकुश के द्वारा कैद कर लिया जाता है। शत्रु वृजजंघ के साथ मित्रता स्थापित कर अपनी कन्या का विवाह अंकुश के साथ करता है। तब अपनी चतुरंगी सेना लेकर दिग्विजय करते हुए कुबेरकान्त को जीतकर आगे बढ़ते है। तथा लम्पाक देश के एककर्ण नामक राजा को नौकाओं द्वारा जाकर अपने अधीन बनाते है। तथा पृथ्वी के बहुत बडे भूभाग मे अपना अधिपत्य जमा लेते है। हजारों हजार राजाओं को अपने आधीन कर पैण्डरीकपुर अपनी सीता के पास वापस लौट आये।

इधर नारद कृतान्तवक्त्र सेनापति से सीता परित्याग के स्थान को पूछकर क्षुल्लक का भेष धारण सीता की खोज करते है। और पौण्डरीकपुर आ जाते है। लवण और अंकुश को राम और लक्ष्मण के समान देखकर उनके द्वारा किये गये सत्कार के बदले उन्हें राम और लक्ष्मण के समान होने का आर्शीवाद देते है। लवण और अंकुश राम और लक्ष्मण के बारे में पूछते है। नारद द्वारा सम्पूर्ण वृतान्त बताया जाता है। एक गर्भिणी स्त्री निर्जन अटवी में

छुडवाना राम की कुल मर्यादा के विरूद्ध कार्य था। राम का यह कृत्य दोनो कुमारो को अनुकूल नही लगा। तब उन्होने नारद से अयोध्या की स्थिति और दूरी जानकर दोनो कुमारों ने सेना की चढ़ाई कर देते हैं। यह समाचार पाकर सीता दुखित होती है। तथा दोनो कुमारों से सीता ने अपने जीवन का सारा वृतान्त बताती है। परन्तु उन्हें दीनता के साथ मिलना उचित नही लगता। दोनो सेनाओं के मध्य युद्ध होता है। युद्ध अपनी विकरालता में सन्नध्य होता है। राम लक्ष्मण ने दोनो कुमारों के ऊपर दिव्यास्त्रों का प्रयोग करते है। राम अमोघ अस्त्र भी प्रयोग करते है। परन्तु अमोध अस्त्र कुमारों के पास पहुंच कर तेज हीन होकर वापस लौट आता है। जब दोनो वीर कुमारों को नही जीता जा सका तो नारद के सम्मति से सिद्धार्थ क्षुल्लक ने राम लक्ष्मण के समीप जाकर लवण और अंकुश का सम्पूर्ण रहस्योदघाटन करते है। कि ये दोनो वीर कुमार सीता के गर्भ से उत्पन्न आपके पुत्र ही है। इस रहस्य को जानने के उपरान्त राम और लक्ष्मण ने अपने शस्त्र फेक कर दोनो पुत्रों को बाहुपाश में आब्द्ध कर लेते है। पिता और पुत्र का सप्रेम समागम होता है।

तदुपरान्त एक दिन हनुमान सुग्रीव आदि सीता को अयोध्या लाने के लिये अनुमति मागते है। परन्तु राम ने कहा कि मैं सीता के शील को जानता हूं। परन्तु भूमण्डल पर व्याप्त लोकोपवाद के कारण अयोध्या में नही बुला सकता हूं।

''समस्त भूतले लोकं पृत्याययतु जानकी।
ततस्तया समं वासो भवेदेव कुतोऽन्यथा।। [50]

जब तक सीता गृहण नही करती तब तक पुण्डरीकपुर से सीता का आना असम्भव है। हनुमान सुग्रीव आदि के द्वारा सीता को बुलाकर देश विदेश से आये राजा एवं प्रजाजनों के समक्ष अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने के हेतु सपथ गृहण करने को कहते है। राम के द्वारा कटु शब्दो का प्रयोग एवं तिरस्कार के साथ अग्नि प्रवेश की आज्ञा दी जाती है। सीता के अग्नि प्रवेश हेतु अग्नि कुण्ड को तैयार किया जाता है। तदोपरान्त कथा मै महेन्द्रोदय उद्यान पर सर्वभूषण मुनिराज व विद्युतवल्ला राक्षसी के उपस्थित होने का वृतान्त आया है। वापी की अग्नि प्रज्वलित की जाती है। जन सामान्य मे करूणा फैल जाती है। सीता जिनेन्द्र भगवान की स्तुति सिद्वि तीर्वा कारिकों को नमस्कार कर गम्भीर एवं विनय युक्त शब्दों से कहा की मैने राम को छोड़कर अन्य पुरूष का स्वप्नों मे भी मन वचन कर्म से धारण नही किया है। यह मेरा सत्य है। यदि मै यह कथन मिथ्या कह रही हूं तो अग्नि मुझे दूर रहते हुए भी राख का ढेर बना दें।

''कर्मणा मनसा वाचा राम मुक्त्वा पटं नरम्।
समुद्वहामि न स्वप्नेत्यन्यं सत्यमिदं मम्।।
यद्येतद्नृतं वच्यि तदा मामेष पावकः।
मस्म साद्रावम प्राप्तामपि प्रापयतु क्षणात्।। [51]

उसके उपरान्त सीता ने अग्नि में प्रवेश किया की अग्नि में प्रवेश करते ही वापी की अग्नि शान्त होकर जलमग्न हो जाती है। और उसके मध्य मे एक कोमल कमल का फूल प्रकट होता है जिस पर रत्न जड़ित सिंहासन था। उसके ऊपर सीता आरूढ़ हो जाती है। लवण और अंकुश स्नेह की सीमा पार कर वापी से निकले जल को

तैरकर सीता के पास पहुंच गये। राम भी सीता के पास जाते है। तथा परित्याग के अपराध की क्षमा मागते है। अपने साथ चलने का अनुरोध करते है। परन्तु राम के अनुरोध पर सीता कहती है, नारी जन्म पाकर इस भारी दुख को प्राप्त किया है। अब इन दुःखों को नष्ट करने के लिए मै जयनेश्वरी दीक्षा धारण करती हूं। इतना कह कर वह अपने केश अपने हाथ से स्वयं उखाड कर राम के हाथ मे दे देती है। केशों को देखकर राम मूर्छित हो जाते है। चेतना के उपरान्त सीता को ना पाकर उन्हे क्रोध आता है। वह आयुध लेकर सीता के लिये जाते है। जहां देवी सीता समेत देवों का समागम था वहां पर मुनि सर्व भूषण केवली के दर्शन मात्र से राम का क्रोध शान्त हो जाता है। राम को नाना प्रकार से प्रबोधकर शोक सागर से मुक्ति के प्रेरणा देते है। कहते तपस्या की कठिन अग्नि पर तपाती हुई सीता ऐसी सूख गयी थी जैसे जली हुई माधवी लता। इस प्रकार बासठ वर्षो का उत्कृष्ट तप करने के उपरान्त 33 दिन की सल्लेखना धारण कर प्रतीन्द्र पद को प्राप्त हुई। इसी से मिलती जुलती जयमिनी अश्वमेघ में भी यह कथा मिलती है।

प्राकृत एवं अपभ्रंस काव्यों में भी सीता त्याग की घटना विस्त्रत तथा किंचित परिवर्तन एवं परिवर्धित रूप में मिलती है। सीता के लोकापवाद को सुनकर लक्ष्मण का विरोध राम का सन्देह सेना पति को सीता के छोड़ने का आदेश पुण्डरीकपुर के राजा वजृजंघ के घर में कुश लव का जन्म इसकी प्रमुख घटनाएं है। रविषेण के पद्म चरित में भी नारी की मर्यादा प्रसंग में इस तरह की चर्चा की गई है।

जैन साहित्य में हरिभद्र के उपदेश पद भद्रेश्वर की कहावली नामक रचनाओं में सीता निर्वासन के मूल में रावण चित्र की चर्चा की गई है। किंचित परिवर्तन कर जैन रामायण में भी यही कथा मिलती है। जिसका सार यह है।

सीता के गर्भवती बन जाने के पश्चात उनकी सपत्नियों की ईर्ष्या बहुत ही बढ़ गई। उनके अनुभव का वर्णन किया। लक्ष्मण ने सीता कापक्ष लिया किन्तु राम ने कृतान्तवदन को आदेश दिया कि वह तीर्थयात्रा के बहाने सीता को ले जाकर वन में छोड़ दे। सीता को छोड़कर कृतान्तवदन के लौटने के बाद राम ने लक्ष्मण और अन्य विद्यधरों के साथ विमान पर चढ़कर वन में सीता की खोज की और उन्हे कही न देखकर समझ लिया कि वह किसी हिंसक पशु की शिकार बन गई है। [52]

आचर्य पं. सीताराम चतुर्वेदी ने वशिष्ठ और सुवर्चस रामायण मे भी सीता के उत्तरार्द्ध जीवन से सम्बन्धित कथा का उल्लेख इस प्रकार किया है-

वशिष्ठ रामायण में विष्णु के तीन जन्मों के शाप के फलस्वरूप सीता वियोग की कथा वर्णित है। प्रथम शाप के अनुसार रावण द्वारा अपहरित् सीता वियोग के समय राम का दुखी होना। दूसरे शाप के अनुसार मिथ्या अपवाद के भय से सीता का वाल्मीकि आश्रम में छोड़ना। और तीसरे शाप के अनुसार सीता के धरती मे समा जाने की कथा विन्यस्त्र है। [53]

इसी प्रकार सुवर्चस रामायण में रजक प्रसंग सीता द्वारा रावण के चित्र बनाने पर सीता की ननद शान्ता द्वारा सीता के निर्वासन का प्रयास लवकुश उत्पत्ति रामाश्वमेघ के समय लक्ष्मण से लवकुश युद्ध की घटनायें वर्णित है। [54]

कहना नही होगा कि वाल्मीकि में सीता निर्वासन उसके कारण, लवकुश जन्म रामकथा का गायन, सीता का भूमि विवर में प्रवेश, आगे चलकर कई रूपों में विभक्त हो जाती है। सीता निर्वासन के कारणों में लोकपवाद रजक प्रशंग, रावण चित्र और परोक्ष कारणों के रूप में शाप और वरों की चर्चा कर कथा को अलोकिक बनाया गया है। कहीं-कहीं अवास्तिविक सीता के त्याग की चर्चा की गई है। प्रान्तीय भाषाओं में तमिल रामायण, रामायण सार, कृतिवास रामायण, कश्मीरी रामायण, रामायण मशीही, सेरी राम सेरत काण्ड, रामकर्ति, रामक्येन इत्यादि ग्रन्थों में इस कथा का उल्लेख है। हिन्दी में आलोच्य काव्य से सम्बन्धित कुछ सामग्री को स्त्रोत के रूप में उद्वरित किया जा रहा है। ऐसी रचनाएं य तो वाल्मीकि रामायण का अनुवाद है। य लवकुश की कथा वृतान्त अथवा रामाश्वमेघ के प्रसंग मे इन कथाओं का उल्लेख है-

रामायण (1643 चिन्तामणि) लवकुश कथा (18 शताब्दी साहबदास) रामाश्वमे (1782 मधसूदनदास) रामरसायन (18 शताब्दी पद्माकर) वाल्मीकि रामायण श्लोकार्थ प्रकाश (18 शताब्दी गणेशकवि) रामाश्वमेघ (18 शताब्दी मोहनदास) वैदेही वनवास (1940 अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध) प्रवाद पर्व (1977 नरेश मेहता) अग्निलीक (1976 भारत भूषण अग्रवाल) सीता निर्वासन (1983 उमाशंकर नगायच) जानकी जीवन (1945 राजाराम शुक्ल) भूमिजा (1961 रघुवीर शरण मित्र) लवकुश युद्ध (जगदीश प्रसाद तिवारी) अग्नि परीक्षा (1960 आचार्य तुलसी) सीता परित्याग (1919 राम स्वरूप टण्डन) प्रिया य प्रजा (पं. गोविन्द दास विनीत) उत्तरामायण (1972 रामकुमार वर्मा) रामराज्य (1983 रामप्रकाश शर्मा) अरूण रामायण (1973 पोद्दार रामावतार अरूण)

निष्कर्ष यह है कि आधुनिक युग में सीता निर्वासन की कथा मूल और प्रतीकों की कथा हो गई द्विवेदी युग में लिखे हुए काव्य मे यह कथा नारी की महत्व चरित्र की व्याख्या करता है। तो छायावाद युगीन काव्यों में कर्म सौन्दर्य की नई व्याख्या प्रस्तुत करता है। प्रगतिवादी युगीन काव्यधारा में सीता की यह कथा एक शोषितों की कथा है। नारी की करूण गाथा है। परिवर्ती रचनाओं में नारी के स्वत्व अधिकार उसके त्याग और उसके विद्रोह की चर्चा इसी बहाने की गई है। कही खण्ड काव्य, कही महाकाव्य, कही गीतिनाट्य के रूप में सीता निर्वासन की कथायें विन्यस्त की गई है। यहां सें युगबोध काल साहित्य प्रवृत्तियों, मनोविज्ञान और काव्य रूपों के प्रतिनिधि ग्रन्थों के अध्यायों में किया जायेगा। यहां यह कहना असमीचीन न होगा इन कथाओं का चयन कुछ नवीनता मौलिकता चरित्र चित्रण में मनोवैज्ञानिक और विशेष रूप से वाल्मीकि और भवभूति के प्रभावों के परिप्रेक्ष्य में इन काव्यों का चयन किया गया है। प्रिया य प्रजा, वैदेही बनवास द्विवेदी युग की काव्य प्रवृत्तियों के प्रतिनिधि काव्य है तो प्रवाद पर्व और सीता निर्वासन में प्रतीकात्मकता और छायावादी सौष्ठव है। अरुण रामायण और अग्नि लीक की चरित्रगत् विशिष्ठता और नारी अधिकारों की विस्तृत चर्चा के कारण अध्ययन के लिये उपयोगी समझे गये है। सार रूप में निम्नलिखित काव्यों की समीक्षा की जायेगी।

❁ सन्दर्भ सूची ❁

1- वृहद्धर्म पुराण - 25/18

2- ऋग्वेद - 10/93/14

3- मार्गवेय- ऐतरेय बृह्मण- 7/27/34

4- औपतस्वनि सत्पथ बृह्मण- 4/6/1/7

5- क्रातुजातेन-जैमिन उपनिषद बृह्मण- 3/7/3/2

6- पुत्र के अर्थ-तैत्तरीय आरण्यक- 5/8/13

7- तैत्तरीय आरण्यक- 4/2/5

8- ऋग्वेद- 10/60/4 अथर्ववेद- 19/39/13

9- ऋग्वेद- 1/127/4

10- तैत्तरीय बृह्मण- 3/10/9

शतपत बृह्मण- 11/371/4

बृहदारण्यक उपनिषद- 3/1/1

11- वेदो में रामकथा- पृ. 20-21

12- रामकथा- उत्पत्ति और विकास- पृ. 25-26

13- हिन्दी साहित्य कोष भाग एक- पृ. 196

14- विस्तृत अध्ययन के लिए रामकथा- डा. कामिल बुल्के एवं रामकाव्य की युग चेतना पी.डी. शर्मा दृश्टव्य है।

15- अप्रकाशित शोध प्रबन्ध- पृ. 3

16- तुलसी पूर्व राम साहित्य- डा. अमर पाल सिंह- पृ. 28

17- काव्य सूची रामकथा- पृ. 185- 214 से उधृत है।

18- रामचन्द्रिका का विशिष्ट अध्ययन-डा. मार्गीगुप्त- पृ. 67

19- हिन्दुत्व,- पृ. 137

20- प्राकृत प्रवेशिया- बनारसीदास जैन- पृ. 5

21- प्राकृत भाषा-डा. प्रबोध वेचरदास पण्डित- पृ.1

22- हिन्दी साहित्यकोश-डा. सरयूं प्रसाद अग्रवाल- पृ. 492

23- रामकथा- पृ. 81-96

24- विस्तृत अध्ययन के लिए रामकथा कमिल बुल्के, तुलसी पूर्व साहित्य सीता राम चतुर्वेदी हिन्दी रामकाव्य की युग चेतना डा. पी.डी. शर्मा विशेष रूप से दृष्टव्य है।

25- विस्तृत अध्ययन के लिए तुलसी परवर्ती हिन्दी परम्परा का आलोचनात्मक अध्ययन डा. वेदप्रकाश

द्विवेदी दृष्टव्य है।

26- विस्तृत अध्ययन के लिए तुलसी परवर्ती हिन्दी रामकाव्य परम्परा का आलोच्नात्मक अध्ययन है।

27- विस्तृत अध्ययन के लिए रामकथा कामिल बुल्के एवं भारतीय वागंमय में सीता का स्वरूप डा. कृष्ण दत्त अवस्थी दृष्टव्य है।

28- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 41/31

29- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 41/35

30- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 43/19

31- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 43/12

32- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 48/17

33- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 66/1

34- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 92/19

35- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 39/5

36- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 97/14

37- रामायण- महर्षि वाल्मीकि- 97/15

38- रघुवंश कालीदास - 14/33

39- रघुवंश कालीदास - 14/60

40- रघुवंश कालीदास - 14/60-61

41- उत्तर रामचरित - भवभूति- 1/12

42- अध्यात्म रामायण- उत्तरकाण्ड- 4/44

43- अध्यात्म रामायण- उत्तरकाण्ड- 4/50

44- अध्यात्म रामायण- उत्तरकाण्ड- 4/51

45- अध्यात्म रामायण- उत्तरकाण्ड- 6/36

46- अध्यात्म रामायण- उत्तरकाण्ड- 7/21

47- कथासरित्सागर- 9/1/66 उद्रित रामकथा- पृ. 555

48- रामायण कथा-आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी- पृ. 350

49- पद्मपुराण- आचार्य रविषेण- 50/199

50- पद्मपुराण- आचार्य रविषेण- 5/270

51- पद्मपुराण- आचार्य रविषेण- 25-26/280

52- रामकथा-कामिल बुल्के- पृ. 557

53- रामायण कथा- आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी- पृ. 164

54- रामायण कथा- आचार्य पं. सीताराम चतुर्वेदी- पृ. 333

अध्याय-द्वितीय

हिन्दी में सीता-निर्वासन का कथा-रूप

- आलोच्य काव्य
- आलोच्य काव्य में आधिकारिक कथा
- प्रासंगिक कथा
- कथा के स्रोत
- मौलिक उद्‌भावना

पृष्ठ- 30-96

अध्याय 2

हिन्दी में सीता निर्वासन का कथा रूप :-

प्रथम अध्याय में रामकथा एवं निर्वासन एवं सीता निर्वासन की कथा परम्परा का विकास दिखाते हुए यह कहा गया है कि रामचरित्र की आदर्शमयता जनरंकता मे मूल में सीता का चरित्र ही रहा है। उसके चरित्र में जहां एक ओर भारतीय नारी की आदर्श एवं गरिमामयी स्थति थी वही उसकी कथा में आधुनिक नारी के विद्रोही स्वरूप को चित्रित करने की पर्याप्त सम्भावनाएं दिखाई देती है। प्रस्तुत अध्याय में एतद विषयक प्रबन्ध काव्यों की कथा वस्तु और उसकी समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है

इतिवृत प्रधान काव्यों में कथावस्तु को अनिवार्य तत्व माना गया है। कथावस्तु ही वह मेकदण्ड है। जिसके कारण काव्य का विशाल शरीर सुदृढ रहता है। कथावस्तु की महत्वता एवं उसके अवदात्य का पता इस बात से चल जाता है कि भारतीय काव्य शास्त्रीय आचार्यो ने उनकी महत्वता उसमे व्याप्त सौन्दर्य कि विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की है। प्रख्यात उत्पाद्य मिश्र अधिकारिक प्राशंगिक पताका प्रक्रिय कथाओं का उल्लेख किया है। [1]

प्रबन्ध काव्य में एक ऐसी समवद्ध एवं श्रृंखलावद्ध कथा रहती है, जिसमें अनेक आवान्तर कथायें एवं घटनाएं रहती है। यहां आलोच्य काव्यों की आधिकारिक एवं प्राशंगिक कथावस्तु की परीक्षा, घटनातत्व, कथानक रूढियां कथा में प्राप्त एवं प्रयुक्त मोड घटनओं के विस्तार, संक्षेप मार्मिक प्रशंगों, का चयन भाओं की अभित्य हेतु प्रयुक्त कथा शैली की दृष्टि से आलोच्य काव्यों पर विचार किया जायेगा। डा. हरद्वारीलाल शर्मा का मन्तव्य है कि शिथिल कला गति और सपाट प्रशंग योजना से कैसी भी यथार्थ परक सजीव संगत और नैतिकतापूर्ण कथावस्तु का सौन्दर्य भृंश सम्भव है। अतेव कथा प्रभाव का सम्यक निर्वाह सुविचारित आरोह-अवरोह और व्यंजन पूर्ण प्रशंग योजना कथा सौन्दर्य के लिए अपरिहार्य है। भारतीय आचार्य कुन्तक ने प्रबन्धात्मकता में वक्रोक्ति आचार्य शुक्ल ने मार्मिक स्थलों की पहचान एडिशन क्रोचे और लैशिन इत्यादि पाश्चात्य लेखको ने कथात्मक सौन्दर्य के विधिक मापदण्डों का उल्लेख किया है। जिसमें एक सूत्र का घटनाओं की क्रमवद्धता, सन्तुलन एवं धारावाहिकता और सौन्दर्य की यथार्थता पर विशिष्ट बल दिया है। सारांश यह है कि कथा में कोरा इतिव्रत्तात्मकता न होकर रसात्मकता की व्यंजना होनी चाहिए। सम्बद्ध कथा आरोहावरोह युक्त घटनायें स्थानगत, देशगत, वस्तुओं के साथ भावात्मक स्थल और उसमे फलागम की पूर्ण सिद्दि हो। यहां हम प्रमुख काव्यों की मुख्य कथा और समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है।

आलोच्य ग्रन्थ :- "वैदेही वनवास"

अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" जी की रचना "वैदेही बनवास" काव्य की उत्कृष्ठता को अपने आप में समाहित किये हुये है। खडी बोली की इस रचना में राम जानकी के चरित्र का वर्णन, आदि काल से चली आ रही कथा परम्परा के ही अनुरूप है। इनके काव्य की कथावस्तु मूलतयः वाल्मीकि रामायण से ही प्रभावित है।

वैदेही बनवास के प्रथम सर्ग का प्रारम्भ 'उपवन' की नैसर्गिक शोभा तथा सरयू की रम्यता में

दोलायमान दुकूलों की मनोहारी छवि-घटाओं से होता है। प्रकृति के इस काव्यात्मक परिवेश के बीच कवि कथा के इस सूत्र से अपना पट बुनने लगते है, और कथा का प्रारम्भ गर्भवती सीता से राम के एक मार्मिक सम्वाद के माध्यम से प्रारम्भ हो जाता है। राम गर्भवती सीता को सदैव प्रसन्न रहने तथा उस पर विषयों की छाया न पडने का कान्ता सम्मति उपदेश देते हुए दिखाई पडते है। तथा सीता से पीपल दल के चंचल पत्रों को देखने के लिए कहते है। कवि के शब्दों में-

"कहा राम ने यहां इसलिये मै हूं आया।
मुदित कर सकू तुम्हें प्रियतमें कर मन भाया।।
किन्तु समय ने जब है सुन्दर सभा दिखाया।
पडी किस लिये हृदय मुकुट में दुःख की छाया।।" [2]

इस सर्ग में इस प्रकार भगवान राम ने सीता को दार्शनिक संकेत देते हुए भावी घटना का अर्थात् सीता परित्याग की ओर संकेत करते हुए यह भी कहते है कि बीज को एक तरू के रूप में गलना पडता है। इस प्रकार एक अस्तित्व के विनष्ट होने पर दूसरे नये जीवन का शुभारम्भ होता है तुम्हें भी लोक कल्याण के लिए अपने व्यक्तिगत सुखों का उत्सर्ग करना होगा-

"मिट्टी में मिल एक बीज तरू बन जाता है।
जो सदैव बहुशः बीजों को उपजाता है।।
प्रकट देखने में विनाश उसका होता है।
किन्तु सृष्टि गति सरि का वह बनता सोता है।।" [3]

द्वितीय सर्ग में एक बार राम अयोध्या में अपने राज्य महल में चित्रों का अवलोकन कर रहे थे उनकी सजीवता एवं अलौकिकता का आनन्द उठाते हुए मंत्र मुग्ध हो गये थे। उसी समय दुर्मुख नामका एक गुप्तचर राम के सम्मुख पहुंचकर रजक द्वारा अपनी पत्नी पर लगाये गये आरोप के सम्बन्ध में बताता है-

"वहां पर एक रजक हो क्रुद्व।
रोककर ग्रह प्रवेश का द्वारा।।" [4]

गुप्तचर दुर्मुख राम से जनपद में रजक द्वारा अपनी पत्नी को प्रताडित करते हुए जनकात्मकजा के सम्बन्ध में कहे हुए लोकोपवाद के सम्बन्ध में सम्पूर्ण सूचना देता है। दुर्मुख के द्वारा नगर में फैले हुए अपवाद को सुनकर राम का चित्त अत्यधिक विचलित हो जाता है। वह सोचने लगते है कि यद्यपि यह लोकोपवाद आवांछनीय है परन्तु सत्य भी है। राम वन के सम्बन्ध में सोचने लगते है कि चौदह वर्ष के बनवास में छाया की तरह सीता का मेरे साथ रहना एवं कठिन पतिव्रत तपस्या का निर्वाहन करना तथा दूसरे के दुःख से दुःखी होना सरलता और शील गुणों से संयुक्त होना तथा सद्भावनाओं के साथ लोकाराधन पर संलिप्त रहने वाली मेरी प्रिया पर ऐसे लोकोपवाद का उत्सर्ग क्यों हो रहा है। वह पुनः चित्र देखने लगते है-

"दारू का लगा हुआ अम्बार।
परम-पावक-मय बन हो लाल।।

जल रहा था धू-धू ध्वनि साथ।

ज्वालमाला से ही विकराल।।'' [5]

उपरोक्त अभिव्यंजना में राम की दृष्टि अंकित भित्त चित्रों में अग्नि परीक्षा के चित्र पर पड़ती है। जिसमें पीततम बसन धारण किये हुए कमल मुखी परम देदीप्यमान अंगो वाली अग्नि प्रवेश के लिए उत्फुलित मन प्रवेश करती है। विकाराल ज्वाला के सामने कवि और रीछो के समूह तथा विविध विमानों में आसीन देवगण आकाश से जय-जयकार करते हुये उक्त घटना के साक्षी बने थे।

प्रिया के प्रेम में रमा मेरा चित्त सदैव अविश्वास से परे हटकर मेरे ह्रदय में सदैव सत्तता को प्राश्रय दिया है। कोमलांगी सुकुमारी देवी सीता स्वर्ग से सुखों को त्याग कर राजसी विभओ से अपना मुख मोडकर तथा समस्त स्वजन सम्बन्धियों को त्याग देने वाली, मेरी छाया बनकर घने जंगलों मे कुश त्रण य भूमि की सइया पर तथा नंगे पैरो से कंटको भरी राहों में चौदह वर्षो तक अपने किसी भी अवसाद के चिन्हों को मुख मंडल पर प्रकट न करने वाली चन्द्रिका के समान मेरी संगनी- त्याग की प्रतिमूर्ति देवी लंका में रहकर निश्चिरों के अंगणित उत्पात सहने के उपरान्त भी सहजता के साथ परम पावन वृत का निर्वाहन करने वाली जिसकी पवित्रता की दिव्य अग्नि परीक्षा हो चुकी है। क्या उनकी अग्नि परीक्षा का उपहास नही है? प्रजा के शंका पूर्ण उपहास के कारण देवी सीता की अग्नि परीक्षा क्या झूठी नही हो जायेगी।

प्रिया सिया के द्वारा प्रस्तावित यह कार्य मैने लोक दृष्टि को निसंक बनाने के लिए ही किया था। परन्तु मै अपने उद्देश्य में सफल नही हो पाया स्पष्टतयः जबकिसी नारी पर समाज की कलुषित शंका पूर्ण दृष्टि पड़ती है तो वह लांछन लोकोपवाद बनकर अपकीर्ति का केतु बन जाता है। मेरी प्रिया सिया के विषय में उठा जनरव अच्छा नही है परन्तु मेरा मन इस रहस्य को नही समझ पा रहा है कि इसका प्रचार प्रसार इतनी तीवृता से क्यों फैल रहा है। जबकि कवि के राम ने लोकाराधन के कार्य में एवं न्याय व्यवस्था को सामान्य संचालन ही जिसकी प्रवृत्ति है।

इसी चिन्तन की अभिव्यजना करते हुए कवि ने अपने राय को राज्य कार्य में प्रवृत होने से लेकर अब तक के स्वाकार्यो का पुनरावलोकन करते हुए पाते है। राजा के समस्त उत्तरदायित्वों राज्य धर्म आदि व्यवस्थाओं में मानवतावादी अनुभूतियों का कही भी आभाव नही है। आज जब जनता दानवों के नियात होने पर उनके धर्म द्रोही आतंक से शान्तिमयी ढंग से सारे सुख कर्मो को करने की स्वतन्त्रता पाकर धर्मरत मर्यादाशील हो गये है राज्य के समस्त कार्य सुव्यवस्थित व सुदृढ़ होने पर भी अप्रसन्न जनता ऐसे प्रबल लोक अपवादों को क्यों कह रहे है। जन सामान्य के इस कार्य से कवि के राम का मन अत्यन्त आवेशित होता है, परन्तु मन के उठे आवेग को शान्तकर लगे हुए व्यथा कलंक के रहस्य को पुनः समझने का प्रयास करने लगते है-

''लग रहा है क्यों वृथा कलंक।

खुला कैसे अकीर्ति का द्वार।।

समझ में आता नही रहस्य।

क्या करूं मै इसका प्रतिकार।।'' [6]

तृतीय सर्ग ''मन्त्रणा गृह'' में कवि ने कथा के विस्तृत सूत्रों को राम लक्ष्मण, भरत, शत्रुघन की

उपस्थित जनकात्मजा के प्रसंग को लेकर होने वाले जनरव व लोक असन्तोष पर चिन्तामग्न होकर परस्पर विचार विमर्श करते है। दुर्मुख के कथन पर कवि के राम ने जनरव की कीर्ति को पतन कारक तथा लोक आराधन वृत को भंग करने वाला मानकर इसे टालने हेतु अपने कर्तव्य को उपस्थित बन्धुओं से कहने के लिए कहते है । भरत के द्वारा प्रस्तुत उत्तर में कहा जाता है कि अधम जनों को परनिन्दा प्रिय होती है। तथा भले व्यक्ति सिर्फ गौरव का गान करते है। किसी को विवेक प्यारा है, और किसी को अविवेक से लगाव होता है। इस संसार में दोनो तरह के मनुष्य होते है जिस तरह से हंसों के वंस उन्हीं के गुणानुरूप सरोवर में रहते है वही पर बक और वृत्ति वाले दूसरे पंक्षी भी निवास करते है-

''दूसरों की रूचि को अवलोक।
कही जाती है कितनी बात
कही पर गतानुगतिक प्रवृत्ति
निरर्थक करती है उत्पात।।'' [7]

जनरव के अपवाद पर भरत के कथन से कवि ने दुर्मुख की सूचना को निरार्थक उत्पात का कारण मानते है। सुख सुविधा से सम्पन्न प्रजा की स्वायत्ता एवं व्यक्तिगत अधिकार प्राप्त है। राम राज्य में सब सुखी है समग्र विकास के गौरव से मानव समुदाय गौरवान्वित है। राज्य के शान्तिमय वातावरण से अच्छी चर्चाये हो रही है परन्तु जिस तरह राकेश को देखकर चकोर प्रसन्न नही होता, उसी तरह दुष्ट प्रवृत्ति के लोग नृत्य की उत्कृष्टता से अप्रसन्न होते है। अधम लोगो के द्वारा उठाया हुआ व्यर्थ की निंदा केवल प्रमाद् मात्र ही है मुख्य रूप से ऐसी चर्चा का विस्तार वही लोग कर रहे है जिनको मति पर अपना अधिकार नही है। अतः हमें ऐसे असत्य अपवाद पर ध्यान न देकर सामान्य जनो के कथनों के माध्यम से समझने का प्रयास करना चाहिए। अन्यथा कैकय देश में हुए कुत्सित उपद्रवों की तरह भीषण परिणाम होगे जो लोक सहांर का कारण बन जायेगे। मेरे सन्देहानुसार इस कुत्सित जनरव में गन्धर्वो की गुप्त कूट नीति लगती है जिसें बलात ही दबा देना लोक आराधना और नृपनीति है, मेरे विचार से दुर्जन का दुर्बाद दलन योग्य है। भरत के कथन को सुनकर लक्ष्मण क्रोधातुर हो कहते है कि मेरी परम पुनीता, सती शिरोमणि भाभी को जिसके पावन तम तेज ने पावक को भी तेज रहित कर दिया है। उस देवी सीता के सन्दर्भ में कुत्सित जनरव को सुनकर मेरा रोम -रोम आक्रान्त है, राज्य के कथन से मेरा मन करता है कि उसकी खाल खिचवा लूं। लक्ष्मण के आक्रोस के बाद कवि ने अपनी अभिव्यंजना के माध्यम से शत्रुघन के कथन को व्यंजित कर मथुरा मंडल नरेश लवणासुर की असुर कूटि-नीति की एक चाल है जो लोकोपवाद का प्रवर्तन कर श्री मती जनक नन्दिनी को कलंकित कर रहा है। परन्तु उसके कुत्सित् उद्योग कभी सफल नही होने दिया जायेगा। गन्धर्वो के हार के उपरान्त जो उसके सहयोगी थे, आज वह अपनी दुष्प्रवृत्ति को लिए हुए रावण के वध पर आंसू बहा रहा है। उसके इस कूटनीतिक प्रयत्न को विफल कर उसके कुकर्मो का फल प्राप्त होना चाहिए क्योकि मृदुलता से दुर्जनता को ही बल मिलता है। अपने समस्त बान्धओ के नीतिमय विचार सुनने के उपरान्त कवि के राम कहते है कि दमनकारी नीति कभी भी मुझे प्यारी नही रही, लोक हित शंसृति शान्ति हेतु यद्यपि मैने रावण और गन्धर्वो से दुरस्त संग्राम कर उन पातको को दण्ड दिया है। परन्तु दमनकारी नीति प्रजा में हलचल पैदाकर असन्तोष का कारण बनेगी। भयमूलक इस

नीति को त्यागकर मै त्याग का यथार्थ लाभ लेना चाहता हूं। जिससे मुझे प्रजा की सच्ची प्रीति प्राप्त हो सके। आत्मनिगृह के माध्यम से मै अपनी प्रिया सिया का असह वियोग लोक कल्याण हेतु सहूंगा। और मुझे पूरा विश्वास है कि आप सब लोग मेरे अनुकूल ही रहेगे। चतुर्थ सर्ग "वशिष्टाश्रम" में सर्ग का प्रारम्भ आश्रम के मनोरम दृश्य के वर्णन के उपरान्त कवि ने राम के आश्रम पहुंचने की कथा का वर्णन किया है। कवि के श्री राम ने गुरू चरणों का वन्दन कर राज्य की कुशलता से अवगत करवाकर जनक नन्दिनी के सन्दर्भ में दुर्मुख द्वारा बताये गये जनरव एवं भाइयों से हुई मंत्रणा वृतान्त बताते हैं। परीक्षा के अपत्ति काल में धर्म निर्वाहन हेतु अपने प्रिया के त्याग का निर्णय भी कहते है। गुरू वशिष्ट जी ने श्री राम चन्द्र की अविचल व व्यथित निर्णय को सुनकर कहते है कि राजन् यह समस्त संसार स्वार्थ प्रेरित है, प्राणी को अपने प्राणो से प्रिय निजत्व अपने हित साधन का अभिप्राय आत्म परायणता की भावना, सात्विकी नीति से भव के भावों में भव्यता को भर दे। लोकोपवाद की कलुषिता ने लोकोत्तर लालिमा को कलुषित करने वाला प्रलाप निन्दनीय है। और उससे जो हलचल उत्पन्न हुई है उसका उन्मूलन करना प्रथम कर्तव्य है। दमन नीति का सदैव विरोध करने वाले आपके लोकाराधन वृत को उपयुक्त मानता हूं। और यही राजा का प्रमुख कर्तव्य है। आपका त्याग लोकोत्तर के लिए आपकी सहनशीलता अपूर्व आदर्श लोकहित का उत्कृष्ट है। परन्तु आपके विरह की वेदना से उस पति पारायण कोमल ह्रदया का क्या होगा। यद्यपि आत्मत्याग का यह उच्च योग है, क्योकि आर्य जाति के राजा सदैव अपनी गर्भवती पत्नी को प्रायः कुलपतियों के पवन आश्रमों में भेज देते है। जिससे शिशु की भी बुद्धि कुसाग्र हो। अतेव सुर सरिता के तट पर स्थिति महर्षि वाल्मीकि आश्रम मेरे मतानुसार श्रेष्ठ है, जनक नन्दिनी का भेजना समस्त प्रपंचो से परे प्रजा पालन के अनुरूप होगा। परन्तु राजन मेरे विचार से इन सारी बातो को विदेह जा को अवगत करा दे जिससे वो लोक आराधना की अनुमति वह स्वयं दे।

पंचम सर्ग "सती सीता" में कवि ने देवी सीता को रात्रि के प्रथम पहर को चन्द्र के चन्द्रिका से सुशोभित तथा दिव्य गगन अपने अंक पर तारक दलो के समूह को भरे हुए नील मंडल अलौकिक छटा को बिखेर रहा था। प्रियतम की प्रतिक्षारत पुलकित सीता चकोरी की भांति प्रतीत हो रही थी। नभ मंडल में वारिदों के लघु खण्ड हवाओं के वेग के साथ तीव्रता से उड़ रहे थे, जिससे तारापति कभी अवतरित होता था कभी छिप जाता था, प्रकृति के नियति नटी का नृत्यन देखकर जनक नन्दिनी के मन में आकुलता व्याप्त होती है। और तभी श्री राम मुख मंडल पर चिरकालिक चिन्ता के वारिदों को लपेटे सीता के पास पहुंचते है, प्रियतम को अपने पास बैठाकर मुखमण्डल पर व्याप्त चिन्ता का कारण पूछती हैं। तब राम निन्दित जनरव के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्रदत्त करते है और लोकाराधन कार्य हेतु कुछ समय के लिए अन्यत्र स्थानान्तरित करने के लिए अपना प्रयोजन प्रस्तुत करते हैं। देवि सीता प्रिय अनुराग में उत्पन्न होने वाली विरह वेदना के कष्ट को कहती है कि यद्यपि आपके बिना मेरा जीवन समस्त त्रृष्णाओं का सागर होगा फिर भी आपकी आज्ञानुसार मै सम्पूर्ण सुख वासनाओं को त्यागकर आपके लोकाराधन निमित्त त्याग अवश्य करूगी-

"किन्तु आपके धर्म का जो न परिपालन कर पाऊगी।
सह धर्मिणी नाथ की तो मै कैसे भला कहाऊंगी।।" [8]
"लोकाराधन य प्रभु आराधन निमित्त सब छोडूगी।।" [9]

सीता के त्यागमयी प्रेम से अभिभूत श्री राम की चिन्ता कम होती है एवं वो आर्यो की प्राचीन पुनीत पृथा के सन्दर्भ में गर्भवती महिला को कुलपति आश्रम में भेजने की प्रथा से अवगत कराते है। पूज्य गुरू वशिष्ट से अनुमोदित महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में सुरूचिपूर्ण निवास करते हुए यथा कार्य के उपरान्त संस्कारादि पूर्ण होने पर आ जावेगी, तब तक मै लोकाराधन नीति को पूर्ण करूगा। राम के प्रतिउत्तर में सीता जी कहती है कि आपकी गरिमा हेतु मै कंटको भरे पथ में चलने के लिए प्रशस्त हूं। मै अपने धर्म का पूर्ण तनमयता और निर्भयता से पालन करूगी। छठे सर्ग ''कातरोक्ति'' में कवि ने कथा प्रसंग को प्रातः काल के शोभायमान दृश्य का वर्णन करते हुए कथा को आगे बढाकर देवी सीता के वाल्मीकि आश्रम के प्रस्थान के पूर्व माताओं एवं अपनी बहनो से कारूणिक विदा का वर्णन किया है। देवी सीता के वन गमन के पूर्व माताओं एवं बहनो के स्निग्ध प्रेम तथा विछोह की करूणा का प्रशंसनीय वर्णन किया है।

सप्तम सर्ग ''मंगल यात्रा'' में कवि अवधपुरी की भव्यता का वर्णन करते हुए कथा प्रसंग को आगे बढाया है। वन गमन हेतु विदेह नन्दिनी गुरू वशिष्ट और राम को प्रणाम कर रथ में आरूढ हो जाती है। सौमित्र सुमन्त्र के साथ रथ में वनपथ की ओर पतिव्रत जय उद्‌घोष के साथ आगे बढ़ जाता है। पथ में लक्ष्मण की विचिलता एवं वन रम्यता का वर्णन करते हुये कवि ने देवी सीता के अन्तः मन में उठने वाली वियोग की लहरो को अपनी कल्पना अभिव्यक्ति के माध्यम से चित्रित किया है।

अष्टम सर्ग ''आश्रम प्रवेश'' मैं कथा की वनपथ वर्णन के उपरान्त आश्रम के मनोहारी दृश्यों तथा रमणीयता पर निर्विध्न विचरण करने वाले वनचरों तथा विहंग वृन्दों के कोकिल कलरव का कमनीय वर्णन करते हुए आश्रम की रमणीयता का शोभायमान चित्रण किया है। कथा में सौमित्र जनक नन्दिनी को लेकर प्रवेश करते है और ऋषिवर के समक्ष देवी सीता के वंश विषद हेतु, उज्वल रत्न प्राप्ति हेतु अपने रक्षण में प्राश्रय देने का निवेदन करते है एवं महर्षि वाल्मीकि द्वारा श्री राम के लोकाराधन एवं देवी सीता के आने का कारण ज्ञात होने पर रघुकुल नन्दन श्री राम के उत्तम निर्णय की प्रशंसा करते है। सीता और राम के पतित्व और सतीत्व प्रेम की प्रशंसा करते हुए रावण के द्वारा हरण होने तथा श्री राम के द्वारा वारिधि बांधकर लंकाधिपति को आक्रान्त करने की व अशोक वाटिका में प्रवास कथा का व परम्परिक वर्णन, सीता और राम के गुणो की बार-बार प्रशंसा,करके प्रवास करने हेतु एक उपयुक्त कुटीर देते हैं। मुनिवर के कथन को सुनकर सीता जी ने लक्ष्मण से वापस जाने के लिए कहती है। नवम सर्ग ''अवध धाम'' का वर्णन संध्या समय से कवि ने प्रारम्भ किया है जिस समय महिमण्डल में तिमिर व्याप्त हो रहा था उस समय श्री राम चन्द्र जी शयनागार में लक्ष्मण के लौटने की प्रतिक्षा करते है। उसी समय लक्ष्मण का आगमन होता है और वह आश्रम में देवी सीता के सकुशल पहुंचे की सूचना एवं वहां के स्वत्व, सात्विक निवास के सम्बन्ध में सम्पूर्ण विवरण देते हुए पति परायणा की विरही मुख मुद्रा से स्पष्ट हुए मार्मिक व्यथा कथा को भी राम के समक्ष प्रस्तुत करते है। देवी सीता से प्राप्त सन्देश को भी लक्ष्मण के द्वारा श्री राम से कहा जाता है। राम के ईष्ट सिद्धि हेतु आर्या लोकोत्तर व लोकाराधना को सफल करे। उपरोक्त सर्ग में कवि ने अयोध्या में व्याप्त विछोह व्यथा का वर्णन करते हुए अयोध्या के राज्य भावनों से लेकर पशुओं और पक्षियों, परिचर और दासियों की व्यथाओं के वर्णन से लेकर माताओं की वेदना का वर्णन गान करते हुए अपने राम के अन्तःस्थल की वेदना का वर्णन किया है।

कवि के श्री राम अपनी अनुरागनी का निर्वासन ईष्ट सिद्धि के हेतु करके मानस व्यथा के चिन्ता में जलता हुआ प्रतीत होता है। वह अपने मन की अन्तःवेदना अनुज के समक्ष प्रकट करते हुए मानवीयता के उत्थान के लिए कार्य करने हेतु प्रेरित करते है।

दशम सर्ग ''तपस्विनी आश्रम'' में कवि ने आश्रम की रमणीयता का वर्णन प्रकृति के अलंकारो से विभूषित करते हुए रम्यता की मृदुलता को कण-कण में समावेशित करके देवी सीता के आश्रम प्रवास व विछोह वेदना से अनुरंजित वियोगिनी के वियोग का वर्णन एवं स्मृतियों के सागर में उठने वाले अनुराग की लहरों में प्रिय की छवि खोजती हुई चकोरिका का चित्र अत्यन्त विह्वल् करने वाला है। जो अपने जीवन में घटने वाले दुखद संयोग के घटनाक्रम के लिए स्वाआत्म निरीक्षण करती है कि मेरे और राम के बीच ये दूरी मेरे सद्भाव मयी जीवन के होने पर भी किन कारणों से है। एकादश सर्ग ''ऋपुसूदनागमन'' में कवि ने वर्षो ऋतु का कान्तमयी गौरव गान करते हुए, आश्रम में विस्थापित देवी सीता को अपने कुटीर में बैठे हुए बादलों की छवि को देखकर पति सा सुन्दर दृग रंजक तथा मनोहर होने का अनुमान करती है, परन्तु समानता करने पर वो अपने पति श्री राम की छवि कही उत्कृष्ठ मानती है। उनके इस दृश्यावलोकन की तल्लीनता को रिपुसूदन के पग वन्दन द्वारा भंग किया जाता है। देवी सीता देवर रिपुसूदन को आदर सहित बैठाकर करूणार्द्र भाव से आर्य श्री राम के समाचार पूछती है। एवं माताओं भरत लक्ष्मण तथा माण्डवी सुकीर्ति के भी समाचार जानने हेतु अपना अभिमत प्रस्तुत करती है। उनके इस प्रश्न परशत्रुसूदन श्री राम की वेदना राज्यकार्य की निष्ठा माताओं और बहनो की मार्मिक वेदना के सन्दर्भ में अवगत करवाते हुए उत्पाती लवणासुर के वध करने के लिए श्री राम की आज्ञा पाकर प्रस्थान का सम्पूर्ण वृतात्त कहते है। देवी सीता ने शत्रुघन की विदा यात्रा हेतु मंगल कामना का आशीष देकर विदा करती है।

द्वादश सर्ग ''नामकरण संस्कार'' में सर्ग का प्रारम्भ सुसज्जित आश्रम स्थिति शान्त निकेतन में बृह्मचारियों के दल द्वारा वेद ध्वनि के दिव्य गान के बीच नामाकरण संस्कार किये जाने की अभिव्यंजना करते हुए परम्परिक कथा का वर्णन किया है। उपरोक्त सर्ग में लव कुश के प्रसव का समय कवि ने शत्रुघन के आश्रम में पदार्यण के समय सूचित किया है। कथा में वाल्मीकि ने लवणासुर के वध का कारण देवी सीता से बताकर तथा वध के उपरान्त अवध में शान्ति स्थापित करने का सर्वोत्तम उपाय बताते है। एवं आश्रम में दोनो पुत्रों को शिक्षा एवं संस्कारों के निर्माण हेतु देवी सीता की आश्रम में उपस्थिति अनिवार्य बताकर देवी सीता की वेदना में कमी लाने का प्रयास महर्षि वाल्मीकि द्वारा किया जाता है। देवी सीता से महर्षि जनकपुरी के मिलन कथा को दो पल्वित लव और कुश रूपी पुष्प को प्राप्त करने का सौभाग्य मानते है। सत्यवती के मधुर गान के माध्यम से रघुकुल चन्द्र व देवी सीता सहित दोनो कुमारो के उत्कर्ष वर्णन के उपरान्त सर्ग समाप्त हो जाता है।

तृयोदश सर्ग ''जीवन यात्रा'' में आश्रम प्रवासिता सीता का तपस्विनी तथा मानवता ममता की मूर्ति के रूप में अवलोकन करते हुए कवि के बाल आमोद में पूर्ण निमग्न रहने की अभिव्यंजना की है। आश्रम के प्रवास में जब भी विदेहजा को विरह व्यथा से पीडित होने पर सीता जी की प्रिय सखी उन्हें अपने मधुर गान से नाना भजन सुनाकर सम्भालती हैं।

चतुर्दश सर्ग ''दाम्पत्य दिव्यता'' में आश्रम में ऋतु राज के उत्कृष्ठता के वर्णन से लेकर आश्रम प्रवास

एवं बाल सुलभ आनन्द का सुन्दर वर्णन किया है। एवं विज्ञान वती तथा सीता के परस्पर सम्भाषण का वर्णन किया है। पंचदश सर्ग ''सुतवती सीता'' में कथावस्तु की परम्परा आंशिक वर्णित है। उक्त सर्ग के वर्णन में कवि ने अपनी कल्पना व्यंजना में देवी सीता और दोनो पुत्रों के प्रसंग का वर्णन सीमित रखते है तथा देवी के द्वारा दोनो बालकों को रविकुल से सम्बन्धित होने का ज्ञान कराया जाता है।

षोडस सर्ग ''शुभ सम्वाद'' में ग्रीष्म ऋतु की तृप्त दोपहर के तपन से त्रसित धरा का वर्णन करते हुए कथा मे मनोहर परिवर्तन करते हुए संध्याकाल मे देवालय में उपस्थित दोनो पुत्रों सहित देवी सीता अपने पति मूर्ति के पास आसीन है। लवकुश की उम्र बारह वर्ष की पूर्ण हो रही थी दोनो शस्त्र शास्त्रों से व्युत्पन्न अलौकिक छवि सौन्दर्य शील, धीरता और गम्भीरता से सम्पन्न हो चुके थे। जो नित्यप्रति संध्या को महर्षि द्वारा रचित रामायण का गान देवालय में आकर करते थे। गान के समाप्त होने के उपरान्त शत्रुघन का आगमन होता है तथा अयोध्या में होने वाले अश्वमेघ यज्ञ के आयोजन की सूचना दी जाती है। आश्रम की उत्कृष्टता का वर्णन तथा बारह वर्षो तक देवि का विरही प्रवास तथा लव कुश जैसे अलौकिक सुवनों का सृजन पर शिक्षा-दीक्षा से आलंकृत करने में आपका अद्भुत त्याग समावेशित कर लवणासुर पराभव तथा अयोध्या में प्रपंच जनित अपवादों का पूर्ण विराम होकर रघुकुल गौरव की कीर्ति भवदीया के प्रयत्नों से गौरवान्वित हुई है। शत्रुघन शीघ्र ही श्री राम के अश्वमेघ यज्ञ में शीघ्र ही आप और लव कुश के सहित महर्षि वाल्मीकि अवधपुर जायेगे।

सप्तदश सर्ग ''जनस्थान'' में कवि ने अयोध्या स्थिति जन स्थान की प्राकृतिक घटा का दृश्यालोकन करवाते हुए राम को जंगलो में सम्बूक के वध हेतु भ्रमण करते हुए चित्रित किया है। भ्रमण करते-करते राम पंचवटी के पंचवटों के सामने पहुंचते है तो उनकी अतीत की स्मृतियां पुनः जागृत होकर मन को द्रवित करती है। गुजरे जीवन के बारह वर्षो का समय प्रिया के सुखद प्रेम में बीत गया है, वैसा आनन्द रस राज प्रसादों मे नही मिला है। राम अपनी वेदना की आकुलता से स्वयं को सम्भालते है। वह आत्मावलोकन करते हुए सोचते है कि राज्य में स्थापित शान्ति सीता के आत्म त्याग से ही संभव हो सकी है उसी समय राम के सम्मुख वन देवी का आगमन होता है और वह सविनय राम से पूछती है, हे रघुकुल पुंगव आपके मन में व्याप्त व्यथा का कारण क्या देवी की सुधि से उत्पन्न हुई है ? देवी सीता जिनको एक पल भी आपके विना बिताना संभव नही था, उनका बारह वर्षो का यह समय कैसे बीता होगा वनदेवी के कथन को सुनकर श्री रामचन्द्र जी वनदेवी के उपालम्भ को उचित कहते हुए अश्वमेघ के अनुष्ठान की सूचना देते है एवं देवी सीता के आश्रम प्रवास को सफल बताते है।

अन्तिम अष्टादश सर्ग स्वर्गारोहण में कवि ने अयोध्या में अश्वमेघ यज्ञ हेतु उपस्थित जन,मुनि,सन्त,महन्तो देश दिगपालों आदि का वर्णन किया है तभी सैकडों सवारों के साथ देवी सीता का दिव्यरथ भरत रिपु सूदन तथा आश्रम के छात्र मंडली आदि विविध वाद्यों के साथ वाद्य ध्वनि करते हुए जहां राम और लक्ष्मण सिंहासनारूढ से बनी हुई है।

वैदेही वनवास :- ''कथावस्तु''

रामकथा के विशाल उदधि मे कवि ''हरिऔध'' जी की समादरणीय रचना वैदेही वनवास, भावमयी लेखनी से व्यंजित होकर सर्व गुणालंकृत काव्य कमल के रूप में प्रकट हुई है। कवि ने हिन्दी भाषा के क्षेत्र में पांच

सौ वर्षो से अधिक पुरानी सीता निर्वासन कथा परम्परा का उचित परिवर्तन करके आधुनिक रूप में प्रस्तुत किया है। कविता के उच्चसिद्धान्तों पर अपना नियंत्रण रखते हुए कथावस्तु की उदात्तता एवं विषयानुरूपता, को अठारह सर्गो में आवध्द कर कथा काव्य को माधुर्य शब्दों के विन्यास से कविता को सजीव बना दिया है।

प्रथम सर्ग ''उपवन'' में प्रकृति छटा की मनोरनता का मनोहारी चित्रण करते हुए मर्यादा पुरूषोत्तम दशरथ नन्दन राम को विदेह नन्दिनी सीता के साथ उपवन में उल्लास लसित उपस्थित से कथा की काव्य अभिव्यंजना को प्रारम्भ करके गर्भवती सीता को प्रमुदित कर सुखानुभूति करते हुए एवं देवी सीता पर अपने अतुलित अनुराग को प्रकट करते हुए महल में चले जाते है। द्वितीय सर्ग चिन्तित चित्र'' के माध्यम से कवि ने लोक ललाम राम को राज्य महल में बने हुये चित्रों के अवलोकन की सूचना प्राप्त होती है और गुप्तचर के द्वारा रजक प्रसंग सूचित किया जाता है। राम इस आवांक्षनीय परन्तु सत्य लोकोपवाद को सुनकर चिन्तित चित्र होकर विचार मग्न हो जाते है। सीता के संग बीते क्षणों का स्मरण कर उनकी सरसता और सद्भाव पूर्ण चित्र पर आवांछित लोकोपवाद से खिन्न हो जाते है। तृतीय सर्ग का वर्णन ''मन्त्रणा गृह'' से प्रारम्भ करते हुए जनकात्मजा के प्रसंग को भरत और लक्ष्मण व शत्रुघन आदि की उपस्थिति में प्रारम्भ करते है। रजक के असत्य अपवाद से जनरव के विस्तार से उच्च राज्यादर्श व रघुकुल का चरित्र लंक्षित होने मे विविध अनुमानों के आयामों को अभिव्यंजित कर कथावस्तु में पडोसी राज्य एवं गन्धर्वो की कूटनीति का एक कुषित कारण कवि ने निरूपित किया है। तथा राम को लोकाराधन हेतु जनहित के लिए आत्म निग्रही त्याग करने का आत्म निर्णय व्यंजित किया है। चतुर्थ सर्ग ''वशिष्ठाश्रम'' में कवि ने श्री राम के द्वारा वशिष्ठ ऋषि के आश्रम में जाकर देवी सीता के सन्दर्भ में हुए लोकोपवाद की हलचल का वर्णन कर आत्मत्याग के अन्तः निर्णय को प्रस्तुत कर देवी सीता को सुरक्षित रखने हेतु उचित स्थान पूछते है तथा वशिष्ठ के परापर्श अनुरूप देवी सीता को वाल्मीकी आश्रम में सर्वोपयुक्त मान सन्तुष्ट होकर वापस लौट जाते है। पंचम सर्ग ''सीता सती'' के प्रारम्भ में प्रकृति परिवर्तन के माध्यम से सीता के मन में अनिष्ट की पूर्व आशंका का पूर्वाभास करवाकर राम और सीता की चिन्ता चित्त सम्वाद का वर्णन एवं राम के द्वारा लोक अपवाद की सूचना देकर अयोध्या से बाहर अन्यत्र स्थान भेजने की इच्छा सीता के समक्ष प्रस्तुत करते है। जिसे देवी सीता पतिव्रत हेतु सहर्ष स्वीकार करती है। छटवे सर्ग ''कातरोक्ति'' में देवी सीता के द्वारा लोकोपवाद पुत्र प्रप्ति की आकांक्षा हेतु वाल्मीकि आश्रम जाने हेतु धीर धारणी सिया ने विनीत होकर माताओं से विदा मांगती है। एवं बहन उर्मिला और माण्डवी से मिलकर विदा हो जाती है। सत्तम सर्ग ''मंगल यात्रा'' में सौमित्र और सुमन्त्र साथ अयोध्या से वन प्रस्थान का वर्णन किया गया है। आठवे सर्ग ''आश्रम प्रवेश'' में वाल्मीकि आश्रम में सीता के वास का चित्रण तथा नवम सर्ग ''अवध धाम'' में सीता निर्वासन से उपजी व्यथा का अवध जन सामान्य एवं सीता के द्वारा लक्ष्मण से भेजे सन्देश का राम से निवेदन करने का वर्णन किया है। तथा दशम सर्ग ''तपस्विनी आश्रम'' में सीता का वाल्मीकी आश्रम में प्रवास का वर्णन किया गया है। तथा एकादश सर्ग ''रिपुसूदनागमन'' में शत्रुघन का वाल्मीकि आश्रम में पहुंचना तथा वहां निवास करती हुई मिथलेश कुमारी से मिलना एवं सीता विहीन अवधि की विह्वल विपलव का वर्णन करना तथा लवणासुर के वध हेतु अपने प्रस्थान का सम्पूर्ण कारण बताकर आश्रम से प्रस्थान के उपरान्त ''नामाकरण'' सर्ग में दोनो बालकों का नामाकरण एवं जन्म के संकेतिक सूचना के बाद लवणासुर के वध का समाचार प्राप्त होता है।

लवकुश की बालक्रीडा देवी सीता की मातृत्व भावना, आत्रेयी का संवाद तथा लवकुश द्वारा रामायण का नित्यपाठ शस्त्र शास्त्रों की विधा में पारंगत होना, एवं आश्रम में लवणासुर के बध के उपरान्त शत्रुघन का वापस आना, अश्वमेघ की सूचना तथा अयोध्या में दोनो पुत्रों सहित देवी सीता का साथ लेकर महर्षि वाल्मीकि को अश्वमेघ यज्ञ में आमन्त्रित करना। भरत शत्रुघन आदि वीर योद्धाओं के सनिध्य में देवी सीता का अयोध्या आगमन पति-पत्नी का मिलन, एवं पति के चरणों को स्पर्श करते ही सीता का निर्जीव होकर दिव्य ज्योति में परिवर्तित हो जाना। समस्त उपस्थित जन समूह द्वारा जयघोष तथा देव गणों द्वारा सुमन वृष्टि आदि कथावस्तु में वर्णित है।

प्रस्तुत काव्य में राम और गर्भवती सीता का अयोध्या के वन वाटिका में उपस्थित होना, राज्य भवन के भित्तियों पर अंकित चित्रों का अवलोकन गुप्तचर दुर्मुख द्वारा रजक के कथन से साधारण जनता के मध्य प्रसारित देवी सीता के लिए निन्दित लोकोपवाद की सूचना देना तथा राज्य में उत्पन्न हुई समस्या के सम्बन्ध में भरत आदि भाइयों से मन्त्रणा करना, राम का वशिष्ठ आश्रम जाना एवं गुरू वशिष्ठ से मन्त्रणा करना तथा वाल्मीकि आश्रम भेजने का निर्णय करना। राज्य आराधना हेतु वाल्मीकि के आश्रम में वास करने हेतु देवी सीता को सूचित करना, तथा अयोध्या से रथारूढ़ करा लक्ष्मण और सौमित्र के साथ आश्रम के लिए प्रस्थान करना, आश्रम निवास, लव कुश का जन्म, नामाकरण एवं बाल वर्णन आदि अधिकारिक कथा है। कवि ने कथा को नवीनता के कलेवर में प्रस्तुत कर कथा को अति उदात्त बना दिया है। लक्ष्मण और सुमन्त्र के साथ वन यात्रा एवं मनोव्यथा का वर्णन देवी सीता द्वारा राम को सन्देशा भेजना आदि प्रक्रिय घटनायें है।

कवि ने कथा को शब्द विन्यास की सर्थकता को ग्रहण करते हुए प्रशंगिक कथाओं का सुस्वादुपूर्ण प्रयोग कथा सम्मति और उपयुक्तता के साथ करते हुये अपवाद का जनसामान्य में प्रसारित होने के अन्य कारणों में गन्धर्वो का, व पडोसी राज्यों के षडयन्त्रों का कुत्सित कृत्य माना है। देवी सीता के आश्रम प्रवास में लवणासुर का वध करने हेतु जाते हुए, शत्रुघन का आगमन आदि प्राशंगिक कथा है। तथा आत्रेयी के माध्यम से धनुष यज्ञ से लेकर वनगमन सीता हरण रावण युद्ध आदि का वर्णन प्राशंगिक घटनायें है। कवि ने अपनी कथा वर्णन में परम्परिक घटनाओं की विस्तृतता को निरूपित करते हुए रजक प्रसंग, आश्रम प्रवेश, आश्रम में लव कुश का शिक्षाध्ययन आश्रम से देवी सीता सहित अयोध्या ले जाना पति राम से मिलना तथा दिव्य ज्योति में परिवर्तित हो विलीन हो जाना आदि पारम्परिक घटनाये है।

काव्य में कवि ने अपनी मौलिक उद्भावना को उपयुक्त अलंकारो, अवसरों और स्वाभानुसार उदात्त वर्णन किया है। अपनी मौलिक उदभावना की अभिव्यजंना में राम के लोकाराधन, जनहित राम की सरस चित्तवृत्ति का वर्णन देवी सीता के विभूतियों को धारण करने वाली सुचरिता सती सिरोमणि के रूप में प्रतिष्ठित किया है। तथा निर्वासन के उपरान्त होने वाली विरह वेदना सीता के भय का चित्रण अत्याधिक करूणामयी ढंग से प्रवाहित किया है। काव्य के व्यजंना मे कवि के मौलिक उदगार अत्यन्त सरसता के साथ कथा को करूणा का अथाह उदधि बनाते हुए माताओं का स्नेह अपनी बहनो से विदा होने का संताप मात्र ही नही विछोह की पीड़ा का वर्णन रथ के पीड़ित अश्वों के चित्रण से किया है। प्रियतम की अनुरागनी सुक्रतवती का विह्वलतामयी कवि गान सुनकर पाठक का मानष स्वाभाविक व्यथा की अनुभूति करता है। आश्रम के प्रवास समय में प्रसविनी सीता का अतीत की स्मृति

करना, शत्रुघन का राज कुशलता वर्णन, नामाकरण संस्कार का मनोहारी विस्तृत वर्णन समय भाव भंगिमा की सम्पूर्ण महत्ता लसित है। आश्रम में बाल आमोद का वर्णन मातृत्व स्नेह से ललकता देवी सीता के मनकृत्य का वर्णन सामग्री होकर तपस्वनी बनकर लोकरंजनी नीति, पूत पति प्रीता सीता के भाओं का उत्फुल्ल संगठित कर नवीनतम रूप से प्रस्तुती कवि की सहज मौलिक उदभावना है।

प्रस्तुत कवि की काव्य कथा रामकथा के परम्परिक स्त्रोतों पर आधारित है कवि ने अपने कथा के स्त्रोत मूलतयः वाल्मीकि भवभूति आदि से ग्राह किये है। कथा की कुछ परम्परिक घटनाये व प्रशंगिक कथाये अध्यात्म रामायण आदि सम्प्रदायिक रामायणों के स्त्रातों पर निर्भर है।

हिन्दी भाषा की उत्कृष्तम प्रस्तुति के रूप में कवि हरिऔध जी की यह काव्य रचना विशिष्टता के आदर्शो में प्रतिष्ठित अपने अन्तस में अधिकारिक कथा प्राशंगिक कथाओं एवं प्राशंगिक घटनाओं का विभिन्न माध्यमों से अभिव्यंजित करते हुए सशक्त रूप से सम्पूर्ण सार्थकता के साथ प्रस्तुत किया है। जिससे कवि की अभिव्यंजना सर्वोच्च स्थान ग्राहकर चुकी है। निःसन्देह वैदेही बनवास काव्य योजना को सर्गो में बद्धकर कवि अपनी आदर्श कल्पना चेतना को प्रस्तुत किया है। सीता निर्वासिन कथा से व्याप्त जनमानस की करूणा को नवीनता के साथ प्रस्तुत किया है। कथावस्तु में छिपे हुए किसी कवि द्वारा अनछुऐ पहलुओं को विस्तृत रूप से व्यंजित करने का यह प्रथम और आखिर प्रयास ही सिद्ध हुआ है।

प्रवाद पर्व- कथासार :-

काव्यात्मक भूमिका पर लिखी गयी सीता बनवास की कथा को कवि श्री नरेश मेहता ने प्रवाद पर्व में दृश्यालोकन कराते हुये अपनी उत्कृष्ट रचनात्मक शैली के द्वारा सीता निर्वासिन में शब्द सम्प्रेषण के माध्यम से राय के व्यक्तित्व को कर्म के प्रति समर्पित एवं निष्ठावान तथा प्रतिइतिहास से इतिहास तक तथा राज्य से राजतंत्र एवं न्याय के लिये प्रतिष्ठा प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। चरित्र और मर्यादाओं के लिये घटनाओं की त्रासदी मे राज्य गरिमा के हेतु सीता का समर्पण एवं अनाम प्रजा के विश्वास की अभिव्यक्ति के लिये स्वेच्छा से किसी भी परीक्षा हेतु स्वयं को प्रस्तुत करती है।

काव्य की कथा वस्तु का समायोजन तथा घटनाओं का विवेचन इस एतिहासिक महत्ता के साथ प्रस्तुत कर कवि ने उत्कृष्टता का अनुपम स्वरूप प्रस्तुत किया है।

प्रवाद पर्व में सीता बनवास की कथा के प्रारम्भ में अयोध्या के राजा श्री राम शरद ऋतु की रात्रि में प्रकृति की सुन्दरता का राज्य प्रसाद के एक झरोखे से अवलोकन करते है, अतः निर्मम कर्म के विपरीत विद्रोह करने के कारण क्षोभ युक्त है। अपने प्रारम्भ के कर्मो के परिणामों में स्वयं को अग्नि परीक्षा के लिये तैयार करते है। वह अपने व्यक्तित्व को समिधा मानकर अपने आपको हवन कुण्ड बनाकर आहुतियों के लिये स्वयं के निजत्व को समर्पित करने को तैयार करते है।

प्रजा के साधारण जन के द्वारा राजसी गरिमा की प्रतीक सीता के चरित्र की ओर उगली उठाये जाने के कारण को राज्य तन्त्र के इतिहास में उठे कोलाहल से चरित्र गरिमा का ह्रास ही नही अपितु उसके प्रति ऐतिहासिक व्यक्तित्व को स्वीकार करके भरत, लक्ष्मण और मंत्री राष्ट्र वर्धन एवं समस्त सभा सदों के बीच राम, सीता परित्याग

का निर्णय राष्ट्र और न्याय के हित के लिये करते है। यद्यपि भरत के द्वारा धोबी के कथन का राज्य सभा में प्रबल विरोध करना काव्य में चित्रित किया गया है। भरत के द्वारा प्रस्तुत तत्व में देवी सीता की अग्नि परीक्षा हो जाने के उपरान्त धोबी के द्वारा लगाये गये आरोप को राज्य मोह की संज्ञा दी जाती है, परन्तु राम उसे राज्य द्रोह की संज्ञा न मानकर सामूहिक आकांक्षा का प्रतीक मानते है। लक्ष्मण के कथन-

"राज्य ऐसे नही चला करते" [10]

लक्ष्मण की इस अभिव्यक्ति से राज्य में सीता अपवाद को शक्ति पूर्वक दवा देने की मनसा प्रकट होती है, परन्तु राम जब अभिव्यक्ति की प्रधानता को सर्वोपरि मानकर सौहार्द्र पूर्ण नीति से प्रशासन का संचालन ही राजा का कर्तव्य मानते है। तथापि लक्ष्मण से कहते है कि भय से राज्य नही चला करते क्योकि रावण से बडा मनीषी, महासम्राट और चक्रवर्ती वेद वेदान्ती तथा इतिहास पुरूष कोई और नही था, परन्तु वास्तविक रूप में उसके राज्य में असहमतियों और भय युक्त मौन के अलावा राज्य में प्रजा ही नही थी वो शक्ति का उपासक सम्राट ही तो था। शक्ति मानवता य बन्धु बान्धुव कुछ नही मानती। हमने मात्र सीता की प्राप्ति के लिये जो युद्ध किया था, जिसमे रावण की शक्ति से प्रताडित कोटि-कोटि नर किन्नर वानरों ने तथा भय से कम्पित अनाम प्रजा जनो ने स्वाधीनता और अभिव्यक्ति के लिये समूहयुक्त जुटकर युद्ध में हमेशा सहयोग किया था। अतेव आज जो सीता के चरित्रिक अपवाद को स्वर देने वाले वही अनाम साधारण जन है अतः हमें मानवीयता के साथ विनय पूर्वक साधारण जन की वाणी को इतिहास के लिये स्वीकारना होगा।

तदुपरान्त राम का निर्णय जानना चाहते है परन्तु राम बडे धैर्य के साथ अपने निर्णय को निर्वेद भूमि पर खडे होकर देने के लिये कहते है। सभा का समापन कर अर्द्ध रात्रि में राम उदिग्न भाव से सीता के पास जाते है, सीता उनसे चिन्ता का कारण पूछती है। राम सीता के प्रश्न पर अपने को राज्य गरिमा मे बंधा होने के कारण इतिहास पुरूष बनने के लिये निजत्व के त्याग का असह कारण कहने से पूर्व मांगलिक आरम्भ इच्वाकु राज्य भवन में आगमन से लेकर वन गमन से पुनः राजसी सम आरम्भ तक ऐतिहासिक घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन करते है।

तदुपरान्त एक साधारण जन के द्वारा मर्यादा से सम्बद्ध उगली उठाने के कारण न्याय और इतिहास के प्रति हमारी क्या आपेक्षाएं है। राम के कथन को सुनकर सीता कहती है कि हे आर्य पुत्र मै साधारण जन की आवाज की शक्ति को जानती हूं आप स्वयं इतिहास पुरूष है उसका अनुमान पुष्प वाटिका के प्रथम दर्शन में ही हो गया था। समुद्र पर सेतु बांधने से भी दुष्कर कार्य था रावण के विरूद्ध युद्ध के लिये जनमत को तैयार करना। हे आर्य पुत्र इतिहास यज्ञ पुरूषों को एकान्त ही कब देता है। राज्य भवनों में साधारण व्यक्ति नही इतिहास पुरूष ही रहा करते है। अगर एक अनाम साधारण जन ने मेरी चरित्रिक मर्यादा के सम्बन्ध में उगली उठायी है तो आपकी राज्य गरिमा मेरी आशक्ति के कारण व्यथित हो जायेगी राज्य न्याय और राष्ट्र के लिये व्यक्ति को निजी सम्बन्धों से ऊपर होना चाहिये। आपके राज्य के प्रति उस साधारण जन का इतना प्रगाढ़ विश्वास है कि उसने अपनी अभिव्यक्ति निर्भीकता के साथ प्रस्तुत किया है। अतः आपको अपनी प्रजा के विश्वास की रक्षा, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करके करनी चाहिये। आपको मेरे प्रति सर्वथा आश्वस्त होना चाहिये मैं आपकी राज्य गरिमा और अपनी चरित्र मर्यादा की रक्षा के लिये कोई भी परीक्षा दे सकती हूं। देवी सीता के इस कथन पर राम आवाक होकर सीता की ओर देखते रह

जाते है। दूसरे दिन राजदरबार में उपस्थित जनों के बीच राम स्वतन्त्रता और अभिव्यक्ति के प्रति स्वतन्त्रता के अर्थ एवं सामान्य जन की राष्ट्र के लिये आवश्यकता की महत्ता को कहते हुये अपना ऐतिहासिक निर्णय निर्वेद की पीठिका पर खड़े होकर देते है कि सभासद एवं मंत्रीगण आदि उस अनाम जन को राजद्रोही बताते है जिसने सीता के चरित्र पर शंका की उंगली उठाकर चिन्हित किया है। परन्तु मै उसे राजद्रोही नही मानता हूं क्योकि राजद्रोह राष्ट्र के विरुद्ध होता है। और मै व सीता राजातो हैं परन्तु राष्ट्र नहीं है। अतः महानुभाव राष्ट्र के प्रत्येक सदस्य की स्वाधीनता के लिये शंका का उत्तर केवल निर्भयता है, अतः कल सूर्योदय के साथ ही सीता वनवास के लिये प्रस्थान करेगी एवं वनवास काल में सीता को किसी भी प्रकार की राजकीय सुविधा नही प्रदान की जायेगी। सूर्योदय के होते ही लक्ष्मण सीता को रथ में बैठाकर जंगल की ओर प्रस्थान करते है, तथा अपने प्रिया के वन गमन को खिन्न और उदास मन से देखते हुए सोचते है कि व्यक्ति जब इतिहास को समर्पित होता है तो ऐसी ही त्रासदी जन्म लेती है। इतिहास पुरूष के पासर्व में खडी होने वाली प्रिया आज मात्र प्रतिमा बनकर रह गयी है।

कवि राम के व्यक्तिगत जीवन की सबसे बड़ी दुर्घटना मानते हुये चित्रित करते है कि राम निर्वेद की पीठिका पर खडे होकर प्रिया को विदायी भी नही दे सके। यही से कथा समाप्त हो जाती है।

कथा वस्तु :-

काव्य नाट्य विधा की अनुपम प्रस्तुति ''प्रवाद पर्व'' अपने अन्तस में रामकथा परम्परा में सीता निर्वासन कथा की ऐतिहासिक रश्मियों का उदात्त एवं विराट साक्षात्कार कराती है। कवि की वैचारिक काव्यात्मकता से कथा के सम्पूर्ण प्रकार नैसार्गिक वर्णन से, चैतन्य भाव वर्णन विकसित एवं सर्व विशिष्ठ है।

''प्रवाद पर्व'' की कथा का प्रारम्भ ''इतिहास और प्रति इतिहास'' में कवि राम को व्यग्र भाव से राज प्रसाद में उपस्थित पाते हैं। जो मानवीय कर्म के साथ जुडकर व्यक्तित्व की प्रियता से परे होते हुए भी, वह असंग कर्म करने के लिए कितना विवश होता है। कवि ने काव्य के प्रारम्भ मे ही ऐसे बहुत सारे प्रश्न राम के मुख मंडल पर उपस्थित देखकर ''राजा राम'' व ''सिया पति राम'' के परस्पर द्वन्द्व की वैचारिक तत्वतः भाव दशाओं का वर्णन किया है।

साधारण जन के द्वारा लगाया गया प्रश्न चिन्ह राजसी गरिमा को ही नही चारित्रक मर्यादाओं को भी घायल किया है। साधारण जन की इस आवाज़ को यदि समूल नष्ट नही किया गया, तो राज्य शक्ति की गरिमा में प्रश्च चिन्ह बनकर इतिहास बन जायेगा। और यही प्रश्न चिन्ह प्रति इतिहास की भयंकर लपटों में राजकुल की गरिमा को जलाकर इतिहास हीन बना देगे। कवि के ''राम'' सोचते है, कि ''मेरे राजकुल की ओर इस साधारण अनाम जन की तर्जनी किसी विद्वेषक की तर्जनी नही हो सकती'' और न ही कोई साधारण घटना मानकर इसे नकारा जा सकता है। ''सीता के चरित्र पर लगे हुए इस कलंक को राजसत्ता के शक्ति से इतिहास हीन बनाने की अपेक्षा मुझे अपने आप को ऐतिहासिक परीक्षा के लिए तत्पर होना चाहिए।

मानवीय अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से ऐतिहासिक व मानवीय उदात्तता से लिखा जाना चाहिये क्योकि इतिहास कभी खड्ग व शक्ति से नही लिखा जाता है।

दूसरे खण्ड '' प्रति इतिहास और तन्त्र'' में कवि के विचार मग्न राम राजदरबार में जनमानस की

अभिव्यक्ति के सन्दर्भ में सभासदों की बैठक पर न्यायिक विचार विमर्श करते है। सभा में उपस्थित भरत, लक्ष्मण और मंत्री राष्ट्रवर्धन के बीच परस्पर विचार विमर्श करने के उपरान्त न्याय की समदर्शिता तथा अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का जन अधिकार समाप्त कर भाषा हीन गूंगे राज्य की स्थापना करने से कही श्रेष्कर अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को प्रतिष्ठित कर राज्य को सामूहिक आकांक्षा का प्रतीक बनाना ही इतिहास पुरूष का गौरव होता है। रजक की वाणी को शक्ति से कुचलना कर्मठता नही बल्कि अवमानना होगी।

राजा का कर्तव्य न्याय को समग्र मानवता के लिए सामान्य निर्मित करना होता है। कवि के राम ने अपने अनुज लक्ष्मण की उत्तेजना को शान्त करने के लिए तथा न्याय हित में फैसला लेने के लिए लक्ष्मण की उत्तेजना को शान्त करने के लिए तथा न्याय हित में फैसला लेने के लिए लक्ष्मण को रावण के राज व राजनीति का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहते है कि वह शक्ति सम्पन्न योग्य तथा कुशल शासक था। परन्तु उसने जब वाणी को शक्ति से दबाकर अभिव्यक्ति हीन कर दिया था। और परिणाम में भाषाहीन भयातुर, प्रताड़ित प्रजा ने अपनी अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के प्राप्त हेतु तथा स्वत्व जीवन मूल्यों के आदर्शो ने ही उस चक्रवर्ती सम्राट के विरूद्व एकत्र होकर युद्व का प्रणार्पण किया था। और जब इस अनाम ऊंगली को राम अपने ऊपर उठते देख शक्ति का प्रयोग करेगा तो उस दुर्दान्त रावण और मुझमें क्या अन्तर होगा ?" अतः निर्णय की प्रतिक्षा करो।

खण्ड "शक्ति एक सम्बन्ध, एक साक्षात" में राम सीता की परस्पर वार्ता का दृश्यांकन शयनागार में करते हुये कवि ने राम के अन्तस की अर्न्तद्वन्द्वता सीता के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। उस अनाम साधारण जन द्वारा चरित्रिक मर्यादा पर उंगली उठाये जाने का कारण बताते हुए अपने परस्परिक जीवन में घटने वाली घटनाओं में घटने वाले सुखों एवं दुःखों की समीक्षा करते हुए भविष्य के घटने वाले घटना चक्र की आहट से सीता को सचेष्ट करते हैं। तथा निर्णायक स्थिति में समर्पित होने के लिए प्रेरित करते है। राम के प्रतिउत्तर में कवि की देवी सीता पति प्रेरणा बनकर अपने राम को निजत्व का त्याग करके इतिहास पुरूष बनने को प्रेरित करते हुए राज्य गरिमा हेतु प्रजा के विश्वास एवं निर्मम अभिव्यक्ति का पक्षपात करती है।

खण्ड "प्रति इतिहास और निर्णय" में दूसरे दिन राज दरबार के दृश्य का अवलोकन करवाते हुए कवि लक्ष्मण के उद्घोष का प्रारम्भ करवाते है। भरत शत्रुघन मंत्री परिषद के सदस्य सभासद और विशिष्ट जनों की उपस्थिति में अनाम अभियुक्त के अभियोग को प्रस्तुत कर न्यायपूर्ण अभिमत प्रस्तावित करने का महाराजा राम से निवेदन करते है। विविध तर्को के स्पष्टीकरण प्रस्तुत किये जाते है और न्याय हेतु राम राज्य की शीर्षतम नारी की चरित्र गरिमा को सम्मुख रख न्याय के निर्णय की प्रतीक्षा होने लगती है। और राजाराम विविध तर्को को संयोजित कर आदर्श राज्य की स्थापना हेतु सौम्य माध्वी प्रिया सिया को पुनः बल्कल पहनकर वनवास जाने का ऐतिहासिक निर्णय सुना देते है। एवं वनवास काल में किसी भी तरह की राजकीय सुविधाओं से वांछित रहकर वनवास के लिए कल प्रातः ही प्रस्थान करेगी तथा रथ का सरिथ्य लक्ष्मण गृहण करेगे।

"निर्वेद विदा" शीर्षक खण्ड में देवी सीता को रथारूढ़ करा लक्ष्मण चले जाते है। और राम खिन्नमन से अपनी प्रिया सिया को जाते हुए देखते रह जाते है।

प्रवाद पर्व की कथावस्तु को कवि ने पौराणिक ऐतिहासिक सीमाओं में रहते हुये अपनी कल्पना से

नाट्य-काव्य के परिदृश्यों का स्तवन किया है। कवि ने अपने नाट्य काव्य की अधिकारिक कथा में रामकथा के अनुरूप ही सीता निर्वासन की कथा के आशिंक अंश प्रस्तुत किये है। जिसके अन्तर्गत रजक के कथन से लगे सीता के चारित्रिक आक्षेप से राम का उद्विग्न होकर विचार करना राजा के कठोर धर्म का पालन करने के लिए अपनी प्रिया सिया से सम्पूर्ण प्रकरण की समीक्षा कर निर्वासित करने का निर्णय करना और उस निर्णय को राजदरबार में सुनाना तथा लक्ष्मण का सीता को रथ में लेकर विदा होना ही अधिकारिक कथा के अंश है।

नाट्य काव्य में कवि ने प्राशंगिक घटनाओं के रूप में राजदरबार सभासद मंत्री परिषद के सदस्यों के साथ में निर्लाप व भरत लक्ष्मण एवं मंत्री द्वारा प्राशंगिक तर्कों की अभिव्यंजना राज्यकार्य की कार्य प्रणाली की सुव्यवस्थि संचालन हेतु तर्को का प्रस्तुत करना तथा राम के द्वारा ऐतिहासिक निर्णय देने के पूर्व न्याय हित तथा राजहित निहित तर्को एवं उदाहरणों के माध्यमों से सन्तुष्ट करना आदि प्राशंगिक घटनाये है।

राजदरबार में भरत और लक्ष्मण द्वारा सीता के ऊपर लगाये गये रजक के आरोप से कुपित होना और उसे राजदण्ड देने हेतु अपनी प्रक्रिया प्रस्तुत करना प्रक्रिय घटनायें है। प्रस्तुत नाट्य काव्य में सीता निर्वासन कथा को कवि ने आदर्श परिवेश में ढालते हुए अपनी मौलिक उदभावनाओं की प्रस्तुति में राम को निजत्व से परे हटकर श्वेत लोक राज्य की स्थापना करने वाला आदर्श एवं निष्ठावान ऐतिहासिक शासक के रूप में प्रतिष्ठित किया है वही पर सीता को भारतीय हिन्दू संस्कृति के गौरव में इतिहास का नवीनीकरण कर प्रस्तुत किया है। जो पति को आदर्शवान नीति मर्मज्ञ शासक के रूप में प्रतिष्ठित करने के लिये स्वयमेव परित्याग को स्वीकार कर विरह का वरण करती है, ताकि सिया पति राम स्वा के सत्य से बाहर निकलकर अनाम सामान्य की अभिव्यक्ति को प्रखर स्वतन्त्रता देकर इतिहास पुरूष के रूप में प्रतिष्ठित हो जाएं।

त्याग और तपस्या की प्रतिमूर्ति कवि की देवी सीता एवं न्याय और आदर्शो के प्रतिपालक कवि के श्री राम जिन्होने जन हितार्थ अनपे निजत्व का समर्पणकर लोक मर्यादाओं के उत्कृष्ठ मूल्यों का स्थापन कर अमिट इतिहास की धरोहर बनकर हमारे राज्य और समाज में सदियों से नवीन चेतना का संचार करते रहेगे।

अग्निलीक- कथासार :-

हिन्दी के सामर्थ कवि अग्रवाल जी की नाट्य काव्य प्रारम्भ से अन्त तक तथा बीच-बीच में कथा प्रशंगो को सुनियोजित ढंग से आवद्ध कर लेखन योजना में परिवर्तनों की सम्भावनाओं को नूतन परिवेश में व्यक्त किया है। कवि की रचना में सीता वनवास के कथासार में प्रमुख पात्रों की चारित्रिक अभिव्यंजना करते हुए श्री राम के व्यक्तित्व और चरित्र में केवल मानवीय आयामों को ही देखा है। कवि श्री राम जी को विशुद्ध मानव के रूप में चित्रित कर एक महत्वाकांक्षी शासक के रूप में प्रतिष्ठित किया है, जो झूठी गरिमा तथा लक्ष्यप्रप्ति एवं प्रतिष्ठा के लिए भावनाओं को रंच मात्र भी स्थान न देकर अपने सम्पूर्ण जीवन को विजय यात्राओं में बिता दिया है।

अतेव अग्निलोक कवि की मौलिक रचना है, जो अपने अन्तस में समस्त पौराणिक और ऐतिहासिक साक्षों और विशेषताओं को भरे हुए अवतारवाद आदि प्रपंचनाओं से परे होकर मानवीय गुणानुरूप एक राजनेता के अति उच्च महात्वाकांक्षा से उत्पन्न हुई त्रासदी का चित्रण है।

कथा का प्रारम्भ रंगमंच के पर्दा खुलने से होता है। जिसमे कवि ने पथ श्रम से श्रमित दो पथिको का

अवलोकन करवाते है। एक निम्नजाति का रथवान और दूसरा राजपुरूष है। विश्राम हेतु रथ रोककर उसी स्थान पर रूकते है जिस जगह पर सोलह वर्ष पूर्व सौमित्र के साथ राज्य निष्कासित सिया को गर्भावस्था में छोड़कर चले गये थे। और रथवान की विलुप्त सारी स्मृतियां पुनः मानस पटल पर आ जाती है जिससे उसका मन द्रवित हो जाता है। और वह अपने साथी राजपुरूष से अपने दुःख के कारण को आयी हुई पूर्व की स्मृतियां और दुःख के कारण को बताता है कि मेरा दुःख राम की प्रजा होना है। क्योकि आज से सोलह वर्ष पूर्व हमने महारानी को यही पर रथ से उतारा था और महारानी ने इसी तालाब के जल से सूर्य को आर्द्ध देकर सौमित्र से कहा था कि जिस अबला को अपने घर में ही प्राश्रय नही मिला उसे मुनि आश्रम की क्या आवश्यकता है। अस्तु मूर्ति की तरह निश्चल भइया लक्ष्मण तुम मुझे वही पर छोड़कर वापस जाओं और अयोध्या महाराज से मेरा सन्देशा आवश्य कहना की जब उन्हें वनवास मिला था, तब मै उनके साथ गई थी परन्तु तब हम पति-पत्नी थे और आज वो महाराज है इसीलिए मेरे साथ उनका वन आगमन उचित नही है। अतेव केवल इतना कहना कि आपकी आज्ञा शिरोधार्य है"। पूर्व की घटना को वताते हुए रथवान शोक से विह्वल हो जाता है, और राम के इस कृत्य को अत्यन्त तुच्छ मानकर अपने आपको भी इस कुकर्म में शामिल होने का पश्चाताप करता है। महारानी का निर्वासिन यद्यपि मेरा और लक्ष्मण का कष्ट मात्र नही था सम्पूर्ण अयोध्या के जनमन में व्याप्त हो गया था। रथवान कि करूण अभिव्यक्ति से राजपुरूष की करूणा से द्रवित होती है। वह सोचते है महाराजा राम के इस कृत्य का उन पर कितना प्रभाव है, कि हम तुम इस दुःख की कल्पना भी नही कर सकते है। हम सब ने मात्र एक छत्रछाया ही खोई है, परन्तु उन्होने तो अपनी जीवन संगनी को ही खो दिया है। निश्चय ही महाराज कि छोटी सी भूल के कारण कितना दुःख भोगना पड़ रहा होगा। परन्तु रथवान राजपुरूष के कथन से सहमत न होकर उस घटना को भूल नही मानता रथवान के कथन में कवि के मानवीय राम ने चौदह वर्षो जंगलों में भटकने के उपरान्त अपना खोया हुआ राज्य पाने के हेतु दुर्मुख की बात मानकर अपनी अर्द्धागिनी को निर्वासित कर राज्य के बदले महारानी का मूल्य चुकाया था।

रथवान के कथन को राजपुरूष राजद्रोह कि संज्ञा देता है परन्तु रथवान सत्य घटना को राजद्रोह नही मानता और कहता है कि सत्य घटना आपके पूछने पर बताया है। अतः राजपुरूष इस कथन को जन सामान्य द्वारा कहे जाने की बात पूछते है और रथवान उन्हें जन सामान्य का भी यही कथन बताते है। एवं कहते है कि वह दिन अब नही है जब जनसामान्य द्वारा मुखरित चर्चायें राजा के पास पहुंच जाती थी और महाराज भी जन सामान्य के लिए समर्पित थे, परन्तु अब महाराज के पास चक्रवर्ती बनने की उच्च महात्वाकांक्षा के अतिरिक्त प्रजाहित प्रजोजनों का समय ही कहा मिलता है। सुख और वैभव तथा दान पुन्य के समारोहो में व्यस्त है, प्रजा की क्या स्थिति है ? क्या सोचती है ? और महाराज ने झूंठी प्रपंचना को निष्कासन के साक्ष्य से सत्यता के कलेवर से मढ़ दिया है। वहीं राम जिन्होने सत्यता का स्थापना करने हेतु कभी राज्य को ठुकरा दिया था। परन्तु आज राज्य के हेतु सत्यता को ठुकरा दिया है। अन्यथा एक पागल की बात पर महाराज का फैसला सर्वथा अनुचित ही था। अन्यथा वह हमारे व जनसामान्य के विचार को ज्ञात करने के उपरान्त ही ऐसा निर्णय करते, जिससे हमारी राज्य लक्ष्मी हमारे देश से बाहर न जाती। राज पुरूष, रथवान के कथन से सहमत न होकर कहता है, कि उस समय काफी सम्भव यह था कि तुम सब भी उसी के कथन का समर्थन करते। और आज तुम्हारे सोचो में राजमोह है। वह महाराज का बहुत बड़ा त्याग

है। जो आज भी राज्य महलों में नही वन में ही रहते है। और रथवान ने राजपुरूष के कथन पर पुनः टिप्पणी की थी। कि जब राम वन में गये थे तो भरत ने वैराग्य ले लिया है। आज महारानी वन में है तो महाराज ने राज्य से वैराग्य ले लिया है। आज महारानी का वनावास कहने मात्र के लिए है। महाराज ने सारी प्रजा को ही वनवास दे दिया है। राजपुरूष रथवान से महाराज की इस चिन्ता से चिन्तित होने के कारण अश्वमेघ का आवाहन करना नियति किया है। क्योकि ज्योतिष विद्वानों ने महारानी को अश्वमेघ यज्ञ में मिलने के संकेत किये थे। इतना ही नही पुत्रों की प्राप्ति एवं चक्रवर्ती वन सम्पूर्ण प्रजा को सुखी करेगे।

दूसरे दृश्य में कवि ने नाट्य काव्य के वाल्मीकि आश्रम दृश्य में देवि! को रूग्णता अवस्था में शय्या पर लेटे हुए एवं उनके पास कौशिकी को उपस्थित चित्रित किया है, और कथानक आगे बढ़ता है। दोनो परस्पर बाते करती है। गुरूवर की अनुपस्थिति से, परन्तु महारानी सीता को बीते समय का भान नही होता है। क्योकि कई दिवस उनके मूर्छित अवस्था में बीत जाते है। कौशिकी देवी सीता के स्वास्थ्य की स्थिति ठीक होने की सूचना देती है परन्तु देवी सीता स्वयं को निष्प्रयोज्य जीवन के जीने की विवशता की अनुभूति से कौशिकी को परिचित कराती है। तथा अपने परिचय के सम्बन्ध में कौशिकी को अनभिज्ञ रखते हुए अपने आपको कौशिकी के प्रश्नों के प्रतिउत्तर में एक परित्यागता नारी के रूप में प्रस्तुत करती है। जिसमें संसारिक परिवेश के सम्पूर्ण भय ही व्याप्त है। देवी सीता की सन्देहास्पद परन्तु करूणा से परिपूर्ण उदबोधन के अभिप्राय से कौशिकी सर्वथा अनभिज्ञ ही रहती है। तभी नेपथ्य से कोलाहल की ध्वनि सुनाई पड़ती है जिसे सुनकर देवी सीता के मन में सन्देह होता है और वो कौशिकी से पूछती है। तब कौशिकी उन्हें महाराजाधिराज की दिग्विजय के सैन्य अभियान के सम्बन्ध में सूचित कर आश्रम के निकट ही सेना के पडाव होने की सूचना से अवगत कराती है। देवी सीता की जिज्ञासाये और जागृत होती है और श्री राम की दर्शअभिलाषा की कपोले अन्तःकरण के किसी कोने से स्फुटित होकर प्रश्न पर प्रश्न करने के लिए विवश करती है। क्या तुमने सैन्य यात्रा स्वयं देखी है ? व सेना कितनी है ? एवं सेनापति कौन है ? तब कौशिकी सम्पूर्ण प्रश्नों का उत्तर देकर सेना नायक चन्द्रकेतु के होने की सूचना बताती है। परन्तु देवी सीता की स्मिृति अयोध्या के राजकुमार के सम्बन्ध में अनभिज्ञ रहती है। कौशिकी वापस चली जाती है। कथा का दृश्य परिवर्तित होता है। देवी सीता सैया पर अकेली चिन्तित अवस्था में विचार मग्न हो जाती है। और अपने कौशिकी के सम्वादो की विवेचना करते हुए अपने को पुनः मोह ग्रस्त होने के कारण उपरोक्त प्रश्नों का जन्म मानती है। अन्यथा सोलह वर्ष की पूर्व घटनायें आज पूर्व जन्म की भांति प्रतीत होती है। तब ऐसी अवस्था में जब में निभ्रति लोक में जीवन प्राश्रृय तक पहुंचने लगी हूं, तब अपनी सूचना सैन्य अभियान के द्वारा मुझे देकर पुनः मोह की ओर ढकेलने का प्रयास करने लगे हो। देवी सीता के मन में माया और विरक्तता में तुमुल द्वन्द्व होता है। अन्त में विरक्तता विजयी होती है। दृश्य परिवर्तन होता है। चरण आदिवासी वीर भेष में देवी सीता के कुटीर की दिवाल फांदकर प्रवेश करता है करता है। देवी सीता से उन्माद पूर्ण वार्ता करने के उपरान्त राम के सैन्य अभियान को राज्य और धन लोलुप के रूप में चरण की अभिव्यक्ति के माध्यम से कवि ने प्रस्तुत करने का उपहास पूर्ण कथन समायोजित किया है।

दृश्य परिवर्तन होता है रात्रि के आखरी प्रहर में महर्षि वाल्मीकि और देवी सीता का सम्वाद होता है, जिसमे गुरूदेव वापस जाने के लिए कहते है परन्तु देवी सीता अपने साथ हुए बहिष्कार के तिरस्कार को न भूलते हुए

भ्रम से बाहर निकलकर चेतना में संचार की अभिव्यजंना का वर्णन करते हुए अपने मन में व्याप्त समस्त आक्रोश को वाल्मीकि के समक्ष रखते हुए कहती है कि रामराज्य में सत्य के लिए कोई स्थान नही है वहां का प्रत्येक कार्य शोभा के हेतु किया जाता है। मरण के पहले इस शोभा के भार से मुक्ति का मार्ग दूसरा नही होगा मुझे अयोध्या अश्वमेघ में एकत्र ऋषियों, राजपुरूषों, पण्डितों, और प्रजाजनों के समक्ष सौगन्ध खाकर अपनी पवित्रता प्रमाणित करने हेतु बुलाया जा रहा है। मैंने सोलह वर्ष जंगलों के कष्ट सहे, प्रसव वेदना को सहा तथा दो नन्हें-नन्हें बालकों को अपने सीने से लगाकर पूर्ण पोषण किया और अन्त में मुझे यही करना पडे तो मेरा ये जीवन व्यर्थ है। यज्ञ में साक्ष्य देना परित्याग के अपमान से भी भयंकर है। सोलह वर्षो पूर्व जो कार्य किया जा सकता था एक दुर्मुख के कथन को मानकर मेरा निष्कासन हुआ था तब मैं प्रजा जनो के समक्ष हाथ जोड़कर अपनी पवित्रता का साक्ष्य निवेदन करती परन्तु आज सोलह वर्षो के बाद यह निष्प्रयोज्य कार्यवाही मुझे प्राप्ति हेतु नही है। यह तो महाराज अपने पुत्रों को प्राप्ति हेतु समस्त साधन सजोने का प्रयास कर रहे है। कवि की अभिव्यंजना पात्री देवी सीता वेदना रूपी उष्णा से पिघल कर अपने मन की शाखाओं में स्फुटित मोह रूपी पातो को त्यागकर विरक्तता के नवकलिकाओं को धारण कर बज्रांग बन जाती है जिसकी आंखो में वेदना के अश्रु नही है वितृष्णा के धधकते हुए अंगारे है जो अपने गौरव की गरिमा सिसकियों से नही वाणी की गर्जना से प्रस्तुत करने को तत्पर है जिनमें प्रतिशोध की अभिव्यंजना है। जो अपने बीते जीवन वृत्त को प्रस्तुत करने के लिए उपस्थित हुए है। ''मै'' राम की पत्नी नही हूं मै राम की प्रेमिका हूं क्योकि मैने उनका वरण स्वयं किया था मन की प्रेरणा से स्वयं उनके गले में वरमाला डालकर अपना तन मन सब कुछ समर्पित कर दिया था। परन्तु वह कभी प्रेमी नही बन सके वो सदैव राजा ही बने रहे उनके चित्त पर ''मैं'' नही राज्य राजनीति संग्राम और विजय के अलावा दूसरा चिन्तन कभी नही आया ससुराल में पैर रखते ही वनवास मिला था जहा भावनाओं का आदर नही राज्य को महत्व दिया जाता है नारी प्रेम के उत्सर्ग के बदले राज्य मांगती है और उस अनुचित मांग को धर्म और कर्तव्य से परे हटकर पूरा किया जाता है। सारे नियम राज्य मीमांसा तक ही सीमित होते है। प्रजा की त्राहि-त्राहि को अनसुना करके राज्य लिप्सा को आपसी कलह का कारण बना देते है। और सच्चाई से परे हटकर खोखले दाम्भ व झूठे आदर्शो की प्रपंचना करते है। परन्तु मेरा इससे कोई प्रयोजन नही है मै तो सिर्फ अपनी बात करती हूं कि वनवास इन्हे मिला था और मै इनके साथ गई थी मेरे इस फैसले से सभी आश्चर्य चकित थे। क्योकि मै महाराज से प्यार करती थी मै किसी शास्त्र परम्परा य कुल रीति के कारण बन जाना मेरी विवशता नही थी अन्यथा लक्ष्मण के संग क्या उर्मिला भी वन नही जाती। चौदह वर्षो का वन कष्ट मैने हसंकर सहा है और इनकी थकान को माथे लगाकर स्वयं को धन्य मानती थी। क्योकि मैं इन्हें प्यार करती थी परन्तु इन्होने उसे अपने आश्रित कर्मो मे ही माना। इनके मन में कभी भी मेरा स्थान नही था यह तो सदैव अयोध्या को ही मन में बसाये रहे है। जिनके पिता ने स्वयं तीन ब्याह रचाये हो वो नारी मन की पीड़ा को क्या समझ सकते है। इतना ही नही गुरूदेव विजय श्री के लालायित महाराज ने जब लंका में गुप्तचर के रूप में हनुमान को भेजा था तब मैं रक्षसों के त्रास से त्रसित होकर विरह की अग्नि में स्वयं को जला रही थी। इसीलिए मैने हनुमान से कहा था कि मुझे अपने साथ ले चलो परन्तु महाराज का दूत होने के कारण उनकी आज्ञा के विरूद्ध वह मुझे वहां से रावण का पराभव किये हुए लाना अनुचित कहकर अस्वीकार किया था। अजेय दुर्ग लंका को पद्दलित करने के उपरान्त जब

मैं महाराज के पास आई तो शब्दों की बित्रष्णा एवं अपनी चारित्रिक परीक्षा देने के लिए अग्नि प्रवेश करने को कहा था जिसे मैने रघुकुल की लाज समझकर स्वीकार किया था। और जब अयोध्या के राज सिंहासन में आरूढ़ हुए तो दुर्मुख के भाष्य को स्वीकारोक्ति देकर मुझे निर्वासित कर दिया। और मेरा यह निर्वासन महाराज ने केवल इसलिए किया था कि प्रजा का विश्वास मुझे मिल जाये और मेरी महात्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए अकाल और महामारियों से जूझते हुए संग्राम वेदिका पर अपने शीश प्रशन्नता पूर्वक अर्पित कर दे। कितनी क्रूर और तुच्छ मीमांसा थी वह जिसके लिए अयोध्या के निर्दोष जन मानस पर महाराज की रक्त प्यासी खड़ग अपनी प्यास बुझाती है। मै सीता पृथ्वी से जन्मी पिता जनक के राज महलों में पोषित हुई हू जहां राज्य मीमांसा की निर्लिप्तता और विरक्तता है। मेरे पिता जनक ने सर्वत्र स्नेहा पोषण दिया है। कदाचित यही मेरे संस्कार भी थे अतः हे गुरू देव महाराज के प्रति मेरे स्निग्ध प्रेम का साक्ष्य इतिहास देगा। कलतक सीता अश्रिता थी निर्वासिता होकर भी स्मृति मोह बन्धनों के मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकी परन्तु आज मैं मुक्त हूं और स्वतन्त्र हूं मोह का अंश मात्र भी मेरे अन्तस में शेष नही है। इसलिए मैं अपना निर्णय स्वयं करती हूं। और वह चल देती है महर्षि वाल्मीकि और लव कुश उन्हें रोकते है। महाराज राम ने उनकी गर्जनामयी अभिव्यक्ति को हठात होकर सुनते रह जाते है। वह सीता को रोक नही पाते और देवी सीता गहरे खड्ड में कूदकर आत्मत्याग कर देती है। लवकुश दुःख से प्रलाप करते है परन्तु राम दुःख के भावों को आशिंक अभिव्यक्ति करते हुए आत्म निरीक्षण करने के लिए विवश होते है। कहते है मेरे अन्तः चेतना में शायद कही नारी के प्रति अविश्वास ने अपना स्थान बना लिया था क्योकि सर्व प्रथम मुझे मेरे अधिकारों से वांछित करने वाली नारी ही थी और आज जब मैने महात्वाकांक्षा के दलदल से स्वयं को निकालकर तथा चाटुकारों के संकीर्ण वृत्त से बाहर निकला हूं। तब मेरी भक्ति का भ्रम समाप्त हुआ है, विजयनाद के शंख घोंषो में दबी हुयी मेरी प्रिया की चीत्कार मेरे कान नही सुनपाये और उसने अपने आत्म समर्पण से यह सिद्व कर दिया कि यथार्थ जीवन की सच्ची अनुभूति परस्पर विश्वास इस अन्धकारमयी जग की अकेली अग्निलीक थी। हे सीते! मेरे जीवन की यही यंत्रणा का इतिहास बना दूं ताकि जब मै यहां से प्रस्थान करू तो गर्व से कह सकूं कि तुम्हारे बालिदान ने राम का निर्माण किया है।

कथावस्तु :-

रामकथा विशाल सागर है जिसमें कवि अपनी पात्रता के अनुरूप कथारस को गृहण कर विभिन्न काव्यरूपों में रूपायित करता है। गद्य और पद्य के मिश्रण से बने गीति नाट्य की विधा में अग्निलीक की रचना हुयी है जिसमें कवि ने सीता को अग्नि का जाजल्वमान प्रतीक कहा है।

गीति नाट्य कार को एक अतिरिक्त सुविधा मिलती है कि वो कथा का निदर्शन पात्रों के संलाप से व्यक्त करता है। इसमें तीन अंको का प्रयोग हुआ है। प्रथम अंक अधिकारिक कथा की पृष्ठिभूमि उपस्थित करता है। द्वितीय एवं तृतीय अंक में कथा का विस्तार है। संक्षेप में इसकी कथा इस प्रकार है।

गीत नाट्य का प्रारम्भ रथवान राजपुरूष के संवादो से होता है जिसमें रथवान वन में सुषमा को देख सीता निर्वासिना की याद कर उद्विग्न हो जाता है। उसकी विह्वलता इसलिये अधिक बढ़ती है कि सोलह वर्ष पूर्व यही सारथ लक्ष्मण और सीता को रथ में बैठाकर यहां तक आया था और वापस लक्ष्मण के साथ लौट गया और यह ताल, यह बरगद और यह मैदान उसे धिक्कार कर अपराधी सिद्व कर रहे है। राजपुरूष के पूछने पर रथवान अपनी

आन्तरिक व्यथा एवं प्रजा कि दशा का भी उल्लेख करता है। राजपुरूष इसी समय राम द्वारा अश्वमेघ यज्ञ कि पूर्णआहुति का इसलिये उल्लेख करता है कि इन्हें सीता और वंशधर की प्रप्ति होगी।

द्वितीय अंक में देवी सीता की रूग्वावस्था का विवरण दिया गया है। कौशिकी उसकी सेवा सुश्रुप्सा करती है। और देवी से आग्रह करती है कि वह अपने मन की व्यथा को उद्घटित कर दे ताकि उसके मन का बोझ कुछ हल्का हो जाये। देवि दौर्वल्य अवस्था में अनरगल प्रलाप करती है कि उसी समय रामचन्द्र की दिग्विजय हेतु निकली सेना की तुमुल कोलाहल सुनाई पड़ती है। कौशिकी से अयोध्या के राज कुमार चन्द्रकेतु के नायकत्व में आने वाली सेना की बात सुनकर देवी सोलह वर्ष पूर्व कि घटनाओं का स्मरण करने लगती है। और उद्वेगा अवस्था में कहती है कि राम को तुमुल विजय नाद के नीचे छिपा प्रजा का कारूणिक हाहाकार क्यों नही सुनाई पडता इसी समय आदिवासी वीरो का वेष बनाकर आश्रम का एक बालक चरण सीता के पास आकर यह व्यंग्य करता है कि वह भी भूतपर सवार होकर अश्वमेघ यज्ञ के घोडे को लेकर दिग्विजय करेगा और दिग्विजय उपरान्त अपनी सारी सम्पत्ति को खेत में गाड़कर उसके ऊपर टूटे चांद वाला झंडा गाड़ देगा। सीता चरण को समझाती है। तृतीय अंक में वाल्मीकि आश्रम का एक दृश्य दिखाया जाता है जिसमे वाल्मीकि दुःखी सीता को सात्वंना देते है उद्देलित सीता भावाविष्ट होकर अपनी अन्तरिक मनोदशा का वर्णन करती है। वह कहती है कि महाराज राम की बडी कृपा कर अश्वमेघ यज्ञ हेतु उपस्थित ऋषियों साथ में पंडितों एवं प्रजा जनो के सामने राम की पर्णिता अयोध्या की महारानी अपना सिर रखकर पुत्रों की सौगन्ध खाकर अपनी पवित्रता सिद्ध करेगी। इसे सुनकर सीता अपने जीवन को आधार मानती है। क्योकि अगर उसे परीक्षा देनी ही थी तो सोलह वर्ष जंगल में व्यर्थ भटकती रही नदी नालों का जल गृहण कर आश्रम की सेविका बनकर सबसे दया की भीख मांगकर अपनी विवशता क्यों सिद्ध करे। वह कहती है कि वह राम की पत्नी नही प्रेयसी है। राम के समक्ष अपने प्रेम का पूर्ण प्रदर्शन किया है जबकि राम को राज्य, राज्यनीति, संग्राम, और विजय चाहिये था। दैववसात मेरे ससुराल पहुंचते इन्हें वनवास मिल गया ऐसा लगता है कि रघुकुल की यह परम्परा रही है कि नारी प्रेम के बदले राज्य मांगती है प्रजा का मन कुचलने वाले ही प्रजापालक होने का दम्भ करते है और सीता कौशिल्या के रोकने पर भी राम के प्रेम की डोर में बंधी निर्झर उद्वेलित नदियां दुर्गम पहाड़ ऊबड़ खाबड़ घाटियां हंसकर पार की राम का मन नारी के प्यार के जानने का अभिलाषी नही था वे तो राज्य की ही उधेड़ बुन में संलिप्त थे। रावण के हरण करने पर प्रतिक्षा रत सीता उस समय स्तब्ध रह गयी उनके प्यार का महल धरासायी हो गया जब राम ने सीता को अग्नि परीक्षा के लिए प्रेरित किया तब भी सीता राम के प्रेम में आवद्ध अग्नि पार की थी। जिसका परिणाम अन्त में उसे इस रूप में मिला कि एक अनपढ़ नासमझ प्राणी के कथन पर इन्हें अनिश्चित काल का वनवास मिला वाल्मीकि राम के समर्थन में कहना चाहते है कि वे स्थिति प्रज्ञ है, सुख-दुःख से परे है जिसका प्रतिवाद करते हुए सीता कहती है कि आप आसमुद क्षितीश बनने की महात्वाकांक्षा के सामने राम ने सारे नेह नातो को ठुकरा दिया है उन्हे अब भली प्रकार से बोध हो गया है कि लव कुश अयोध्या चले जायेगे और सीता धरती की शरण में गोद लेगी इसी समय लवकुश आकर सीता की पुकार लगाते है। वाल्मीकि लवकुश को लेकर राम के पास सौपते है। निराश हताश राम एक बार फिर ठगे से रह जाते है। वह सोचते है क्या सचमुच वो ईश्वर है क्या उन्होने शक्ति की मर्यादा नही स्थापित की क्या वे प्रजा के सेवक नही है वे अपनी पत्नी से मुंह मोडकर

चाटुकारों से घिरे क्रान्तिरूपी अग्नि में उन्होने अपने जीवन की आहुति चढाई है।

प्रस्तुत काव्य में रजक प्रसंग सीता निर्वासन लक्ष्मण की व्यथा लवकुश जन्म सीता की विरह व्यथा राम का अश्वमेघ यज्ञ सीता का पृथ्वी प्रवेश अधिकारिक कथा है एवं सीता हरण हनुमान का सन्देश प्रेषण रावण का विनाश प्रासंगिक घटनायें है। साथ ही रथवान और राजपुरूष का संवाद प्रक्रिय घटनायें है।

कवि ने पुरानी घटनाओं को नूतन परिवेष में उपस्थित किया है। देवी की विरह व्यथा चरण का अनर्गल प्रयास सीता की मनोव्यथा कवि की मौलिक उदभावनाये है। साथ ही रथवान की स्मृति के रूप में सीता निर्वासन को नये रूप में उपस्थित किया गया है। रजक प्रसंग वाल्मीकि आश्रम में सीता का वास लवकुश जन्म अश्वमेघ यज्ञ सीता का पृथ्वी प्रवेश पारम्परिक घटनायें है जिनका श्रोत वाल्मीकि रामायण सहित अनेक संस्कृत के ग्रन्थ है। गीति नाट्यकार की कथा वर्णन की एक अन्य विशेषता है कि अधिकारिक घटनाये दृश्य रूप में और प्राशंगिक घटनाये सूक्ष्म रूप में है। घटनाओं के वर्णन में उतार चढ़ाव और कुँतुहलता है। यह नाट्य काव्य प्रतीकात्मक है क्योकि सीता का त्याग पति प्रेम एक अग्नि की रेखा के सामान है जिसका प्रकाश राम को ही नही समग्र हिन्दू नारियों को आलोकित कर रहा है।

सीता निर्वासन - कथासार :-

आचार्य उमाशंकर नगाइच जी ने अपनी लेखनी से सीता निर्वासन कथा का रूप बड़े ही समर्थ रूप से प्रस्तुत किया है। उनके इस खण्ड काव्य में सीता परित्याग की पीड़ा में राज धर्म का कठिन कार्य आदि जो प्रस्तुत करण है इसकी कथावस्तु इस प्रकार है-

''तमसा तटवर्तिनी'' नामक शीर्षक में कथा का प्रारम्भ तमसा कूलनी के तट पर वन देवी सदृश प्रतिमा के रूप में सामाग्री देवी सीता को उद्विग्न मन से अस्त होते हुए सूर्य की ओर मुख करके नेत्रों में आंसू भरे हुए व्यंजित किया है। जैसे उनके दृग कोरों पर विद्यमान अश्रु उनके व्यथा के सम्पूर्ण कथ्य है। सूर्य कुल की वह वधू धर्म पारायण देवी सीता की स्थिति को देखकर वह कहते है आर्य कुल के गौरव शिखर राम के इस निर्मम कर्म के कारण सूर्य भी लज्जित होकर अस्तांचल में छिपने जा रहा है। राम के इस कृत्य से रघुवंश की कीर्ति पताका झुक गयी है।

कथा वस्तु को ''मन स्ताप'' शीर्षक में पुरूषोत्तम राम के प्रति कवि की आस्था स्पष्ट रूप से प्रकट होती हुई प्रतीत होती है-

''हे जगत बन्द्य नयनाभिराम
पुरषोत्तम धर्मध्वज ललाम
पावन नैतिकता के आश्रय
मेरे प्राणों के इष्ट राम'' [11]

उपर्युक्त शीर्षक में लेखक ने अपनी आस्था विश्वास का सम्बल आदर्शो के प्रतीक श्री राम को अपने प्राणों की सुगान्धित वायु के समान मानते हुये भी उनके कृत्य सीता निर्वासन से क्षुब्ध होकर अपनी मनोव्यथा को स्पष्ट किया है-

''आस्थाओं में भूडोल उठा
झंझावती मन डोल उठा
विश्वासों के गहरें तल में
हे राम ज्वार बेजोड़ उठा'' [12]

कथा की दृष्टि में उपरोक्त शीर्षक में कुछ भी चित्रण नही किया गया। आगे ''आदेश खण्ड'' में कवि की कल्पना है कि जब लक्ष्मण के द्वारा वैदेही को वन में छोडने के लिये आदेशित किया गया होगा उस समय राम ने अपने वार्तालाप के भ्रम जाल में लक्ष्मण की आत्मा को किस प्रकार से घेरा गया होगा। एक ऐसा कुकृत्य जो पतित नीच व्यक्ति भी करने में कांप उठे उसका भार कैसे अपने भोले से भाई के कंधे में डाला होगा। राम लक्ष्मण से कहते है- हे लखन, मेरी शपथ लेकर वचन दो कि मेरे द्वारा लिया गया एक भीषण निर्णय जो तुम्हें करना है उसके कभी विरत नही होगे राम के इस कथन को सुनकर उत्साह से आवेशित होकर राम के प्राणो की सौगन्ध लेकर सौमित्र राम के इशारे पर अपने प्राण तक समर्पित करने को तैयार हो जाते है- यहां पर कवि ने उत्साह से आवेशित होने की सौमित्र के सहज स्वभाविकता को अपनी लेखनी से छन्द बद्ध किया है।"

''तब तमक बोल बैठे होगे सोत्साह लखन
सौ बार तुम्हारे प्राणों की सौगन्ध राम।'' [13]

लक्ष्मण की इस आज्ञाकारिता से आश्वस्त होकर राम ने सीता को वन बिहार के बहाने वन ले जाकर छोड़ आने को कहा होगा। लक्ष्मण को उनके इस कथन पर विश्वास नही हुआ होगा तथा कानों में हाथ रखकर दोनो कान मूंद लिये होगे दीर्घ स्वास लेकर होगा कि हे तात क्या कह रहे है आप भाभी का निष्कासन, परन्तु उनकी आज्ञाकारिता राम के आदेश का विरोध करने में असमर्थ रही होगी तथा लक्ष्मण राम के आदेशों का तीव्र गरलरूपी चरणामृत पान करने के लिये विवश हुये होगे और अन्त में लक्ष्मण के अनुनय विनय को ध्यान न देकर अपनी आदेश की मुष्ठिका का प्रहार कर चले गये होगे। तदुपरान्त राजवधू की वन बिहार की आकांक्षा की पूर्ति हेतु मंगल मुहूर्त शोधन किया गया होगा। वह कैसा क्षण रहा होगा जब हर्षित किन्तु वंचिता सीता को रथपर चढ़कर पत्थर की प्रतिमा के स्वरूप लक्ष्मण को राम ने प्रस्थापित किया होगा तथा अपने आंखो से कपट के अश्रु बहाये होगे परन्तु क्या कपट से अनभिज्ञ प्रिया सीता ने विभोर होकर स्नेह युक्त धन्यवाद दिया होगा। तत्काल समय पर दाम्पत्य धर्म का गौरव के गिर से नितान्त पतन हो गया होगा परिणामतः सीता को अवध सीमा के उस पार अरण्य में ले जाने के लिये विवश होना पड़ा होगा।

आगे ''वन पथ'' शीर्षक में कवि ने अपने निर्वासन से अनभिज्ञ सीता जी को लक्ष्मण के साथ रथ में वन पथ पर जाते हुये वन की सुन्दरता का अवलोकन करती हुयी प्रमुदित हो जाती है। तथा वन के आकर्षण को कहने लगती है। एवं लखन को भी वन की सुन्दरता से आनन्दित कुछ बोलने के लिये कहती है-

''अरे लखन कुछ बोलो तो
निः शब्द मौन क्यों ?
वन बिहार की बेला में,

वन श्री के मधु आमंत्रण का

यह तिरस्कार क्यों ?'' [14]

परन्तु लक्ष्मण सीता जी से कुछ बोलने का साहस नही कर पाते है। सीता लक्ष्मण के इस मौन से दुखित होती है और अपने द्वारा मारीच वध के समय कहे हुये कटु वचनों के प्रति पश्चाताप करती हुयी अब तक न भूल पाने के कथन द्वारा लक्ष्मण के मन को झकझोरती है। यहां पर कवि ने ''मारीचि वध की प्रासंगिक कथा का संकेत मात्र किया है।'' कदाचित उसे विस्तृत नही होने दिया।लक्ष्मण से उस दुराग्रह की क्षमा मांगते हुये रथ रोककर वन की दिव्यता का और प्रकृति के मनोरम रूप का अमृत पान करने के लिये कहती है। ''वैदेही सौमित्र संलाप'' शीर्षक में लक्ष्मण की मनोव्यथा को कुरेदते हुये कवि सीता की राम के प्रति आस्था विश्वास और समर्पण भाव को देखकर दुखी होते है।

लक्ष्मण को ऐसा लगता है जैसे किसी निश्चल, निभ्रम, निष्कपट मृगी आखेटक के बांसुरी पर दृढ़ अनुराग पाल लेती है। लक्ष्मण सोचते है जिस बल पर भाभी इतरा रही है उसी बल सम्बल मयी हाथों के द्वारा छली गयी है। वही वीर लक्ष्मण सीता के मोद भरे आनन्द वाक्यों को सुनकर वह वीर जो दर्प से सदैव घोषित करता था कि यदि राम का आदेश पा जाऊ तो इस ब्रहाण्ड को कन्दुक की भांति उठा लूं। आज उन हाथों में इतनी शक्ति नही रह गयी कि वो आश्वों की बल्गा तक हाथों से छूट जाती है। परन्तु अपनी निरीहता को सोचकर नैनों में आसू उमड़ पड़ते है तथा अपनी मृत्यु की कामना करने लगते है।

कवि ने ''वैदेही सौमित्र संलाप'' में लक्ष्मण की वेदना को व्यंजित करते हुये दूसरी ओर वैदेही के निर्मल प्रेम को अपनी लेखनी के माध्यम से सशक्त अभिव्यक्ति दी है। सीता को वन में छोड़ने की बात कहते-कहते लक्ष्मण बेसुध होकर गिर जाते है। संक्रामण काल की इस बेला पर सीता जी स्तम्भित होकर रह जाती है और वह सोच नही पाती कि वह क्या करे-

''चौंकी सीता

स्तंभित सी हो विपर्यस्त

इस अनयेक्षित आसन्न संक्रामण बेला में

रोवे, विफरे, गरजे, बरसे क्या करें ?'' [15]

जब लक्ष्मण की चेतना वापस नहीं आती, तो दुःखी लक्ष्मण को छोड़कर सीता जी वहां से यह सोचकर चली गयी गयी होगी कि जब तक मै यहां रहूंगी तब तक मेरी गन्ध लक्ष्मण के सांसो में पहुंचती रहेगी, तब तक लक्ष्मण की चेतना आना सम्भव नही है।

''धिक अवध धन्य यह वन प्रान्तर'' में दैत्यों के दर्प को दलन करने वाली अयोध्या नगरी का वर्णन करते हुये अयोध्या की प्रजा का लंका के विजेता राम के प्रचंण्ड प्रताप को रेखांकित करते हुये भय और राज्य साही नीतियों के तले न्याय और जनता का नैतिक साहस की हत्या का आरेख प्रस्तुत किया है। अवध के लोग जहां सीता के निर्वासन से व्याकुल और विवश है वही कवि की सोच राम की सोच संवेदना मयी होकर प्रस्तुत है। सीता के वियोग में राम सहित अवध के पशु, पंक्षी, नर, नारी दुःखी होते हुये रघुवंशियों के पूर्वज रघु और दिलीप के राज

भवन भी सीता को अपना आश्रय नही दे पाये। धिक्कार है, सिया के उस प्रिया गेह का जिसने सीता को एक पल भी हंसने नही दिया। अयोध्या से तो कहीं अच्छा ये वन प्रदेश है जिसके कण-कण में उन्माद है। पल्लव वृन्द, लतायें तथा तरू एवं गुल एवं त्रण-त्रण सीता के स्वागत में सिहर रहा है। वन के मोद में सीता को दो क्षण भी रोने का अवकाश आश्रम के पशु पक्षी नही देते है।

''गोवत्स'' शीर्षक में कवि ने सीता के ममतामयी मातृत्व स्वरूप की अभिव्यंजना की है। एवं ''मृग शावक'' शीर्षक में पीड़ा की घनी भूत पावन प्रतिमा सीता के पति वियोग की व्यथा कथा को चित्रित कर उनके जीवन के प्रति सहजता एवं अनुनीय सौन्दर्य का चित्रण करते हुये सीता के मंगलमयी एवं वात्सल्य का भाव सभी पशु पंक्षियों के प्रति आनन्द की सतत अभिव्यक्ति किया है।

''यश धबला गंगा से यह छल'' नामक शीर्षक की अभिव्यंजना करते हुये कवि राम से पूछता है कि हे राम तुम्हारे ये नील नयन की ज्योति जो एवं कीटों की पीड़ा को देखकर तुम्हारे आंखो में अश्रु का सागर लहराने लगता है और उनमे पीड़ा भर जाती है तब साध्वी सीता के साथ तुम्हारा यह छल क्यों ? जो सदैव तुम्हारा ही नाम जपती रहती है। जो हम भक्तों की प्रेरणा बनी हुयी गंगा की तरह यश वाली और पवित्र है। ''अग्नि परीक्षा'' नामक शीर्षक में कथा को क्रम में जोड़ते हुये सीता की पवित्रता का साक्ष्य प्रस्तुत किया है। इस शीर्षक के माध्यम से कवि राम से पूछता है कि जब तुम सीता की अग्नि परीक्षा ले चुके थे तो उसके साथ ऐसा छल करने की क्या आवश्यकता थी। राजमाताओं का ''संताप'' नामक शीर्षक के माध्यम से सीता निर्वासन के द्वारा माताओं के करूणा की अभिव्यक्ति चित्रित किया है तथा ''भक्त विद्रोह'' नामक शीर्षक में भक्त का मन उसकी संवेदना उसके दुःख अपने आराध्य द्वारा किये गये इस कृत्य पर मन क्लान्त एवं क्षुब्ध हो उठता है। वह इस अन्याय के लिये किये गये निर्णय को आत्मसात न कर राम के प्रति विद्रोह कर बैठता है। भक्त का विद्रोह राम के सभी उपकारों एवं आशीषों को नकारते हुये अपनी अन्तरात्मा में घुटन सी महसूस करता है तथा राम राज्य के न्याय पर आरोप लगाते हुये कहता है कि मेरे देव राम मुझको क्षमा करना तुम्हारा यह न्याय नही मात्र न्याय का पाखण्ड है। तुम्हारे राज्य की कीर्ति पताका पर घोर कलंक है। राम का ''चित्र'' शीर्षक में भी भक्त का यही विद्रोह राम की आंखो में आसूओं के साथ अधरों पर मुस्कान को व्यंजित करता हुआ विरोधाभास की स्थिति को प्रकट करता है। वहीं पर भक्त को सीता जी उनके अधरों पर उगली रखकर विद्रोही वाणी को विराम लगाने का प्रयास ''सीता की छवि'' शीर्षक में किया है। ''राम की अभिव्यक्ति'' में वह राम भक्त अपने जीवन का सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं प्रेरणा अपने रोम-रोम में बसने वाली रमा को कहा जाता है तथा अपनी सीता पर होने वाले वेदना मयी आघातों की स्मृति कर राम चौक उठते है। '' ओ मेरे नहीं बन्धु'' शीर्षक में राम भक्त के न्यायालय में उपस्थित होकर अपने कृत्य का दण्ड स्वीकारने को तत्पर प्रतीत होते है। यहां पर राम ने भक्त के विद्रोह को उचित मानते हुये उसे स्वयं को नेही बन्धु मानते है। एवं उसका आभार व्यक्त करते है किन्तु राम का ''राजधर्म'' शीर्षक में राजधर्म की मर्यादाओं, राजा का जनता के प्रति कर्तव्य राजमुकुट को निर्मम कहते है अपने स्नेही भक्त बन्धु के रुप में रजक को स्वीकारते है तथा उसे अवध में स्वतन्त्र समीक्षा के समस्त अधिकार प्राप्त है।

राजा का जनता व समाज के प्रत्येक इकाई का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है उपरोक्त शीर्षक में कवि ने

कठोर राजधर्म के मर्यादाओं पर अपने विचारों को उन्मुक्त रूप से अभिव्यंजित किया है। शासक के द्वारा शासन की धर्म निष्ठा कर्तव्य परायणता तथा न्याय प्रियता को उचित स्थान दिया है। वह सीता को निर्दोष मानते हुये भी आदर्श राज आचरण हेतु तथा राज वंशपर प्रजा जनों के आक्षेप हेतु सीता परित्याग को उचित माना है वह सीता पर इस आक्षेप को राम राज्य की अग्नि परीक्षा का क्षण स्वीकार कर सीता को अर्द्धांगिनी मात्र ही नहीं, अपितु सर्वेश्वरी मानते हुए भी आर्य संस्कृति के गौरव मयी गरिमा हेतु स्वीकार किया है। इस अपवाद का दण्ड राम ने सीता को नहीं, बल्कि राजा राम ने स्वयं को दिया है।

''नीति निष्कर्ष'' शीर्षक में सीता जी राम से कहती है कि यदि रीति और नीति के हवन कुण्ड पर सीता की आहुति देने में राम का हांथ मोह ग्रस्त होकर कांप जायेगा तो वह राम को अपनी अन्तरात्मा का श्रंगार नही मानेगी। यदि सीता को सौ बार जन्म लेकर भी नीति के लिये निष्कासित होना पड़े, तो उसे मैं अपना सौभाग्य समझूंगी। वो कहती है हे राम सीता तुम्हारे कीर्ति यज्ञ की समिधा है आपकी कीर्ति के लिये कर्तव्य पालन में विर्सजित हो जाना ही जीवन का सम्पूर्ण सुख है। ''आश्वस्त वाणी'' नामक शीर्षक में भक्त राम के इस राज्य को प्रजा तंत्र का उदाहरण स्वरूप स्वीकारते हुये अपने शंकित मनः स्थिति के लिये क्षमा मांगता है। और राम भक्त के इस भावुक व्यवहार से उपकृत होते है।

इस प्रकार पूरे काव्य मे कथा का अंश आंशिक रूप से ही प्रस्तुत किया गया है। काव्य की अभिव्यंजना में कवि ने कथा में प्रस्तुत पात्रों के मनोदशाओं को अपने काव्य योजना के अन्तर्गत घटनाओं के सन्दर्भो में गहराई तक उतरकर सीता निर्वासन की कथा में व्याप्त सामाजिक मान्यताओं एवं राम के द्वारा लिये गये निर्णय में अन्याय एवं न्यायिक दृष्टिपात करते हुये तमाम प्रश्नों को उभारकर तर्क सम्मत समीक्षात्मक समाधान प्रस्तुत किया है।

''कथावस्तु''

प्रस्तुत खण्ड काव्य की कथा को, कवि ने सीता निर्वासन से उपजी पीड़ा व राम के न्याय प्रियता एवं आदर्शो पर लगे हुए कलंक की समीक्षा अपने उन्मुक्त विचारों के माध्यम से कथा की महत्ता, सरसता एवं सुन्दरता के कलेवर से खण्ड काव्य को करूणा का उन्मुक्त प्रवाह बना दिया है। राम की कथा परम्परा में सीता निर्वासन की व्यजंना राम के न्याय प्रियता को साक्ष्य मानकर किया गया है, परन्तु कवि ने अपने मनोभाओं से उपजे हुए विचारों में सीता की छवि आदर्श, श्रद्वा और निष्ठा की चेतना से पूर्ण पवित्र प्रतिमूर्ति को प्रतिष्ठित कर, राम के प्रति अपने मन के विद्रोह को नही रोक पाता है। फिर भी सम्पूर्ण खण्ड काव्य की व्यंजना से अपनी भक्ति भावना में तनिक भी अन्तर नही होने दिया। अतएव यह खण्ड-काव्य नवीनता की झलक लिये हुये राजनैतिक चेतना, समाज नीति, धर्मनीति की मर्यादाओं की उत्कृष्ठता संजोये हुए, काव्य नीति की लघुत्व चेतना से परिपूर्ण है। जिसमें कवि ने अपने पवित्र विचारों की अमृत बूंद-बूंद करके संचित किया है।

कवि कथा परम्परा के ऐतिहासिक सीमाओं को लांघकर कल्पना के उन्मुक्त गगन पर विचारों के पंख फैलाकर विचरण करने लगता है फिर भी खण्ड काव्य की कथावस्तु पौराणिक पृष्ठभूमि से जुडी हुई तर्क संगत और युगानुरूप है तथा कथा की पुर्नव्याख्या करके कथा तथ्य अल्परूप में ही प्रस्तुत है।

"तमसा तट वर्तिनी" शीर्षक निष्कासित शोक संत्रप्त सीता को अश्रु पात करते हुये देख कल्पना क्षुब्ध होकर कथानक के परिदृश्यों मे विचार मग्न हो जाते है। कि राम ने लक्ष्मण को "सीता निष्कासन" का हेतु अपनी वाक्य चतुरता से कैसे "मनाया होगा" एवं भेजने के लिये अपनी प्रिया सिया के साथ किस तरह से कपट किया होगा, और भाई के क्रूर आदेश से विवश लक्ष्मण, अपनी प्रिय भाभी सीता को रथारूढ़ कराकर अयोध्या के पार ले जाने तक कितने मर्मान्तक पीड़ा के अघात सहे होगे। "वन पथ" पर देवी सीता के बार-बार कहने पर भी लक्ष्मण का मौन रहना, तथा वन विचरण से उत्साहित सीता अपने निष्कासन से अनजान लक्ष्मण के मौन का कारण वनवास के समय पंचवटी मे घटी घटना से जोड़कर कथा की रोचकता तथा तथ्यों को जोड़ा है।

"वैदेही- सौमित्र संलाप" शीर्षक में कवि का चिन्तन लक्ष्मण का प्रेम, भाभी की वात्सल्य मयी वाणी को सुनकर विह्वल हो जाता है, तथा वो अपनी भाभी से नृप का आदेश, अपनी विवशता, तथा निष्कासन के संदर्भ में सूचित कर मूर्छित हो जाते है। अपने निष्कासन को सीता ने राम के विवेक मयी नीति निर्णय को अपना "स्वीकार्य धर्म" मानकर स्वयमेव विदा हो जाती है।"अधिक अवध धन्य वन प्रान्तर" में कवि ने राम के राज तंत्र को उदण्डी मानते हुए अवध के जन मानस को अतंकित देखता है। जहां न्याय और आदर्शो की गरिमा को अपने त्रप्त तेज के हवन कुण्ड पर सनातनी संस्कृति के ध्वज वाहक राम ने अपनी सीता पर जिसके कोख में अवध के राजपुत्र पल रहे थे उसका निष्कासन कर, लोक मानस की आदर्श नारी को राज्य कर्म की समिधा बनाकर समर्पित कर दिया है। वही पर वन में निवास करने वाले पशु पंक्षी माता सीता के वन आगमन से प्रफुल्ति होते है।

"गोवत्स और मृगशावक" शीर्षक में सीता जी के वाल्मीकि आश्रम में प्रवास का एवं उनके मातृत्व भावों का वर्णन करते है। 'यश धवला गंगा से यह छल' शीर्षक में कवि के मातृत्व और स्नेह की प्रतिमूर्ति पुनीता जानकी सीता के साथ राम के द्वारा किये गये निष्ठुर कृत्य से पीडा होती है। कथा प्रसंग को 'अग्नि परीक्षा' नामक शीर्षक में जोड़कर कवि ने अपनी कल्पना में पतिवृत की प्रेरणा श्रोत भारतीय हिन्दू संस्कृति की आदर्श नारी देवी सीता की अग्नि परीक्षा होने के उपरान्त भी राम से सीता के साथ छल करने का कारण पूंछा है। तथा 'राजमाताओं का संताप'शीर्षक के माध्यम से निर्वासन से उपजी राजमाताओं की वेदना को प्रस्तुत किया है। "भक्त का विद्रोह" शीर्षक में राम के द्वारा किये गये सीता निर्वासन कृत्य से हुई वेदना के कारण कवि मन विद्रोही हो जाता है। वह अपने आराध्य श्री राम से इस कृत्य का उत्तर चाहता है तथा रामराज्य के आदर्शो व न्याय व्यवस्था पर प्रश्न उठाते हुए निष्कासन का दण्ड रजक के कथन मात्र से तथा अपने आरोपो से अनभिज्ञ देवी सीता को कुछ कहने का अवसर न देकर राम के न्याय को पाखण्ड मात्र मानते है। 'राम का चित्र और सीता की छवि' शीर्षक में कवि ने अपने प्रश्नों का प्रभाव राम और सीता की अपनी कल्पना में उभरे हुए प्रतिबिम्ब पर अंकित पाता है। इसके बाद "राम की आत्माभिव्यक्ति" शीर्षक में कवि ने अपने अन्तःकरण के भावो को राम के माध्यम से चित्रित किया है-और "ओ मेरे नेही बन्धु" शीर्षक में खण्ड काव्य में यहां तक की गयी व्यंजना पूर्ण प्रश्नों को सही ठहराते हुये राम के मनः त्रास की वेदना का चित्रण किया है। तथा "राम का राज्य धर्म" शीर्षक खण्ड में कवि ने राजधर्म की सैद्धान्तिक विवेचना की है जिसके अन्तर्गत रजक को अधम नह अवध का नागरिक माना है। निष्ठावान शासक को कर्तव्य वेदिका में सब कुछ आहुत करना पडे तो वही एक आदर्श राज आचरण है "नीति निष्कर्ष" शीर्षक में राम की वेदना अश्रु के रूप

में प्रकट होते ही कवि की कल्पना में सीता का प्रतिबिम्ब प्रकट होता है जो राम को सात्वंना देती हुई कहती है कि "सौबार जन्म लेने के उपरान्त राम राज्य के नीति रीतियों के लिए हर बार निष्काषित होना पडे, तो सीता का सत्व सार्थक हो जायेगा"। "कवि की अश्वस्त वाणी" शीर्षक में निर्वासन त्रास से उपजे शंकाओं के भंवर शान्त होकर कल्पना का प्रवाह ठहर जाता है।

खण्ड काव्य में कथा प्रेरक तत्वों को तर्क संगत रूप से एकत्र कर, कथा रंजक पहलुओं को काव्य की धारा में जोडना व राम, सीता, लक्ष्मण तथा अन्य पात्रों को कर्तव्य परायणता के रूप में प्रस्तुत किया है।

"तमसा तट वर्तिनी" में उपस्थित करुणाक्रान्त सीता, लक्ष्मण की उपस्थिति, राम का संवाद, वन विसर्जन हेतु लक्ष्मण के द्वारा रथारूढ़ कराकर जाना आदि अधिकारिक कथा है एवं वन पथ पर लक्ष्मण से सीता का संवाद, लक्ष्मण का मौन तथा मौन होने के पीछे पंचवटी में घटी घटना के लिये वैदेही का लज्जित हो लक्ष्मण से क्षमा मागना तथा लक्ष्मण का शोक संतप्त वाणी से सीता को सम्बोधित करना, राघवेन्द्र के आदेश से देवी सीता को वन विसर्जन हेतु दुराग्रह पूर्ण सौगन्ध से बंधे होने के कारण भीषण आरण्य में छोड़ जाने के लिये अपनी विवशता को प्रस्तुत कर मूर्छित हो जाना, व सीता को अपने प्रिया राम से मिले निष्कासन को शिरोधार्य करके अपना धर्म मानकर वेसुध लक्ष्मण को छोड़कर चले जाना, अवध के जनाक्रोश को राघव के विराट पौरूषबल के नीचे दबकर इस अनैतिक निर्णय को स्वीकार करना वन प्रान्तर के जड़चेतनो के द्वारा निष्कासन के उपरान्त सीता के वन आगमन से उल्लसित होना तथा गोवत्स के लिये सीता का ममतामयी होकर प्रेम करना और मृगशावक के लिये ममता का सहज प्राकृत रूप प्रस्तुत कर वाल्मीकि आश्रम का वर्णन करना तथा पूर्व में ली गयी पवित्रता हेतु परीक्षा, राजमाताओं का संताप, तथा निष्कासन में रजक का कथन आदि प्राशंगिक घटनायें है।

कवि ने खण्ड काव्य में सीता निर्वासन से अपने मन में उपजी करूणा की कल्पना से कथा परम्परा को नूतन परिवेष में प्रस्तुत कर राम के इस क्रूर निर्णय की समीक्षा करते हुए राम के राजधर्म के प्रति निष्ठावान शासक के रूप में प्रसतुत किया है। वही पर देवी सीता की वेदना को अपनी मौलिक उद्‌भावना मे सिया पति राम के इस क्लीव और क्रूर फैसले को असहनीय और अनैतिक मानता है, परन्तु राजा राम के कर्तव्य वेदिका हेतु सीता को प्रत्येक वेदना से परे कर्तव्य निष्ठा की सुलभ हत्या के रूप में प्रस्तुत किया है।

खण्ड काव्य का कथानक एवं घटनाक्रम विक्षुब्ध सीता का तमसा तटवर्तिनी में उपस्थिति से कवि के अन्तस में कल्पना के दृश्य साकार हो उठते है और वह कलुषित कृत्य से विक्षुब्ध होकर सम्पूर्ण घटना क्रम के एक-एक पृष्ठ पलटने लगता है, कि पहले वाक्य चतुरता से लक्ष्मण को अपना आदेश मानने के लिये कैसे विवश किया होगा, फिर देवी सीता को वन विचरण के बहाने से लक्ष्मण के साथ रथारूढ़ कराकर अयोध्या की सीमा के पार भेजा होगा। वन प्रान्तर में उनके निष्कासन को लक्ष्मण ने बताया होगा और बेसुध होकर रथ पर लुढ़क गये होगे तथा वेसुध लक्ष्मण को छोड़ सीता जी चली गयी होगी। तथा लक्ष्मण के वापस अयोध्या लौटने पर माताओं एवं अवध के नागरिकों में संताप व्याप्त हुआ होगा आदि प्रमुख घटनाओं का व राम कथा का अनुशरण करते हुये महाकवि वाल्मीकि भवभूति आदि की कथा परम्परा की वैचारिक प्रस्तुति कथाप्रशंगो के पहलुओं को युग सापेक्ष रखते हुए लोक मानस पर वसी माता सीता को त्याग और आदर्श की प्रतिमूर्ति, और रजक के कथन मात्र का अभियोग लगाकर

निष्कासन जैसे निन्दनीय कर्म की भर्त्सना की है।

इस प्रकार कवि ने सीता निर्वासन से राम की न्याय प्रियता पर लगे हुए कलंक की समीक्षा करते हुए अपने विचारणीय अभिव्यक्ति के माध्यम से सीता के निर्मल चरित्र की समीक्षा करते हुए राम कथा की घटनाओं की गहराई तक उतरकर एवं सुन्दरता से ओत प्रोत रखते हुए प्राकृतिक दृश्यों का मनोरम चित्रण करते हुये करूणा का अथाह सागर बना दिया है। सम्पूर्ण प्रसंग समीक्षात्मक एवं मर्म स्पर्शी है। अतः कवि की यह रचना सम्पूर्ण हिन्दी वांगमय पर आधारित सीता निर्वासन की कथा परम्परा पद्धति से अलग हटकर मौलिक एवं नवीनतम रचना है।

जानकी जीवन :- कथावस्तु

"राष्ट्रीय आत्मा" राजाराम शुक्ल द्विवेदी युग के कवि है। जानकी जीवन उनका महाकाव्य है जिसमें रावण वध के पश्चात राम का पृत्यागमन राज्यभिषेक तथा सीता निर्वासन से सम्बन्धित घटनाये विन्यस्त है। राम चरित्र के उत्तरार्ध की घटनाओं होने के कारण इसमें राम के सम्पूर्ण जीवन की घटनाओं नहीं हो पायी है, फिर भी कवि ने अपने कौशल से सम्पूर्ण इतिवृत्त उपस्थित किया है।

मूल घटना रजक प्रशंग के साथ राम का अंतर द्वन्द्व, सीता को दोहद तदुपरान्त सीता निर्वासन हेतु लक्ष्मण का प्रस्थान, वाल्मीकि आश्रम के नजदीक लवकुश की उत्पत्ति, सीता का पुत्र प्रेम, वाल्मीकि द्वारा लवकुश की शिक्षा-दीक्षा अस्त्र संचालन नैपुण्य की चर्चा हुई है। पं. और पुरोहितो द्वारा रामाश्वमेघ की चर्चा की गयी है। इस हेतु राम का यज्ञ राम के त्याग पूर्ण जीवन की घटनाओं का विस्तृत वर्णन कर कथा को महाकाव्यात्मक रूप दिया गया है। कवि ने अपने कौशल से राम के पूर्वार्द्ध जीवन के इतिवृत्त को संकेतिक किया है। जैसे तृतीय सर्ग में राम द्वारा प्रजा के सम्मुख चित्रकूट प्रसंग से लेकर लंका विजय तक की कथा का वर्णन हुआ है। इसी प्रकार एकादश सर्ग से चित्रशाला में इच्वाकुवंशीय राजाओं के साथ राम द्वारा सीता स्वयंवर से लेकर वन गमन तक के सभी दृश्य अंकित है। पंचदश सर्ग में सीता जन्म विवाह, लंका निवास, अयोध्या प्रत्यागमन की कथा स्मृति रूप में वर्णित है।

कथा का स्त्रोत वाल्मीकि एवं उत्तर राम चरित है। चित्रशाला प्रकरण तो उत्तररामचरित् के अनुसार ही दिखाई देता है कवि ने नीति वर्णन, नगर वर्णन वस्तु एवं प्रकृति के वर्णन का अधिक आश्रय लिया है इससे कथा तन्तु क्षीण हो गया है। कथा में प्रवाह व्याघात सा उपस्थित हो जाता है। अनेक स्थानों पर पुनरूक्ति भी दिखाई देती है।

भूमिजा कथासार :-

कवि नागार्जुन के द्वारा विरचित भूमिजा में रामकथा का वर्णन पौराणिक एवं सनातन तथ्यों को एकत्र कर किया है। कवि की कथा के सम्पूर्ण पात्र स्वयं के आत्मालाप में लीन है। भूमिजा में रामकथा के सम्पूर्ण परिप्रेक्ष्य में अपने आख्यानों से आछांदित तथ्य पूर्णतया रामायण के प्रणेयता वाल्मीकि के अनुसार ही है।

भूमिजा का प्रारम्भ करते हुए कवि ने राम और लक्ष्मण को विश्वामित्र के संग वन गमन प्रस्थान से प्रारम्भ किया है। कथा प्रबंध में कथा के इतिहास से अवतरित तथ्यों को जोड़ते हुए गंगा अवतरण कथा का उपाख्यान। जंगल की भयानकता, जंगली जीवन एवं ताड़का के राक्षसी वृत्तियों के सन्दर्भ में सविस्तार बताते हुए नाना प्रकार की पौराणिक कथाओं का सविस्तार वर्णन करते है।

दूसरे भाग मे कथा का प्रारम्भ गौतम मुनि के आश्रम से होता है। जहां पर दोनो कुमारों को आश्रम का सूनापन मन को आन्दोलित करता है। पाषाणी प्रतिमा को देखना, उसका स्पर्श करना, प्रतिमा का सजीव होना, सजीव प्रतिमा से अपना परिचय देना तथा राम का आभार प्रकट करना आदि का वर्णन है। अहिल्या के द्वारा राम का परिचय प्राप्त करना तथा राम को सुशासन की प्रेरणा देना तथा राम के द्वारा अहिल्या की प्रेरणानुसार सुशासन हेतु दृढ़ प्रतिज्ञ होना आदि कथा के तत्वों को जोड़ते हुए जनकपुरी का प्रस्थान वर्णित है।

सीता निर्वासन की कथा के वर्णन में निर्वासित सीता के सोचो मे कथा का प्रारम्भ होता है। जिसमें वाल्मीकि आश्रम पर निवास करती हुई देवी सीता आत्म मंथन में लीन है। उनकी स्वतः स्फूर्ति अभिव्यक्ति कथा को कडियों में जोड़कर प्रारम्भ करती है-

''प्रमाणित क्या करना है मुझे ?
पावनता अपनी ? अपना शील ?'' [16]

अपनी पीड़ा के गर्भ में स्वयं के विचार देवि को आन्दोलित करते है। वह अपनी निष्कासन की पीड़ा को अपने साथ हुए अन्याय से जोड़ती है। कभी राजा को, कभी नीति को, कभी रूढ़िवादी जन विचार धाराओं को, और कभी पुरूष दम्भ को कोसती है। जो उन्हें अपने शील, अपनी पावनता को बाध्य कर रहा है। उनके मन के उपजे विचारो के श्रंखला में राजा राम का एक पक्षी न्याय अन्तःकरण को अक्रान्त करता है। वो अपने जन्म को भूमि से मान उसी में समाहित होने की कल्पना प्रारम्भ मे ही करती है। जो सीता की जननी और जनक है। उनके मन में राम के संग में गुजरे चन्द्र दिनो की स्मृतियों के अवशेष है। अपने जन्म का इतिहास मन में उभरता है। और वह सोचती है मै वस्तुतः इस प्रसंग से अज्ञात ही रहती यदि राज महल की वृद्ध भद्र महिला द्वारा उसे ज्ञात न होता। सीता के प्रदुर्भाव प्रसंग के उपरान्त कथा प्रसंग विश्वामित्र द्वारा दुष्ट दलन हेतु ले जाना फिर स्वयंवर की स्मृतियों को ताजा करना अभिषेक तथा वन गमन आदि की स्मृतियां मानस पटल पर विस्तृत होती है। तभी अचानक उनके मस्तिष्क पर अपने पुत्रों के प्रति अपने संक्रामित अपवाद से प्रभावित होने का अंदेशा मन में उत्पन्न होता है कि कही अपवाद के इस भंवर में मेरे पुत्रों का भविष्य इतिहास के पृष्ठों से जोड़ न दिया जाये और राजा राम राज्य मर्यादा में बधे हुए पुनः अपने पुत्रों को प्रजा का शासक के रूप न बर्दास्त करने के कारण लक्ष्मण को आदेशित कर पुनः वनवास का आदेश देगें और फिर पुत्र विछोह में मूर्छित हो जायेगे। अपनी इस आन्तरिक कल्पना के आने से देवी का अन्तस मन हसंता है। यही सोचते-सोचते सीता की सोंचे युग परिवर्तन के दौर में पहुंच जाती है। और वह जैसे राज्य के निर्माण की कल्पना करती है। जहां आडम्बर, प्रवाद, तथा झूठी प्रतिष्ठा को कही पर स्थान न हो एवं जहां पर न्याय सर्व सुलभ हो तथा जन मन में ज्ञान की दीप प्रज्वलित हो उठे। तभी मन की प्रेरणा स्वयं पूछती है यह युग परिवर्तन कब होगा-

''अटे पड़े हो घर-घर में धन धान्य
स्वर्ण रजत की लगी हुई हो ढेर
प्रभुता भी हो, यौवन भी हो किन्तु
जन मन को चाहिए, ज्ञान का दीप

सीच रही हूं, कब होगा वह कल्प '' [17]

देवी की सोचे पुनः वात्सल्यमयी हो जाती है और वह लवकुश के बचपन में पहुंच जाती है। शिशु अवस्था में दोनों बालकों ने मां के स्तनपान पर आधारित भरण नही पा सके थे क्योकि विरह व्यथित मन के कारण स्तनों पर दो चार बूंद दुग्ध उतरता था फिर भी तपस्वियों ने उन्हें पाल-पोसकर बड़ा किया। सबने अपना स्नेह वरसाया, आज सीता को सब कुछ याद होता चला जा रहा था। दोनो बालक शुरू में तीव्र बुद्धि, चपल, तथा अल्प उम्र में ही ज्ञान तत्व को समझ चुके थे। सीता के विचारों में दोनो बालको का बाल्यकाल दोहराता चला गया। लव प्रारम्भ से ही चंचल स्वभाव का था। भृग छनवों की कभी आंखे नापता था तो कभी बाद्य शिशुओं को आश्रम ले आता था भील बालकों के साथ वन विचरण को उन्मुक्त रूप से निकल जाता था। और कुश शांत गंभीर स्वभाव का था। दोनों बालको की तारीफ सर्वत्र होती थी परन्तु दोनो बालक मां की वेदना को समझते थे एवं मां के दुःख से स्वयं दुःखी रहते थे सीता को एक प्रसंग याद आता है क्षेमा नामक मुनि कन्या ने लव की उदासी का कारण पूछा था की वह तपोवन से अलग भील बालको के साथ कानन भ्रमण जाने को स्वेच्छाचारी व ऋषि कुल परम्परा के विपरीत कहकर विरोध किया था।

तदुपरान्त कथा में त्रिजटा का प्रसंग आता है। जो अपनी प्रिय सखी सीता का हाल ज्ञात करने के लिए तमसा तट में पहुंचती है। क्योकि उसने रात के अन्तिम प्रहर में अपनी सखी को बाढ़ में डूबते हुये देखकर मन निर्मूल शंका से आक्रान्त हुआ था इसीलिए वो लंका से चलकर तमसा तट पर पहुंचती हैं। दोनो तरुण बालकों को देखकर विचार करने लगती है। यह अवश्य मां के अपवाद को मिटाकर रहेगे एवं मां पर हुए दुःखो के प्रहारों का निर्मूल करेगे। त्रिजटा का मन भी इतिहास के चक्र में पहुंच जाता है। इसमें वो दोनो कुमारों से विश्वामित्र के साथ गये हुए राम और लक्ष्मण के उम्र की कल्पना में लीन हो जाती है। प्रकट तेज से वह अनुमान करती है कि ये युग्म कुमार अपने कुल के अनुरूप कीर्ति स्थापित करेगे। लक्ष्मण सीता से क्षमा मांग लेगे एवं राम खामोश व सर झुकाये खडे रहेगे। देवी ससम्मान अयोध्या लौट जायेगी दोनो भाइयों पर दुर्वाक्षत एवं आर्शीवाद की वर्षा होगी जयघोष के बीच युवराज का राजतिलक होगा। सम्पूर्ण साकेत आप्लावित हो उठेगा। रघुकुल की गाथा वीणा के तानों पर झनकरित होगी-

''सरयू-तट पर गूंजेगा संगीत
रघुकुल-कीर्ति-कथा के सौ-सौ छन्द
मुखरित होगे वीणा में दिन-रात
यमज कुमारों का होगा अभिषेक
यही बनेगा तब शायद युवराज'' [18]

महर्षि वाल्मीकि किं कर्तव्यविमूढ़ बने अपने कुटिया के द्वार पर खड़े-खड़े समस्त रात्रि बिताते है। समय चक्र रामकथा के अन्तिम चरण से गुजर चुका है। बसंत की सुखद ऊषा का चन्द्र अपनी नामक समेटते हुए समय बदलने का संकेत देता है। मुनि की स्मिृतियों में बारम्बार भूमिजा के अवसाद भर रहे है। जो अपने स्मृतियों के पावन अवशेषों को संसार में छोड़कर धरती मां की गोद में सदा सर्वदा के लिए विलीन हो गई है। मुनि को वह

अनुभव बारम्बार ग्रसित करता है। उनकी उपस्थिति में हाय वो दृश्य उस समय वो कुछ नही कर पाये थे। वह संज्ञा शून्य होकर खडे के खडे रह गये थे। अतंकित कीडे मकोडे भी उस दृश्य के साक्षी थे। महर्षि के अन्दर का कवि सम्पूर्ण दृश्य महामूक बना अपनी आंखो से देखता रह गया और सीता अमिट इतिहास छोड़कर चली गई थी। मुनि की आंखो से अश्रुवों को अविरल प्रवाह होता रहा था। उस दृश्य को देख तमसा भी अपनी पीडा को नही रोक सकी थी उसका फेनिलजल धरा के स्त्रोतो से निकलकर सर्वत्र बिखर गया था। धरती फटी थी जिसके प्रकम्पन से आकाश तक गूंज उठा था। और ध्यान मग्न सीता आप ही समा गई। तदुपरान्त धरती के दोनो पाट पुनः अपनी यथा स्थिति में जुड़ गये थे। हर्ष और विषाद का जाता है। वह अदभुत दृश्य तथा उसकी सुबासु मन मानष को आज भी प्रकम्पित करता है। महर्षि की चेतना वापस आती है। सोचते है यह कैसा परिवर्तन कल तक जो हमारे बीच थी आज वह नही है। बूढ़ा वट वृक्ष भी मूक हो गया है। जटा जाल से उठने वाली वेदना की आग से पीपल का पत्ता-पत्ता झुलस जायेगा। आश्रम के दलित पशु पक्षी पुनः वन वापस हो जायेगे, हेमवती गाय अब अपनी वछिया को दूध नही पिलायेगी। हे पुत्रि भूमिजा तुम अपने मां के गोद मे निर्विकल्प विश्राम करोगी। राम को तो शायद कम दुःख होगा परन्तु अपनी मां समान भाभी के विछोह में लक्ष्मण को अधिक्य दुःख होगा। लव कुश तुम्हारे राम के साथ वापस साकेत चले जायेगे।

''मातृ कुक्षि में समा गई हो पुत्रि
करो वही पर निर्विकल्प विश्राम
सुनकर शायद दुःखी न होगे राम
होगा लक्ष्मण को भारी परिताप
लव-कुश वापस जायेगे साकेत'' [19]

प्रेम से अह्लादित बूढ़े मुनि सोचते है, यहां अब मे ही रह जाऊगां ठूंठ के समान, अब इस तपोभूमि का संरक्षित रूप समाप्त हो जायेगा। आश्रम के खग-मृग स्वछन्द होकर विचरण करेगे। ऋतुऐं अपना राज्य पुनः स्थापित करेगी निर्मित पर्ण कुटीर विलीन होकर बिखर जायेगी। यहां शेष रहेगे तो केवल प्राकृतिक दृश्य मात्र। तदोपरान्त कथा का समापन हो जाता है।

कथावस्तु :-

भूमिजा के अह्लादित करने वाले कथा प्रसंगो को जनदृष्टि के यथार्थ वादी कसौटी पर परख कर नागार्जुन जी ने रामकथा को प्रगतिशील एवं ओजमय बना दिया है। रामकथा के विभिन्न प्रसंगो का समावेश करके सीता निर्वासन की कथा में व्याप्त वेदना के मर्म को छूने का प्रयास करते हुए, कथा तथ्यों को पात्रो के आत्म मंथन की वीणा मे झनकृत किया है।

कवि की कथा में सीता निर्वासन की अधिकारिक कथा के प्रमाण रामराज्य का वर्णन, लोकमानष का प्रलाप, राम का निष्कासन आदेश, सौमित्र का वन विसर्जन करना, विछोह की करूणा, वाल्मीकि आश्रम का प्रवास, लवकुश का वात्सल्य मयी बचपन से तरूणा वस्था तक सूक्ष्म वर्णन, सीता का भू प्रवेश, लवकुश का पितृ-मिलन आदि अधिकारिक कथा सांकेतिक रूप से आख्य चिन्तन के द्वारा वर्णित की गई है।

कवि के द्वारा की गई अभिव्यंजना में अपने पात्रों को आत्म चेतना का दान कर कथा को पुर्नजीवित किया गया है। जिसमे प्रासंगिक कथाओं के जोड़ने से कथा की रोचकता तो बढ़ ही जाती है, अपितु राम का लोक धर्मी व्यक्तित्व लोक परिवेश में सामर्थवान बनकर उभार देती है। रीति और नीति तथा प्रीति य रामराज्य के आदर्श हो वह समस्त सीता के त्याग तपस्या सुचिता और साधना के समक्ष ओछे प्रतीत होते है।

रामकथा को विश्वामित्र के द्वारा दशरथ से राम लक्ष्मण को यज्ञ रक्षार्थ मांगकर प्रस्थान करने से प्रारम्भ कर गंगा अवतर का इतिहास ताडका वर्णन, अहिल्या उद्धार एवं सीता जन्म तथा स्वयंबर मे सीता का वरण राज्य तिलक, वन गमन, अग्नि परीक्षा आदि प्रासंगिक कथाओं के समावेश से समिश्रित किया है।

कवि के द्वारा विरचित भूमिजा की कथा शाश्वत एवं सनातन है जिसको कवि के द्वारा समय की वैचारिक कसौटी पर कसकर प्रगतिशीलता के रूप में प्रस्तुत किया गया है। महर्षि वाल्मीकि के द्वारा रचित रामकथा को स्वतन्त्र चित्रण करते हुए प्राकृतिक परिवेश को अपने मौलिक कल्पना के अनुरूप चातुर्य वर्णन करते हुए, राम की लोक धार्मिक भावना तथा राज्य व्यवस्था में मर्यादाओं का महत्त्व स्थापित करना अत्यधिक दुष्कर कर्म है। परन्तु राम लोक भावना को स्थापित करने की सफलता कवि की दृष्टि से वंचित नही रहती है। जैसा की त्रिजटा के द्वारा लवकुश की तरूणाई को रामलक्ष्मण के सदृश निरूपित करना कवि की दृष्टि को कथा में तुलनात्मक आयाम देता है।

लव-कुश युद्ध - कथासार :-

पं. जगदीश प्रसाद तिवारी की रचना ''लव-कुश युद्ध'' के कथा सूत्र व कथासार के बीज वाल्मीकि रामायण पर आधारित है। कवि ने लवकुश युद्ध का संक्षेप वर्णन पाठक गणों को सम्बोधित करते हुए रचना का प्रारम्भ किया है। कथा का प्रारम्भ श्री राम के अवतार से संक्षिप्त परिचय कराकर उनके तेजस्वी पुत्रों लवकुश का सीधे परिचय कराया है।

अपनी कथा का प्रारम्भ रावण के विजय प्राप्त करने के उपरान्त राम, लक्ष्मण, सीता के अयोध्या लौटने से किया है। राज्य तिलक का वर्णन प्रजा का आनन्द वर्णन के उपरान्त गर्भणी सीता से राम का कुछ प्रिय करने की बात करना और सीता के द्वारा ऋषि पत्नियों से मिलने वन में जाने की इच्छा को प्रकट करना, देवी सीता की इच्छा के अनुरूप श्रीराम का उनके प्रिय करने का वचन देना तथा वन जाने की उत्कंठा में हर्षित सीता का तैयार होकर वन गमन की तैयारी करना वर्णित है। उसी रात्रि गुप्तचर के द्वारा श्रीराम को धोबी और धोबिन के आलोचना की सूचना प्रदान की जाती है।

''तू मुझे समझ मत राम यहां सीता रावण के घर रहके
कुछ भी विचार तक किया नही, रख लिया शुद्व उनको कहके'' [20]

उपरोक्त गुप्तचर से प्राप्त सूचना पर श्रीराम को आत्मिक कष्ट होता है और वे मूर्छित होकर गिर जाते है, और उन्हें तब होश आता है, जब भाई लखन उनके समीप पहुंच जाते है। और लक्ष्मण के द्वारा राम से उनके दुःख का कारण पूछा जाता है। तब राम गुप्तचर से प्राप्त धोबी-धोबिन के कथन का सम्पूर्ण वृतान्त कहते है। तथा अपने मन की चिन्ता कहते हुए भविष्य में उठने वाली जन वाणी के प्रति अपने उद्वेलित मन का सम्पूर्ण दृष्टिकोण

प्रस्तुत करते है। राम की इस अभिव्यक्ति से लक्ष्मण का मन असमंजसता में फंस जाता है। वह राम से कहते है, माता सीता आपके चरणों की दासी है वो आपके बिना कैसे वनवास को स्वीकार करेगी। वे वन के सन्दर्भ में सुनते ही अपने प्राणों को त्याग देगी। तब राम के द्वारा सीता के मन भावों के अनुरूप-वन विचरण का वृतान्त भाई लक्ष्मण से बताया जाता और साथ उन्हें सीता को कुछ बताने के लिए राम के द्वारा रोका भी जाता है। निम्नवत उदाहरण से कवि का मनतब्य स्पष्ट होता है-

> ''तुम जाकर के कहना ऐसे, मै दर्शन चलो करा लाऊं।
> दे चुके राम मुझको आज्ञा, में भी दर्शन चल कर आऊं।।'' [21]

अस्तु राम की आज्ञा को शिरोधार्य कर लक्ष्मण रथ लेकर महल के द्वार पर पहुचते है। फिर देवी सीता को रथ में बैठाकर वन की राह पकड़ते है। वन को प्रस्थान करते ही मार्ग में असगुन होते है। रथारूढ़ देवी सीता और रथ संचालक सुमन्त इन अशुभ संकेतो से सर्वथा अज्ञात होते है। यद्यपि लक्ष्मण कारण जानते हुए भी मौन रहते है। सीता के प्रश्नो को बिल्कुल मौन होकर ही सुनते रहते है। सीता अपनी यात्रा को पति सेवा से पलायन मानकर अपने द्वारा अधार्मिक कृत्य मानती है। सीता के इन्ही विचारों के क्रम में गंगा का तट आ जाता है। और लक्ष्मण सीता को संग लेकर रथ को वही छोड़कर पैदल संकुचित राह पर आगे बढ़ती है। पद यात्रा की थकान से अन्तोगत्वा एक स्थान पर देवी सीता गिर जाती है रोने लगती है। सीता के दुःख को देखकर अन्ततः लक्ष्मण भी अपने अश्रु नही रोक पाते है-

> ''सीता के दुःख को देख लषण, मन ही मन व्याकुल होते थे।
> सोचते छोड़ जब जाऊंगा, क्या होगा इससे रोते थे।।'' [22]

तदुपरान्त सीता के द्वारा जब लक्ष्मण के रोने का कारण पूछा जाता है तो लक्ष्मण राम की आज्ञा से वन में त्यागने का सम्पूर्ण यथावत कारण कहते है। अपने परित्याग के कारण को जानते ही सीता देवी दुखित होकर गिर पड़ती है। कवि ने कथा में लक्ष्मण के मूर्छा जगाने का प्रयास करने का वर्णन लक्ष्मण के द्वारा केलो के पत्तों से हवा करना अभिव्यंजित है। सीता के पुनः करूण क्रन्दन पर लक्ष्मण विविध प्रकार से धैर्य एवं साहस की उर्जा प्रदान करने का प्रयास करते हुए नजदीक वाल्मीकि आश्रम पर जाकर रहने का परामर्श प्रदान करते है। सीता का विछोह प्रस्तुत करते हुए कवि की सीता तत्क्षण प्राण त्यागने को उद्धृत होती है, परन्तु पति की थाथी गर्भ में होने के कारण विछोह का गरलपान कर जाने का संकल्प करती हुई विकल लक्ष्मण को तजकर जाने हेतु कहती है। लक्ष्मण से विदाई के समय सदैव कल्याण होने का आर्शिवचन अन्तिम शब्दों के रूप में कहती है। कवि की प्रस्तुति में नये पन का आकर्षण है, जो सीता के द्वारा वापस लौटते हुए लक्ष्मण को देखकर पुनः आस की लव को प्रज्वलित कर देवर भाभी रिस्ते के बीच में हंसी-ठिठोली की आशा से जोड़ती है परन्तु लक्ष्मण की दृष्टि ओझल होते ही यथार्थ उनके सामने आ जाता है। वह विलाप करती है, अनेको पथ पर भटकती है। उनके विलाप को सुनकर ऋषि वाल्मीकि ने अपने शिष्यों को विलाप का कारण और विलाप करने वाली नारी के खोजने का आदेश देते है। वन के चारों तरफ शिष्यों का तत्क्षण प्रस्थान होता है। अन्तः ऋषि वाल्मीकि शिष्यों के समीप घटना स्थल पर पहुंच जाते है। सीता ऋषि को पहचानकर प्रणाम करती है। तब सीता वाल्मीकि के पूछने पर अपना परिचय राम की धर्म पत्नी के रूप में

देती है। और अपने संताप का कारण बताती है। तब ऋषि वाल्मीकि के द्वारा संरक्षण की प्रत्येक सांत्वना देकर देवी सीता को आश्रम ले जाया जाता है। आश्रम में प्रवास करते हुए सीता दो पुत्रों को जन्म देती है। जिनका नामाकरण एवं समस्त संस्कार आश्रम में ऋषिवर के द्वारा किये जाते है-

"दो पुत्र हुऐ पैदा लव-कुश मुनि ने यह नाम धराया था।
वैदिक द्वारा सब संस्कार आनन्द पूर्ण करवाया था।।" [23]

लव-कुश बड़े होने पर प्रकाण्ड धनुर्धर और शूरवीर होते है। दोनो पुत्रों का अद्वतीय ग्राह कौशल अन्य शिशु की अपेक्षा में अत्यन्त उच्चकोटि का है। कथा को यही पर रोककर लेखक ने अयोध्या में राम के द्वारा भारी दरबार करने का वर्णन किया है। कथा की काव्य अभिव्यजंना में कवि ने रावण बध के उपरान्त वध दोष से मुक्त होने के लिए ऋषि अगस्त के द्वारा श्री राम को अश्वमेघ यज्ञ ब्राह्म हत्या के प्रायश्चित स्वरूप करने की सलाह देते है। जिसे राम द्वारा स्वीकार कर उत्तम घोड़ा छोड़वाया जाता है। घोड़े की रक्षा का दायित्व शत्रुघन को सौपकर भेज दिया जाता है। श्रीराम के यश पताका के सामने अधिकांशतः राजागण स्वसमर्पण कर विभिन्न वस्तुऐं शत्रुघन को भेट करते है। परन्तु सुरथ के द्वारा अश्व को बांध लिया जाता है। वह प्रतिज्ञा करते है, कि जब तक श्री राम स्वयं दर्शन न देगे तब तक इस अश्व को नही छोडूंगा। शत्रुघन के द्वारा सुरथ का अन्वय प्रेम देखकर श्रीराम को बुलाया जाता है। श्रीराम के आने पर घोडा मुक्त होकर पश्चिम दिशा की ओर समग्र सैन्य बल के साथ प्रस्थान करता है। जहां विठूर ग्राम में गुरू पूजा हेतु पुष्प लेकर लौटते हुए लव-कुश के द्वारा पकड़ लिया जाता है। घोडे पर लिखे अभिलेख को दोनो पढ़ते है तथा घमण्ड तोड़ने का संकल्प करते है। अन्य ऋषि बालकों के द्वारा मना करने पर दोनो वीर योद्धाओं ने रामचन्द्र के गर्व तोड़ने का संकल्प बताकर स्वयं की क्षत्रिय भावना को प्रकट किया तभी वहां पर शत्रुघन सहित योद्धाओं का आगमन होता है। अश्व को बांधने वाले को ललकारते है। ललकार सुनकर कुश के द्वारा तमक कर अश्व बांधने वाला मैं स्वयं हूं बताते है। तथा अश्व को युद्ध करके ही छोड़ने पर राजी होते है, परन्तु शत्रुघन बालक समझकर समझाने का प्रयास करते है। फिर भी कुश बिना युद्ध किये अश्व देने को राजी नही होते तब शत्रुघन अपने वीरो को अश्व खोलने का आदेश देते है। कुश के धनुषवाणों से एक-एक वीर धराशायी होने लगता है। जब हनुमान कुश से उसका परिचय पूछते है परन्तु कुश के द्वारा इसे क्षत्रियोचित धर्म न मानकर हनुमान से केवल युद्ध करने को कहते एवं अन्ततः अपने प्रहार से हनुमान को भी मूर्छित कर देते है। हनुमान को मूर्छित होते देख शत्रुघन के द्वारा अग्निवाण का प्रहार किया जिससे कुश मूर्छित हो जाते है। जिसे शत्रुघन के द्वारा रथ में लेकर अयोध्या के हेतु प्रस्थान होता है। परन्तु ऋषि बालकों से युद्ध का वृतान्त सुनते ही लव का अगमन होता है। और वह शत्रुघन को ललकारते है। दूसरे बालक को देखकर शत्रुघन आश्चर्य में पड़ जाते है। कुश की मूर्छा टूटती है। वो भी उठकर लव के पास आ जाते है। लवकुश के द्वारा देवी सीता के पुत्र बताने पर शत्रुघन को अत्यन्त लज्जा आती है। और वो राम को सूचना देने तत्क्षण अयोध्या प्रस्थान करते है। इधर शत्रुघन के प्रस्थान करते ही मूर्छित हनुमान को बांधकर दोनो आश्रम ले जाते है। वहां माता सीता से अश्व और युद्ध का विजय वृतान्त बताते है। साथ में एक बन्दर को भी बन्धक बनाकर लाने की बात कहते हुए सीता के सम्मुख हनुमान को प्रस्तुत करते है। हनुमान के द्वारा देवी सीता को पहचान कर साष्ट्रांग प्रणाम करने का वर्णन है। तदुपरान्त देवी सीता के द्वारा हनुमान का परिचय व राम का

दोनो का पिता होने का परिचय कराया जाता है। देवी सीता को इस घटना से आत्मिक कष्ट होता है। वह तत्क्षण दोनो पुत्रों से युद्ध भूमि ले चलने को कहती है। युद्ध भूमि में पहुंचकर श्रीराम के वीरों की हताहत अवस्था को देखकर, जो विलाप करने लगते है, उन्हे अपने सतित्व के प्रभाव से घायलों को स्वस्थ और मृतों को जीवितकर अपने पास बुलाती है। सम्पूर्ण सेना के द्वारा देवी सीता को पहंचान कर साष्ट्रांग प्रणाम किया जाता है। तभी वहां राम, लक्ष्मण, भरत का आगमन होता है। देवी सीता से अयोध्या वापस चलने का निवेदन राम के द्वारा प्रस्तुत है, परन्तु देवी सीता ने अयोध्या वापस जाने से अपने आपको मनाकर पति के चरणों में प्राण त्याग दिये जाते है। शोक संतृप्त सेना राम और पुत्रों के साथ अयोध्या वापस लौटकर दोनो का राज्याभिषेक होता है। जो कालान्तर तक अयोध्या में शासन करते हुए विविध प्रकार के जनरंजन के कार्य संम्पादित करते है।

कथावस्तु :-

रामकथा के रसमय प्रवाह के अथाह स्रोत से निंझरित होकर कवि की कल्पना शब्दों को अपना माध्यम बनाकर रामकथा के इतिहास में एक और अध्याय लव-कुश युद्ध के नाम से जोड दिया है। कवित्व की अभिव्यजना भाषा, भाव एवं रसो के समिश्रण से कथा का प्रवाह मार्मिक एवं सदृश्य बना दिया है। कवि ने कथा का प्रारम्भ अत्यन्त सुन्दर ढंग से पाठको को सम्बोधित करते हुए कोटिसः कोटि मानसों पर वशी राम की धर्मावतार छवि से प्रारम्भ करते हुए देवी सीता के महाप्रयाण तक की गाथा का अधिकारिक वर्णन सहज एवं परम्परा अनुरूप वर्णित किया है।

प्रस्तुत कथा में कवि ने सीता निर्वासन की कथा परम्परा का अधिकारिक रूप प्रस्तुत करते हुए तिलकोत्सव के उपरान्त अपनी प्रियता गर्भणी सीता का कुछ प्रिय करना चाहते है, देवी सीता वन दर्शन की उत्कंठा प्रस्तुत करती है, गुप्तचर के द्वारा सीता अपवाद की सूचना देना एवं लक्ष्मण के द्वारा ले जाकर वन विसर्जित करना अपितु कवि ने अधिकारिक कथा के क्रम मे वन गमन प्रस्थान पर रथ का संचालन सुमन्त्र द्वारा करना, तदोपरान्त सम्पूर्ण अधिकारिक कथा वाल्मीकि रामायण से आधारित होते हुए भी देवी सीता के चरित्र प्रमाणिकता का घटनाक्रम कुछ भिन्न है जिसमें लव कुश के द्वारा अश्व का पकड़ना, लव-कुश शत्रुघन युद्ध, कुश का अग्निवाण से आहत होना, लव की ललकार से कुश की मूर्छा जागृत होना, शत्रुघन का दोनो बालको का परिचय पूछना एवं परिचय जानने के उपरान्त वापस अयोध्या लौटना तथा राम को सूचित करना एवं लव-कुश द्वारा हनुमान को बंधक बनाकर देवी सीता के पास ले जाना, और युद्ध का वृतान्त कहना, देवी सीता का युद्ध के सन्दर्भ में जानकर दुःखी होना, तथा विलाप करते हुए युद्ध स्थल पर पहुंचना एवं राम के हताहत मृत सैनिकों को अपने सतित्व से स्वास्थ एवं जीवित करना, राम का पहुंचना, सीता को अयोध्या चलने का निवेदन सीता के द्वारा अयोध्या जाने से इनकार करना तथा पति के चरणों में अपने प्राण देना आदि कथा अधिकारिक कथा है।

कवि ने लेखन के उच्च्व मानक सिद्धान्तों का अनुशरण करते हुए मूल कथा के समविष्ट भाग प्रस्तुत करने का प्रयास करते हुए प्राशंगिक घटनाओं का वर्णन अल्प मात्र किया है। प्राशंगिक कथा के वर्णन में वनवास प्रवास के समय ऋषि पत्नियों का प्रेम, धोबी-धोबिन की आलोचनात्मक कथा, लक्ष्मण की वेदना, ऋषि वाल्मीकि का शोक संतृप्त सीता को सांत्वना देना, तथा आश्रम ले जाना रावण की हत्या से विमोचन के हेतु अश्वमेघ यज्ञ का

परामर्श ऋषि अगस्त मुनि के द्वारा देना, अश्व भ्रमण करने में अन्वय प्रेम मे मग्न राजा सुरथ के द्वारा अश्व का बंधक बनााना आदि प्राशंगिक घटनाओं का वर्णन है।

रामकथा के गूढ़ रहस्यों पर अपनी लेखनी का स्वर्णिम प्रकाश डालते हुए कवि ने कथा की सुन्दरता को सुन्दरतम् अभिव्यंजना में पर्णित करने का भावपूर्ण चातुर्य प्रयास किया है। रामकथा के अन्वक प्रेरक महर्षि वाल्मीकि द्वारा विरचित रामायण रामकथा के इतिहास का बीज ग्रन्थ है। अस्तु कवि के कथास्त्रोत रामायण पर ही सम्पूर्ण आधारित है। जिसे कवि ने अपने चातुर्य पूर्ण लेखन से प्रशंगो में आशिंक परिवर्तन कर और कुछ जोडकर नवीनता का कलेवर पहनाने का प्रयास किया है। अस्तु निःसन्देह इन परिवर्तनो से रामकथा का यह ग्रन्थ नवीनता का उत्कृष्ट उदाहरण बन गया है।

कवि का प्रस्तुति करण रस भाव और भाषा की परिधि में रहते हुए भी नवीनता से ओत प्रोत है। कवि का हृदय मां जानकी की करूणा से द्रवित होते हुए भी कथा के तथ्यों से कदाचित तनिक भी नही भटकता, न ही नवीनता के कलेवर में कथा की मूल अवधारणा, तत्व एवं भावतनिक भी परिर्वतित नही होते है। उदाहरार्थ देवी सीता के सतीत्व की परीक्षा धार्मिक भावों से परिपूर्ण अवतारवादी दृष्टिगोचर होती है। जिससे देवी सीता अपनी निजता और सतित्व का आभास सेना तथा उपस्थित राजा राम आदि के समक्ष घायल और मृत सैनिको को स्वस्थ एवं जीवित करके प्रस्तुत करती है। कवि की सीता पर अपने पति एवं राजा राम के प्रति कही भी शंका के बादल नही उमड़ते है। इन सारे तथ्यों का प्रस्तुत विवेचन रचना की उच्च्व गुणवत्ता को प्रस्तुत करता है।

अग्निपरीक्षा कथासार :-

अग्निपरीक्षा की रचना करते हुए कवि ने सुभागमन से कथा का प्रारम्भ किया है। वन से लौटने, के उपरान्त राम का भाव मिलन अपने परिजनों से होता है। एवं लक्ष्मण के द्वारा माता कौशिल्या से वन एवं रण का विस्तृत वर्णन किया जाता है। राजदरबार में भरत सविनय पूर्वक राम को सत्ता का हस्तान्तरण करते है। राम द्वारा राज्यारोहण के उपरान्त धन धान्य से सम्पूर्ण भारत को परिपूर्ण किया जाता है। सीता के द्वारा गर्भ धारण किया जाता है, जिसके कारण राम के द्वारा अपनी अन्य रानियों से विमुख हो जाने के कारण विद्रोह की भावना उत्पन्न होती है। सीता की सारी सौते सुसंगठित होकर सीता के निष्कासन का षडयन्त्र रचाती है जिसमें वो सीता से रावण का चित्र बनाने हेतु कहती है। परन्तु सीता के द्वारा रावण की छवि को चित्रित करने में असमर्थता जताई जाती है। परन्तु राम की अन्य पत्नियों के द्वारा कपट पूर्ण आग्रह से सीता के द्वारा रावण के चरण चिन्ह को चित्रित करने के उपरान्त उस अस्फुट रेखा चित्र को पूर्ण कर पीठिका में पूजा सामग्री के साथ रख दिया जाता है। और राम से सीता द्वारा रावण के चरण चिन्हों की नित्त अर्चना करने की बात कही जाती है। परन्तु राम उनके बात की उपेक्षा करते है तब इस सूचना को घर-घर प्रेषित करने का षडयन्त्र करती है-

''सभी अपनी दासियों को सौपती यह कार्य है
पूजती रावण-चरण, सीता सदा अनिवार्य है।
ये प्रलोभन भेज घर-घर में बढ़ाई बात को
कर दिया है रवि उदय साक्षात आधी रात को।।'' [24]

सीता अपवाद का निमित्त बनकर सम्पूर्ण अयोध्या में छा जाता है, जिसकी सूचना राम के विश्वसास पात्र गुप्तचर के द्वारा दी जाती है। जिससे राम का मन उद्विगन हो उठता है और वह अयोध्या का समाचार जानने के लिए स्वयं निकल पड़ते है। जहां वह घर-घर में सीता अपवाद की चर्चा सुनने के उपरान्त धोबी-धोबिन की चर्चा में अपने आपको रघुवंश की कीर्ति का क्षरण करने वाला कहे जाने पर दुखी हो जाते है-

"भयभीत बडा वह कायर है / पत्नी का मोह न छोड़ सका।
उस दुराचारिणी से अपना / किचिंत सम्बन्ध न तोड़ सका।।" [25]

राम सीता निष्कासन का निर्णय लेते है। लक्ष्मण, विभीषण, हनुमान आदि के द्वारा निष्कासन का तीव्र विरोध किया जाता है। परन्तु रामाज्ञा से विवश लक्ष्मण अपने घर चले जाते है। राम के आदेशानुसार प्रधान सेनापति कृतान्तमुख सीता को वन में राम से मिलने का बहाना बनाकर वन विर्सजन कर आता है। वन पहुंचने के उपरान्त अपने निष्कासन से अनभिज्ञ सीता को लोक अपवाद और निष्कासन निर्णय व छल से निष्कासन करने की अपार पीडा होती है। निःसहाय सीता निर्जन में दुःखी होकर अपने युगुल पुत्रों के पैदा होने हेतु देखे गये स्वप्न एवं उस उपलक्ष्य में मनाये जाने वाले उत्सव के सन्दर्भ में सोचकर और अधिक पीड़ित हो जाती है। सेनापति से अयोध्या के लिए सन्देश भेजकर वनके उस त्राणो भरी राह पर सगर्भा सीता चल पड़ती है। तभी सामने से कुछ मानव आते दिखाई देते है। जिन्हें सीता दस्युदल समझकर अपने आभूषण देकर अपनी रक्षा का आग्रह करती है। परन्तु मानव दल का नायक पुण्डरीपुर का शासक वजृजंघ अपना परिचय देते हुये सीता से परिचय प्राप्त करता है। सीता के द्वारा अपना परिचय बताया जाता है। तथा वन निष्कासन एवं अपने साथ हुए अन्याय का विवरण दिया जाता है। वजृजंघ के द्वारा सीता को धर्म बहेिन बनाकर सांत्वना दी जाती है और अपने घर चलने का निवेदन करते है वजृजंहा के साथ सीता का प्रवास पुण्डरीकपुर बन जाता है। जहां वो अपने सत्कर्मो से जनप्रिय होकर सर्वत्र बहेन जी का सम्बोधन प्राप्त करती हैं। सीता का परित्याग कर कृतान्तमुख अयोध्या आता है और राज्य सभा में राम से सीता के परित्याग का समाचार व सीता का सन्देश दुखी मन से देता है। सीता के मार्मिक संदेश को सुनकर राम मूर्क्षित होकर गिर जाते हैं। लक्ष्मण राम को समक्षाते है तथा सीता को वन जाकर पुनः अपना लेने हेतु कहते है। राम पुष्पक विमान पर बैठकर कृतान्तमुख को साथ लेकर वन में सीता की खोज करते है। सीता के न मिलने से राम दुखी होते है और अयोध्या लौट आते है। राज्य महल में विरह व्यथा से राम की दशा देखकर शेष रानियां अपने कृत्य पर पश्चाताप करती है।

शरद ऋतु के अनुकूल वातावरण में सीता ने युगल पुत्रों को जन्म देकर प्रमुदित हो जाती है। अपने बालकों को सीता के द्वारा स्वयं सहज शिक्षिका बनकर अपना कर्तव्य निभाते हुए आलौलिक प्रतिभा में सुसंस्कारों का संचार करती है। अनुशासन और वात्सल्य का समन्वय युगल पुत्रों में सद्गुण सौरभ से सुवासित प्रतिभा से परिष्कृत होते है। दिव्य पुरूष सिद्धार्थ का आगमन होता है और वह सीता की करूणा का कारण पूछते है। सीता अपने दोनो पुत्रों का परिचय करवाती है और उन्हें पढ़ाने के लिए अनुरोध करती है। सिद्धार्थ के द्वारा दायित्व स्वीकार कर लिया जाता है। सिद्धार्थ की शिक्षा पाकर दोनो विद्यार्थियों के संस्कार स्वयं बोल उठते है और उनका जीवन सर्वांगसुलक्षण होकर विकसित हो जाते है। दोनो बालकों की योग्यता देखकर हर्षित नृप वजृजंघ अपनी पुत्री

रूपकला का विवाह लवण कुमार से कर देता है। एवं अंकुश का परिणय करने हेतु पृथु नृप की पुत्री कंचनमाला से विवाह का प्रस्ताव भेजा जाता है। पृथु नृप के इन्कार करने पर युद्ध होता है। पृथु नृप पराजित होता है, एवं अंकुश का विवाह पृथु पुत्री के साथ सम्पन्न हो जाता है तभी नारद का आगमन और नारद के द्वारा लवणाकुश का वंश परिचय दिया जाता है। जिसे लवणाकुश के द्वारा सुनने के उपरान्त राम के ऊपर निर्दोष माता के परित्याग के कारण अत्याधिक रोष आता है वो अयोध्या में सैन्य दल बल के साथ चढाई कर देते है विकराल युद्ध होता है अंकुश के प्रहार करते है। परन्तु चक्र प्रदक्षिणा कर वापस लौट आता है जिससे राम को आश्चर्य होता है, और वह सोचने के लिए विवश होते है कि यह युगुल पुरूष निकट सम्बन्धी है या मृत्यु से पूर्णतया अमर है। राम की इस गूढ़ व्यथा का निवारण नारद के द्वारा किया जाता है। और लवणांकुश का परिचय सीता पुत्रों के रुप में राम से कराते हैं युद्ध समाप्त हो जाता है। पिता और पुत्रों का स्नेहीमयी मिलन होता है। लक्ष्मण भी प्रहार के आघात को भूलकर हर्षित हो उठते है। श्रीराम के द्वारा जानकी संरक्षण हेतु वज्रजंघ को धन्यवाद दिया जाता है। तथा कपीश्वर लंकापति आदि को सीता को मना लाने हेतु अयोध्या से भेजा जाता है। परन्तु देवी सीता के द्वारा अयोध्या जाने से मना किया जाता है। एवं राम को सन्देशा भेजती है कि यदि अपवाद को मिटाने के लिए श्री राम बडी से बडी परीक्षा लेना चाहे तो उसके वैदेही तैयार है वह अपने सतीत्व बल पर अपना कलंक धोने हेतु उनके बुलाने पर परीक्षा अवश्य देगी। सीता का सन्देश पुनः राम को दिया जाता है, तब राम अग्निपरीक्षा हेतु सीता को बुलाते है और अयोध्या के जन मानस का उपस्थित रहने हेतु कहते है। अग्निपरीक्षा का सन्देशा पाकर सीता प्रमुदित मन से अयोध्या आती है। अग्नि प्रज्वतिल की जाती है, सीता उसमें प्रवेश करती है सम्पूर्ण अग्नि की ज्वालाये की लहरो में बदल जाती है।

> ''पल में कैसा पलटा पासा
> इसको खोजे अनुसन्धानी
> देखो पावक पानी-पानी।'' [26]

ज्वालाओं के मध्य देदीत्यमान सिंहासन उदित होता है जिस पर सीता आसीन हो जाती है जन मानस उत्साह और श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है। और सीता के मातृत्व की अमर कहानी संस्कृति की कृति बन जाती है। लक्ष्मण पवनपुत्र एवं उपस्थित जनमानस श्रद्धा और हर्ष से झूम उठता है। सीता की विविध प्रकार से अर्चना होती है।

'कथावस्तु :-

अग्निपरीक्षा का कथा प्रसंग प्रमुख रूप से पउम् चरियम् की कथा परम्परा से मिलता जुलता है। कवि की रचना समयानुकूल यथार्थ को अपने अन्तस मे लिए कथावस्तु के इर्द गिर्द भ्रमण करती है। सम्बन्धी लोकोपवाद की प्रखर प्रवंचना जन मानस तक फैलने का सक्त कारण चित्रण करते हुए घटनाओं को यथार्थ का कलेवर धारण करवाया गया है। जैन कथाओं के अनुरूप अग्निपरीक्षा की रचना फिल्मी गानो और भजनो की लय पर करते हुए कथा का प्रारम्भ अयोध्या सुभागन परिजनो से स्नेह मयी मिलन के साथ गीति प्रधान कृति में हुई है।

कथावस्तु की अधिकारिक और प्रासंगिक कथा को तत्वतः वर्णन करते हुए सौतों के द्वारा प्रेरित करने पर सीता द्वारा रावण अंगूठे का चित्र बनाना जिसे सीता के सौतो द्वारा पैर का पूर्ण चित्र बनाकर राम से सीता द्वारा

रावण के चरणों की पूजा करने की शिकायत करना, राम द्वारा इसका महत्त्व न दिया जाना, सौतो द्वारा इसी षडयन्त्र को आगे बढाते हुए जनमानस पर यह बात प्रसारित करवाना राम के निजी गुप्तचर द्वारा सीता लोकोपवाद की सूचना देना एवं राम का स्वयं जनमानस के उद्‌गार सुनना, धोबी धोबिन का संवाद आदि घटनाओं से दुखी राम का निर्वासन निर्णय, लक्ष्मण का आक्रोश तथा राम के निर्णय से असन्तुष्ट होकर खिन्न मन अपने महल पर प्रस्थान कृतान्तमुख को राम का आदेश राम के आदेश से कृतान्तमुख द्वारा सीता को रथारूढ करा वन विसर्जन, सीता कृतान्तमुख संवाद तथा सीता राम को सत्यधर्म पालन का सन्देश देना, जंगल में वज्रजंघ का मिलना तथा धर्म बहेन बनाकर अपने नगर ले जाना, सीता द्वारा युगल पुत्रों को जन्म देना, पालन पोषण करना, गौतम के द्वारा इनकी शिक्षा-दीक्षा पूर्ण करना, लवणांकुश का विवाह और युद्ध पृथु का युद्ध में हारना, नारद आगमन लवणांकुश का परिचय कराना, नारद के द्वारा अपना परिचय जानने के उपरान्त माता के हुए अन्याय का प्रतिशोध लेने हेतु अयोध्या पर सैन्य अभियान, राम की सेना का पराभव पुनः नारद का आगमन लवणांकुश का राम को पुत्रों के रूप में परिचय देना, राम द्वारा सहसणीय पुत्रों को स्वीकारना सीता को वापस बुलाने हेतु सन्देश भेजना, भामण्डल का बहेन से मिलन, अग्निपरीक्षा आदि घटनाये चित्रित है।

आठ खण्डो का यह काव्य जैन आचार्यो के कथा अनुरूप गीति और लय प्रधान कावय है जिसमें घटनाओ को नूतन कलेवर मे ढ़ककर युगानुरूप चित्रित किया है। रानियों का षडयन्त्र ईर्ष्या की प्रेरणा से रचा जाता है जो निर्वासन की पृष्ठाभूमि तैयार किया करता है।

प्रिया या प्रजा - कथासार :-

पं. गोविन्ददास की अद्वतीय रचना प्रिया या प्रजा साहित्य के अति उच्च एवं वैशिष्ठ ग्रन्थों में से एक है। रामकथा परम्परा मे सीता निर्वासन की कथा का विश्लेषण करते हुए जनक नन्दिनी सीता व श्री राम के अवतारी चरित्र के लीला रूपी स्वरूप का वर्णन किया है। निःसन्देह यह रचना कवि की अभिव्यक्ति शाश्वत प्रेरणा से प्रेरित प्रतीत होती है, जिसमें लीला सागर के द्वारा रची हुई लीला के विधान का एक घटनाक्रम मात्र प्रतीत होती है। परन्तु भक्तिवादी दृष्टिकोण से परे यथार्थ वादी दृष्टिकोण में जगह जगह पर कवि की लेखनी निर्वासन की करूणा को अन्तः मन से अहलादित होती है दो खण्डो में विचरित काव्य कवि की अनुपम कृति ही मात्र नही है, अपितु एक भक्त के भक्तमय विचारो का छन्दमय संकलन है। 'प्रथम खण्ड' पूर्वाद्ध से कथा का प्रारम्भ रोचकता से प्रारम्भ किया है। 'प्रथम सर्ग' मे कवि ने युग का प्रभाव तथा भारत भूमि का वर्णन करते हुए समर्थानुरूप लक्ष्य निर्धारित किया है निर्वासन के कथासूत्र जोडते हुए कवि ने तृतीय सर्ग में कवि ने रजक के गृह में घटने वाली घटना का वर्णन तथा गुप्तचर के द्वारा सुने जाने का वर्णन प्रस्तुत है।

लेखक की रचना वाल्मीकि का अनुशरण करते हुए भवभूति की विशिष्टता लिये हुए है। रजक की घटना गुप्तचर को ज्ञात होती है और वह अयोध्या में प्रभात के होने पर मंत्रणा भवन में श्री राम के समक्ष उपस्थित होकर समस्त् प्रकरण अवगत करवाता है। कवि की विवेचना छठवे सर्ग में राम के अवतार का रहस्य उद्‌घटित करती हुई नर रूप में उनके लीलाओं का वर्णन करती है तदोपरान्त् निर्वासन की कथा का ताना बाना बुनते हुए गुप्त मंत्रणा का वर्णन किया है, नवें व दसवे सर्ग में बन्धु वर्ग से विचार विमर्श करके राजनीति के महती सिद्धान्तो का

वर्णन करते हुए विश्व वत्सल श्री राम निर्वासिन का आदेश देते है निर्वासिन के प्रस्ताव से लक्ष्मण को क्रोध आता है। परन्तु श्री राम के आदेश में बंधने के कारण निरूत्तर होकर रह जाते है कथा के इन संक्षिप्त सूत्रों के पूर्वाद्ध का समापन होकर उत्तरार्ध का प्रारम्भ होता है उत्तरार्द्ध का प्रारम्भ अरण्य के लिये प्रस्थान और प्रवेश तक वर्णित है जिसमे सौमित्र देवी सीता को रथारूढ़ करा वन प्रस्थान करते हैं। वन की दुरुहता में निमग्न मौन केवल रथ के पहियो की ध्वनि पंथ क्लेश को बढा देता है देवी सीता का मन वन की निर्जरता को देखकर सशंकित होने लगता है राह न पहचानने के कारण उद्वेलित होता है। तब वह लक्ष्मण से गन्तव्य के सन्दर्भ में एवं उनके मौन का कारण जानना चाहती है। तब लक्ष्मण के अन्तः मन की वेदना चीत्कार करती हुई प्रत्यक्ष प्रकट होती है। और वह अत्यन्त कारूणिक होकर निष्कासन आदेश प्रस्तुत करते है। देवी सीता और श्री राम की लीलाओं से अपने आपको अन्जान रखते हुए सौमित्र अत्यन्त प्रताड़ित है-

''सुमनित-शुचि-शैया काणट की भूमि होगी।
स्वजन वन रहेगे वन्य दुर्दान्त प्राणी।।
अचल वन विराजे वाक्य हीना मही में
जयति जननि सीता।''गूंज के विश्व वाणी।।'' [27]

सौमित्र के शब्द रूपी श्रद्धा रूपी सुमनो को कवि के द्वारा देवी सीता के चर्णो में समर्पित करते हुए अपनी अनुरागी भावना से स्वयं का विश्वास खो देते हो क्योकि उनकी मां का निर्वासन स्वतः उनके द्वारा करने का आदेश का निर्वाहिन करने के लिए विवश हो जाते है। तथा अपने अनुराग रूपी माह का माता सीता के समक्ष विकल होकर कहते हुये मूर्छित हो जाते है।

''जग इस खल को था, देखता भाव ही से
अनुचर, अनुरागी, युक्तिशः दास मां का
अहह! अब करेगा ? किन्तु विश्वास कैसे
जब वह निकला है, ठान निर्वास मां का।'' [28]

सौमित्र के निश्तेज होने के उपरान्त सीता जी द्वारा अत्यन्त कारूणिक विलाप किया जाता है। देवी सीता अपने भाग्य को कोसती हुई सोचती है, निश्चय ही मुझसे कोई बहुत बडा अपराध हुआ है। जिसके कारण आज हथभागनी सीता का भू भाग हारी के हृदय से भू तनुजा का भार इतना अधिक हो गया है कि उन्हें निष्कासन जैसा कठोर निर्णय लेना पड़ा है। जबकि मेरा स्नेहमयी हठ हो या मृग के लिए हठ रहा हो या दशकंधर के गेह का निवास हो तब भी मुझे इन दोषो से मुक्त रखते हुए नही त्यागा है तो मुझे उनके ऐसे कृत्य का कैसे विश्वास हो-

''भू-भार-हारी के हृदय का भू-तनूजा भार है।
हे सार-हीने! अब यहां अस्तित्व ही निस्तार है।।'' [29]

देवी सीता का जन्म मानव वेदना का अभिप्राय बनकर आजन्म वन प्रवाश के लिए ही हुआ है। और वह अपने शुष्क जीवन के करूणा में उद्विग्न होते हुए भी राम की पीड़ा का भी अनुभव करती हुयी मूर्छित हो जाती है।

"बन में रहूं, घर में रहूं, नीरस सतत अभिलाष है।

है स्वांस दुःख-दायी उन्हें, इतना मुझे विश्वास है।।" [30]

परन्तु सौमित्र जैसे वीरता के प्रतीक विष्णु के अंशज अभिपत औतारी गर्भित मेघनाद का वध करने वाले तथा अपने वक्ष की वीर घातनी शक्ति के प्रहार को अपने वक्ष स्थल पर झेलने वाला वीर योद्धा आज इतना असहाय है क्योकि वह अपने स्वभाव को नृप आदेश को कर्तव्य पथ मानकर नृप नीति का उददेश्य पूर्ति कर रहा है। प्रत्यक्ष और अपरोक्ष में आज यह उद्‌भट वीर इस निर्जन विपिन पर निश्चेष्ट पडे हुए है। और उनके क्लेश को ज्ञात करने वाला कोई नही है। और मैथिली के अनन्त दुःख से निराशा को भी निराशा हो गयी है और विश्वास विश्वास से रूठ गया है। जगत माता जिसके भृकुटि के इशारे पर सम्पूर्ण विश्व का संचालन होता है। जिसने पतिव्रत के लिए स्वर्गिक सुख को ठुकराकर वन की विपत्तियों को स्वीकार किया है। जिसके सतीत्व के सामने रावण जैसे शक्तिधर मस्तक झुकाते थे आज भी वही मैथिली निर्जन वन पर निश्चेष्ट पडी हुई है। कवि का यह चित्रण अत्यन्त ही मार्मिक होकर कवि के अन्तः वेदना पर परिलक्षित करता है। जो शासक के कर्तव्य परायण के त्याग की भावना हेतु इंगित करता है। समस्त वन निर्जन प्रान्त निस्प्रभ होकर मौन धारण कर शोक सागर में डूबा हुआ प्रतीत होता है। सौमित्र की मूर्छा भंग होती है वह ज्योतिर मां सीता को मूर्छित देखकर मन में विकल भाव लिये हुए उसी अवस्था में त्याग कर वापस लौटते है। रघुकुल मणि-दशरथ आत्मज कुल प्यारी सीता निःसहाय विपिन महि वक्ष पर विकल दृगों में करूणा का सागर लिये हुए, निश्चेष्ट है। लक्ष्मण की करूणा अन्तात्मा को विदीर्ण करती है। उन्हे माता तुल्य देवी सीता का करूण स्वरूप नही देखा जाता परन्तु वो स्वयं को इस करूणा से होने वाले भावी परिवर्तन से अश्वस्थ करते है-

"इस अभिलीला का भी यहां, भावी-सूचक अर्थ है।

इस कारण ही सौमित्र प्रिय! व्याकुल होना व्यर्थ है।।" [31]

लक्ष्मण को प्रकृति के त्रण-त्रणों से तथा देवों से देवी सीता के रक्षण का सब प्रकार विश्वास हो जाता है। फिर भी वह वयु दिगपाल मेघपति, दिशाओं, दिग्गजों, दिकपालों आदि को देवी की रक्षा हेतु सजग करते हुए त्यागकर प्रस्थान करते है-

"जब देव वृन्द ने दिया विश्वास बार-बार।

अहि-राज त्यागने लगे निःश्वास बार-बार।।

सौमित्र देखने लगे आकाश बार-बार।।" [32]

सौमित्र के प्रस्थान के उपरान्त देवी सीता की मूर्छा उठती है। और सौमित्र के वापस होने के आभास में नाना प्रकार से विलाप करती है। अपनी इस दुर्दशा से देवी सीता का प्रलाप उनके समस्त अस्तित्व को कम्पायमान करता है और वह प्रिय परिजनों की स्मृति करती हुई योगानन से स्वयं को समाप्त करने हेतु अन्तिम प्रणाम कहती हुई अग्नि देव का आवाहन करती है। तीनो लोक में संवेदना व्याप्त हो जाती है, तथा भूतल में भयावहन होने लगता है पवन की गति रुक जाती है वायु के झोकों में भय का विष व्याप्त हो जाता है तारिकाएं झुक जाती है। तभी महर्षि वाल्मीकि का प्रगटन होता है। और वह देवी सीता को सावधान करते हुए अनर्थ करने से रोकते

है, फिर समझाते बुझाते हुए उनके पिता और ससुर का परिचय ज्ञात करते है तब महर्षि वाल्मीकि को देवी सीता के द्वारा सम्पूर्ण परिचय बताया जाता है। महर्षि वाल्मीकि के द्वारा परिचय जान लेने के उपरान्त साष्ट्रांग प्रणाम किया जाता है। तथा अपने आश्रम के सन्दर्भ में बताकर राम के भावी सपनो को पूर्ण करने हेतु आश्रम का अतिथ्य स्वीकार करने का निवेदन करते है। देवी सीता के द्वारा स्वीकार कर आश्रम में प्रवेश किया जाता है आश्रम की रमणीयता और प्रकृति का मनोहारी वर्णन करते हुए कवि ने कथा सूत्रों को आगे बढ़ाया है। आश्रम में देवी सीता के प्रवेश करते ही बटुक गणों के द्वारा बगैर परिचय ज्ञात किये हुए ही उनके तेज के द्वारा उन्हे प्रणाम किया जाता है। एक छात्र के द्वारा महर्षि से देवी का परिचय पूछने पर देवी सीता का परिचय बताते हुए महर्षि कहते है जिस राज तिलक तक का वर्णन तुमने मेरी रामायण में सुना है, वह उसी की पात्रा जगत जननी माता सीता है। जो राजतिलक के उपरान्त का अपूर्ण वृतान्त पूर्ण करने हेतु आश्रम में उपस्थित हुई है। तदोपरान्त छात्रगणों को महर्षि के द्वारा रामायण की घटी घटनाओं का मैथिली जन्म से लेकर धनुष यज्ञ का वर्णन करते है। और सीता रघुवीर मिलन की उस प्रथम भेट में अखिलेश्वरी जानकी और अखलेश श्री रघुनाथ नर रूप में सद्भाव प्रभाव से रीति संयोग की जाने कितनी लीलायें रचाते रहे है। और अभी भी दोनो लीलाओं की रचना हेतु विलग होकर भी क्रिया शील है-

> ''मित्रों ! सुगन्धि प्रसून की, पाषाण से तुलसी नहीं।
> चर्माक्षु से प्रत्यक्षता, परमेश की खुलती नही ।।'' [33]

जिन्होने विश्वामित्र की यज्ञ रक्षा हेतु ताड़िका सुबाहु आदि खलों का संहार किया है। निःसन्देह यह कार्य साधारण मनुष्य के द्वारा संभव नही हो सकता है, अतः प्रिय शिष्यों देवि! सीता आदि कमला है। और श्रीराम कमला कान्त है। ये तुम्हारा परम सौभाग्य है कि तुम्हारे आश्रम में देवी के साक्षात् दर्शन हो रहे है। अपने नेत्रों को तृप्तकर मां के स्वरूप का सदैव चिन्तन करो।

लक्ष्मण का अयोध्या वापस आने का वर्णन करते हुए शोक और विक्षुब्धता का व्यापार समस्त अयोध्या प्रान्त में विद्यमान होता है। वहां के तृण-तृण में संतृप्त विद्यमान नजर आता है। गूढ़ खेद के वस में उद्विग्न सम्पूर्ण नर-नारी स्वामी और सेवकों के मन बुझे हुए थे और वह सौमित्र से निःशब्द होकर भी अपनी करूणा की वाणी से अपनी लोक स्वामिनी को मानो मांग रहे थे। तदुपरान्त कवि की कलम शोक वर्णन विस्ताक से रूक जाती है। कुछ कालों बाद वाल्मीकि के आश्रम में देवी सीता प्रसूता होती है, जिनके दो पुत्र उत्पन्न होते है। जो लवकुश नाम से लोक लोकात्तर में विख्यात होते है। अयोध्या में अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन राम के द्वारा ठाना जाता है। परन्तु परम वीर लवकुश के द्वारा राम का सम्पूर्ण सैन्य बल पराजित हो जाता है। अन्त में राम भी वहां पहुंचते है और वह अपने लवकुश रूपी निधि को पहचान लेते है। महर्षि वाल्मीकि के संग में देवि का पर्दापण होता है। वह राम का रथारूढ़ तथा सेना को धूल धूसित देखकर अपने हाथ को उठाकर अपने सतीत्व के बल पर दैवीय विधान को जागृत करती हुई समस्त सैनिक सेना पतियों को सजीव कर देती है। देवी सीता के सतीव्रत रूपी सूर्य प्रकाश से समस्त तम् नष्ट हो जाता है। सम्पूर्ण नभ मंडल देवि के जयघोष से गूंज उठता है। सुर नर मुनियों ने देवी के सतीत्व को प्रमाणितकर श्रीराम से देवि को अपनाने का निवेदन किया जाता है। श्रीराम के द्वारा देवी सीता को अपना लिया जाता है। सीता और राम का सगति मिलन होता है।

तदान्तर कथा मे कवि के द्वारा अभिव्यंजित रामकथा के समस्त पात्रों के चरित्र का उपदेशात्मक वर्णन है। यहां से काव्य का समापन होता है।

कथावस्तु :-

कवि के द्वारा विरचित काव्य ग्रन्थ रामकथा का रसमय प्रवाह बनकर भक्त-भावना के संचार का मन पर अमिट प्रभाव रेखांकित करता है। भाषा की सरल्यता एवं किलिष्टता का मणि कंचन योग की तरह समाविष्ट करते हुए अपने मन की करूणा को चित्रित कर सीता निर्वासिन कि विरह गाथा को करूणा का उनगम वारिध बना दिया है, जैसा कि वर्तमान कवियों के द्वारा सीता निर्वासन काव्य की रचना की गयी है उनमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्र और उन्मुक्त अभिव्यजंना कथा परम्परा में रचना बंधनो का अधिकारिक विचार मूल कथा से परे है। रामकथा के इतिहास में ''प्रिया या प्रजा'' की विशिष्टता अनुपम उदाहरण के रूप में कवि के द्वारा विरचित हुआ है। जिसमे पात्र और पात्रों के चरित्र का विश्लेषण सूक्ष्मतर करते हुए पाठको को भाव विभोर कर देता है, भाषा, छन्द, रस अलंकार एवं वर्णन का माधुर्य संगम बन कर अपनी पवित्रता से यह ग्रन्थ मानव मन पर उठे प्रश्नो का सहज ही समाधान करने मे सक्षम है।

कथा के सूत्रों का संयोजन कवि के उन्मुख वातावरण की मौलिकता से प्रभावित होते हुए भी भक्ति भाव से परिपूर्ण अवतार वादी दृष्टि से समाविष्ट होते हुए कथा की परम्परा महर्षि वाल्मीकि कृति रामायण एवं भवभूति से अक्षरतयः प्रभावित है। अतः निःसंकोच लिखा जा सकता है। कि राम कथा के बीज ग्रन्थ कवि अनुगामी है। कथा के कलेवर में वर्णन का दृष्टिकोण अत्यधिक प्रभावित करने वाला है।

कवि की रचना में अधिकारिक कथा के सम्पूर्ण अंश विद्यमान है। जिसके अन्तर्गत जन मानस की आलोचना एवं रजक-रजकी की कथा प्रजा के स्वतंत्र अभिव्यक्ति हेतु राम के द्वारा सीता का वन निष्कासन, लक्ष्मण के द्वारा रथारूढ़ कराकर वन प्रान्तर का प्रस्थान, सौमित्र की करूणा, निष्कासन का आदेश सुनकर देवी सीता का विलाप, करूणा से विक्षिप्त होकर देवी सीता का योगाग्नि में जलने को उद्वत होना, महर्षि वाल्मीकि का आगमन शोक संतृप्त सीता को प्रबोधित करना तथा आश्रम ले जाना तथा लव कुश का जन्म, राम का अश्वमेघ यज्ञ, तथा लव-कुश का युद्ध आदि अधिकारिक कथा है।

कवि की लेखनी ने रामकथा के प्राशंगिक घटनाओं का समावेश 'प्रिया या प्रजा' में अत्यन्त ही रोचक ढंग से किया हुआ है। जहां तक राम कथा के इतिहास में निर्वासन की घटना का वर्णन करूणा का प्रवाह वन गया है। वही लक्ष्मण को अवतार प्रतीक मानते हुए कवि ने मेघनाद के साथ समरांगण का रोचक वर्णन किया है। करूणा और वीरता के बीच का अन्तर कवि ने बड़े सूक्ष्मता के साथ प्रकट किया है। अन्य प्राशंगिक घटनाओं में वाल्मीकि द्वारा शिष्यों से परिचय देना, तथा मिथला में देवी सीता के जन्म से लेकर धनुष की प्रत्यंचा खीचना महामाया का विदेह के घर अवतरित होने का वरदान देना, पुष्पवाटिका का वर्णन, धनुष यज्ञ, श्री राम सीता विवाह, ताड़का और सुबाहु का वध, विश्वामित्र की मखरक्षा, आदि प्रमुख प्राशंगिक घटनाओं का वर्णन है।

कवि की रामकथा में निर्वासन कथा भक्ति की शक्ति से वर्णित करते हुए अपनी भक्ति भावना से किंचित मात्र भी भटकने नही देता है- कवि का लेखन प्रवाह प्रारम्भ से लेकर अन्त तक वृह्मा की माया और अवतार

वादी अध्यात्मता से रंच मात्र भी नही भटकती है। प्रकृति के शास्वत परिवर्तनों का अपनी दृढ़ मति के अनुसार ओऽम्कार की अलख से संक्षिप्त वर्णन कर रामकथा को नये गुण भावों से सम्पन्न किया है। कवि की कथा अन्त में सीता राम के मिलन से कथा की समस्त करूणा का प्रभाव होते हुए भी सुखात्मक लक्ष्य प्राप्तकर समाप्त होती है।

रामराज्य - कथासार :-

रामकथा के मूल प्रणेता वाल्मीकि के द्वारा प्रणीत रामायण में पुराण पुरूषो के मर्यादा का अक्षय वर्णन भारत वर्ष के इतिहास के जनमानष में युगो-युगो से प्रेरणा स्त्रोत बनकर रामकथा की रचना का मेरूदण्ड वन गया है। संस्कृत के वाङमय में वर्णित पुराण पुरूषों में मर्यादा पुरूषोत्तम राम का वर्णन भारतीय सांस्कृतिक चेतना का उत्तम उपहार है। श्री राम का उदात्त चरित्र सदियों से मनीषियों के कृति रचना का आकर्षण बना रहा है।

हिन्दी जगत में रामकथा को जनमन में रमाने का कार्य गोस्वामी तुलसीदास जी के द्वारा रचित रामकाव्य कोटिशः मानषों की पूज्य रामचरित मानष की रचनाकर अपने इष्ट राम का सर्वत्र उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत किया है, तदुपरान्त हिन्दी के रचनाकारों के द्वारा रामकथा की इतनी विस्तृत रचनाऐं की गई है, फिर भी रामकथा की अनन्तता अपर्मित है। एवं साहित्यकारों को , कृतिकारों को निरन्तर अनन्तता की ओर आकर्षित करती है गोस्वीमी तुलसीदास का कथन (हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता) अश्रय प्रेरणा स्त्रोत बनकर रामराज्य की रचना के रूप में रामकथा के मर्यादित विस्तृत सोपानों को अपने अन्तस में लिये हुए प्रस्तुत हुआ है।

कवि श्री रामप्रकाश शर्मा के द्वारा भारतीय जीवन के लिए सांस्कृतिक चेतना का मूल्यवान उपहार प्रस्तुत किया है। उनकी रचना में जहां पर मन्दाकिनी के समान राम और सीता का पावन प्रेम प्रवाहित होता है। वही पर लोक मंगल और राज्य सुयश को अक्षुण बनाये रखने के लिए अपने प्राणों को भी उत्सर्जित कर देने में कर्तव्य परायणता मानते है। निःसन्देह राम और सीता का प्रेम वर्णन कवि के द्वारा वर्णित विश्व साहित्य में अपनी उत्तुंगता बनाये रहेगा।

कवि के द्वारा 'प्रयाण पर्व' में सीता निर्वासिन की कथा का मार्मिक वर्णन करूणा मयी होते हुए भी लोक मंगलकारी तथा हिन्दी साहित्य की चेतना में वृद्धि करने वाली है। रामकथा में सीता निर्वासिन की कथा का वर्णन करूणा का उदात्त रूप है एवं भावों का स्थायित्व ह्रदय को द्रवित करता है-

कथा का वर्णन 'प्रयाण पर्व' में रामराज्य की प्रशंसा करते हुए, कवि ने अयोध्या के जनमानष में प्राकृतिक सौन्दर्य की उपमा से युक्त वैभव मई जीवन यापन के उच्च आदर्शो का वर्णन किया है। कवि ने चन्द्र रस की धवलता के साथ सम्पूर्ण अयोध्या के जनमानष मात्र ही नही खग मृग भी सुखमय प्रवास कर आनन्दित है। राज्य में ललित कलाओं से लेकर युद्ध विधाओं तक का सम्पूर्ण प्राश्रृय सुख एवं वैभव गृह-गृह में विद्यमान है। कवि की कल्पना अपनी रचना के द्वारा राज्य के वर्णन को मेरू पर्वत से भी उत्तुंग बना देती है-

''विश्व का सुख, कांति वैभव गृह-गृहों में भर रहा है।
राज्यश्री का स्त्रोत अक्षय प्रति भवन में झर रहा है।।''
''शान्तिमय, रमणीक, मोहक राम का आमोद उपवन।
जानकी के साथ रमते है जहां रघुवंश भूषण।।'' [34]

कथा की मोतियों को काव्य पंक्तियों में पिरोकर कवि ने कथा का प्रारम्भ राम और सीता की उपवन में उपस्थित से प्रारम्भ करते हुए देवी सीता के पुत्रेष्टि लाभ हेतु श्री राम चन्द्र जी सभार गृहण करने का अवरोध करते है। और देवी सीता जी के द्वारा राम के चरणो में नतमस्तक होकर गंगा के दुकूलो पर स्थिति वन प्रान्तर में निर्मित ऋषि नारियों के दिव्य आवासों में प्रवास करने का मनतव्य प्रकट किया जाता है। जहां पर निर्विग्न, शान्ति का वातावरण एवं लोकाराधन यज्ञ किये जाते है। ऐसे में सरल एवं सामान्य जीवन के लिए अनुमति लेती है। राम का राज्य समाज एकत्र होता है। तथा परस्पर में मन्त्रणा होती है। राम अपने प्रिय गुप्तचर मणिभद्र से राज्य की सूचना प्राप्त करतें हैं। तब मणिभद्र के द्वारा सम्पूर्ण राज्य में कुशल एवं मंगल का वर्णन करते हुए नवनिर्मित स्थितियों में देवी सीता से सम्बन्धित लोकोपवाद का वर्णन किया जाता है। जिसे सुनकर राम की वाणी मूक हो जाती है। मन में विषदंश की करूणा लिये हुए अपने आपको अपकीर्ति के सागर में डूबते हुए पाते है। सीता के इस लोकोपवाद के कारण रामराज्य की यश पताका झुकती हुई प्रतीत है। होती तब वह अपनी असह वेदना को मन मे दबाते हुए लक्ष्मण को देवी सीता के निर्वासन व ले जाकर जन्ह्वी तट के वन प्रान्तर में ऋषि श्रेष्ठ महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में छोड़ आने का आदेश देते है। सीता में ही रामराज्य की लोक आराधना व्रत का आदर्श देखते है। राज्य के साभार में स्वयं की पीड़ा से अधिक मूल्य राज्य की कीर्ति को देते है।

राम के द्वारा आदेश प्राप्त करते ही लक्ष्मण देवी सीता को सारथी सुमन्त्र के साथ रथारूढ़ करा वन प्रान्तर की ओर प्रस्थान करते है। अपने मन में पीडा का अथाह सागर लिए हुए मौन है, अपने मनः अनुरूप गन्तव्य की ओर बढ़ती हुई देवी सीता अति प्रफुल्लित होती हुई वन की सौन्दर्यता से भाव विभोर होती है। परन्तु लक्ष्मण के आहत गति को देखकर उनकी वेदना का कारण जानना चाहती है, तब लक्ष्मण के द्वारा अति दीन मलीन शब्दो से लोकापवाद एवं वन निर्वासन का श्री राम का निर्णय सुनाते है। जिसे सुनकर सीता का अन्तःकरण चीत्कार कर उठता है। काल चक्र के इस खेल पर मैथिली का रोम-रोम करूणा से चीत्कार करने लगता है। मानो वज्र सा टूटा हो तब वो व्याकुल होती हुई लक्ष्मण के द्वारा राम को सन्देशित करती है। तथा अन्तिम प्रणाम भेजती है। इतना ही नही कवि की सीता लक्ष्मण से अत्यन्त मर्यादित शब्दों में अपने निष्कासन के हेतु को छुपाये जाने का कारण पूछती है। परन्तु अपनी पीडा को रामराज्य के मूल्य स्थापन में बाधक नही बनने देना चाहती है-

"लोक का अपवाद कलुषित जानती हूं।
राम का यह राज्य निर्मल मानती हूं।।
मैथिली कब राह प्रभु की छोड़ पाई ?
बात क्यो वन की प्रभु मुझसे छिपाई ?[35]

लक्ष्मण और सीता के करूण विलाप के मध्य देवी सीता से सौमित्र के द्वारा अपने अपराध की क्षमा याचना कर वापस लौट पड़ते है। लक्ष्मण के वापस होते ही सीता की करूणा से वन प्रान्तर का पत्ता-पत्ता चीत्कार कर उठता है। गंग की तरंग भी तटबन्धों की मर्यादा से विपरीत होकर सीता की करूणा में विलय हो जाना चाहती है। सीता के दुख को देखकर ऋषि वाल्मीकि विभिन्न तरह से सान्त्वना देते है। सीता के अश्रुओं को देखकर ऋषि नारियों के नेत्र भी सजल हो जाते है। प्रकृति के इस नियति में जग नियन्ता के श्रेय को निरूपित करते हुए महर्षि

वाल्मीकि सीता को प्रबोधित करते है।

इधर अयोध्या मे राम का मन सीता की वेदना मर्म से मार्मिक होकर लोक धर्म की मर्यादा का पालन करते हुए राजा के पावन कर्मो का निर्वाहन करते है। भरत और शत्रुघ्न को एक दिन बुलाकर राम राज्य को लोक मर्यादा का अभिप्राय बनाने हेतु तथा धर्म और सत्य के ध्वज तले निर्मल मन से निर्बल जनो को मंगल कर्मो का पथ प्रदर्शित करने का कार्य करने को कहा जाता है। गोमती तट के नैमिष कानन में अश्वमेघ यज्ञ करते है-

''गोमती तीर पर सुन्दर शांत तपोमय,
नैमिष कानन अति सुखद पुष्य पावन है।
बहु कर्म, अकर्मो के विपाक की हवि को,
इस अश्वमेघ में 'यज्ञपुरूष' को दूंगा।।'' [36]

देश विदेश के नृपति किन्नर, मानव प्रजा जन आदि एकत्र होते है। समाचार सुनकर लवकुश को लेकर महर्षि वाल्मीकि भी पहुंचते है। जहां यज्ञ वेदिका पर स्वर्ण की सीता के साथ राम यज्ञ हवि देते है। वही पर तपस्वी भेष धारण किये हुए भाल पर त्रिपुण्ड लगाये गले में माला धनुष और तुड़ीर कन्धे पर धारे हुए लय बध्य रामायण का गान करते हुए भ्रमण करते है। उनके गान में सीता की करूणा चित्रित होकर सम्पूर्ण सभा को द्रवित कर देती हैं। राम सेयुक्त संपूर्ण सभा करूणा और आश्चर्य से देखते है। प्रायः प्रत्येक मन पर यही विचार उठता है कि ये दोनो बालक कौन है- असमंजस की इस स्थिति को देखकर महर्षि वाल्मीकि दोनो बालको का परिचय देकर समाप्त कर देते है। और आज परिचय कराने के उपरान्त अपनी स्वरचित रामायण के समापन की घोषणा भी कर देते है। रघुकुल के पावन राम और सीता की पावन गाथा को भारत भूमि से सम्पूर्ण बृहाण्ड में युगों तक व्याप्त रहने का आशिर्वचन देते हुए सीता की पवित्रता भी प्रमाणित करते है। प्रेमातुर राम मुनि से अपनी सीता को मागते है। तभी मुनि के पीछे से देवी देदीप्तमान होती है। वह सूर्य वंश की कीर्तिमना सी सजल नयन राम के समक्ष अंजली बाधे प्रस्तुत है। सीता को देखकर राम की करूणा नैनो से प्रवाहित होने लगती है। तभी वह सम्पूर्ण जनमानष से कहते है कि यदि सीता के प्रति अब भी किसी के मन में कुत्सित भाव हो तो प्रकट करे। और सीता की लोकोपवाद से सम्बन्धित परीक्षा ले तभी सीता की पवित्रता प्रमाणित करते हुए सम्पूर्ण सभासद महिपाल वशिष्ट आदि मुनियों ने सीता के चरित्र को सुमेरू पर्वत से भी उत्तुंग बताते हुए एक ध्वनि मे गुंजित किया तभी सीता के मुख से करूणा के स्त्रोत की तरह शब्द फूटते है वह अपने आपको प्रमाणित करते हुए कहती हैं, हे मां पृथ्वी यदि मै पवित्र हूं तो अपने अंक खोल यदि मै पवित्र हूं और मैने सदैव राम नाम की ही रसना रटी हो तो मुझे अपने अंक मे भर लें। पृथ्वी फट जाती है सीता दिव्य ज्योति मे परिणित होकर विलीन हो जाती है। नभ में देवी सीता का जयनॉद गूजंता है। राम के नेत्र आश्चर्य से फटे रह जाते है। इस प्रकार रामराज्य में सीता निर्वासन कथा का समापन हो जाता है।

कथावस्तु :-

रामकथा के गायन मे सीता निर्वासन के कथा तथ्यों को कवि ने वाल्मीकि, कालीदास, भूवभूति, तुलसीदास जैसे महान कवियों की तरह लेखन रैली से कथावस्तु के शब्दों से अपनी कथा को पुनीत बनाया है। निःसन्देह कवि के राम अपनी प्रिय वस्तु प्रियतमा को त्यागकर भी रामराज्य को लोक मंगलकारी बनाने में अपना

सम्पूर्ण परित्यागने में जरा भी नही हिचके, सीता निर्वासिन की कथावस्तु 'प्रयाण पर्व' में अयोध्या के राज्य प्रसादों का समिश्रित वर्णन सीता का वन विचरण हेतु अपने मनतव्य का कहना, मणिभद्र का सीता के प्रति लोकापवाद की बात बताना, लोकोपवाद के सन्दर्भ में सुनकर राम का शोकाकुल होना, लोक आराधना के लिए लक्ष्मण को निष्कासन का आदेश देना, सीता का निर्वासित हेतु प्रस्थान करना, सीता का विलाप, वाल्मीकि के साथ राम पुत्रों का लयमय रामायण गान, करूणार्द्र राम का महर्षि वाल्मीकि के द्वारा सीता का यज्ञ स्थल पर बुलाना, तथा सीता पृथ्वी के अंक में समाकर अपनी पवित्रता को प्रमाणित करना आदि अधिकारिक कथा है।

रामकथा के काव्य का प्रणयन करते हुये कवि ने महाकाव्यत्व का निर्वाहन करते हुए भी सीता निर्वासन की कथावस्तु को उचित संगति तक लघु एवं तत्व परख रखने में पूर्णतयः सफल रहे है।

कवि के द्वारा मुखरित रामगान में कथावस्तु की तथा सीता राम के चरित्रिक मर्यादाओं का पूर्ण अनुपालन किया गया है। निर्वासन के पूर्व प्राशंगिक कथाओं में काव्य चित्रण से साकेतपुरी की पावनता का सदृश्य चित्रण रामराज्य के यश का उन्मुक्त वर्णन, आदेश से आहत लक्ष्मण की वेदना का वर्णन, निर्वासनहेतु देवी सीता को ले जाने हेतु लक्ष्मण का करूणा से आहत होकर मौन रहना, तथा लक्ष्मण के द्वारा देवी सीता को निर्वासन का कारण बताते हुए आर्तमय हो जाना, लक्ष्मण से देवी सीता का प्रतिउत्तर सन्देश भेजना, आदि प्राशंगिक कथाये है।

कवि के द्वारा विरचित रामराज्य मे कवि मुख से उत्तर चरित्र के वर्णन का स्त्रोत युगो-युगो से अक्षय परम्परा के अनुरूप मर्यादाओं एवं भावो को निरूपण करते हुए हृदय को द्रवित करने वाला उदात्त करूण रस से परिपूर्ण ज्ञान मई उपहार है। जिसमें कथा की मौलिकता का निर्वाहन किया है। राम के द्वारा लोक आराधन के अवगाहन में अपना सर्वत्र उत्सर्ग करके भी लोक रंजन को महत्वपूर्ण ढंग से प्रतिष्ठित किया है। राम के उदात्त गुणो का वर्णन तथा उनके राजसी गुण जो प्रजा के कल्याणार्थ सर्वत्र समर्पित होते है, का चित्रण भी किसी जयघोष के समान है। अभिप्राय तयः कवि के राम लोकाभिराम है। और लोक मंगल का तराजू धारण करने वाले है। तथा जानकी लोक मंगल के लिए लोक शक्ति की सशक्त प्रतीक है।

अरूण रामायण - कथासार :-

अरूण रामायण हिन्दी वाङमय में अमर ज्योति कृति है। जिसमें भारतीय संस्कृति, साहित्य की चरम उत्कृष्ठता भाषा, भाव, छन्द विधान व समयानुरूपता के तत्व तंत्रो का समुचित समायोजन है। कवि ने अपनी अभिव्यंजना कृति को रामकथा की उदात्त पृष्ठभूमि को परम्परा रूप में प्रस्तुत करके भारतीय संस्कृति की सभ्यता को नूतनता प्रदान की है। कवि की कृति अनुपम कृति बनकर राष्ट्र भाषा को गरिमामय बना दिया है। अरूण जी का यह गौरव ग्रन्थ रामकथा परम्परा को पुर्नजीवन प्रदान करके हिन्दी की प्रतिष्ठा को उत्तुंग शिखर पर स्थापित किया है। इसीलिये कवि की चमत्कृत रचना एक उदात्त रचना है।

अरूण रामायण में रामकथा परम्परा के अनुरूप कवि ने नूतनता के तत्थ-रंगो का विवधिक प्रयोग करते हुए कथा का प्रारम्भ राज्याभिषेक के उपरान्त राज्य व्यवस्था का सुचारू संचालन व प्रजा की प्रसन्नता व साम्रध्यता में अचानक भूचाल बनकर सीता के सम्बन्ध में लोकापवाद प्रसारित होता है। जिसे राम के प्रधान गुप्तचर द्वारा राम को अवगत कराया जाता है। राम का मन विवादमय हो जाता है। और राम विचार करते है कि लोक दृष्टि

तो सदैव शंकालु होती है। अब मेरे मन में शंका हुई, और मैने अग्नि परीक्षा लेने के उपरान्त उसे निवारण किया था। तब यहां की प्रजा वहां नही थी। और यह संशय मई व्यथा आदि आदर्श राज्य में विद्यमान रही तो अवश्य ही हृदय को कष्ट दे अपकीर्ति का कारण बनेगी। यद्यपि राम जानते है, कि सीता सर्वथा पवित्र है, परन्तु जन-मत में व्याप्त इस अपवाद को समाप्त करने हेतु अनिवार्य है। सीता को ही दण्ड देना कदाचित रामराज्य में यह भी एक घोर अन्याय होगा।

''राम के राज्य में होगा यह अन्याय घोर'' [37]

मेरा मन भी व्याथित होगा, और उस व्यथा को मुझे आजीवन भोगना पड़ेगा और रामकथा की व्यथा क्यों न इतिहास व्यथा बनकर करूण नाद करें परन्तु लोकहित याशन के हित मुझे सीता निर्वासिन कर आत्म त्याग करना होगा।

राम मंत्रणा कक्ष पर भाईयों समेत उपस्थित होकर परस्पर सम्बन्धित प्रकरण पर चर्चा करते है। राम वैदेही के त्याग की मत रखते है, तो उपस्थित भाई व्यथा से पीडित होने लगते है।

''मंत्रणा-कक्ष में हुए उपस्थित सब भाई..........

सुन निर्दय राम-वचन, दुस्सह करूणा छाई.........'' [38]

भरत सीता के इस दण्ड का विरोध करते है। लक्ष्मण भी अग्नि परीक्षित सीता को निस्कलंक मानते है और राम के निर्णय का प्रतिरोध करते है। शत्रुघन भी भरत लक्ष्मण की तरह अपनी बात रखते है राम सबकी बाते सुन लेने के उपरान्त राजा राम के कार्य मे हस्तक्षेप को मना करते हुए लक्ष्मण को वन दर्शन के बहाने सीता के निष्कासन का आदेश देते हुए सीता को गंगा तट पर वाल्मीकि आश्रम की सीमा में छोड़ देने को कहते है। जन अभिमत में व्याप्त लोकोपवाद को समाप्त करने हेतु राजाराम के द्वारा पति राम को वेदना मई उत्तर दिया जाता है।

लक्ष्मण वन दर्शनार्थिनी सीता को रथारूढ़ करवा गंगा को पार करते है। और जब लक्ष्मण सीता को निर्वासिन से अवगत करवाना चाहते है, तो शब्द अधरों पर ही अपना दम तोड देते है। आंको से अश्रु प्रवाह होने लगता है, सीता लक्ष्मण के वेदना का कारण सपथ देकर पूंछती है तो उन्हे ज्ञात होता है ''अपना निर्वासिन'' औ वह मूर्छित होकर गिर जाती है। मूर्छा टूटने के उपरान्त वह सोचती है कि क्या मेरा दुर्भाग्य अब भी निरन्तर मेरे साथ-साथ चल रहा है ? लक्ष्मण! क्या स्वामी ने मुझसे नाता तोड दिया है? क्या अग्नि परीक्षा के उपरान्त भी मेरा विश्वास नही है? ''गंगा से प्रश्न करती है कि मै कहां जाऊं? वाल्मीकि आश्रम क्या मेरा प्राश्रय दाता बन सकेगा? क्या महर्षि मेरी आत्मा की वास्तविकता को पहचान सकेगे मुझे सस्नेह रख सकेगे ?''

लक्ष्मण विलाप करते हुए वापस लौट आते है। और सीता अकेले वाल्मीकि आश्रम में जाती है। और प्रवास करती हुई ऋषियों की अमृत वाणी में माता का स्नेह व पिता का प्रेम प्राप्त करती है और दुर्भाग्य को कोसती हुई सोचती है। कि यह कैसा निष्ठुर न्याय था, जिसने आजीवन विरह की तपन दे दिया है फिर भी वह राम के लिये प्रसन्नता की कामना करती है। और ''विरह वेदना को योग की प्रतिष्ठा देती है।''

''अपनी अतुलित पीडा से कभी नही डर री!

योगी की बेटी ! दुख से बढ़कर कौन योग ?'' [39]

तथापि सीता स्वयं को सन्नध्य मातृव्य कर्म के सशक्त माध्यम से वेदना से उभरने का प्रयास करती है। और अपने चिन्तन में अपने समान ही दुखी राम को भी देखती है। और मानसिक सन्देशो के प्रेषण से अपने प्रियतम को कष्टों से उबार कर अपनी कीर्ति पताका को फहराने की प्रेरणा देती हुई, अपनी महाविरह को सार्थक बनाना चाहती है। सीता रामको सत्य के मार्ग पर चलकर महालोक नायक के रूप में कामना करती है। सीता महर्षि के आश्रम में पहुंचती है, महर्षि ने सीता को पहचान लिया था, और विनम्रता पूर्वक सम्मान देकर, सीता की अन्तःकरूणा को पहचान कर सस्नेह पूर्वक कहते है "तुम अति पावन गंगा सी पवित्र है, तथा मेरी तपस्या के कारण तुम यहां आई हो। "मेरे महाकाव्य की दिव्य ज्योति हो......महाकथा हो........मेरी करूणा का उदभव आज पुनः हो रहा है। तुम सत्य कल्पना की आभा एवं अमर वरदायनी हो.........तुम्हारा आश्रम में आना विश्व कल्याण का कारण बनेगा। सीता के लिए महर्षि ने अलग पर्णकुटी का निर्माण करवाते है जहां देवि सीता का आश्रम प्रवास होता है आश्रम और आरण्य की छटा अद्वितीय बन जाती है। सानन्द योग साधना से आनन्दमयी ऋषियों का जीवन आश्रम प्रवास में अपने निजी कार्य सीता स्वयं अपने हाथो से करती है। आखिर चौदह वर्षो का प्रगाढ़ अनुभव उनके पास होता है। और जब स ुध आती है तो एक मुस्कान की रेखा उनके ओठों पर आकर खो जाती है। और अश्रु प्रपात बह जाते है। देवी सीता के स्मृति में ,मन में, वचन में, कर्म में, केवल राम ही होते है। महेर्षि केद्वारा रचित रामायण काव्य का गान सुनकर भी सीता की वेदना और बढ जाती है और सीता की यह वेदना काव्य की रचना का अनुपम स्रोत बनता रहता है इसीलिए भगवान वाल्मीकि ईश्वर को धन्यवाद देते है कि रस वर्षण की अम्बरी स्वयं भगवती सीता का आश्रम पर्दापण हुआ है।

विरहणी सीता माता सीता बन जाती है। दो पुत्रों को जन्म देकर वह स्वयं पर विजय प्राप्त करती है। परन्तु उनकी स्मृति में ऐसा कौन नही था जिसकी सुध उन्हें नही आती है। प्रसव के रात्रि ही आश्रम में शत्रुघन का आगमन होता है। पुत्रोत्सव का आन्नद आश्रम और सम्पूर्ण वन में व्याप्त हो जाता है चंचल गीतो के झकोर वन में बिखरने लगते है और दोनो पुत्रों के स्नेहातीत भाव विभोर होकर बाल कोमल क्रीडा आनन्द में लीन हो जाती है। सीता के मन आंगन में वात्सल्य पुष्प पुष्पित होकर अन्तःमन को अपनी सुरभि से सुरभित करता है। वह मातृत्व तपस्या मे लीन हो जाती है। उनकी विरहाग्नि कम हो जाती है ऋषि ने दोनो बालकों का लव और कुश नामाकरण करते है। दोनो विद्याध्ययरत में लीन होते है। शस्त्र, शास्त्री-शिक्षा अभ्यास शरीरिक व्यायाम, और योग साधना मे नित्य विकास के सोपान तय करने लगते है। वीरता के प्रतीक दोनो बालक सिंह से भी लडाई करने के योग बन चुके थे नित वीणा वादन रामायण गान भाव विभोर होकर करते हुए माता सीता के साथ आश्रम प्रवास करते रहे माता सीता ने पत्नी सीता की विरह पीड़ा को कम करने लगी थी। परन्तु दुःख समाप्त नही होता, समय के बीतने के साथ-साथ पुनः पीडा की तीव्रता बढ़ने लगती है। और विरहणी सीता से एक दिन पुत्र ने पूंछा कि "माता हमारे पिता कौन है ?" परन्तु सीता मौन रहती है वे इसका आशय ये समझते है कि हम पिता विहीन है। दोनो पुत्र महान योद्धा बनते है। शस्त्र शास्त्रों की सम्पूर्ण विधाओं में पारंगत हो जाते है।

इधर राम, भरत राष्ट्र के उत्थान हेतु यज्ञ का आयोजन करने के लिये चिंता से ग्रस्त होते हुए भी ऋषियों मुनियो आदि लोगो को अयोध्या आमंत्रित करते है। दूत चारो दिशाओं में भेजे जाते है। विशाल आयोजन के

लिए पंडालो का निर्माण किया जाता है। धीरे-धीरे यज्ञ का समय निकट आता है। श्रीराम का आमंत्रण पाकर भारत के कोने-कोने से राजा महाराजाओं का आगमन होता है। महात्मा, मुनि, महीप, कलाकार, साधक, आराधक एकत्र होने लगते है।

"देखते-देखते राष्ट्र यज्ञ अव अति समीप
आने लगे महर्षि महात्मा, मुनि, महीप
आने लगे कलाओं के उत्लम् साधक
आने लग गये मंत्र के उन्नत आराधक
मानो आमंत्रित हिमगिर, भारत रत्नाकर
संकल्पित राष्ट्र यज्ञ संस्कृति संकुचित नही!
भारत के विस्तृत भूतल से प्रतिनिधि आए।" [40]

सरयू नदी के पावन तट पर एकत्र राज्यध्यक्षों के झंडे हवा में लहराने लगे। वही पर अपने शिष्यों के साथ महर्षि वाल्मीकि भी आये हुये थे। राम की नगरी अयोध्या एकात्मकता का प्रतीक वन जाती है। गीत संगीत, दर्शन, अध्यात्म, शासन, क्रीडा, विनोद हास परिहास के हर्ष मे असुर विहीन भारत की भूमि गौरवान्वित हो उठती है। संगीत धुन पर गान करने वाले बालको की चर्चा सर्वत्र होती है। जिन्होने अपनी रागनी पूर्ण रामायण गान से जन समुदाय को आनन्दित कर दिया था।

"दो कान्ति मान बालक की चर्चा सभी ओर
उनके रामायण मधुर गान से सब विभोर !" [41]

वीणा की तान, राम का गान उस महोत्सव का उत्सर्ग बन जाता है। सर्वत्र जय-जयकार होती है। उपस्थित समस्त जनसमुदाय उनका परिचय जानना चाहते है। और वह चर्चा ऋषियों मुनियों, नृपों के कुटियों से होती हुई राम के पास भी पहुंचती है। उनकी प्रशंसा सुनकर उनका भी मन सुनने को आतुर हो उठता है। शत्रुघन को भेजा जाता है। जो दोनो को सादर बुला लाते है। उनकी सुन्दरता को देखकर आंखे ठहर जाती है। राम के अन्तः मन में आनन्द की लहर उठती है। भरत और सुमंत्र भी देखते रह जाते है। राम के मतिष्क के सागर में स्मृति का ज्वार उठता है। परन्तु वह चुपचाप देखते रहते है दोनो बालक वीणा के तान पर रामायण के गान से सभा को मंत्र मुग्ध करते है। रामकथा के करूण रस से श्रोताओं के अश्रु प्रवाह वेग से निकलने लगते है। राम भी करूणा से अछूते नही रह पाते है। भरत, लक्ष्मण भी रो पड़ते है। सब के मन मे इस महाकाव्य की रचना के सम्बन्ध में जिज्ञासायें प्रबल होती है।

"किसका यह महाकाव्य? किसकी रचना महान ?
वह कौन महाकवि ? कौन-कौन वह महाप्राण ?" [42]
"................ राम को अमर करने वाला यह व्यक्ति कौन" [43]

राम दोनो गायकों का परिचय पूछते है, वह केवल इतना बताते है कि हम महर्षि वाल्मीकि के शिष्य मात्र है। इतना सुनते ही राम की चेतना में प्रभात का संचार आलोकित होता है। शत्रुघन वाल्मीकि का सादर स्वागत

कर श्री राम के पास लाते है। राम बहुविनय पूर्वक स्वागत करते है। महर्षि राम की जिज्ञासा को जानकर बताते है कि राम लवकुश दोनो सीता के पुत्र है, धीर वीर, बलवान है और मेरे द्वारा लिखी रामायण का गान ये दोनो करते हैं आज अपने इन दोनो पुत्रों को अपना प्राश्रय दो, इनका हाथ गृहण करो। अपनी पत्नी निर्वासिता सीता को भी गृहण करो! वह गंगा से अधिक पवित्र और निर्मल हैं यह बात मै अपने समस्त तप की सौगन्ध लेकर कहता हूं। सीता सी पवित्र नारी इस सम्पूर्ण भूमि पर नही है। और न ही कभी थी, और न होगी। जानकी की स्नेह भक्ति के साक्षी स्वयं हनुमान है- हे राम! कमल की तरह पवित्र सीता को यदि स्वीकार करे तो उन्हे यहां मै लव-कुश से बुलवा लूं।

वाल्मीकि के कथन को सुनकर श्री राम मौन रह जाते है। परन्तु उनके भाई चुप नही रह पाते है। ममता की स्निग्धता से व्याकुल मन आकुल होते है। महर्षि की आज्ञा से लव-कुश सीता को ले आते है। सीता के आगमन के उपरान्त उपस्थित जन समूह मे करूणापूर्ण उल्लास छा जाता है। सीता ने एक दृष्टि से राम को देखा था और फिर एक दृष्टि में सम्पूर्ण जन सागर पर डालकर दूर से ही श्रीराम को प्रणाम किया था। उनकी विनम्रता को देखकर राम करूणा भाव से भर कर कापने लगते है। सीता बोल उठती है, ''यदि मन वचन कर्म से मेरा तन मन पावन और पवित्र हो तो हे मां वसुन्धरा! मुझे अपनी गोद में ले लो। मै अपनी विरह व्यथा से मोक्ष पाऊं।" मेरा कर्म पूर्ण हुआ मेरा दायित्व समाप्त हुआ मै इस एकात्मकता के प्रतीक यज्ञ की पूर्ण आहुत बन जाऊं हे मां अब मुझे अपना लो। मेरे पीछ राम भी मेरे पास अवश्य आयेगे। तदोपरान्त ऋषिवर की रचित रामायण काव्य कथा को धन्यवाद देकर उसे अमर होने का आर्शीवाद देती है।

''हो गई धन्य मैं ऋषि की काव्य कथा सुनकर
वह तब तक भू पर अमर कि जब तक भू-अम्बर।'' [44]

सीता की विनती सुनकर धरा फट जाती है नीचे से प्रकाश आता हुआ भू पर बिखर जाता है। और सीता भूमि पर प्रवेश कर जाती है। राम वाह पकड़ कर रोकना चाहते है परन्तु वह हंसती हुई चली जाती है। सब के मस्तक झुक जाते है। कवि की अभिव्यंजना है कि हे हे राम अब पछताने से क्या होगा-

''हे राम लाभ क्या कुछ अब पछताने से
अब होगा ही क्या प्रभु हे! अश्रु बहाने से '' [45]

कवि ने संवेदना मई शब्दों से कथा को व्यंजित करते हुए लिखा है कि सीता के चरित्र की सुरसरी सदैव प्रवाहित रहेगी, जब-जब रामायण का गान होगा सीता की स्मृति आती रहेगी वह पुराणों की आत्मा बनकर नित नूतन रूप में भारतीय संस्कृति का आदर्श बनकर जन मानष को सुभाषित करेगी।

अरूण रामायण में प्राप्त सीता निर्वासिन की कथा का स्वरूप निर्धारण करते हुए यह सहज ही कहा जा सकता है। कि इसका मूल स्रोत वाल्मीकि रामायण है। किन्तु नव नवोन्मेष सालिनी प्रतिभा के द्वारा रामावतार पोद्दार ने आलोच्य रचना में पुरातन घटनाओं का विन्यास कुछ इस प्रकार किया है कि वे मौलिक प्रतीत होने लगी है। राम का अन्तर द्वन्द्ध भरत आदित भाइयों का प्रतिवाद राम की विवशता सीता की वेदना एवं विवाह से लेकर सीता हरण तक की घटनाओं की स्मिृति सीता की दृढ़ता राम का सांस्कृतिक राष्ट्रीय एकता जन्य चिंतन इस काव्य की छुट-पुट किन्तु सर्वथा नवीन रूप में चित्रित घटनाये प्रमुख है। कथा के रूप में लव-कुश जन्म के समय शत्रुघन की

उपस्थिति अत्यन्त प्रभावी बन पडती है।

कवि ने भारत राष्ट्रहित निजत्व का सर्वतो भावेन समर्पण और उसमें राम की महती भूमि का उनके चरित्र के भव्य एवं उज्वल पक्ष को आलोकित करती है। यही इस कथावस्तु की मौलिक उदभावना है।

कथावस्तु :-

हिन्दी वाङमय की सुदीर्घा में कवि की अरूण रामयाण अपने चरम, नवीन कथा कलेवर से जडित अनमोल रत्न प्रतिभा की भांति प्राज्ञा के सम्मिलित योग में सिमटी भाषा-भाव के साधना एवं तत्व साक्षों का अमरत्व गृहण किये हुए, युग बोध की अमर कृति बन गयी है। कवि ने प्रवासी छन्द विधानो से काव्य ग्रन्थ को विभूषित कर रामकथा मे सीता निर्वासन की कथा को नवीनता से संवार कर गरिमा मय बना दिया है।

रामकथा अनन्त है, रस और आनन्द का अथाह उदधि है, जिसमें डूबकर मन आनन्द विभोर हो जाता है। कवि की उदात्त रचना नूतनता के नवीन परिधानों से सुसज्जित भावो की चैतन्यता से भरी हुई अमृत की सरस मन्दाकिनी बन गई है। अभिव्यक्ति का मृदुल प्रयास कथावस्तु को सारगर्भित बना देता है। कथा का प्रारम्भ कुशलता पूर्वक राज्यकार्य संचालन सीता के चारित्रिक अपवाद की सूचना प्रधान गुप्तचर के माध्यम से राम को प्राप्त होती है। राम चारों भाइयों में परस्पर मंत्रणा करके अपने मत अनुरूप निर्णय से लक्ष्मण के द्वारा सीता को गंगा के तट पर छोड देते है। दुःखी सीता वाल्मीकि आश्रम में पहुंचती है। महर्षि वाल्मीकि सीता का बहु विधि अभिनन्दन कर प्रबोधित करते है एवं आश्रम में ही प्रवास करने का प्रबन्ध करते है। जहां सीता दो पुत्रों की माता बन जाती है। लवणासुर के बध करने हेतु जाते हुए शत्रुघन भी पुत्रोत्सव में सम्मिलित होते है। दोनो पुत्रों की शिक्षा दीक्षा एवं गायन शस्त्रों की शिक्षा से पारंगत हो जाते है। अयोध्या में यज्ञ का आयोजन किया जाता है। वाल्मीकि दोनो पुत्रो व सीता को लेकर यज्ञ में सम्मिलित होते है। लव-कुश कर्ण प्रिय रामायण का गानकर जन सामान्य के माध्यम से राम को प्रभावित करते है राम दोनो का परिचय पूछते है। वह अपने को वाल्मीकि का शिष्य बताते है। वाल्मीकि को बुलाया जाता है। वह लव और कुश को सीता के पुत्रों के रूप में दोनो का परिचय देते है। लव-कुश के द्वारा सीता को बुलाया जाता है। सीता राम के सामने आते ही दूर से प्रणाम करती है। वाल्मीकि सीता की पवित्रता का साक्ष्य अपने तप की सौगन्ध खाकर देते है। सीता भी अपनी पवित्रता हेतु सौगन्ध खाती है एवं अपने लिये पृथ्वी माता से शरण मांगकर उसमें समा जाती है। राम पछताते रह जाते है कवि की कथावस्तु पौराणिक प्रमाणों से आबद्ध सीता निर्वासन कथा परम्परा में अपवाद की सूचना प्रधान गुप्तचर से प्राप्त होना, राम के द्वारा अपने तीनो भाइयों से मन्त्रणा, सीता निष्कासन हेतु लक्ष्मण को आदेश करना, लक्ष्मण का सीता को रथारूढ़ करा गंगा तट पर छोडना, सीता द्वारा लव-कुश का जन्म देना, अयोध्या में अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन लव-कुश का रामायण गान, वाल्मीकि द्वारा सीता की पवित्रता की पुष्टि तथा सीता के द्वारा अपनी पवित्रता की पुष्टि, एवं पृथ्वी प्रवेश आदि आधिकारिक कथाएं है।

सीता का गंगा से अपनी व्यथा का गान, सीता वाल्मीकि का संलाप, शत्रुघन का आश्रम आगमन, पुत्रोत्सव-वर्णन लव-कुश का नामाकरण संस्कार आदि प्रासंगिक कथायें है।

राम के मन की शंका अग्नि परीक्षा वाल्मीकि के कवि बनने की घटना में क्रौंच पंक्षी के वध का वर्णन आदि पारम्परिक घटनायें है।

अपवाद से राम की वेदना, लक्ष्मण की उत्तेजना, भरत का विरोध, निष्कासन ज्ञात होने पर सीता का मूर्छित होना, वन में चौदह वर्ष रहने का अनुभव आदि की घटना नवीन रूप में विन्यस्त है।

कथा में प्रमुख घटनाओं के तथ्य सीता लोकोपवाद की सूचना गुप्तचर से प्राप्त होना, वन विसर्जन के लिए दर्शन के बहाने लक्ष्मण का सीता को लेकर जाना आदि प्रमुख घटनाएं है।

अरूण रामायण में रामकथा के पूर्ववर्ती रामकाव्य के पारम्परिक इतिहास से कथा तथ्वों को संकलित करके कवि ने सीता निर्वासिन कथा की यथा साध्य मर्यादा, मधुरता का समावेश करते हुए नवीनता की शील सजग रस मय गंगा का उन्मुक्त प्रवाह बनाकर ज्ञान, भक्ति, कर्म और अध्यात्मिक उद्घोष से विश्वमानव चेतना में रामकथा का सांस्कृतिक संदेश प्रस्तुत किया है।

कवि की मौलिक उदभावना मे राम की निर्णय शक्ति से उनके मुखर अन्तस के विचार जो भविष्य के मानव का कथन बनेगे। वेदनामयी अन्तस में असीम निर्णय शक्ति की अभिव्यक्ति एवं सीता की करूण गाथा का मौलिक चित्रण व्यजिंत करते हुए सीता विरह पथ की पथिका होते हुए भी अपने राम के निरन्तर साविध्य में रहकर उनसें बल और सबल प्राप्त कर करूणा से विचलित नही होती है। यद्यपि आदर्शो की प्रेरणा प्रेषित करती है। सीता राम की कीर्ति पाताका को फहराने हेतु सत्य-व्रत मार्ग पर चलती हुई, राज्य में समरसता एवं आनन्द का मुखर संदेश प्रेषित करती है। जिससे भारत भूमि के नरो नारियो के जीवन में प्रेमरस का प्रवाह उन्मुक्त रूप से प्रवाहित होकर जीवन उत्कर्ष का प्रतीक बन जाये।

भारत राष्ट्रहित निजत्व का समर्पणमयी अभिव्यंजना में सीता चेतना शक्ति का प्रतीक बनकर प्रस्तुत हुई है जो अपने समर्पण के माध्यम से स्वात्म चेतना के माध्यम से राम को निजता के परिधि से हटाकर समग्र भारत भूमि पर, मानवता चरित्र अध्यामिक तथा सत्य मार्ग पर दृढ़ता के साथ चलने की प्रेरक संदेश वाहिका बनकर राष्ट्र निर्माण की चेतना और लोकतंत्र की आदर्श संस्थापिका बन गयी है। वही पर राम के द्वारा अमिट आपेक्ष में अपनी छाती पर पत्थर रखकर जनतंत्र को समुचित उत्तर प्रस्तुत करने हेतु अपनी व्यथा को सहते भी आदर्शो को सम्पूर्ण प्राश्रय प्रदन्त करते है। अर्थात कवि का राम संशय प्रश्न को निरूत्तर करने के लिए की जन-मन मुदित हो, तथा राजा के निर्दोष धर्म का प्रतिपालन भी हो जाये। व्यक्तिगत कष्टों को सहने वाले राम अमृत प्राप्ति के लिए गरल का पान करते है। जिससे विश्व मानव चेतना में इतिहास का शास्वत प्रवाह का पवित्र स्पन्दन कर्तव्य की सजकता को राज्य धर्म की प्रेरणा को पावन प्रश्वास बन जाय।

कवि के द्वारा चिन्तन निष्कर्ष के अनुरूप कथा चरित्रों के प्रतीकार्थ प्रसंगो को समाविष्ट करते हुए मर्यादा लोक कल्याण आदि का सजग और स्पष्ट वर्णन है।

अरूण रामायण में रामकथा के सीता निर्वासिन कथावृत्त सनातन तथ्यों से परिपूर्ण कथा तथ्य युगानुरूप तुलसीकृत रामचरित मानस के अनुरूप काण्ड बध्य मर्यादा पुरूषोत्तम की चरित्रिक महिमामयी प्रसंगो से एक सार्थक रचना की है। कवि ने कल्पना शक्ति के उपयोग से आदि कवि महर्षि वाल्मीकि गोस्वामी तुलसीदास आदि प्राचीन और अर्वाचीन कवियों का अनुशरण करते हुए अपनी मौलिक रचना प्रस्तुत की है।

कथा के स्रोत, मौलिक उदभावनाए एवं घटनाओं का स्वरूप :-

वाल्मीकि रामायण में प्राप्त सीता निर्वासन की कथा प्रस्तुत करते हुए यह कहा गया था कि यह मूल कथा प्रक्षिप्त है। सीता निर्वासिन की कथा के मूल में वाल्मीकि की ये कथा है। परिवर्ती कवियों ने कुछ घटनाओं की रचनाकर इस कथा को विश्वसनीय बनाया है। क्योकि **जार्ज सतायना** ने कहा है यदि वस्तु के मिथ्याति की प्रतीति हमें होती रही तो व्यर्थता और छल का विचार हमारे अन्तर में खटकता रहता है जिससे सारा आनन्द चौपट हो जाता है फलतः समस्त कथा सौन्दर्य विलुप्त हो जाता है।

उपर्युक्त काव्यों में जिन घटनाओं का विन्यास किया गया है उनमें सीता का निर्वासन उसके मूल कारण लक्ष्मण एवं सीता का वन गमन सीता से वाल्मीकि की भेट, वाल्मीकि आश्रम में सीता का निवास लवकुश का जन्म लालन पालन शिक्षा दीक्षा राम का अश्वमेघ यज्ञाश्व रक्षार्थ सेना के साथ लवकुश युद्ध एवं उनकी विजय रामदरबार में कुशीलवों द्वारा रामकथन का गायन सीता के सतीत्व के प्रमाण मे सीता की सौगन्ध, भूमि मे विवर प्रवेश राम का असफल प्रयास अथवा सुखान्त कथा के रूप में सीता राम के मिलन की प्रमुख घटनायें आती है।

आधिकारिक कथा के रूप मे सीता निर्वासन वन गमन सीता वन गमन सीता सौगन्ध की घटनाये प्रमुख है। प्राशंगिक घटनाओं में रजक प्रसंग लक्ष्मण भरत का आक्रोश लवकुश का पालन पोषण प्रमुख घटनाऐ है। उक्त घटनाओं को कवियों ने युगान्तुकूल परिस्थिति के अनुरूप कथा के रूप में अभिव्यक्त किया है। इस सम्पूर्ण कथा क्रम की विश्वसनियता के लिए सीता निर्वासिन के स्वरूप का विश्लेषण यहा किया जा रहा है।

दोहद के रूप मे सीता का वन गमन :-

वाल्मीकि रामायण में (7/46/2) एवं उत्तर रामचरित के प्रथम अंक में "सीता के वन गमन के रूप मे दोहद की चर्चा है।" वैदेही वनवास में सीता के समक्ष प्राकृतिक सुषमाजन्य अह्लाद की चर्चा करते है। [47] रामराज्य में सीता कहती है-

"देव मेरा मन उसी वन सम्पदा में रम रहा है।
दिव्य दर्शन उस तपोवन भूमि में मन लग रहा है।।" [48]

लवकुश युद्ध मे राम के पूछने पर सकुचित हो करके सीता अपना दोहद इस प्रकार व्यक्त करती है कि मै ऋषि पत्नियों को कुछ भेट देने वन जाना चाहती हूं।

"इच्छा ऐसी चाहती भेट करू कुछ जाय।
हो आऊ मै किसी दिन दो आज्ञा हर्षाय।।" [49]

अग्निलीक मे उत्तर रामचरित के अनुरूप सीता गर्भावस्था की पूर्णता को प्राप्त कर चुकी थी। [50]

लोकोपवाद एवं रजक प्रशंग :-

लोकपवाद की सबसे पहले चर्चा वाल्मीकि रामायण में है भद्र राम को सीता के कारण हो रहे लोकापवाद और जनता के आचरण पर पडने वाले कुप्रभाव का उल्लेख है।[51] एवं उत्तर रामचरित के प्रथम अंक में दुमुख द्वारा लोकोपवाद चर्चा का उल्लेख है। वैदेही वनवास में गुप्तचर की चर्चा है। वह राम के समक्ष क्रुद्ध रजक के वक्यतब्य और जनता में फैल रहे अविस्वास की चर्चा करता है।

"आदि में थी यह चर्चा अल्प कभी कोई कहता यह बात

और कहते भी वे लोग जिन्हे था धर्म मर्म अज्ञात

अब नगर भर में वह है व्याप्त बढ़ रहा है जन चित्त विकार

जनपदों ग्रामों में सब ओर हो रहा है उसका विस्तार।। [52]

रामराज्य मे मणिभद्र द्वारा सीता के तन पर रावण के पंफिल चिन्हो का उल्लेख किया जाता है।

''सीता के तन पर पूर्ण छाप, रावण के पंफिल चिन्ह आज।

साम्राज्ञी सीता वही भ्रात रघुवर की प्रियतम बनी आज।।'' [53]

प्रिया या प्रजा तथा लवकुश युद्ध में गुप्तचर की ही चर्चा है। जिसके मूल में धोबी का वृतान्त है-

''पर मै ऐसा न करूंगा, तू अब चाहे जहां चली जाये।

छुटटी मै तुमको देता हूं तू मेरे घर न कभी आये।।

वे रामचन्द्र महराज है, र्निदोशी सदा कहायेगे।

हमे धोबी नीच जाति वाले, बस निन्दनीय पद पायेगे।।'' [54]

अरूण रामायण मे यह लोकापवाद सन्देह के रूप मे व्यक्त है-

लंका मे अग्नि परीक्षा लेकिन यहां कहा ?

पुरवासी अग्निपरीक्षा बेला थे न वहां।'' [55]

प्रवाद पर्व मे प्रतीकात्मक रूप से तर्जनी उठाने की चर्चा नरेश मेहता ने की है-

''राम !/आज फिर/एक साधारणजन ने/तुम्हारी राजसी गरिमा

और चरित्र मर्यादा की ओर अपनी अनाम तर्जनी उठायी है।'' [56]

अग्निलीक में प्रतीकात्मक ढंग से नाटय बिम्ब द्वारा दुर्मुख के कलंक की चर्चा है जिसमे सीता निर्वासन के रूप मे राज्य का मूल्य चुकाया गया है। [57]

इसके विपरीत जन्म बौद्ध धर्म की कथा के अनुसार आचार्य तुलसी ने रावण चित्र की चर्चा की है। पउम् चरियम् में इस कथा का स्त्रोत ढूंडा जा सकता है। आचार्य तुलसी ने रानियों द्वारा रावण के चित्र देखने की अभिलाषा प्रकट की जाती है। सीता इनके षडयन्त्र को न समझकर रावण के चरणों का चित्र बनाती है। रानियां द्वेष वश पूजा अर्चना की सामग्री रख राम को दिखा उनके मन में सन्देह के बीज का वपन करती है-

''रावण के से ये पैर यहां विस्मित हो, बैठे पूछ आर्य।

हम क्या जाने यह तो प्रभु की प्रिय पटरानी का नित्यकर्म।। [58]

रामादिक भाइयों का आक्रोश :-

वाल्मीकि रामायण एवं उत्तर राम चरित मे उक्त प्रसंग का आभाव है। मनोविज्ञान की अवधारणाओं के विकसित होने पर अन्तरमन की ध्वनि को आधुनिक हिन्दी के कवियों राम, लक्ष्मण, भरत एवं माताओं के आक्रोश को मुखरित किया है। लोकापवाद को सुनकरके व्यथित राम सोचते है-

''क्यो टले बढा लोक अपवाद इस विषय मे है क्या कर्तव्य।

अधिक हित होगा जो हो ज्ञात बन्धुओ का क्या है वक्तत्य।।'' [59]

नरेश मेहता इड इगो, सुपर दूगों जैसी मनोवैज्ञानिक धारणाओं के अनुसार राम की अन्तरव्यथा व्यक्त की गई है। वे इसे प्रतिकात्मक रूप में राज्य की सामूहिक आकांक्षा और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता मानते है-

"उसे तत्वदर्शी भी होने दो/राजभवनों और राजपुरूषों से ऊपर/राज्य और न्याय को
प्रतिष्ठत होने दो भरत यदि ये तत्वदर्शी नही होते तो एक दिन
निश्चय ही ये भय के प्रतीक बन जाएगे और तब कौन इसमे प्रजा बनकर रहना चाहेगा
राज्य को सामूहिक आकांक्षा का/प्रतीक बनने दो भरत! प्रजा के भी अधिकार होते है !
लक्ष्मण/ गूंगेपन से कही क्षेयस है / वाचालता /जिसदिन/ अभिव्यक्तिहीन हो जायेगा
वह सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण दिन होगा/ कैसा ही इतिहास पुरुष क्यों न हो/लक्ष्मण!/
सामाजिक भाषाहीनता /अभिव्यक्ति की इतिहासहीनता का सामना। [60]

इस जनापवाद को सुनकर सबसे अधिक उद्वेलित लक्ष्मण हुऐ क्योकि वे ही सीता के करूण सौन्दर्य की दिव्य झाकी और उनके पूत चरित्र के एक मात्र साक्षी रहे है। अतः उनका आक्रोश स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक भित्त पर आधारित है। इस आक्रोश में क्रोध अमर्ष रौद्र और वीरता का सम्मिश्रण है -

"आह ! वह सती पुनीता हैं । देवियों सी जिसकी छाया ।।
तेज जिसकी पावनता का / नही पावक भी सह पाया ।।
सँभल कर वे मुँह को खोले / राज्य में है जिनको बसना ।।
चाहता है यह मेरा जी । रजक की खिचवालू रसना ।।" [61]

प्रवाद पर्व मे कवि ने भरत की भावनाओं को भी वाणी दी है जिसमे न्यायाधिकार की विशेष चर्चा है।[62] इसी परिपेक्ष्य मे अग्निलीक मे जन सामान्य के रूप मे रथवान की व्यथा इस घटना को एक नया रूप दे देती है। वह कहता है-

"हम लोग मर नही गये थे/एक पगले की बात तो सुनी गयी
पर सारी प्रजा को अंधेरे मे रखा गया
अगर हमें उस समय पता चल जाता/तो क्या आप सोचते है/यह दुर्घटना हो पाती ?
पर राज्य के मोह मे डूबे/महाराज को हमारा ध्यान ही नही आया! " [63]

सीता का वनगमन :-

वाल्मीकि रामायण से लेकर सीता निर्वासन सम्बन्धी सभी रचानाओं मे कथानक रूढ़ के रूप मे लक्ष्मण के साथ सीता के प्रस्थान का वर्णन है-
वाल्मीकि में लक्ष्मण तपोवन दिखाने के बहाने वाल्मीकि आश्रम के समीप सीता को छोड देते है। ऐसा ही उल्लेख उत्तररामचरित के द्वितीय अंक मे भी है। हिन्दी के आलोच्य काव्यों मे इस घटना का बहुविधि वर्णन है लवकुश युद्ध में प्रस्थान के पूर्व अपसकुन का भी उल्लेख है-

"सीता की जब आंखी फड़की भयभीत हुई बोली ऐसे
क्यो लवण आज है क्या कारण असुगन होते है यह कैसे।" [64]

जबकि वैदेही वनवास में राम के लोकाराधन की चर्चा है-

"करूंगा बड़े से बडा त्याग, आत्म-विग्रह का कर उपयोग।"

हुए आवश्यक जनमुख देख। सहूंगा प्रिया असहा-वियोग।" [65]

रथारूढ़ लक्ष्मण जानकी को गंगा के उस पार छोड़ते समय उनके निर्वासन की जब चर्चा करते है तो सीता आमर्ष से अपनी त्याग और लोकापवाद की चर्चा करती है-

"मम हृदय उद्विग्न भावावेश में है, क्या दया के धाम घट-घट प्राण में है?

क्यो चरण रज अंत मे मैं छू न पाई, बात क्यो वन की प्रभु मुझसे छिपाई?" [66]

अरूण रामायण मे सीता के गंगा पार कराने के लिए नाव के प्रबन्ध करने का उल्लेख है। अपने निर्वासन के आदेश को सुनकर सीता अपने मन से प्रश्न करती है किये गर्भभार किसका है यदि राम का नही है तो सीता गंगा मे क्यो न कूद पड़े-

"मै किसकी पत्नी हूं ? किसका यह गर्भ-भार ?

मेरे भीतर प्रकाश है अथवा अन्धकार

यदि पुत्र हुआ तो वह किसका होगा सुपुत्र ?

स्थाई तो है मेरा उनका सम्बन्ध-सूत्र?

सीता यदि उनकी नही किसी की नही कभी,

क्या कूद पडूं मैं गंगा मे सौमित्र अभी?" [67]

गंगा मे कूदने की चर्चा सबसे पहले उत्तररामचरित के चतुर्थ अंक मे है।

सीता का वाल्मीकि से भेट :-

वाल्मीकि रामायण के अयोध्याकाण्ड मे राम सीता वाल्मीकि से भेटका वर्णन है जबकि सीता परित्याग के समय सीता वाल्मीकि के समक्ष अपना परिचय देती है। इसी आश्रम में लवकुश का जन्म होता है। इन घटनाओं को आधुनिक काल के कवियों ने यत् किंचिद परिवर्तन के साथ प्रस्तुत किया है। उत्तररामचरित मे भी लक्ष्मण ने आश्रम के समीप ही छोड़कर आते है। वैदेही वनवास में आश्रम के भव्य,उदात्य प्राकृतिक सुषमा का वर्णन करते हुए वाल्मीकि आश्रम में आश्रय लेने की चर्चा है। सीता वाल्मीकि के समक्ष अपना निवेदन करते हुए कहती है-

"ऐसी है भवदीय कि मैं संदिग्ध हूं, क्यो वियोग-वासर व्यतीत हो सकेगे।

किन्तु कराती है प्रतीत धृति आपकी, अंक कीर्ति के समय-पत्र पर अंकेगे।।" [68]

जबकि लवकुश युद्ध के कवि ने आश्रम के समीप ही सीता को छोड़कर लक्ष्मण की जाने की चर्चा है-

"वाल्मीकि मुनि का यही, कही पास प्रस्थान।

चली वही जाना तुम्हें होगा सुख महान।।" [69]

ऐसी ही चर्चा रामराज्य मे रामप्रकाश शर्मा ने की है-

"उस पार मैथिली को तट पर पहुंचाया।

लक्ष्मण का डर फिर फूट-फूट कर गाया।।" [70]

आचार्य तुलसी ने सीता को जंगल में छोडने का ही उल्लेख किया है। जहां उसे भामण्डल अपने साथ ले जाता है। अग्निलीक में यह प्रशंग किंचिद् परिवर्तन कर लिखा गया है। यह परिवर्तन मनोवैज्ञानिक भित्त पर आधारित है सीता वाल्मीकि आश्रम में आकर नितान्त अशप्रप्त अपनी ही दुनिया मे खोई रहती है चिन्तन करते-करते कभी मूर्छित हो जाती है। देवी कौशिकी कहती है। इस तरह से अपने मन का बंद रखना ठीक नही है-

''इस तरह अपने मन को बंद रखना ठीक नही
मैने कितनी बार तुमसे कहा है/तुम्हारे मन मे जो कुछ हो सब बता दो
कह डालने से जी हलका हो जाता है/पर तुम्हे यहां आये बरसों हो गये
फिर भी तुम हम सबसे अलग और दूर इस सारे परिवेश से नितान्त असंपृक्त
अपने ही किसी संसार मे खोयी रहती हो
कभी कभी मेरे मन मे ढेरो प्रश्न उठते है तुम कौन हो, कहां की हो
क्या तुम्हारा कही भी कोई नही/ कोई सगा संम्बन्धी कोई परिवार,कोई मित्र बंधु
पर तुम कुछ बोलती ही नही/और तुम्हारे मन के भाव
बाहर कोई पथ न पाकर तुम्हारी चेतना मे खलबली मचाते है
और तुम्हारे तन मन को क्षीण करते रहते है। [71]

लवकुश जन्म :-

वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड चतुर्थ सर्ग में कुशी लव की चर्चा है। जबकि उत्तरकाण्ड में वाल्मीकि आश्रम में दो पुत्रो का जन्म देने का वर्णन है। इन्ही पुत्रों का लवकुश नाम रखा जाता है। वाल्मीकि के शिष्य बनकर लवकुश रामाश्वमेघ के अवसर पर रामायण का गान करते है। उत्तरराम चरित मे कहा गया है सीता अलह प्रसव वेदना के कारण गंगा में कूद पडती है वही दोनो पुत्रो की उत्पत्ति होती है। पृथ्वी और गंगा दोनो उन्हे अधोलोक में पहुंचा देती है। जहां उनका पालन पोषण होता है। दूध छूटने के पश्चात गंगा देवी स्वयं इन बालको को वाल्मीकि आश्रम भेज देती है। अरूण रामायण में बालकों के जन्म के समय कवि ने माता का वात्सल्य आश्रम वासियों का हर्षोल्लास और सीता के काइक वाचिक सात्विक अनुभओं का भावपूर्ण वर्णन है-

''ऋषि वाल्मीकि की उर प्रसन्नताएं अछोर
आश्रमवासी के तन-मन मे हर्षित हिलोर
वन-वनिताओं मे गीतों के चंचल झकोर
पुत्रोत्सव का आनन्द विपिन मे सभी ओर
माता ने सुत को दूध पिलाया प्रेम सहित
उस क्षण उसकी आंखे, आंखो पर स्नेह नमित
पहला चम्बन ने चन्द्र-फूल को क्या न कहा!
अधरों का अमृत अधर पर झरने लगा अहा,
दोनो के दोनो फूल गए छाती से/सीता आलोक्ति दो-दो अपनी बाती से। [72]

वैदेही वनवास मे लवकुश जन्म नामकरण संस्कार शिशुओं की क्रीडाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। नामकरण संस्कार शत्रुघन के उपस्थित होने पर होता है-

"नामकरण संस्कार किया जब हो चुकी
मुनिवर ने यह आदर महिजा से कहा।।
पुत्रि जनकजे उन्हें प्राप्त वह हो गया।
रविकुल-रवि का चिरवांछित जो फल रहा।।" [73]

राम का अश्वमेघ एवं लवकुश युद्ध :-

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड मे अश्वमेघ के अवसर पर राम सीता को बुलाते है। भवभूति ने अश्वमेघ यज्ञ की चर्चा पंचम अंक में है। कवि ने अश्व के रक्षक के रूप में लक्ष्मण पुत्र चन्द्रकेतु का उल्लेख किया है जिनसे लव का युद्ध होता है। इस युद्ध की चर्चा सीता निर्वासिन सम्बन्धी अनेक काव्यों मे की गयी है। लवकुश युद्ध के कवि जगदीस प्रसाद तिवारी ने इस घटना का विस्तृत वर्णन किया है। मूलरूप से पउमचरित्र (97-100 पर) आनन्द रामायण मे इस घटना का मूल स्त्रोत सुरक्षित है। इन्ही से प्रभावित होकर जगदीश प्रसाद तिवारी ने वीर, रौद्र रस का परिपाक सुन्दर रूप मे किया है। ब्रम्ह हत्या के शाप मोचन के फलस्वरूप राम अश्वमेघ यज्ञ करते है। यज्ञाश्व के मस्तक पर लिखी पट्टिका को देख कुश को क्रोध आ गया उसके रक्षक शत्रुघन से उनका भयंकर युद्ध होता है। वाद मे लव भी मिलकर राम सेना का पराभव करते है। पराजित एवं मूर्छित सेना को जनक नन्दिनी अपने सतीत्व से जीवित करती है। कवि ने रौद्र रस का वर्णन करते हुए लिखा है-

"बढ़ आयो क्रोद्ध यकायक जब वह स्वर्णपत्र पढ़ लिया सभी
शत्रुघन कौन सेनापति है बोले उनको देखना अभी।।
देखूंगा वे कैसे मुझसे आकर के अश्व छुडाते है।
रघुवंश अंश से काम नही है पडा गर्व दिखलाते है।।". [74]

लवकुश के रण कौशल का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है-

"अब लव कुश दोनो शत्रुसैन्य पर ऐसे बांण चलाते है।
जिससे मूर्छित होकर सैनिक सब धरणि पडे दिखलाते है।
यह दशा देख आकर सम्मुख शत्रुघन वहां बोले वानी
तुम दोनो ही किसके बालक जा हो पूरण रण के ज्ञानी।।" [75]

प्रिया या प्रजा के कवि गोविन्द दास ने भी लवकुश युद्ध की संक्षिप्त चर्चा अपने काव्य में की है। अग्निलीक में इस प्रशंग का दूसरा पक्ष चित्रित किया गया है। जो सर्वथा मौलिक और मनोवैज्ञानिक तथ्यों से भरा है। रामाश्वमेघ की चर्चा सुनकर सीता उद्वलित हो जाती है। क्योकि यह यज्ञ राम की उच्च्व महत्वाकांक्षा का प्रतीक है। राम के दिग्विजय का अभियान उनकी ह्रदयस्त आसागरा पृथ्वी को बांहो मे समेटने का प्रतीक है। इस अभियान मे सीता को प्रजा का हाहाकार सुनाई देता है। कवि ने लिखा है-

"सब जानते है कि इस चतुरंगिणी सेना को

कही कोई विध्य, कोई बाधा, कोई चुनौती नही मिलेगी
भला किसमे साहस है कि इन महारथियो को ललकारे
धनुर्धारियों, खडगधारियों, सेलधारियों की पांत पर/पात
जिनके आगे पीछे रथारोही, अश्वरोही और/गजारोहियो के गुल्म
और फिर बीच बीच मे दुन्दुभी, भेरी, मृदंग, मुरज/ पटह, तूर्य
और वंशीवादकों के दल के दल
जय-जयकार, चिघाड़, गरज, हिनहिनाहट और रण
वाद्यो के स्वर मिलकर/दिग्दगन्त को कपा देते है/
जब वे चलते है तो लगता है उत्साह का समुद्र उमडा रहा है
जो रोकेगा वही काल का ग्रास बन जायेगा।'' [76]

सीता उद्वलित होकर कहती है-

''क्या तुम्हें इस तुमुल विजय निनाद के नीचे कराहता
अपनी प्रजा का हाहाकार सुनायी नही देता?
क्या तुम जानते हो/कि तुम अश्वमेघ के नाम पर/पाप कर रहे हो?
क्या तुम्हारा यह अटल प्रण है
कि तुम कभी सही समय पर सही काम न करोगे?।'' [77]

कथा का उपसंहार :-

वाल्मीकि रामायण दुखान्त रामकथा का प्रतिपादन करती है। राम के आग्रह पर वाल्मीकि के साथ सीता राम सभा में पहुंचती है। सीता अपनी सौगन्ध इन शब्दों में व्यक्त करती है।-

''यथाहं राघवादन्यं मनसपि न चिन्तये।
तथा में माधवी देवी विवर दातुमर्हति।।
मनसा कर्मणा वाचा यथा राम समूर्चये।
तथा में माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।।
यथैतत् सत्यमुक्तं में वेद्यि रामात् परं न च।
तथा में माधवी देवी विवरं दातुमर्हति।।'' [78]

परिणाम स्वरूप पृथ्वी विवर से निकले दिव्य सिंहासन पर बैठ सीता भूमि में प्रविष्ठ हो जाती है। जबकि उत्तर राम चरित में प्रजा के समक्ष अरून्धती के आग्रह से राम लवकुश सहित मिलते है। सुखान्त कथा समापन तथा दुखान्त रूप में कथा का वर्णन है। वैदेही वनवास में शम्बूक वध हेतु पंचवटी पहुंचे राम के समक्ष अतीत काल की स्मृतियां का चित्रांकन करते हुए राम सीता मिलन की चर्चा की गयी है। अश्वमेंघ प्रकरण पर उपस्थित जन, मुनि, संत, महन्तों के सम्मुख सीता राम के दर्शन करती है और वही दिव्य ज्योति में परिवर्तित हो जाती है। यह समापन कवि ने नारी स्वाभिमान की रक्षा हेतु किया है। क्योकि आज की बौद्धिक नारी के समक्ष सतीत्व

परीक्षा उसकी अस्मिता का अपमान है। लवकुश युद्ध में दुखान्त कथा का वर्णन इस प्रकार किया गया है-

"तज दिये प्राण सीता जी ने पति के चरणों मे पडी वही।
बस शोकातुर हो रामचन्द्र देखते रहे सब खडे वही।।" [79]

प्रिया या प्रजा के कवि गोविन्ददास विनीत ने इस कथा को सुखान्त बनाया है। सीता अपने सतीत्व से रामसेना को संज्ञायुक्त करती है। तभी उपस्थित जन समूह सीता के सतीत्व की साक्षी देकर राम से सीता अपनाने का आग्रह करते है-

"जयति जानकी" इन शब्दो से, सहसा गूंज उठा आकाश
सुर, नर, मुनि ने कहा एक स्वर- "सीता को अपनाओ नाथ।
इनकी सती-शिरोमणिता के, हम साक्षी है निमि के साथ।।"
"एवमस्तु" कह कर राघव ने, किये पूर्ण त्रिभुवन के काम।
रहे एक गति होकर दोनो, यथा पूर्व श्री सीताराम।।" [80]

रामराज्य के कवि रामप्रकाश शर्मा ने दुखान्त कथा का प्रतिपादन किया है। रामाश्वमेंघ के समय राम के पास में कंचन सीता की प्रतिमूर्ति और लवकुश द्वारा रामकथा के गायन का उल्लेख किया है। वाल्मीकि के साथ आगता सीता ने पृथ्वी से शरण मांगी और उससे निकली तेज अंत में सीता के रूप में धरती में समा गया। सीता की शपथ का उल्लेख इस प्रकार हुआ है-

"यदि सत्य कि/मेरे मन में निशदिन बसे राम-
भूमा जननी! वक्षस्थल को निदान/यदि सत्य कि
रसना रहती निर्शादन राम नाम,/भूमा जननी!!
निज अंक खोल/मिल गया लोक का तत्व ज्ञान
यदि सत्य कि/कर्मो के साक्षी हैं कौशलेन्द्र/भूमा जननी!!!
फूट जा नितांत/मै आज समाऊं/प्रभु पर धरकर जीत हार।
निःशब्द गगन/राघव प्रशांत/फट गई धरा, फूटा धरणी से तेज.....तेज....।" [81]

अरूण रामायण में अश्वमेंघ प्रकरण का एक नया रूप दिया गया है। भारत राष्ट्र रक्षा हेतु आयोजित उत्सव में आसेतु हिमालय के ऋषि मुनि के समक्ष कुशी लवों द्वारा रामकथा का गायन किया जाता है। इसी समय सीता उपस्थित होकर अपने सतीत्व की चर्चा और भूमि विवर में समा जाती है-

"वैदेही की विनती सुन कर फट गई धरा
नीचे से आता सा प्रकाश भू पर विखरा
क्षण में ही सीता समा गई भू के भीतर
राम ने पकड़ना चाहा उठकर उसका कर
पर, हंसती सीता हंसती हंसती चली गई
हो गई धरित्री, धरा-सुता वह स्नेहमयी।" [82]

अग्निलीक में सीता द्वारा सतित्व प्रमाण के सन्दर्भ में एक लम्बा संवाद सीता और वाल्मीकि के मध्य दिया गया है। विद्रोहणी सीता कहती है-

"कि मै उनके साथ जाऊं/और अश्वमेघ यज्ञ के लिए एकत्र
ऋषियों, साधुओं, पण्डितों, राजपुरूषो और प्रजा जनों के सामने
अपनी पवित्रता सिद्व करूं/मै अयोध्या की महारानी, राम की परिणीता
मै आंखो में आंसू भरकर आंचल पसारकर/अपने स्वामी के चरणों पर सिर रखकर
अपने पुत्रों की सौगन्ध खाकर कहूं कि मै पवित्र हूं।" [83]

अपमानिता सीता राम पर अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति में सभी को साधन बनाने कि चर्चा करती है। क्या सीता ने इसी के लिए वाल्मीकि आश्रम में सोलहवर्ष तक जीवित रही और अन्त में लवकुश के रोकने पर भी सीता खड्ड से कूद गयी-

"ओह, हम दोनो हक्के-बक्के/खड्ड के कगार पर खडे बिलखते रह
और मां/नीचे/बहुत नीचे मानो धरती के अतल में समा गयी!" [84]

सीता के इस त्याग से राम जागृत होते है। देर से ही सही सीता की अग्निज्वाल में राम ने अपने जीवन की आहुति भी चढ़ा दी।

पारम्परित कथाओं से भिन्न जैन रामकथा के अनुरूप आचार्य तुलसी ने अग्निपरीक्षा का प्रणयन किया है। इसमें परीक्षा के समय जलप्लावन की चर्चा की गई है। उपस्थित जन समूह के आग्रह से सीता ने इस जलप्लावन को समाप्त किया। परीक्षा के समय प्रज्वलित अग्नि कैसे पानी बन गई आचार्य तुलसी ने लिखा है-

"मै सच्ची हूं तो बने, पावक निश्चित नीर
झगिति जलादे अन्यथा मेरा मृदुल शरीर।" [85]

सारांश यह है कि सीता निर्वासिन, प्रवाद पर्व में उत्तर कालीन घटनाओ का आभाव है। शेष रचनाये लवकुश युद्ध प्रिया या प्रजा, वैदेही वनवास, जानकी जीवन, रामराज्य अरूण रामायण और अग्निलीक में यत्किंचित परिवर्तन से सीता निर्वासिन सम्बन्धी घटनाएं वर्णित है। निर्वासिन के मूल में सीता द्वारा मुनि पत्नियों को उपहार स्वरूप कुछ देकर उऋण होना। राज्य की महत्वता सीता राम का आन्तरिक चिन्तन लवकुश जन्म सीता का मातृत्व पुनः सतित्व साक्ष देने पर सीता का आक्रोश भूमि विवर में समाती हुई सीता को निकालने का प्रयास मौलिक घटनाएं है। मूल कथा वाल्मीकि और उत्तर रामचरित से ली गई है। जिसमे युग का प्रभाव दिखाई पडता है वैदेही वनवास, रामराज्य, प्रिया या प्रजा, जानकी जीवन, में द्विवेदी युगीन नारी की महत्वता नारी उत्थान, बौद्धिकता पद-पद पर मिलती है। प्रवाद पर्व, सीता निर्वासिन, अग्निलीक ऐसी रचनाये है जिनमे मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में वर्णित **ईड ईगो-सुपर ईगो** के अनुसार राम सीता का आत्म संलाप स्वत्व संपन्न नारी की अस्मिता का उदघोष उन्मुक्त रूप से किया गया है। अरूण रामायण में इस कथा को भावात्मक रूप देकर राष्ट्रीय एकता एवं नारी के परम्परित रूप की पुनः प्रतिष्ठा की गयी है।

ऊपर सीता निर्वासिन के मूल स्त्रोत नवीन उदभावनाये आधिकारिक एवं प्राशंगिक कथा के विकास

क्रम की समीक्षा की गई है। किन्तु कथात्मक सौन्दर्य हेतु प्रबन्ध, कल्पना, उदात्य प्रशंग, प्रशंग संग्रथन कौशल अन्वित और बेग कथा मे आरोह-अवरोह और प्राशंगिक घटनाओं की संयोजन शैली पर भी चर्चा करना अपेक्षित है।

प्रसंग कल्पना :-

कथा कंकाल को मार्मिक और प्रभविष्णु बनाने के लिए कवि उसके भिन्न प्रसंगों में हृदय स्पन्दन का समावेश करता है। यह हृदय स्पन्दन दो प्रकार की घटनाओं रामायण, प्रिया या प्रजा, रामराज्य, जानकी जीवन, लवकुश युद्व में इसकथा सम्बन्धी मार्मिक स्थलों का सुन्दरवन पडा है। सीता द्वारा चित्रों को देखना लोकापवाद, लक्ष्मण भरतादिक भाइयों का आक्रोश सीता आक्रोश एवं भूमि प्रवेश इस कथा के मार्मिक स्थल है। मानसिक तनाव के अन्तरगत अन्तरद्वन्द के साथ परिस्थिति और व्यक्ति की कामना की प्रतिकूलता का अर्न्तभाव वर्णित किया जाता है। व्यक्ति की कामना जितनी तीव्र और परिस्थितियों की प्रतिकूलता जितनी सशक्त होगी मानसिक तनाव भी उतना ही सुन्दर निरूपित होगा। इस सन्दर्भ में राम का अन्तद्वन्द्व लक्ष्मण, भरत का आक्रोश, सीता को छोडते समय लक्ष्मण का वियोग और पुनः सतीत्व साक्ष्य की मांग में सीता का अर्न्तद्वन्द्व आते है। जिसे वैदेही वनवास, प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन और अग्निलीक मे अत्यन्त आकर्षक रूप में व्यंजित किया गया है।

काव्य प्रसंग :-

उदात्य तत्व के स्थापक **लौवन्जाइस** ने अति रंजता और उदात्य तत्व पर जोर दिया है। सीता निर्वासन में राम का चिन्तन भरत इत्यादि भाइयों की अनुभूतियां लवकुश जन्म और सीता का विवर प्रवेश उदात्य घटनाएं है। जिनका निर्वाहन वैदेही वनवास अरूण रामायण अग्निलीक, जानकी जीवन, और भूमिजा में कलात्मक ढंग से किया गया है।

अन्वित संयोजन :-

अन्वित संयोजन का अर्थ है, वर्णित कथावस्तु में चित्रित घटना व्यापार की कुशल संयोजन सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्य दो रूपो में दिखाई देते है। अरूण रामायण, जानकी जीवन, रामराज्य प्रिया या प्रजा में यह कथा आन्सिक रूप से राम की अन्य कथा के साथ व्यंजित हुई है। जबकि प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन लवकुश युद्ध अग्निलीक और भूमिजा में यह कथा स्वतन्त्र रूप से आई है। आशिंक रूप में प्रयुक्त यह सीता निर्वासन की कथा अत्यन्त संक्षिप्त है। अन्य घटनाओं का विस्तार नहीं किया गया है। कवियों ने घटनाओं के चयन में संक्षेपण शैली का उपयोग किया है। क्योंकि कवियों का मूल लक्ष्य सम्पूर्ण रामकथा का गायन करना था। स्वतंत्र रूप से लिखे गये काव्यों में वैदेही वनवास अग्निलीक और भूमिजा ऐसे काव्य है, जिनमे घटनाओं की अन्विति प्रशंग संगठन कौशल से कथात्मक सौन्दर्य बिखर आया है। प्रवाद पर्व और सीता निर्वासन मानसिक धरातल पर उत्पन्न हुए चिन्तन को अभिव्यंजित करता है। प्रवाद पर्व में घटना अत्यन्त सूक्ष्म एवं क्षीण है। उसमे अन्वित संयोजन का आभाव है इसका सम्भवतः कारण यह कि कवि का लक्ष्य समस्याओं या मूल्यों की स्थापना रहा है। इसीलिए इसमें घटना का विस्तार नही है। कथा संगठन की दृष्टि से वैदेही वनवास, भूमिजा, अरूण रामायण और अग्निलीक महत्वपूर्ण काव्य है। जबकि लवकुश युद्ध, प्रिया या प्रजा में विवरणात्मक दृष्टि से कथा प्रवाह मिलता है।

अन्वित और वेग :-

अन्वित और वेग का तात्पर्य ये है कि, सीता निर्वासन सम्बन्धी वाल्मीकि रामायण से कथा जल लेकर परवर्ती कवियों ने जिन छोटे-छोटे काव्य बावडी की रचना की है, उनमें पर्याप्त अन्तर आ गया है। जैसे सीता निर्वासन के रूप मे दोहद सीता का उऋण होना, वन दर्शन और लोकापवाद, लवकुश जन्म उनका लालन-पालन रामदरबार मे रामकथा का गायन और सीता के भूमि प्रवेश के समय दिव्य सिंहासन, दिव्य ज्योति, गडढे में कूदना य कथा का सुखान्त रूप आदि की घटनाएं है इस अन्तर को कवियों ने अपनी-अपनी दृष्टि से अभिव्यक्ति किया है।

आरोहावरोह :-

इसके अन्तर्गत हम ये देखेगे कि, कवियो ने चयनित घटना विस्तार को किस रूप में व्यंजित किया है। वैदेही वनवास का प्रारम्भ और समापन कुल अठारह सर्गो में व्यंजित है। घटना शिथिल गति से प्रवाहित होती है। आरोह तो बडे कुशल ढंग से हुआ है। किन्तु समापन में कवि ने बडी शीघ्रता की है। बीच-बीच के वर्णन कथा प्रवाह को रोक से लेते है। जानकी जीवन में अधिकांश घटनाएं स्मृतियांकन पर लिखी गयी है। अतः रस व्याघात के साथ कथा प्रवाह में भी व्याघात उत्पन्न हुआ है। प्रिया या प्रजा, लवकुश युद्ध में घटनाओं का आरोह-अवरोह एक समतल भूमि पर चला है। रामराज्य में आरोह-अवरोह का ध्यान नहीं रखा गया है। अग्निलीक में चरण प्रशंग जोडा हुआ लगता है। तथा सीता का आक्रोश अवरोह को बहुत लम्बा खीच लेता है। अरूण रामायण में यह घटना अवान्तर घटना के रूप में चित्रित है। जिसमें नूतनता,प्राजलता,कथात्मक सौन्दर्य पद-पद पर दिखाई देता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि, समग्र रामकथा के साथ लिखे गये अंशो में अरूण रामायण और स्वतंत्र रूप से लिखे गये काव्यो में वैदेही वनवास, लवकुश युद्ध, सीता निर्वासन, प्रवाद पर्व, भूमिजा और अग्निलीक ऐसी रचनाऐं है। जिनका कथात्मक सौन्दर्य नूतन उदात्य उज्वल और आकर्षण रूप में दिखाई देता है। मूल स्त्रोत से कथा का चयन कर आधिकारिक, प्राशंगिक घटनाओं का सफल संयोजन, युगीन प्रभावों के अनुरूप घटना विस्तार इन काव्यों की प्रमुख विशेषताऐं है।

❁ सन्दर्भ सूची ❁

1- दशरूपक-धनन्जय- पृ. 1/11-15

2- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 53/10

3- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 55/10

4- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 2/16

5- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 2/18

6- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 2/26

7- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य हरिऔध- पृ. 3/18

8- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 5/59

9- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्य "हरिऔध"- पृ. 5/59

10- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 43

11- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 19

12- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 20

13- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 21

14- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 29

15- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 36

16- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 59

17- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 67

18- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 72

19- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 76

20- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

21- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 4

22- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 6

23- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 10

24- अग्नि परीक्षा - आचार्य तुलसी- पृ. 29

25- अग्नि परीक्षा - आचार्य तुलसी- पृ. 44

26- अग्नि परीक्षा - आचार्य तुलसी- पृ. 166

27- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/77

28- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/79

29- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/80

30- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/80

31- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/88

32- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 1/90

33- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 5/121

34- रामराज्य डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 62/63

35- रामराज्य डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

36- रामराज्य डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 75

37- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 622

38- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 623

39- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 630

40- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 638

41- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 638

42- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 639

43- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 640

44- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 642

45- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार 'अरूण'- (उत्तरकाण्ड) पृ. 642

46- दिसेन्स आफ व्यूटी- पृ. 198

47- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 1/1

48- रामराज्य-डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 64

49- लव-कुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 2

50- अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 17

51- वाल्मीकि रामायण- पृ. 7/45

52- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'- पृ. 17

53- रामराज्य डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 66

54- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

55- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 622

56- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 27

57- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 19

58- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 29

59- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 27

60- प्रवाद पर्व -डा. नरेश मेहता- पृ. 42/43

61- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 36/37

62- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 39/43

63- अग्निलीक -भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 20

64- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 4

65- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 43

66- रामराज्य-डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

67- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 626/627

68- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 102

69- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 7

70- रामराज्य- डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 70

71- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 24-25

72- अरूण रामायण- पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 636

73- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 148

74- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 12

75- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 14

76- अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 28/29

77- अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 33

78- रामकथा- कामिल वुल्के- पृ. 570

79- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 15

80- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्द दास विनीत- पृ. 125

81- रामराज्य - डा. रामप्रकाश शर्मा- पृ. 78-79

82- अरूण रामायण पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 642

83- अग्नि परीक्षा- आचार्य तुलसी- पृ. 42

84- अग्नि परीक्षा- आचार्य तुलसी- पृ. 58

85- अग्नि परीक्षा- आचार्य तुलसी- पृ. 165
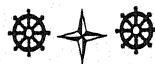
अध्याय-तृतीय

आलोच्य काव्य-ग्रन्थों में चरित्र-योजना

- पात्र एवं चरित्र
- मुख्य पुरुष-पात्र
- मुख्य स्त्री-पात्र
- अन्य पात्र
- सीता एवं आधुनिक युग बोध

पृष्ठ- 97-152

अध्याय -3

आलोच्य काव्य ग्रन्थों मे चरित्र योजना

कथा प्रधान काव्यों मे वस्तु के पश्चात नेता को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसे ही चरित्र या पात्र योजना कहते है। पात्र शब्द संस्कृति या धातु के साथ ष्ट्न प्रत्यय युक्त करने से निष्पन्न होता है जिसका पुलिन्द रूप ''व्यक्ति या अधिकारी नपुसंग लिंग मे भाजन या बर्तन के अर्थ मे प्रयुक्त किया जाता है।'' [1] यहां पात्र का अर्थ उस व्यक्ति से है जो तत्र विशिष्ट कथा वस्तु की घटनाओं के घटक या परिचालक होते है और जिनके चरित्र से कथा का विकास या रस का परिपाक होता है। अतः चरित्र चित्रण का अर्थ पात्रों के चरित्र सम्बन्धी विशेषताओं का उल्लेख करना होता है। पात्र और चरित्र को समानार्थी कहा जाता है। चरित्र मे मनुष्य के वहिरंग तथा अन्तरंग के समस्त तत्व बौद्धिक क्षमताऐं, इच्छा शक्तियां, भावनाये या कामनाये समाहित हो जाती है। भारतीय दर्शन मे चरित्र के मूल घटक के अन्तर्गत ''शरीर को लिया गया है इसे क्षेत्र कहकर पंच महाभूत त्रिगुण मयी माया, दश इन्द्रियां, पांच विषय और मन का उल्लेख किया गया है।'' [2]

इसी प्रकार पाश्चात्य जगत मे चरित्र को समझने के लिए मनोविज्ञान का सहारा लिया गया है। प्रसिद्ध मनोविज्ञान वेत्ता **फ्रायड** ने चेतन अर्धचेतन तथा अवचेतन मन के क्रिया-कलापों एवं प्रतिफलित रूप मे शारीरिक क्रियाओं को सम्मिलित करने का प्रयास किया है। इस प्रकार पाश्चात्य जगत मे चरित्र को समझने के लिए उसके आन्तरिक गुणों एवं बाह्य संगठक तत्वों एवं समानुपातिक शारीरिक स्फीति विस्तार आदि तत्वों का उल्लेख हुआ है। शोधार्थी ने भारतीय एवं पाश्चात्य दर्शन मनोविज्ञान का समन्वय कर अन्तःकरण स्थिति दैवीय आसुरी वृत्तियों के साथ बाह्य क्रिया-कलाप तथा पात्र गत सौन्दर्य का चित्रांकन चरित्र-चित्रण के अन्तर्गत किया है।

प्राक्तन आचार्यो ने कथावस्तु के फल के अधिकारी को नेता य नायक कहा है। वस्तुतः नायक नी 'धातु' से निष्पन्न है जिसका अर्थ है ले चलने वाला। जो कथानक को अपने निर्दिष्ट फलागम तक ले चलता है वही नायक है। धनन्जय ने आचार्य भरत के अनुसार प्रतापशाली कुलीन पुरूषेय गुणों से युक्त सत्यवादी आदि गुणों का उल्लेख किया है। आचार्य विश्वनाथ ने भी काव्य मे उच्च क्लोत्भव नायक की अवश्यकता पर बल दिया है और इस दृष्टि से ''भारतीय साहित्य में धीरउदात्य, धीरललित, धीर प्रशान्त, और धीर उदधृत, नायक का उल्लेख किया गया है।'' [3] इसके अतिरिक्त अनुकूल दंक्षिण सठ धृष्ट, उत्तम मध्यम, अधम आदि नायकों की परिकल्पना कर उनके गुण अवगणों की विस्तृत चर्चा की गई है।

पाश्चात्य विद्वानों ने नायक के यथार्थ पक्ष को लेकर जीवन के अनुरूप नायक का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया है। **अरस्तु** ने करूणा और भय के आधार पर यथार्थ नायक आदर्श नायक और परम्परागत रूढ़ चरित्र नायक का उल्लेख किया है। **हौरेस** ने- नायक मे जनसाधारण उपयोगी गुणों का उल्लेख किया है। तात्पर्य यह कि पाश्चात्य जगत मे आदर्श नायक के साथ ही यथार्थ वादी नायको की परिकल्पना तथा मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तो के आलोक मे उनके चरित्रगत विशेषताओं का उल्लेख हुआ है। यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि आधुनिक युग मे ऐसे नायकों की महत्वपूर्ण स्वीकृति प्राप्त होती है। - जो अपने सत् असद् गुणों के कारण हमारी सामाजिक

मानताओं के अनुरूप क्रिया कलाप और चिन्तन मनन करते हुए दिखाई देते है। शोध कत्री ने चरित्र चित्रण को त्रियआयामी रूप मे प्रस्तुत करने का प्रयास प्रथम बार किया है।

1- शारीरिक आयाम :-

इसके अन्तर्गत पात्र का सौन्दर्य उसकी वाह रूप रेखा का अंकन हुआ है।

2- सामाजिक आयाम :-

जिसमें पात्र के सामाजिक रूपों पिता, पुत्र, माता, बहन, भाभी, देवर भाई, राजा प्रजा, इत्यादि रूपों का उल्लेख है।

3- मनोवैज्ञानिक आयाम :-

इसके अन्तर्गत पात्र के क्रिया कलापों के मूल में **इड इगों, सुपर इगो** मानसिक द्वन्द्ध, सूर वीरता, दया दाक्षिन्न, दया, ममता, उदारता आदि का उल्लेख हुआ है।

आलोच्य काव्यों मे राम सीता की उत्तरगाथा उपनिबद्ध है। वाल्मीकि संस्कृत साहित्य से लेकर हिन्दी के आधुनिक युग के पूर्व काव्यों मे पात्र अपने मूल रूप मे वर्णित है। चारित्रिक विकास की रूप रेखाये अत्यन्त क्षीण है जबकि मनोविज्ञान के विकास सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिवेश मे परिवर्तन के कारण इन चरित्रों मे विकास की सम्भावनायें निहित थी जिसका सदुपयोग कवियों ने यथा अवसर दिया है। पहले हम काव्य मे प्रयुक्त पात्रों का उल्लेख कर मुख्य गौड़पात्र लिंग के आधार पर स्त्री पुरूष पात्र प्राक्तन एवं आधुनिक युग बोध से सम्मिलित प्रतीकात्मक पात्रों का वर्गीकरण कर अन्त में सीता निर्वासन सम्बन्धी प्रमुख और गौण पात्रों का चित्रांकन करेगे।

चरित्र एवं पात्र योजना के उक्त सिद्धान्त के आधार पर सीता निर्वासन में प्रयुक्त पात्र एवं उनका वर्गीकरण प्रस्तुत किया जा रहा है-

1- **वैदेही वनवास :-** राम, सीता, लक्ष्मण, वाल्मीकि,लव-कुश,भरत,शत्रुघ्न,सत्यवती,आत्रेयी

2- **प्रवाद पर्व :-** राम, सीता, लक्ष्मण, भरत,

3- **अग्निलीक :-** राम, सीता, राजपुरूष, रथवान, चरण, वाल्मीकि, कौशिकी, लव-कुश,

4- **सीता निर्वासन :-** राम, सीता, लक्ष्मण, कौशिल्या, वाल्मीकि,

5- **भूमिजा :-** राम, सीता, अहिल्या, वाल्मीकि, लव-कुश,

6- **लव-कुश युद्ध :-**राम, सीता, लक्ष्मण, वाल्मीकि, लव-कुश,

7- **अग्निपरीक्षा :-** राम, सीता, लव-कुश, भरत शत्रुघन, कृतान्तमुख, वजृजंघ, सिद्वार्थ,

8- **प्रिया या प्रजा :-** राम, सीता, लक्ष्मण, वाल्मीकि, जनक,

9- **रामराज्य :-** राम, सीता, लक्ष्मण, वाल्मीकि, लव-कुश,

10- **अरूण रामायण :-** राम, सीता, लक्ष्मण, भरत, वाल्मीकि, लव-कुश, शत्रुघ्न,

पात्रों का वर्गीकरण

1- कथा के आधार पर :-

इस आधार पर दो प्रकार के पात्र दिखाई देते है। प्रमुख पात्रों मे राम, सीता, लक्ष्मण, तथा गौण पात्रों मे भरत, लवकुश आदि।

2- लिंग के आधार पर :-

इन काव्यों मे पुरूष पात्र-राम आदि तथा सीता, कौशिल्या आदि स्त्री पात्र है।

3- प्रतीकात्मक पात्र :-

इसके अन्तर्गत वे पात्र आते है जो अपने मूल व्यक्तित्व के साथ-साथ कुछ अन्य भावनाओं के प्रतीक बनकर आते है। जैसे प्रवाद पर्व मे राम और उनका अन्तर्द्वन्द्व चेतन मन के प्रतीक है जिसमें इड इगो, सुपर इगों का अन्तर्द्वन्द्व है अतः यह प्रतीक है इसी प्रकार अग्निलीक में सीता आधुनिक विद्रोहणी नारी की अस्मिता का प्रतीक है। इसे कवि ने अग्निलीक का भी प्रतीक कहा है।

4- वर्गीयपात्र :-

इसके अन्तर्गत वे पात्र आते है जो समाज मे किसी न किसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है। सीता निर्वासन मे पति एवं पिता रूप मे राम, रजक, पत्नी रूप मे सीता, भाई रूप मे लक्ष्मण, भरत चन्द्रकेतु, वजृजंघ, प्रजारूप मे रजक और उसकी पत्नी युद्ध के समय सेनाऐं आदि ऋषि रूप मे वाल्मीकि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त सद्‌गुणी, कुलीन, तामसी प्रवृत्ति इत्यादि के रूप मे भी कुछ पात्रों का उपयोग हुआ है।

तात्पर्य यह कि सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों मे प्रयुक्त पात्रों का क्षेत्र सीमित है कथा के सीमित होने के नाते संक्षिप्त पात्र योजना का यह प्रभाव हुआ है कि उनके व्यकितत्व के विकास के लिए कवि को पर्याप्त अवसर मिल गया है यहां हम प्रमुख पात्र राम, सीता, लक्ष्मण एवं गौड़ पात्रों का चरित्र-चित्रण करेगे। इस चरित्र-चित्रण हेतु पात्र के वर्गीय य प्रतिकात्मक रूप के साथ उसके बाह्य रूप रेखा आन्तरिक एवं बाह्य व्यक्तित्व शील गुण इत्यादि कार्यो का भी उल्लेख किया जायेगा।

प्रमुख पात्र इस प्रकार है-

राम का चरित्र-चित्रण

राजा रूप में :-

कर्तव्य निष्ठा और धर्म परायणता से ओत-प्रोत होते हुए राम का चरित्र राजा के प्रिय धर्म प्रजा रंजक तथा राज्य की मर्यादा की रक्षा करना ही अलौकिक उद्‌देश्य है। यद्यपि गुप्तचर दुर्मुख के माध्यम से रजक के कथन को ज्ञात होते ही राज्य मयार्दा पर लगे प्रश्न चिन्ह से मन आक्रान्त होता है। और राजा राम गम्भीरता के आवरण मे अपने आपको प्रस्तुत करते हुए, मनः वेदना से समाजस्य बनाकर प्रजा हित सध्य कर्म को मर्यादा पूर्वक धारण करके तथा सारे अत्याचारों का दमन करकेपुलकित होता था-

''सबल के सारे अत्याचार।
शमन में हूं अद्यापि प्रवृत्त।।
निर्बलो का बल दल दुःख।
विपुल पुलकित होता है चित्र।।'' [4]

एवं प्रजा की सम्पन्नता हेतु प्रजा को कर मुक्त कर राज्य को सम्पूर्ण सम्पत्ति प्रजा के अधिकारों मे देते है।

"प्रजा की बनी प्रजा सम्पत्ति।
ली गई कभी न वह कर व्याज।।" [5]

सर्वत्र समानता और विलासिता के परिपूर्ण भेद भाव रहित राज्य की स्थापना कर्मो को वर्णाश्रम के आधार पर बाटना जहां निन्दित और छल छन्द वृत्ति वालो के लिए कलह और कपट करने वालो का कोई स्थान नही है-

"कर रहे है सब कर्म स्वकीय।
समझ कर वर्णाश्रम का मर्म।।"
कही न कलह न कपटाचार
न निन्हित-वृत्ति-जनित छल छन्द।।" [6]

अपितु राम के लोक आराधना भंग होने के पीछे विद्यमान कारण को ज्ञात करने के लिए तथा सर्व सम्मत निर्णय पारित करने हेतु मन्त्रणा ग्रह मे बन्धवों सहित उपस्थिति जनतान्त्रिक शासन परम्परा के माध्यम से प्रजाहित और प्रगति का निरन्तर उत्थान करना ही नृप धर्म मानते है। कदाचित राजा राम के उदात्त लोक हित कर्म सामनीति, राजनीति की धवलता से दमननीति को कालिया से रहित चरित्र को विभूषित किया है-

"रघुनन्दन और धीर धुनधर।
धर्मप्राण है भव-हित-रत है।।
लोकाराधन मे है तत्पर।
सत्य संघ है सत्य-वृत है।।" [7]

प्रवाद पर्व मे कवि ने राम चरित्र की अभिव्यंजना राज्य मर्यादा के आदर्शो की स्थापना मे सन्नद्ध पुरूषार्थता के अनुष्ठान हेतु निर्मम कर्म को मनुष्य का प्रारब्ध मानकर स्वीकार करता है। पात्रता और अपात्रता का अन्तर राम की दृष्टिकोण मे गति य आगति शताब्दियों तक मानवीय जिज्ञासा के रथ मे आरूढ़ होकर यात्रा करता है। इसलिये मानवीय प्रज्ञा मे राजा को अपने निजत्व की समिधा समर्पित करनी पड़ती है-

"कर्म के इस तटस्थ
भागवत-अनुष्ठान से
कोई मुक्ति नही
कोई निष्कृति नही।।" [8]

और राजा राम की राजसी गरिमा के एक साधारण जन के द्वारा चारित्रिक मर्यादा मे अपनी उंगली उठाने के कारण राजतन्त्र और उसके ऐतिहासिक सत्य को स्वीकार करते है। और उस अनाम साधारण जन को वाणी विहीन बनाने की अपेक्षा स्वयं को ऐतिहासिक परीक्षा हेतु समार्पित करते है। कवि के प्रमुख पात्र राम का राज्य राष्ट्र, न्याय एवं जनसामान्य के सन्दर्भ मे मानवीय उदात्तता का आदर्श राज-पुरूषों की अन्य शक्ति होनी चाहिए-

"इतिहास

खड्ग से नही

मानवीय उदात्तता से लिखा जाना चाहिए।" [9]

राम ने राज्य को सामूहिक आकांक्षा का प्रतीक बनाने के लिये राजा के प्रमुख कर्तव्य मानते है क्योकि राज्य और प्रजा एक दूसरे के पूरक है, जहां पर कर्तव्य और अधिकार प्रजा से राजा तक सुनिश्चत करने के लिए अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता अनिवार्य होती है। सामाजिक भाषा हीनता भय का कारण बन जाती है, और भय से राज्य संचालित नही होता। रावण के पतन का प्रमुख कारण यही था-

"तो भय से भी नही चला करते/लक्ष्मण!/गूगेपन से कही क्षेयस है

वाचालता/जिस दिन/मनुष्य अभिव्यक्ति हीन हो जाएगा

वह सबसे अधिक/दुर्भाग्यपूर्ण दिन होगा।" [10]

"एक/अकेला स्वर्ण सिंहासन/और उस पर/राज्यभय के एकमात्र स्वर्ण

प्रतीक सा बैठा हुआ/ शक्ति का महाउपासक/ एवं सम्राट" [11]

प्रस्तुत नाट्य काव्य मे कवि ने राम के चरित्र को मानवीय आयामों से सम्बन्ध क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत किया है। महाराज राम अपने पति धर्म को भूलकर महारानी सीता को गर्भावस्था मे निष्कासित कर देते है। इस कृत्य से जनसामान्य के दुःख को ध्यान मे न रख केवल दुर्मुख की बात मानकर अपना खोया राज्य पाने के लिये अपनी पत्नी का मूल्य देकर प्राप्त करते है। कवि ने राम के चरित्र मे वनवास से सीता निर्वासन तक परस्पर विपरीत परिवर्तन देखा है, जो राम-

"सत्य के लिए राज्य ठुकराया था

उन्ही के बाद में

राज्य के लिए सत्य को ठुकरा दिया" [12]

महाराज को प्रजा की चिन्ता से कोई सरोकार नही होता वह राज्य के सारे कार्य वैरागियो, ऋषियों, मनियों और वानरों के हाथ समर्पित कर युद्ध लिप्सा मे लीन चक्रवर्ती बनने की महात्वाकांक्षा मे लीन रहते है। राजा के रूप मे राम एक ऐसे राजा है जिन्हें प्रजा के आभावों और पीडा से कोई प्रयोजन नही होता वह अपने एक ही लक्ष्य दिग्विजयी बनकर सम्पूर्ण भूमि को अपने वंश मे करने की ललुपता मे लीन रहते है। उनके अश्वमेघ के तुमुल निनाद के नीचे प्रजा की कराह दबकर रह जाती है-

"इस तुमुल विजय-विनाद के नीचे कराहता

अपनी प्रजा का हाहाकार सुनायी नही देता" ? [13]

राम केवल आदर्श राजा बनने का ढोग करके सम्पूर्ण प्रजा को अपनी महत्त्वता के नीचे दबा लेते है जिससे प्रजा महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु अपने सर कटवाये-

"जब इनकी उपेक्षा के कारण भूखों मरने लगे

इसकी महत्वाकांक्षा की बलिवेदी पर अपने सिर कटाये" [14]

राजा राम की मीमांसाओं की तृष्णा इतनी प्रबल है की वह अपने नाम को रघुवंश मे सर्व उच्च

प्रतिष्ठित करना चाहते है जो महत्वाकांक्षा के क्षितिज से पार निकलती हुई प्रतीत होती है। शायद यह राजा राम का अनुचित प्रयास सूर्य वंश को रघुवंश के नाम से नही राम वंश के नाम से प्रतिष्ठित करने का लगता है-

''आसागरा धरा को अपनी बांहो मे भर लेने की इच्छा,
रघुवंश मे अपनी कीर्ति सबसे ऊंची करने की लालसा'' [15]

राजा राम प्रजा रंजक कार्यो से दूर अकाल और महामारी झेल रही प्रजा के दुखों से परे अपना समग्र प्रयास राज्य राजेश्वर बनने मे केन्द्रित रखते है। पुरूषोत्तम श्री राम के द्वारा राज्य के गौरव एवं राजा की मर्यादा को स्थापित करने के लिए सीता का निष्कासन करने से सूर्यवंशी राज्य पुरूषों में कलंक के हेतु बन गये है। इतना ही नही, वह अपने आदेशों से भाई, पत्नी, पिता, माता, एवं प्रजा के प्रेममयी अभिव्यक्ति को कुचलने का कार्य निष्पादित किया है। जो अपने आदेश पुष्टिका के प्रहार से घायल हुए व्यक्तिग सम्बन्धों की पीडा से कोई मतलब नही रखते है। राजा राम के क्रूर निर्णयों को मानने के लिए बाध्य अयोध्या की प्रजा अपना नैतिक साहस खोकर अभिव्यक्ति हीन हो जाती है-

''था राजतन्त्र के उदण्डी आतंक तले,
जनता का अतुलित बल पौरूष टूटा होगा,
लंका के नेता का प्रचण्ड तपता प्रताप,
जनता का नैतिक साहस
ले डूबा होगा,'' [16]

कवि ने लोकमानस मे बसी हुई सीता के निष्कासन से कवि की वेदना मे श्री राम को एक दम्मी राजा तथा न्याय का ठोग मात्र करने वाले राज्य आतंक का पर्याय मात्र माना है जहां की न्याय व्यवस्था ऐसी थी कि अपने आरोपों के बिना ही व्यक्ति सजा का पात्र बन जाता है-

''न उसको आरोपों का ज्ञान,
न कुछ कह सकने का अवकाश
यही क्या राम तुम्हारा न्याय,
तुम्हारे राम राज्य का न्याय ?'' [17]

कवि ने एक निष्कासन की पीडा से उपजे विचारों के कारण धर्म ध्वज वाहक राम के आदर्श नीतियों और अक्षय यश को तथा मर्यादा मण्डित कृत्य माना है तो दूसरी तरफ राजा के रूप मे क्लेष और पीडा से परिपूर्ण स्वयं के मन ही मन मे सहन की विवशता को स्वीकार करते हुए राज्य धर्म के हेतु कठोर निर्णय लेने के लिए विवश थे। जो यह जानते हुए कि अग्निपूत द्वारा प्राप्त पवित्रता के प्रमाणों के उपरान्त सीता पवित्र थी फिर भी रजक के कथन को निर्भय समीक्षा के रूप मे स्वीकार कर अभिव्यक्ति के स्वतन्त्र अधिकारों को देना चाहते है।

''यह राज धर्म का शीश चढ़ा कष्टक किरीट
निर्मम है
क्रूर कठोर धर्म।

रजक, राम का प्रिय जन है।
नागरिक अवध का,
प्राप्य जिसे अधिकार
समीक्षा का निर्भय। ''[18]

राजा राम सीता का निष्कासन न करके राजकर्म के महायज्ञ पर अर्धांगी ही नही अपनी सर्वेश्वरी की बलि चढा देते है।

''सीता अर्धांगी नही,
राम की सर्वेश्वरी
जिस पर विचार
न्याय का नही
नीति का था।''[19]

''सीता निर्वासन नही/सिया को दोष दण्ड,
यह राजकर्म के/महायज्ञ की बलि विराट।''[20]

भारत-भूमि पर राज्य धर्म के आदर्शो को प्रतिष्ठित करने हेतु निजत्व को समर्पित कर देते है। जो प्रजा के मन मे उठे शंका के बादलों की शक्ति से अस्तित्व हीन न करके जनता की शंका निवाणार्थ सीता निर्वासन ही करते है। इसीलिए कवि ने अन्ततः अपने राम को प्रजा वत्सल और वन्दनीय माना है। और प्रजा तन्त्र के इस स्वस्थ काया के रूप मे वर्णित किया है-

''यह रामतंत्र की प्रजातंत्र का/सुखद स्वस्थ जीवन्त रूप
तेरे आदर्श राज्य पर न्यौछावर अगणित/शासकीय रूप।''[21]

राम का चरित्र राजा के रूप मे प्रजा प्रिय धन्य धान्य से युक्त राजसी सम्पन्न विजयी धर्म निपुण सत्य प्रिय एवं सदाचारी है। जो लोक आराधन के लिए जन रंजन कार्यो मे समर्पित है। जिनकी मर्यादा पर किसी भी अतीत का प्रक्षेण कवि ने स्वीकार नही किया है। राजाज्ञा के प्रति उनकी आत्म वेदना बाधक नही है-

''राजा कारण है काल धर्म/छिप सकता उससे कौन मर्म
लोकापवाद का विष दशन/शुभ कर्मो को डसता गिन-गिन। ''[22]

राम का राजा के रूप मे चरित्र चित्रण रामकथा के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के अनुरूप है। राज्यतंत्र के आदर्श संस्थापक राम भारत भूमि पर त्याग और सत्य का आदर्श प्रतिष्ठित कर कर्तव्य का पालन करते है-

''कारण?-वही कर्तव्य-पथ नृप नीति का उददेश्य है।''[23]

राजा राम का स्वरूप कवि ने उत्कृष्ता के साथ चित्रित किया है। आर्य संस्थापक राम के राज्य का जनमय प्रफुलित और आनन्दमयी था-

''जय राम राज्य, जय राम राज्य धुंकार समूचे भारत में।
अविकल प्रभुत्व सीतापति का अधिकार समूचे भारत में।।''[24]

प्रजा के रूप में :-

कवि का दृष्टिकोण अपने प्रमुख पात्र राम की चारित्रिक अभिव्यंजना मे लोक धर्मी, लोक संस्कार रक्षक तथा राज्य धर्म के नियमो को बदलकर लोक धर्म की स्थापना करने वाले सुपात्र के रूप मे निरूपित किया है। जो कि अहिल्या के समक्ष तरूण अवस्था मे षोडस बालाओं से दूर रहकर एक नारी वृत का पालन करते हुए नारी सम्मान जैसे एकात्म मानववाद के सिद्धान्त को लोक धर्म के रूप मे स्थापित कर अयोध्या साम्राज्य को लोक संस्कार के झूठे संस्कारो के युक्त कराने हेतु सर्वस्व उत्सर्जित करने को तैयार रहते है। तथापि सीता निर्वासन उसी कडी का एक समर्पण होता है।

> **''कैसे होगा कष्ट कि भू पर, तात!**
> **विद्यमान हैं तुम-जैसे भी लोग**
> **हरने को तन-मन के सारे रोग**
> **अभिशप्तों के संकट मोचन हेतु।''** [25]

कवि की कल्पना राम के राज गुणों को उतुंग बना देती है क्योकि वो रघुकुल की एकपक्षीय मर्यादा की संरक्षण हेतु पुरूषोत्तम राजा राम अपनी कीर्ति ऐतिहासिक बनाने के लिए सीता का निष्कासन किया है।

कवि के द्वारा विरचित रामकथा का लव-कुश युद्ध मे देवी सीता की करूणा का वर्णन साकार करते हुए कवि के अपने पात्रों की चरित्र योजना का अद्वतीय समावेश किया है।

सर्व प्रथम कवि के श्री राम राजा के चरित्र मे प्रजा के हित के लिए स्वयं को सम्पूर्ण समर्पित कर देना चाहते है। स्पष्टतयः उनके भावों मे राज्य लिप्सा पद मीमांसा का कही पर भी स्थान नही होता है। वही अपने राज्य मे प्रजा की अभिव्यक्ति को सम्पूर्ण स्वतंत्रता का कलेवर तथा जनतंत्र की अवधारणा को निरूपित करते है। गुप्तचर के द्वारा सूचित करने पर वह धोबी-धोबिन की स्वतंत्र अभिव्यक्ति को पोषण करने हेतु देवी सीता का निष्कासन कर बैठते है। यही राजा के निष्पक्ष और निर्लिप्त लक्षण है-

> **''बोले श्री राम अभी धोबी, केवल कहता है सुन लोगो।**
> **जब विश्व कहेगा फिर बोले किसका-किसका मुख पकडोगे।।''** [26]

राजा के रूप मे राम का आदर्श प्रजा निष्ठा, न्यायप्रियता तथा जनमत को शिरोधार्य करने वाला है। जो अपनी प्रजा को मंगलमयी बनाने मे आत्मत्याग अलौकिक ज्योति से पूर्ण है-

> **''लौकिक अपकीर्ति मनुज को बहुत रूलाती है।**
> **संशय की व्यथा हृदय को अधिक सताती है**
> **आदर्श राज्य मे ही सम्भव आदर्श कार्य**
> **जन अभिमत को करना ही है अब शिरोधार्य!''** [27]

राजा राम का निर्णय त्याग ज्योति से आलोकित और अडिग होता है। निष्कासन के सन्दर्भ मे किसी ममतामयी अभिमत को प्राश्रय देना वह राजा के कर्तव्यों से निम्न मानते है-

> **''दण्डित जो करे स्वयं को भी है वहीं नृपति**

है अभी तुम्हारी जैसी ही मेरी दुखगति।'' [28]

न्याय की समग्रता को निर्धारित करने के दृष्टि मे राम राजा के चरित्र मे स्वयं को भी दण्ड से वंचित नही रखते। राजा के कार्य से निर्णय से जनमत मे प्रशन्नता निरूपित करने के लिए व्यथाओं की असहनीय वेदना करते है-

''मेरे इस निर्णय से प्रशन्न होगे जनगण

मेरा मन व्यथित रहे पर रहे मुदित जनमन।'' [29]

राजा राम अपने इस निर्मम निर्णय से शोक व्यथित होते हुए भी, जीवन की सबसे कठिन घड़ी के रूप मे स्वीकार कर अपनी गर्भिणी प्रिया को भेजने का निर्णय भी नृप के कर्तव्य को मानकर करते है-

''पर हाय राम को सबने राजा बना दिया

नृप को जो करना है मैने भी वही किया।

मेरा सब कुछ है मौन किन्तु मे मौन नही

क्यो ऐसा करता मै, साक्षी ही गगन मही।'' [30]

राजा राम का पावन चरित्र वर्णन, भारत के विस्तृत भूतल पर एक्य का समाजस्य बनाकर, धर्म और संस्कृति के ऊचाईयों मे प्रतिष्ठित करने हेतु, राष्ट्र यज्ञ का आयोजन करके स्वयं के आदर्शो को अविस्मरणीय प्रतिष्ठा दी है-

''है भारत राष्ट्र-यज्ञ-हित उधर राम चिन्हित

ऋषि-मुनि-चिन्तक-नृप अवधपुरी मे आमंत्रित'' [31]

पति रूप में राम :-

पति के रूप मे राम अलौलिक आदर्शो से ओत-प्रोत अपनी प्रियतमा सीता के दुःख से चिन्तित होते है। उपस्थित अपवाद के कारण जनरव को शान्त करने के लिए कुछ काल के लिए अपने पास से अन्यत्र स्थानान्तरित करना चाहते है ताकि कलुषित मानस को पावन कर अविवेकी जनता के मुख से हुई निन्दनीय जल्पना को समाप्त कर सके। इसीलिये वह अपनी प्रिया से सम्पूर्ण वृतान्त कहकर राज्य मे पुनः शान्ति व्यवस्था को स्थापित करना चाहते है-

''इच्छा है कुछ काल के लिये तुमको स्थानान्तरित करूं।

इस प्रकार उपजा प्रतीति मैं प्रजा-पुंज की भ्रान्ति हरूं।।

क्यों दूसरे पिसें, संकट में पड़, बहु दुख भोगते रहे।

क्यो न लोक-हित के निमित्त जो सह पायें हम स्वयं सहे।।'' [32]

राम अपनी प्रिया सीता को महर्षि वाल्मीकि के मन्त्रणा के अनुसार सूर्यवंशियो की परम्परा से अवगत करवाते है-

''है प्राचीन पुनीत प्रथा यह मंगल की आकांक्षा से।

सब प्रकार की श्रेय दृष्टि से बालक हित की वांछा से।।

गर्भवती-महिला कुलपति-आश्रम मे भेजी जाती है।

यथा-काल संस्कारादिक होने पर वापस आती है।।'' [33]

फिर भी पति राम सीता के परित्याग से अन्तःमन से इतने दुःखी होते है कि उन्हे अपनी प्रिया को प्रिय सम्बोधन से अपना अधिकार छिनता हुआ प्रतीत होता है-

''कहा राम ने प्रिये कहते कुष्ठित होता हूं।

अपने सुख-पथ मे अपने हाथों मे कांटे बोता हूं।।'' [34]

राम की पत्नी पारायणता ''एक नारी व्रत'' का निर्वाहन पूर्ण रूप से करते हुये अपनी हृदय वल्लभा मे पूर्ण समर्पित होते है।

''.........जिसकी हृदय वल्लभा तुम हो।

जो तुमको पलको पर रखता।।''

* * * * * *

जिसका पत्नी व्रत प्रसिद्व है।'' [35]

पति राम के द्वारा राजा राम के लिए समर्पित लोकाराधन नीति को पूर्ण करने के लिये असह कष्टों का वरण करके व्यथित होते है-

''रहोगी वहां तुम तब तक मै तब तक वहां न आऊंगा।

यह असह है, सहन-शक्ति पर मै तुमसे ही पाऊगा।।'' [36]

प्रस्तुत खण्ड काव्य में राम के पति चरित्र की अभिव्यंजना भी कवि ने आदर्शो राज्यतंत्र तथा जनतंत्र के उदात्त मूलों के प्रतिष्ठाता राजा राम की तरह सीता पति राम अपने निजत्व की वेदना को महसूस करते हुए असंग कर्म पर मानवीय उदयमता की भोग नियति स्वीकार कर अपनी पत्नी से नये संघर्ष के क्रूर आवाहन से अवगत कराते है।

''सीता !/तुम्हें नही लगता कि/हमारे वाद्य में

केवल/एक ही राग आज तक बजता रहा है-

विषाद का ?/तुम्हें प्रत्येक बार/चाहे वह विवाह हो

या युद्व /पाने की चेष्टा में/खोता ही गया हूं प्रिये!'' [37]

वह अपने जीवन के मांगलिक आरम्भ की उपलब्धियों मे आने वाली बार-बार केवल एक ही घटना को दोहराये जाने की विडम्बना को स्वीकार करते है। तथा कठोर राजव्रत के निर्वाहन में करूणा को स्थान नही देना चाहते।

पति रूप मे श्री राम का चरित्र अत्याधिक नागण्य है वन गमन से लेकर राज्य गृहण तक पति नही केवल राजा ही बने रहते है। वन प्रवास मे सीता की सेवा सुशुप्ता को पत्नी का धर्म नही आश्रित का कार्य मानते थे-

''इनकी थकान को माथे लगाती रही

पर ये उसे आश्रित का धर्म समझते रहे'' [38]

नारी प्रेम का उनके मन मे कभी स्थान नही रहा इसीलिये वह नारी प्रेम को कैसे समझते ? कारण वह

ऐसे पिता के सन्तान थे जिन्होने तीन-तीन व्याह रचाये थे।

"हाय वह पुरूष नारी के प्यार को क्या समझेगा

जिसके पिता ने तीन-तीन व्याह रचायें हो" [39]

प्रस्तुत खण्ड काव्य मे राम का चरित्र पति रूप कपटी एवं दाम्पत्य धर्म की भावना से परे हटकर कवि ने प्रथम दृष्टि मे उनके व्यवहार को केवल पति अभिनय युक्त ही चित्रित किया है-

"तब कितनी कपट कला/आंखों मे भर तुमन

सस्मिता अधरों सीता को विदा किया होगा।" [40]

"दाम्पत्य धर्म की पूत भावना का उस क्षण

गौरव गिरि से/तात्कालिक पतन हुआ होगा।।" [41]

लक्ष्मण की अभिव्यक्ति मे कवि ने सीता को वन विसर्जन से पूर्व निष्कासन के सम्बन्ध मे न अवगत करवाकर पति प्रेम मे तन्मय सीता के पति ने सीता के विश्वास को तोड़कर बहुत बडा छल करते है।

"हा सुखद भाग्य पर,

इतराती भाभी जिस बल,

उस बल संबल के हाथो

भोली छली गई।"

* * * * *

"निश्छल, निर्भम, निष्कपट

मृगी सी मुग्धा ने,

आखेटक की वंशी पर दृढ़ अनुराग

पाल रक्खा है हा,।" [42]

पति के रूप मे कवि के श्री राम का निर्णय नीति और विवेक अनापेक्षित है जो अपनी नारी का गर्भ मे पाल रही अवध के राजकुमारों को प्राप्त करने की प्रेम भावना रहित है।

पति कर्म की पुनीत भावना से परे हटकर कवि ने राम ने पति व्रत की प्रेरणा स्त्रोत देवी सीता की अग्निपरीक्षा लेने के उपरान्त निष्कासन करने से कपटपूर्ण व्यवहार का कृत्य प्रस्तुत किया है, जो अपनी कीर्ति के लिए अपनी प्रिया पर्णिता सिया को अपने राज्य स्वार्थ, प्रजा रंजक और यश प्प्ति के लिए सुलभ हव्य समझकर यज्ञ की आहुतति दे देता है।

कवि के श्री राम अपने प्रिया सिया के निष्कासन मात्र की कल्पना से बेसुध होकर भूमि पर गिर पडते है। जिस प्रकार एक सहज प्रेमी अपनी प्रेमिका के विछोह की कल्पना मात्र से भयातुर हो जाता है। एवं वदन का रक्त संचार क्षीण हो जाता है। उसी प्रकार राम की वेदना कवि के अभिव्यंजना मे चित्रित है। अस्तु राम का ऐसा सहज प्रेमी रूप प्रेम की उत्कृष्टता का पति पत्नी के सम्बन्धों को आदर्शो की कोटि पर निरूपित करता है-

"समाचार सुन गुप्तचर, से सुनकर श्री राम।

मूर्छित होकर गिर पडे, एकदम लीला धाम।।" [43]

कवि के राम मे अन्वय प्रेम का आकलन करना अति कठिन है। जो अपने नीतिमयी मर्यादाओं का प्रक्षेपण करते हुए लोक विश्वास के लिए स्वयं को मानवता की तुला मे तौलते हुए विषदंस के समान आर्त करने वाली करूणा दुसा दुःख भोगते है। परन्तु सीता से सम्बन्धित कुत्सित प्रवाद को नही सह पाते और निष्कासन का संकल्प लेते हुए रोम-रोम व्यथित हो उठते है। उनका पति मन सीता के प्रति लोक अपवाद को सर्वथा मिथ्या और अविश्वास पूर्ण मानते हुए, समर्पण की प्रतिमूर्ति के रूप मे देखते है-

"सजल लोचन/बोले/सीते तुम हो मंगल निधान।

प्रति प्रेम मूर्ति/सीता को तोलो लोकपाल,

बल विक्रय मे जो हो विशाल/भूपाल, सभासद न्यायपाल" [44]

राम का सीता से पत्नी का सम्बन्ध लक्ष्मण के वैचारिक दर्पण से प्रतिबिम्बित होता है-

"यह प्रियतमा श्री राम की, या सूर्य कुल की आन है।" [45]

काव्य मे यद्यपि बहुपत्नी प्रथा का वर्णन होते हुए भी सीता के प्रति समर्पित राम का उत्कृष्ट रूप वर्णित है। राम की शेष रानियां राम के इस व्यवहार से दुःखी सीता से ईर्ष्या करने के लिए विवश होती है-

"रमणियां राम की सब मिल सोच रही है।

सीता रहते किचिंत सुख हमें नही है।" [46]

पति राम का पत्नी सीता पर अटूट विश्वास आदर्श की आलौलिक ज्योति के रूप मे प्रस्तुत है। जिसको कवि ने अपनी व्यंजना में प्रस्तुत करते हुए-

"सीता कलंकिनी नही इसे मै जान रहा

सीता की ज्योति शक्ति को मै पहचान रहा" [47]

स्वयं निर्वासन का दण्ड देने के उपरान्त राम के अन्तःमन की चीत्कार विरह को आत्मसात करने के पूर्व ही मन कृन्दन करने लगता है। विरह दुख की कल्पना से उठे राम के मन की व्यंजन कवि ने किया है-

"भोगना पडेगा आजीवन घनघोर व्यथा

हो जायेगी अत्यन्त करूण अब रामकथा।" [48]

राजा के रूप मे लिये निर्णय से पति राम के मन की व्यथा उनके त्याग पूर्ण प्रेम को आलोकित करता है। जन संशय के निवारण हेतु वह इस आजीवन विरह व्यथा को सहने हेतु तैयार करते है-

"इस निर्मम निर्णय से मेरा मन शोकित है

मै प्राण व्यथित चिन्तित पीडित इस निर्णय से

मन कांप रहा है बारम्बार विरह भय से" [49]

भाई के रूप मे :-

माता के रूप मे राजा राम अपने तीनो भाइयों को मन्त्रणा ग्रह मे सीता से सम्बन्धित उठे लोक अपवाद के विषय मे मन्त्रणा करते है-

"मंत्रणा गृह में प्रातः काल/भरत-लक्ष्मण, रिपुसूदन संग

राम बैठे थे चिन्ता मग्न/छिडा था जनकात्मजा-प्रसंग।" [50]

भाई रूप मे भी महाराज राम के मन मे भावनावों का कोई महत्व नही है। लक्ष्मण महारानी को अपनी भाभी ही नही मां के समान पूजते थे, उन्हे ही यह राक्षसी कार्य भाता, राम के द्वारा सौपा जाता है। अपने अनुज की पीडा भी देख सके थे। रथवान ने लक्ष्मण की जिस पीडा की कसक को महसूस किया था।

"जिन भाभी को वह मां की तरह पूजते थे।

.........महारानी को, छोटे महराज को मुझको

यही नही अयोध्या की सारी प्रजा को इस घोर दुःख में डाल दिया।" [51]

सीता निर्वासिन मे कवि ने राम को भाई के रूप मे छली व अपने कार्य की श्रद्धा चेतना से युक्त पाता है। जो अपने भोले भाई को सपथ आवद्ध कर सीता को निर्वासिन हेतु विवस करते है-

"होगा कितना मादक/मोहक संलाप तुम्हारा राम!

ब्याल के सदृश कुण्डली मार/लखन की आत्मा को घेरा होगा।" [52]

"लक्ष्मण पर मारण मंत्र/सफल अपना लखकर

करूणाकर दीन दयालु आप/निश्चय ही हर्षाय होगे।" [53]

राम का सम्बन्ध भाई रूप मे वर्णित उत्कृष्ठ प्रेम का अतुलनीय उदाहरण है। लक्ष्मण कौशिल्या के सम्वाद मे प्रकट होता है-

"पूज्य पिता जी तुल्य प्रेम पाया था भाई जी का।" [54]

भाई के रूप मे राम की आदर्श प्रतिष्ठा राजा के रूप मे कही सर्वोत्कृष्ट है। जो गेह के किसी भी रिस्ते को राजा के धर्म के सामने तनिक भी स्थान नही देते है। कवि की अभिव्यंजना मे लोक भावना के लिये समर्पित धीर गम्भीर श्री राम अपनी ही तरह अपनी भाभी के विरह दुःख की अनुभूति से लक्ष्मण, भरत और शत्रुघन को परे रहकर आचरण करने की सलाह देते है-

"हे बन्धु! नही राजा का तुम अपमान करों

राजा जब बना दिया है तो सम्मान करो

छाती पर पत्थर रख लेना तुम भी भाई

जीवन की सबसे कठिन घडी मेरी आई।" [55]

प्रेमी के रूप में :-

प्रेमी रूप मे राम का चरित्र चत्रिण करते हुए कवि ने राम के प्रेम का वर्णन कथन के इस प्रकार किया है-

"जिसकी सुख-सर्वस्य तुम्ही हो/जिसकी हो आनन्द-विधाता

जिसकी तुम हो शक्ति स्वरूपा/तो तुमसे पौरूष है पाता।" [56]

प्रेमी के रूप मे श्री राम के प्रेम की संवेदनशीलता कवि के द्वारा लगाये गए आरोपो से प्रकट होती है तो ह्रदय के अन्तस से उगकर टीस वृक्ष बनकर प्रकट होता है-

"जो रोम रोम मे रमी/राम की रमा/प्राण जो जीवन की" [57]

राम का विरह स्वरूप :-

जन अभिमत के शंसय का निवारण करने हेतु एवं सीता की अपकीर्ति से उद्वेलित होकर राजा के आदर्श एवं जनमंगल हित हेतु आत्मा त्याग का संकल्प मन मे विराग भरकर लेते है। वैदेही राम का प्रेम अलौलिक था परन्तु जनवाणी से प्रेमी राम का ह्रदय विदीर्ण हो जाता है। और विवश होकर निष्कासन का दण्ड निरूपित करते हुए अपने जीवन मे वैदेही के वियोग से होने वाली करूणा का अहसास करते है-

"पर हाय, अलौलिककते! तू लौकिक छवि भी है
है राम राम भी और शममय रवि भी है।
दण्ड दूं किसे-दण्ड हूं किसे दण्ड दूं उसे?
गर्भिणी जानकी को अथवा ज्योति को? किसे ?" [58]

अतेव भविष्य और वर्तमान के बीच चारित्रिक शासन की स्थापना करने के लिये आत्मत्याग का मार्ग निरूपित करके स्वयं को विरह की अग्नि मे जलने के लिये छोड देते है।

"जन मंगल हित करना ही होगा आत्मत्याग
भरना ही होगा विश्व हेतु मन में विराग" [59]

राम के इसी स्वरूप मे कवि ने अपनी कलम को एक और प्रशंग मे विरह करूणा की अभिव्यंजना की है। जो लक्ष्मण को निर्वासन आदेश देते समय प्रकट होती है-

"संशय का प्रश्न निरूत्तर नही रहेगा अब
आजीवन विरह दुख को राम सहेगा अब" [60]

आराध्य रूप में :-

महर्षि वाल्मीकि के पद चिन्हों का अनुशरण करते हुए कविवर के राम विशुद्व अवतारी है। जिन्होने महि का भार कम करने के लिए अवतार लिया था। परन्तु अपने आप को मर्यादाओं की सीमा पर रखते हुए अपने आराधक के प्रति भक्त वत्सलता का कार्य किया है। सुरथ के द्वारा अश्व को बाध लेने पर उसके दर्शन मात्र की अभिलाषा पूर्ण करने हेतु स्वयं उपस्थित होते है-

"था एक सुरथ राजा उसने, पकडा कर घोडा बांध लिया।
बोला कि राम दर्शन दे दें, तब छोडेगे प्रण कठिन किया।" [61]

राम की भक्तिवत्सलता :-

भक्तिवत्सलता के रूप मे कवि के उद्वेलित मनः स्थितियों के उपरान्त भी कवि के द्वारा लगाये गये आरोपों से तनिक भी विचलित न होकर श्री राम कवि को पूर्ण रूप से अस्वस्थ करके अपने प्रिय भक्त के रूप मे स्वीकार किया है। जिससे कवि का शंकाकुल मानष निर्मल हो जाता है कवि के द्वारा की इस अभिव्यक्ति से स्पष्ट है-

"तुझ जैसे भावुक/एक भक्त पर

बलि रे कोटिक/भक्तराज।'' [62]

शिष्य के रूप में :-

कवि ने अपने श्री राम को निर्वासन संतृप्त वेदना के कारण गुरूवशिष्ठ को भी अपने द्वारा प्रदत्त शिक्षा दीक्षा मे रह गयी त्रुटि की वजह से अपनी गुरूता को बार-बार धिक्कारा है-

''सीता के प्रति अन्याय अधम/गुरू के रहते
गुरू को धिक गुरू की, शिक्षा को/ कहते होगे।'' [63]

सीता का चरित्र चित्रण

पत्नी रूप में :-

सीता को कवि ने जनक तनया उदार पति परायणा, सहृदय पत्नि के रूप मे चित्रित करते हुए, उनके चरित्र को त्याग और समर्पण की प्रतिमूर्ति के रूप मे प्रतिष्ठित किया है। जो पति के लोकोत्तर त्याग को संभव के लिये निर्वासन की विरह जनित वेदना को शिरोधार्य करती है-

''वही करूंगी जो कुछ करने की मुझको आज्ञा होगी।
त्याग, करूंगी, इष्ट सिद्वि के लिये बना मन को योगी।
सुख-वासना स्वार्थ की चिन्ता दोनो से मुंह मोडूगी।
लोकाराधन या प्रभु-आराधन निमित्त सब छोडूगी।'' [64]

सीता का सहज व्रत पति अनुराग ही मात्र है। जो अपने पति प्रेम के सिवाय स्वर्ग के सुखों को भी तुच्छ मानती है। उनके लिए पति की गरिमा कीर्ति और कर्तव्य ही सर्वोपरि है। इसीलिए पति के द्वारा परित्यक्त किये जाने वाले प्रस्ताव को स्वीकार कर आदर्श और प्रेम की उदात्त भावना को प्रस्तुत करती है-

''जिससे कि आपकी गरिमा।
बहु गरीयसी कहलावे।।
जिससे गौरविता भू हो।
भव मे भवहित भर जावे।।'' [65]

कवि ने सीता के पवित्रव्रत का वर्णन करते हुए उसमें अलौलिककता का भाव व्यंजित किया है-

''पति-गत प्राणा ऐसी हुई न दूसरी।
कौन धरा की सतियों की सिरमौर है।।'' [66]

सीता के अनन्य पति प्रेम की व्यंजना पुनीत और मार्मिक रूप मे प्रकट है-

''जो पति प्राणा है पति इच्छा पूर्ति तो।
क्या न प्राणपण से वह करती रहेगी।।'' [67]

अपने पति प्रेम का अनुराग मन मे धारण किये हुए प्रीतम के ध्यान मे निमग्न होकर अपने निर्वासन की करूणा को दबाने के प्रयास मे राम के स्वाभाविक गुणों पर विचार करती है-

''पर निरपराध को प्रियतम

ने कभी नही कलपाया।।

उनके हाथों से किसने।

कब कहा व्यर्थ दुख पाया।'' [68]

सीता के पति प्रेम का उत्कृष्ट दर्शन यहां भी होता है जो निर्वासन के उपरान्त अपनी पीडा के सदृश्य ही पति की पीडा का अनुमान करती है-

प्रियतम समान जन-रंजन/भव-हित-रत कौन दिखाया

''पर सुख निमित्त कब किसने/दुख को यो गले लगाया'' [69]

देवी सीता के पति प्रेम की अभिव्यंजना कवि ने उनके प्रेम को समस्त स्वार्थो से परे माना है-

''सेवा उसकी करू साथ रह/जी से जिसकी दासी हूं।

हूं न स्वार्थरत, में पति के/संयोग-सुधा की प्यासी हूं।'' [70]

सीता के चरित्र की अभिव्यंजना कवि ने भारतीय नारी की भांति त्याग, तपस्या, सौम्यता, तथा पति पारायणता के लिये समार्पित, सत्व के मार्ग पर आने वाली समस्त बाधाओं को निर्विकार मन से ग्रहण करना अपना कर्तव्य मानती है। इसीलिए अपने पति राम को असंग कर्म की चिन्ता से मुक्त करने के लिए यथोचित मार्ग दर्शन करती है-

''आर्य पुत्र!

किसी के मोह का

यह कोई अर्थ नही'' [71]

और वह राजा की मर्यादाओं की उदात्तता के लिये अपने पति राम से राजा राम के लिये प्रेरणा देती हुई जनमत को महत्व देती है, जो राजा व राष्ट्र का स्थाई निर्वाण करता है-

''उसकी मैं साक्षी भी रही हूं आर्यपुत्र!

समुद्र को बांधने से भी

बडा था

रावण के विरूद्व

अनन्य जनमत को तैयार करना।'' [72]

सीता की पति परायणता आसन्त मातृत्व के संकट मे भी न्याय और शक्ति के लिये स्वयं को भी परीक्षा के हेतु तैयार रखते हुए राम को भी सम्बन्धो से ऊपर हटकर अनाम प्रजा के विश्वास की अभिव्यक्ति की रक्षा के लिये अश्वस्त करती हैं-

''और अपनी चरित्र मर्यादा के लिए

कोई सी भी परीक्षा दे सकती हूं

पर प्रजा के विश्वास की

निर्भय अभिव्यक्ति की रक्षा अनिवार्य है।'' [73]

पत्नी सीता के मांगलिक जीवन का प्रारम्भ होते ही घटनाक्रम मनः वेदना को जन्म देना प्रारम्भ करता है। परन्तु उनका आदर्श जो नारी तत्व को चैतन्य तत्व से जोड़कर राज्य राष्ट्र और अभिव्यक्ति के महत्व मे राजा के लिये अपने स्व को समर्पित कर जनतांत्रिक चेतना को प्रतिष्ठित किया है। यद्यपि इन्दीयगम्य सीता अपने पति राम को प्राप्त करने के पूर्व ही उनके इतिहास पुरूष होने का अनुमान पूर्व निरूपित कर चुकती है। अतः यहां आत्म संयम की अनिवार्यता के महत्व की धुरी दर्शन को जन्म देती है। इसीलिये वह उस अनाम आवाज के समर्थन मे पति राम, कर्म से अधिक महत्व राजा राम के कर्म को देती है-

''आर्य पुत्र!/यदि सभासद/मंत्री आपके बन्धु
उसके साथ अन्याय कर रहे हो तो /आपको
मुझे इस/राज्य को भी त्याग कर।'' [74]

पत्नी के रूप मे सीता का चरित्र वर्णन परम्परा के अनुरूप आदर्श और समर्पण की मूर्ति के रूप मे किया है। निष्कासन के उपरान्त सीता लक्ष्मण से राजा राम को सन्देश देने के लिए कहना चाहती है, परन्तु राजाज्ञा से विवश केवल ''आज्ञा शिरोधार्य है'' [75] प्रजा का स्वीकार्य धर्म मानती है। कवि ने सीता के चरित्र की अभिव्यंजना युगीन नारी के युगानुरूप किया है-

''अब वे महाराज है/और मै उनकी प्रजा'' [76]

पति के प्रासृय को त्यागने के उपरान्त महारानी सीता पत्नि के कर्तव्यों से स्वयं को मुक्त मानती है। कौशिवी से अश्वमेघ सेना का आगमन ज्ञात होने पर एक बार पुनः अपने आपको मोह बंधन मे आबद्ध करते हुए महसूस करती है, परन्तु स्वयं को इस मोह लिप्सा से तुरन्त बाहर निकालकर अपने पूज्य पति के द्वारा किये गये अनुचित निष्कासन की स्मृति से मन वितृष्णित हो जाता है। और जब उन्हें यह ज्ञात होता है कि अश्वमेघ मे श्री राम का आमन्त्रण सीता की पवित्रता को जनसमुदाय के समक्ष दोनो पुत्रों की सौगन्ध खाकर प्रस्तुत करवाती है तो वित्रष्णा मुखर हो उठी है-

''मै-अयोध्या की महारानी, राम की परिणीता-
मै आंखो मे आंसू भरकर
*** * * * ***
कि मै पवित्र हूं'' [77]

तदोपरान्त वह अपने जीवन के भोगे कष्टों का मूल्याकंन पति राम के कृत्यों से करती है, तो प्रतीत होता है कि राम के समस्त निर्णय भावना रहित केवल राज्य और संग्राम-विजय के लिये ही होते है।

आधुनिक नारी बोध के चरित्र को धारण करने वाली कवि की पात्रा सीता अपने मुखर कत्थों से रघुवंशियों के खोखले आदर्शो मे सत्य की खोखली गर्जना प्रतीत होती है। सीता महर्षि वाल्मीकि के समक्ष मुखर होती है। कि रघुवंश का प्रत्येक पुरूष भावना रहित केवल विजय उन्माद पर ही जीता है। वही नारी प्रेम के बदले राज्य मांगती है प्रजा के अन्तःकरण को कभी न समझने वाले प्रजा-पालक बनने का ठोग करते है। ''सीता के कत्थ पति राम के कर्तव्यों से विमुख हो जाने की तर्क संगत अभिव्यक्ति प्रस्तुत करके अपने आपको पति वांक्षिता, विरही

से भी युक्तकर आदर्शों और निष्ठाओं की चादरों को उतारकर फेक कर वह समझती है कि वास्तव मे जीने का प्रयोजन कुछ नही है। राम और राज्य की निष्ठा शास्त्रों और यज्ञो मे है। और शास्त्रों के मत के अनुसार-

"शास्त्रो का तो वचन ही है कि भार्या पुत्र-प्रप्ति के
ही लिए की जाती है।" [78]

तभी वह मात्रत्व और पतिनित्व से नाता तोड़कर आत्मसात कर लेती है

"छोड दो मेरे बेटो!
मेरी और दुर्गति न कराओं!" [79]

"इन्होने पत्नी को अपनाया ही कब था?
ये तो राज्य के मतवाले थे,
विजय-श्री के भूखे थे,
प्यार से इन्हे लगाव ही कब था?" [80]

पत्नी के रूप मे सीता का चरित्र चित्रण कवि के द्वारा आदर्श एवं पति के हेतु सम्पूर्ण समर्पण के लिए प्रसस्थ धर्म पारायणा का उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत है जो पति के यश हेतु सर्वस्व अर्पण करने के लिए पूर्ण श्रद्धा से हरपल तत्पर रही है। जो अपने निर्वासिन को भी अपने प्रभु का अभिष्ट मानकर करती है-

"यदि मेरा निर्वासन/ मेरे प्रभु का अभिष्ट
तो शिरोधार्य वह सीता का स्वीकार्य धर्म" [81]

जो अपने पति राम के रामत्व को ज्योविंत करने के अपने सौ जन्मो को उत्सर्गित करने में सार्थक मानती है। कवि के अभिव्यक्ति में सीता के सीता तत्व की सार्थकता का वास्तविक मूल्य यही है-

"रामत्व तुम्हारा ज्योविंत
* * * * *
होगी निर्वासित विशेष" [82]

देवी सीता का चरित्र सम्पूर्ण समर्पण की पराकाष्टाओं को पार करके चित्रित है। कवि की अभिव्यंजना मे वन गमन पथ पर होने वाले अशुभ लक्षण से भयभीत होकर देवी सीता का मन अपने मुनि आश्रम अवलोकन निर्णय को अधार्मिक मानता है। क्योकि एकांकी प्रवास का वह समय पति सेवा के कार्य मे प्रयुक्त नही हो सकता था। स्पाष्टतयः उनके दृष्टिकोण मे पति से बढ़कर कोई पूज्य नंही है-

"हा धर्म विरूद्व स्त्रियों को, मिलता न स्वर्ग मे ठौर कहां।
स्त्री के लिये पति से बढ़कर, जग मे कोई पूज्य नही।।" [83]

पत्नी के रूप मे देवी सीता का स्वरूप वर्णन करते हुए कवि ने शील की प्रतिमा तथा पति मंगल हेतु समर्पित त्याग और तपस्या की उतुंग सोपान पर प्रतिष्ठित किया है। जो पति के प्रति अन्वय प्रेम के लिए सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया है जो मन क्रम वाणी से पावन पति व्रत की रेखा खींचकर अखिल विश्व मे लोकप्रिय है-

"कर दिया समर्पण जीवन क्रम वाणी

पावन पतिव्रत की रेख विश्व ने जागेगी'' [84]

उनके प्रेम का निष्कर्ष कवि वर्णन मे चित्रित है। जो की अनुशंसा को ही सर्व प्रिय मानती है-

''हे तात! मैथिली जन्म जन्म की चेरी

है छिपी कौन सी बात राम से मेरी।।

राघव का प्रिय अनुशंस मुझे नित भाया

हे राम तुम्हारी अति विचित्र है माया।।'' [85]

पति के प्रति समर्पण का उत्कृष्ट और परिष्कृत स्वरूप कवि की सीता मे देखने को मिलता है जब लक्ष्मण के द्वारा निष्कासन का समाचार प्राप्त होता है। उस रोम-रोम को पुलकित करने वाली वेदना से छटपटाती हुई भी वो अपने प्रभु को किंचित मात्र भी दोष नही देती है। उनका उत्कृष्ट प्रेम उनके संदेश से मुखरित होता है-

''मम हृदय उद्विग्न भावावेश में है

क्या दया के धाम घट-घट प्राण मे है?

क्यो चरण रज अंत मे, मै छून पाई?

बात क्यों वन की प्रभु मुझसे छिपाई?" [86]

सीता का चरित्र-चित्रण पत्नी रूप मे आदर्श और सुचिता त्याग, तपस्या और पतिव्रता के आदर्शो का प्रतीक है। कवि की अभिव्यक्ति जिसे अति उदात्म बना देती है-

''स्वर्गीय, सुख बहु-भोग जिसने बात मे ठुकरा दिये।

वन की विपद जिसने उठाई, एक पति व्रत के लिये।।'' [87]

निष्कासन अबला की वेदना विश्वासघात से फूट पडती है। परन्तु पत्नी का सम्बन्ध पति के लिए निर्णय के प्रति समर्पित होने के लिए बाध्य कर देता है। कृतान्तमुख से अपने पति के लिये सन्देश देती है। सत्य और सहानुभूति के प्रति समर्पित रहने के मूल्य आपेक्षित होते है-

''मेरी अनुपस्थिति मे कृपया/प्राणेश्वर! बने रहे धार्मिक

जीवन मे कभी नही भूलें/हृदयेश्वर! ये बाते मार्मिक '' [88]

भारतीय आदर्श की अक्षुण मिसाल के रूप मे माता सीता के ख्याति भारतीय समाज को आलोकित कर लोक भावना को त्याग तपस्या की ज्योति से सुरभित करती है। जैसे ही लक्ष्मण के द्वारा अपने निष्कासन और हेतु का ज्ञान होता है कदाचित उनके हृदय स्थल पर दुसः करूणा की अनुभूति अवश्य होती है, परन्तु अपने इस दुर्भाग्य को अपना स्वयं का भाग्य मानकर स्वीकार करती है। कवि शब्दो में देवी सीता की धर्म सुचिता एवं वेदना निर्वासन की पीडा से प्रकट होती है-

''अपनी ही ज्योति लिए सीता चल रही आज

वह भारत धर्म दीपिका सी जल रही आज !'' [89]

भारत की धर्म दीपिका को प्रज्वालित करने के लिए पति के द्वारा प्राप्त पीडा मय निर्वासन को स्वीकार कर भी उनका मानस पति के न्याय से जरा भीसंशक्ति नही होता-

"धिक!सोच रही उनके विरूद्ध क्यों आज अभी?

कर देती है पीडा पथ-विचलित कभी-कभी!" [90]

अपनी पीडा अपने आसुओं के साथ बहाने का प्रयत्न करती हुई दुख सहकर भी पति के जय की कामना और उनकी प्रशन्नता को स्थाई करने के लिए स्वयं के ह्रदय का पीडा से परिष्करण कर स्वयं को दुशचिन्ता से बाहर निकालती है-

"योगी की बेटी! दुख से बढ़कर कौन योग?

वैदेही ! तू करने आई थी अला भोग?" [91]

विपत्ति के इस समय मे भी पति से निर्णय के विरूद्ध स्वयं को विचलित न होने देना भी पति के निर्णय के विरूद्ध स्वयं को विचलित न होने देना पति परायणता का अनुपम और उत्कृष्ट दर्शन होता है। उनके अन्तः मन पर परस्परिक प्रेम का किंचित ह्रास नही होता-

"आत्मिक सम्बन्ध कभी भी नही छूटता है

भीतर का प्रेम कभी भी नही टूटता है।

कर्म ने उन्हे निर्मोही बना दिया है री,

धर्म वश उन्होने निर्णय स्वयम किया है री !" [92]

पत्नी सीता का दृढ़ विश्वास इतना प्रबल है कि प्रथम गंगा के तट पर लक्ष्मण के द्वारा निष्कासन का निर्णय सुनने पर भी वह अपने पति राम के प्रति [illegible] नही होता

"ईश्वर है!मै कितनी दुर्भाग्य मईनारी

कुछ भी हूं लेकिन हूं तो मैं प्रभु की प्यारी" [93]

सीता का प्रेयसी रूप :-

मर्यादा, कुलशीलता, क्षमा, दयाशीलता और मृदुला आदि दिव्य गणो से अलंकृत पति का आलम्बन करने वाली सीता का पति अनुराग समर्पित प्रेयसी की भांतिया प्रस्तुत कर विरह वेदना का वरण करती है। पति के साथ स्वयं निर्वासिन का वरणकर राजसी वैभव, भौतिक सुखों को त्याग दिया था।

लोक अपवाद से विदीर्ण पति राम की वेदना को ज्ञात करते ही लोकहित निमित्त चित्र की विकलता को तुच्छ मानकर राम के निर्णय को स्वीकार कर लेती है। प्रेम की वृत्ति समर्पण हेतु सीता का उत्सर्ग के लिए कवि की अभिव्यंजना परम वन्दनीय है-

"सदा आपका चन्द्रानन अवलोके ही मे जीती हूं।

रूप माधुरी-सुधा तृष्ति वन चकोरिका समपीती हूं।।" [94]

"अनुरागी लोक-हित की वन सच्ची-शान्ती-रता हूंगी।

कर अपवर्ग मंत्र का साधन तुच्छ स्वर्ग को समझूंगी" [95]

प्रेयसी के रूप मे सीता की चारित्रिक अभिव्यंजना मे जीता के अनन्य प्रेम की कसक जो राम के इतिहास पुरूष या पुराण पुरूष बनने की मीमांसा ने अन्तः मन मे एक वेदना भरी आह का वर्णन भी कवि ने किया

है-

"आरम्भ से ही मैने/आपको नही/स्वयं को बन्धनो मे बांधा
क्योकि/मुझे तो/इतिहास और/इतिहास-पुरूष के पार्श्व मे
केवल एक प्रतिमा सा खडा होना था। " [96]

नाट्य काव्य मे सीता ने स्वयं को राम की प्रेमिका के रूप मे स्वीकार करती है। क्योकि पुष्प वाटिका के प्रथम मिलन मे नेहो पर प्रेम का अंकुरण हुआ था, इसीलिए उन्होने राम से विवाह नही स्वयंवर चुना था और वह प्रेम ही था जिसके वशीभूता सीता ने चौदह वष वनों की भीषणता मे बिताये थे। दशरथ (ससुर) और (सास) कौशिल्या के रोकने पर भी वह स्वयं को न रोक कर परछाही की भांति राम के साथ वन चली जाती है।

"मै पत्नी नही प्रेयसी हूं।
नही प्रेयसी नही प्रेमिका-
राम की प्रेमिका।" [97]
मेरे पिता ने मेरी आंखे बंद करके
इनके हांथो मे मेरा हाथ नही सौपा था
मैने स्वयंवर रचाया था।"
* * * * *
"अपने ही मन प्रेरणा से
इनके गले मे वर माला डाली थी।" [98]
* * * * *
"जब इन्हें वनवास मिला था
तो क्या कोई सोच भी सकता था
मै इनके साथ चल पडूंगी?
* * * * *
क्योकि मै इन्हे प्यार करती थी
जहां ये न हो वहां मै कैसे रह सकती थी?" [99]
"इनका मन राज्य की उधेड़बुन मे उलझा था।
नारी के प्यार को जानने का
इन्हे अवकाश कहां था?" [100]
"नारी जिसे प्यार करती है उसके दोष नही देखती।" [101]

लंका मे हनुमान जब संदेश वाहक वन पहुंचे तो सीता हनुमान के साथ ही शीघ्र राम के पास पहुंच जाना चाहती है। वह "प्रेम के बीच विरह को स्थान नही देना चाहती है परन्तु राम केवल विजय लिप्सा की पूर्ति चाहते है। और जब अयोध्या मे राज्य प्राप्त कर लेने के उपरान्त राम एक मात्र दुर्मुख के भाष्य को सत्यता का

कलेवर चढ़ाकर निष्कासित कर देते है। तो इस अपमान को सीता सह लेती है। और प्रजा वन उसे निकिष्ट आदेश को स्वीकार्य धर्म मानती है। कही भी मन के किसी कोने मे भी एक प्रतिरोध नही होता है। प्राचीन नारी के सम्पूर्ण आदर्शो की संम्वाहिका वन अंध नियति की कठपुतली मानती है। मात्रत्व के आदर्शो ने जीवन जीने को विवश होती है। और जब युद्ध विजय लिप्सा से राम अश्वमेघ का निनाद करते है। उनके स्वर सीता तक पहुंचते है, तो वह पुनः मातृत्व से जागती है और प्रेम के श्रोत फूटने से लगते है। कद्ाचित इसी अभिप्राय से वह अपने प्रेमी राम को मानसिक सन्देशो से अवगत कराना चाहती है। कि मेरे आराध्य अपने जीवन के इस विजयी अभियानों से परे हटकर आत्मजयी बनने का प्रयास करो। अपनी तुमुल निनाद के तले प्रजा की कराह को सुनने का प्रयास करो? जीवन और धर्म का सत्य यही है।

सीता जब अश्वमेघ के हेतु अपना आमंत्रण तथा उसके कारण को जानती है कि मुझे वहां उपस्थित होकर सौगन्ध खाकर अपनी पवित्रता सिद्ध करनी पडेगी तब प्रेमिका सीता का मन अपने प्रेमी राम के विश्वास को पूर्णतया खो देता है और उन्हे जीवन मोह से विरक्तता हो जाती है। और उनका जीवन से मोह भंग हो जाता है। तब वह अपनी सम्पूर्ण अभिव्यक्ति वाल्मीकि के समक्ष रखते हुए बताती है कि राम जिनकी धर्म नीति और आराधना केवल विजय लिप्सा और समस्त वसुधा को अपनी बाहों मे समेट लेने की महत्वाकांक्षा उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य है। वह एक ऐसे वंश मे पैदा हुए है जहां का प्रत्येक सदस्य भावना रहित है जो प्रेमिका के आत्मीय समर्पण का अपनी आश्रित मे रहने वाली का धर्म ही मानते है। और मेरा जन्म तथा संस्कारो मे मेरे विरक्त पिता के गुण है। और दुखो का कारण मेरी प्रेममयी भावना ही है। आज मुझे पुनः प्रजाजनो के मध्य प्रर्दशन के लिये बुलाया जाना प्रतीत है। मेरे आत्म सम्मान के हनन का और आज मै उस प्रेम निद्रा से जाग उठी हूं। रामराज्य के सत्य से परिचित अपने प्रेमी राम को भी पहचान चुकी हूं। और वह प्रेम जीवन का आग वन गया है।

प्रेमिका के रूप मे सीता का चरित्र अपने प्रिय श्री राम के प्रेम मे तनमन उत्साहित और पुलकित होता है जो निश्चल विश्वास के गगन तले अपने आपको सबसे ज्यादा भाग्यशाली मानती है। प्रीतम के द्वारा वन विसर्जन को अपना मन रंजन कार्य मुदित मन से मानते हुए प्रेम की नैसर्गिक पराकाष्ठा तक पहुंचकर मन का चित्रण मिलता है जिसे स्वयं सीता जी गर्भिणी मयूरी के नृत्यन को देखकर तन्मय प्रिया मोहनी का मन रंजन करता हुआ मत्य मयूर मन मुदित हो उसी प्रकार सीता की इच्छा पूर्ति मे राम की आतुरता का वर्णन उनके विश्वास मे बसे उत्कृष्ट प्रेम का प्रतीक बन जाता है-

"तन्मय हो अपनी प्रिया मोरनी का

* * * * * * *

हर क्षण तत्पर।" [102]

प्रेम के चरम मे गंगा के पवित्र प्रवाह भूतल पर प्रवाहित कर जीवन रस को प्रेम के मधु से अमृतमयी बनाने वाली देवी सीता के प्रेममयी भावना का कवि ने सरस वर्णन किया है। अपने पति के प्रति प्रेम का दिव्य रस धारा मे निर्वासन निर्णय ज्ञात होने के बाद भी ठहराव नही आने देती है। अपनी इस नूतन यात्रा को अपने प्रियतम राम के साथ बिताये हुए सुखद स्मृतियों के संरक्षण मे शेष जीवन व्यतीत करने का निर्णय करती है। अपने मन मे

उत्पन्न प्रेम की प्रथम अनुभूति की स्मृतियों को जागृत करती है-

"जयमाल उन्हें मैने ही तो पहनाई थी

कितनी प्रसन्नता उस दिन मन पर छाई थी।" [103]

वियोगिनी रूप में :-

देवी सीता का निष्कासन यद्यपि कुलप्रथा का अनुशरण मात्र था, परन्तु रामकथा मे सीता राममय राम सीता मय थे यह निष्कर्ष निकालना अत्यन्त कठिन है। अतः राम से दूर रहने की पीडा को सीता के विरही स्वरूप का कवि ने चर्मोत्कर्षक वर्णन किया है। अनिश्चित काल की विरह वेदना सीता की आर्त चित्त का कारण बनकर कवि की व्यंजना मे प्रकट होता है-

"वियोग का काल अनिश्चित।

* * * * * *

रोम-रोम मे रमी हुई है।।" [104]

नारी स्वभाव के सुलभ प्रपंचनाओं मे फंसा हुआ सीता का मन मिलन की लालसा को व त्याग से लोलुप लिप्साओं का तिमिर व्यथित करता है-

"मै अबला हूं आत्मसुखों की।

* * * * * *

तो इसमें है विचित्रता क्या।।" [105]

आश्रम प्रवास मे भी सीता अपने अतीत की प्रीति का निरन्तर रसास्वादन करती है। विरह व्यथा की तरंगो ने अपनी प्रीति सुधा के सागर मे वावली होकर डूबने लगती है। उन्हे पति वियोग के समक्ष संसार के समस्त सुख तुच्छ लगते है-

"तुच्छ सामने उसके भव-सम्पत्ति है।

पति-सुख पत्नी के निमित्त है स्वर्ग-सुख।" [106]

फिर भी वियोगिनी सीता वेदना की समस्त यातनाये पति की प्रशन्नता हेतु सुख पूर्वक ग्रहण करती है-

" मम-ममता देखे पति-प्रिय-साधन बदन।

सर्व यातनायें सुख पूर्वक सहेगी।।" [107]

पीड़ा की पावन प्रतिमूर्ति सीता विरह वृथा की करूणा से कान्तिहीन अतुलित सौन्दर्य की स्वामिनी श्रंगार शून्य होकर विरह की तरल करूणा को आंखो से प्रवाहित कर वाल्मीकि आश्रम को भी अपनी करूण व्यथा को सहचर बना देती है। वह वन के भोले भाले जीवों को भी अपनी पीडा का परिचय कराती है-

"यह गरल मानवी जीवन का/अमृत करके

मेरी आंखो को पीने दो,।" [108]

देवी सीता को विरह वेदना से प्रकटी विरहणी सीता ह्रदय भावावेश मे क्षणिक रूप से संलिप्त तो अवश्य होती है। परन्तु आदर्श और सुचिता की महिमा को संरक्षित रखते हुए अपने अटल विश्वास को प्रेम के

पयोधि मे ही डुबाये रखना चाहती है। तथा राम की मर्यादा के प्रति सजग प्रहरी की भांति विरह वेदना सहने को तत्पर है-

"तात! रघुकुल की न मर्यादा मिटेगी/राम ही का नाम मम रसना रटेगी
मै मिटूंगी जन जनार्दन के लिए अब/राम पाले राज्य नित निद्रंद बनकर।" [109]

मैथिली के विरह जीवन का वर्णन करते हुए कवि ने देवी सीता के चरित्र को कर्तव्य निष्ठा के पथ से विचलित नही होने देता। निर्वासिन के उपरान्त भी वह अपने पति के विरह पीडा से ज्यादा चिन्तित नजर आती है। परन्तु नारी मन की कोमलता को नही त्याग पाती है-

"कुछ भी हूं नारी हूं-नारी हूं-नारी हूं
देवता तुम्हारी ही तो प्रिय फुलवारी हूं।" [110]

अस्तु अपने विरह पथ की यात्रा अपने प्रियतम राम की सजल यादों के सहारे गुजारने का आत्म संकल्प करती है। और अपने इस वन यात्रा में पति के यादों के संबल मे भय विहीन सबला स्वयं को बताती है-

आगे-आगे तुम, पीछे-पीछे मै सबला
इस विरह पंथ पर किससे क्यो-क्यो मै डरू भला।" [111]

कवि के द्वारा सीता के चरित्र का वर्णन अत्यन्त उत्कर्ष है जो अपनी विरह व्यथा से परे होकर सीता के इस त्याग को लोक आराधना के निमित्त मनुज सम्यता को सुरक्षित करने के लिये अपने मन भावना के समस्त सुखों को विसर्जित कर दुखो के तमस का वरण कर समता के संस्थापक पति राम को महाविरह से निवृत्त रहकर समता का सत्य मार्ग स्थापित करने की मनः प्रेरणा देती है-

"मिल जया दुख में सुख में सुख मे दुख हो विलीन
समता का सत्य-मार्ग ही जग-हित समीचीन।" [112]

महारानी रूप में :-

आदि नारी देवी सीता का चरित्र आदर्श की अलौकिकता से परिपूर्ण अपने प्रत्येक रूप मे जनमानष के रोम-रोम मे रच बस गई थी। जहां पर उनके द्वारा समर्पित जीवन पति व्रत का आदर्श चेतना है। वही पर जन कल्याण और लोकोत्तर भावना के कारण लोक मानस पर बसी हुई है। जिनके निष्कासन के उपरान्त अवधपुरी का जनमानस ही नही पशु पंक्षी एवं राज महल आदि जड़ चेतन भी संतप्त वेदना से पल-पल सिसकते है-

"मणि दीप ज्योति हत निश्चल राम हुए होगें
* * * * * * *
उपवन के तरू लता गुल्म।" [113]

सीता की चारित्रिक अभिव्यंजना मे कवि का दृष्टिकोण राम के चरित्र से कही अधिक उच्च आदर्शो मे प्रतिष्ठित होता है। सीता के त्याग, तपस्या, समर्पण और साधना के समक्ष राम का लोक धर्म व्यर्थ प्रतीत होता है। सीता के नारी सुलभ व्यंग से रामराज्य की न्याय व्यवस्था छिन्न-भिन्न होती प्रतीत होती है। इसीलिये वो शुद्ध चरित्र होते हुए अपनी चारित्रिक सफाई झूठे प्रवादों के सन्दर्भ मे नही प्रस्तुत करना चाहती है। सीता के अनुसार रामराज्य

मे शिक्षा और ज्ञान का सर्वत्र आभाव होता है। इसीलिए वो काल के परिवर्तन की परिकल्पना करती है। वह राम के फैसले से व रामराज्य के रीत-भीत से सन्तुष्ट नही होती है-

"नर-नारी मे मर्यादा के बोध/ सम-सम होगे सम-सम होगा न्याय
सम-सम होगे विद्या-बुद्वि-विवेक/टिक सकता है क्योकर वहां प्रवाद
जाग्रत होगी जहां परख की आंच।" [114]

वैदिक मतान्तर पर आधारित भारतीय संस्कृति के इतिहास मे देवी सीता का स्थान बहुत ही आदर से अंकित किया जाता है। आदि कवि महर्षि वाल्मीकि से लेकर वर्तमान कवियों ने भी उनके नाम का उल्लेख उसी परम्परा के अनुरूप किया है। आदर्श, त्याग आदि सम्पूर्ण संस्कारों से परिपूर्ण देवी सीता का जीवन कवि के दृष्टिकोण मे उतना ही आदरणीय है, जितना महर्षि वाल्मीकि के रामायण मे निरूपित है।

वधू रूप में :-

रीति नीति पूर्वक संस्कारो से परिपूर्ण सीता का चरित्र वधू रूप मे तीनों माताओं के प्रति विनयमयी भावों की अनुगमिता स्वाभाविक स्नेह से सेवा मे समर्पित आभा से युक्त सीता वन गमन के पूर्व माता के पास उन्हें प्रबोधित करने जाने की अभिव्यंजना अत्यन्त उदात्त पूर्ण है-

".......कौशिल्या देवी बैठी थी।
बनी विकलता मूर्ति जहां पर।।" [115]

पग वन्दन करने के उपरान्त धीरज और विनीत भाव से अपने वन प्रस्थान के विवरण से उक्तपूर्वक प्रस्तुत करती है। जिससे माताओं के मन मे निर्वासिन से व्याप्त करूणा का समन हो जाए अर्थात वह अपने दुख से माताओं को दुखित नही करना चाहती-

"कर मंगल कामना प्रसव की।
जनन क्रिया की सद्वाछा से
सकल-लोक उपकार परायण।
पुत्र-प्राप्ति की आकांक्षा से
* * *
है पति देव भेजते मुझको।
वाल्मीकि के पुण्याश्रम में।।" [116]

तदुपरान्त उक्ति युक्ति अभिव्यक्ति के उपरान्त आज्ञा और आर्शीवाद के हेतु निवेदन करना तथा माताओं के मन मे सीता के आर्शीवाद के हेतु निवेदन करना तथा माताओं के मन मे सीता के प्रति प्रेम इन पंक्तियों से स्पष्ट है-

"मंगल मय हो, पर न किसी की।
यात्रा समाचार भाता है।।
ऐसी कौन आंख है जिसमें।

तुरत नही आंसू आता है।।'' [117]

वधू के रूप मे सर्वत्र प्रियता का अनुपम उदाहरण थी।-

''तुम जितनी हो, कैकेयी को।
है न माण्डवी उतनी प्यारी।।
वधुओं बलित सुमित्रा में भी।
देखी ममता अधिक तुम्हारी।।'' [118]

वधू की पारिवारिक प्रियता और आवश्यकता को कवि ने चित्रित किया है-

'' फिर जिसकी आंखो की पुतली
लकुटी जिस वृद्वा के करकी।।'' [119]

माता के मध्य वधू रूप मे सीता को प्रियता अत्यधिक थी। इस बात का निरूपण कवि ने आश्रम प्रवास मे रिपुसूदन के कथन ने स्पष्ट रूप से चित्रित किया है।

''...............फिर उनकी ममता नित।
है आपके लिये रोती।।'' [120]

सीता के वियोग का दुख जिसे कवि ने शब्दों की अभिव्यक्ति से परे माना है-

''उनकी ममता कैसे।
मै शब्दों मे भर पाऊं।।'' [121]

वधू रूप मे सीता का चरित्र उनके आदर्शो के अनुरूप ही प्रतिष्ठित है। जो अपनी सांसो के मध्य अपनी प्रियता का उत्कृष्ट चरित्र प्रस्तुत किया है। जिससे उनके वन विसर्जन होने पर राज माताओं के विकलता का वर्णन है-

''................जो सिया बन्धु का/वन बिहार से श्रृमित रूप
आंखो मे आंज रही होगी।'' [122]

अयोध्या पहुंचकर सीता और कौशिल्या का मिलन एवं वधू सीता का सविनय प्रणाम सीता के वधू रूप को काव्य कथा मे प्रतिष्ठित करता है-

''पैरो मे गिरती सीता को बोली अपराजिता सगव
बेटी! सदा खुशी रह, तेरी सफल कामनाए हो सर्व।'' [123]

गृहणी रूप में :-

गृहणी के रूप मे कवि के द्वारा सीता की चारित्रिक अभिव्यंजना में सच्ची कुशल गृहणी के सर्व रूप चित्रित किये है। जो प्रेम, सम्मान, पर दुख कातरता, सेवा उपकार, संयमता, के गुणों से विभूषित है। राज्य भवन मे सम्पूर्ण दासियों के उपस्थिति मे भी पति सेवा सासो की सेवा स्वयं करती है-

''मै प्रतिदिन अपने हाथो से/सारे व्यंजन रही बनाती।
*   *   *   *   *   *
है गुणवती दासियां कितनी है/ याचक याचिका नही कम।।'' [124]

सीता के स्वभाव में आवेश और अभिव्यक्ति में कटुता का कही कोई स्थान नहीं होता है-

"जब देखा तब हंसते देखा/क्रोध नही तुमको आता है।।

कटु बातें कब मुख से निकली/वचन सुधा-रस बरसाता है।।" [125]

सेवा उपकार तथा पर दुख कातरता में सीता का चरित्र अत्यन्त सौम्य और सरल है। माता कौशिल्या की अभिव्यक्ति-

"बिना बुलाये मेरा दुख सुन/कौन दौड़ती आ जाती थी।।

* * * * *

मेरा क्या दासी का दुख भी/तुम देखने नही पाती थी।।" [126]

सच्ची गृहणी के आदर्शों से ओत प्रोत सीता का चरित्र सह धर्म और सहयोग से परिपूर्ण रहता है। जो अपने पति के प्रत्येक कार्य सिद्दि में तन-मन धन अर्पण करती है-

"जिसकी सिद्दि-दायिनी तुम हो।

* * * *

अब तक बनी ऋणी हो जिसकी।।" [127]

माता के रूप में :-

माता के रूप मे सीता के मात्रत्व भाव सरलता के अनुपम रागों से भरे हुए है, जो अपने दोनो पुत्रों को दुलराती पुचकारती है। तथा उन्हे नैतिक शिक्षा से शिक्षित भी करती है। बालसुलभ मन मे जो भी जिज्ञासायें जागृत होती है, उन्हें पूर्णतयः अपने कतिपय उत्तरों के द्वारा शान्त करती है। उनके अधिकार, पारिवारिक इतिहास से भी परिचित करवाती है-

"माता से ये नाना-बाते पूंछते।

यथावसर वे प्रश्न किया करते कई।।" [128]

पूर्वजों के प्रलाप और प्रयासों की जानकारी से परिपूर्ण कराती हुई भागीरथ के द्वारा सुरसरि को तपोबल से भारत भूमि पर अवतरित करने की कथा को कहती है-

"तुम लोगो के पूर्व-पुरूष थे, बहु-विदित-

* * * *

जिसके सम्मुख हुई चित्र शुचिता-विनत।।" [129]

देवी सीता ने मात्रत्व की व्यापकता को इतने उदात्त रूप मे अपने अन्तस मे भर लेना चाहती है कि वह अपने अन्तस मन मे विद्यमान पति विरह की व्यथा को भूलकर मात्रत्व की उत्कृष्ट लोक आराधन की नीति को आत्मसात करले-

"..........विविध व्यथायें सहूं किन्तु पति-वंछिता।

लोकाराधन-पूत-नीति भूले नही।।" [130]

कवि की व्यंजना मे मात्रत्व के समर्पण का एक ऐसा स्वरूप भी विद्यमान है जो अपने दोनो पुत्रों को

स्नेह पूर्वक शिक्षा देती हुई मात्रत्व के दायित्व का निर्वाहन करती है-

"निरपराध को सता करें अपराध क्यों।

वृथा किसी पर क्यों कोई लाये बला।" [131]

माता के त्याग के वर्णन मे कवि ने अपने नाट्य काव्य मे बडा ही सुन्दर वर्णन किया है। निष्कासन का तिरस्कार भोगने के उपरान्त सीता के अन्तःमन की नारी का पतन हो जाता है। मुख पर अतीव कष्ट समेटे हुए वह अपने आपको जीवन के प्राश्रय से मुक्त कर लेना चाहती थी, परन्तु मात्रत्व की आकांक्षा ने जीवन जीने के लिए विवश किया था। इसीलिये मिथ्या लोक अपवाद को धारणकर सोलह वर्षो तक पेड पौधों के फल खाकर आश्रम मे टहलनी की भांति जीवन यापन किया था और उस जीवन की दुर्गति को नरक भोग सा भोगने का कारण लव-कुश की परवरिश मात्र थी वास्तव मे जब अपने दोनो पुत्रों को वह पति के सुरक्षित हाथों पर पहुंचता हुआ नहीं जान लेती तब तक अपने प्यार विहीन जीवन को अन्तिम शरण तक पहुंचाने का कोई निर्णय नही करती है। कम शब्दों मे परित्यक्त जीवन के सोलह वर्षो का वन भोग करने का कारण पतित्व पर मात्रत्व की विजय ही थी-

"तो मैने ये सोलह साल कष्ट और कसाले मे क्यों काटे?" [132]

" मै जंगलों मे मारी-मारी फिरी

* * *

छाती से चिकाये" [133]

जब मुझे उस ताल के किनारे डाल दिया गया था

पर पत्नीत्व पर मात्रत्व ने विजय पायी" [134]

सीता का मातत्व के सहज प्रकृत का वर्णन वन की भोले-भाले वनचारी, छवनों के स्निग्ध ममतामयी मात्रत्व का मुदित वर्णन है-

तब ममतामय कर सम्पुट में

* * *

माने मस्तक पर मधु-चुम्बन" [135]

कवि की सरस अभिव्यक्ति मे देवी सीता का मात्र रूप वर्णन भावों की गहराइयों में उतरकर बस रहा है। अभिव्यक्ति की गूढ़ अभिव्यंजना ह्रदय के स्नेहमयी स्थलों पर विद्यमान अन्धकार को रस की परिपक्वता से कान्तिमय कर देता है। काव्य के पठन से पात्र के चरित्र की स्पष्ट झलक नेत्रों मे साकार हो उठती है। मात्र कर्तव्य का निर्वाहन देवी सीता के द्वारा आदर्शो के उतुंग शिखर पर प्रतिष्ठित है। जैसे ही अपने निर्वासन का आदेश लक्ष्मण के द्वारा सुनती है, तो मानव जन्म स्वाभाविक करूणा के रूप में जन्म लेती है। तथापि इस विरह की करूणा को जीवन पर्यन्त भोगने के हेतु स्वयं को तत्पर करती है। क्योकि अपने पति की धरोहर अपने गर्भ मे होने के कारण विरह करूणा से मुक्ति हेतु प्राण त्यागने का विचार बल पूर्वक दबा लेती है। यही अपनी निष्ठा मानकर वाल्मीकि आश्रम में प्रवास करती है-

"ऋण तुल्य प्राण तज देती मैं देवर देरी करती न अभी।"

पर क्या मै करूं सगर्भा हूं इससे यह कर सकती न कभी।'' [136]

मात्रत्व की स्नेहमयी भावना मे देवी का स्थान काव्य वर्णन में कवि ने अत्यन्त उच्चासन पर प्रतिष्ठित किया है। आश्रम मे महर्षि वाल्मीकि से भेट मे महर्षि की स्वीकारोक्ति इसका स्पष्ट प्रमाण है-

''ऋषि वाल्मीकि ने जान लिया, जानकी जगत की माता है।

अत्यन्त, शुद्व आचरण और, यह वेद शास्त्र की ज्ञाता है।'' [137]

कवि की देवी सीता मात्रत्व के प्रतिभार को सम्पूर्ण निष्ठा से निर्वाहन के लिए प्रतिबद्व होती है। वह विरह वेदना के पीर मे भी अपने गर्भ स्थिति रघुवंश अंकुर को संरक्षित रखने को संकल्पित है-

''डूब जाती देह गंगानीर मे अब/मौन होती वेदना की पीर भी सब।

देह मे रघुवंश के अंकुर छिपे है/राजवंशी राम मन-मंदिर बने है।'' [138]

युगल पुत्रों के जन्म देने के उपरान्त पुत्रों की परवरिस और नैसर्गिक संस्कारो की शिक्षा देकर मात्र कर्तव्य को पूर्ण करती है-

''माता संस्कार जगाती है/जननी संस्कार जगाती है,

बन सहज शिक्षिका जीवन की/अपना कर्तव्य निभाती है,'' [139]

कवि के वर्णन में देवी सीता का स्वरूप कर्म हित रत सबला के स्वरूप में वर्णित है जो अपनी पीडा के कारण पथ विचलित नही होती तथा अपने निष्कासन को अपनी आत्म चेतना में निर्णय लेते हुए नारीत्व साधना का अवसर मानती है। तथा धर्म के लिए अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मात्रत्व प्रकाश में स्वयं का स्वर्णिमकल के निर्माण का संकल्प करती है-

''नारीत्व साधना का अवसर तूने पाया

मात्रत्व-प्रकाश सबल प्राणों पर है छाया

सीते! तू अबला नही, कर्म-हित सबला है

जब तक हैं तुझमें धर्म, स्वयं तू धबला है'' [140]

देवी सीता की मात्रत्व तपस्या इतनी तल्लीनता से होती है कि वह अपने विरह त्यथा की पूर्ण रूप से भूल जाती है। वात्सल्य विभा की किरणें वन प्रांगण पर चारो तरफ बिखरने लगती है-

''मात्रत्व-तपस्या मे सीता तल्लीन हुई

लगता कि चेतना उसकी विरह विहीन हुई'' [141]

बहिन के रूप में :-

बहनों के लिए सीता का वास्तविक स्नेह अत्यन्त प्रशंसनीय है। जो सीता के वन गमन से अत्याधिक दुखी होकर साथ वन जाने का प्रस्ताव करती है-

''हम सब भी साथ चलेगी।

सेवायें सभी करेगी।।'' [142]

वह अपने जीवन में सीता की सहभागिता की कातरोक्ति अभिव्यक्ति करती है जिसमें सीता का बहनों

के प्रति आत्मीय समर्पण परिदृष्यित होता है-

''जो उलझन सम्मुख आई।

*   *   *

तुमने ही खोल दिखाया।।'' [143]

सीता के द्वारा अपनी बहनों के क्लेश को समन करने हेतु अपने साथ वन न ले जाने के लिये युक्ति-युक्ति तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि आश्रम में पूत प्रथा के अन्तर्गत नृप की गर्भवती पत्नी के अलावा दूसरी स्त्री नहीं जाती है-

''अन्य स्त्री जा, न सकी यह।

*   *   *

ऋषि-आश्रम मे है जाती।।'' [144]

अपने बहनों के ललकते प्रेम को शान्त करते हुए उन्हे अपने धर्म की मर्यादा में रहने तथा अपनी जुम्मेदारियों के निर्वासन हेतु प्रेरित करती है-

''जर्जरित-गात अति वृद्वा।

है तीन-तीन मातायें।।

*   *   *

मेरी यात्रा से अतिशय।

आकुल वे है दिखलाती।।

*   *   *

बहनों उनकी सेवा तज।

क्या उचित है कही जाना।।

*   *   *

निज-प्रति-प्रपंचो मे पड़।

पति-पद सेवा मत भूलों।।'' [145]

इसीलिए सीता जी अपने बहनों के प्रेम जनित दुर्बलताओं से भटकने पर उनका मार्ग दर्शन करती हुई हित चिन्तन निरूपित करती है-

''जैसा ही मेरा हित है।

*   *   *

बहती है हित की धारा।।'' [146]

और आश्रम प्रवास में भी विरहिणी सीता ने अपनी बहनों की याद में दुखित होकर शत्रुघन से उनके आर्द्र मनोस्थिति को जानना चाहती है। जो बहनों के लिये स्नेहार्द मन में बसी ममता को चित्रित करती है। जिससे बहिन सीता की छवि आदर्शो के उच्चतम शिखर पर प्रतिष्ठित हो जाती है-

"यह बतला दो अब मेरी।

बहनों की गति है कैसी?" [147]

पुण्डरीकपुर नरेश के द्वारा वन में भटकती सीता को धर्म बहिन बनाकर नगर में ले जाने के उपरान्त सीता के द्वारा नगर वासियों को तत्व ज्ञान की प्रेरणा देने से जन मानस का सम्बोधन बाई जी से सम्बोधित होने लगता है-

"सीता को सानन्द वजृजंघ लाया स्वग्रह

अति घनिष्ट सम्बन्ध जुडा एक परिवार सा।" [148]

भाभी के रूप में :-

आश्रम प्रवास के समय सौमित्र के पहुंचने पर भाभी सीता का मन करूणा से आर्द हो जाता। भाभी के ममतामयी शब्दों से प्रेम का अमृत बरसने लगता है-

"श्री मान भरत-भव-भूषण।

*　　*　　*　　*

जिसका सादर अभिनन्दन।" [149]

भारतीय संस्कृति के लोकादर्श के रूप में रची बसी देवी सीता की विभिन्न सम्बन्धित छवियों में भाभी के रूप में चरित्रिक अभिव्यंजना शुभ लक्षणों के उतुंग सोपान पर प्रतिष्ठित सात्विक दिव्यता से ओत-प्रोत व्यवहारों का वर्णन है। जो अपने देवर लक्ष्मण के प्रति सदैव वात्सल्य मयी मां के रूप में निष्कपट श्रद्धापूर्वक व्यवहार करती है। जब राजा राम के दुराग्रह पूर्ण आदेश के कारण वन विसर्जन हेतु जाते हुए वनपथ में लक्ष्मण दुख से मौन होते है तो भाभी सीता लक्ष्मण की करूणा को देखकर उनके माथे पर स्नेह युक्त हाथ फेरकर वेदना का कारण जानना चाहती है। तथा लखन पर लगे आघात को लेकर वो पति श्री राम तक से भी सत्याग्रह विग्रह करने को तत्पर होकर प्रिय देवर के सुख शान्ति के लिए अपने प्राणों को भी उत्सर्जित करना चाहती है-

"कुछ तुमको कहा सुना हो तो बोलो।

*　　*　　*　　*

सुख, शान्ति, अपार, हर्ष,।" [150]

भाभी के रूप में सीता चरित्र चित्रण अति उदात्त है। लक्ष्मण जब देवी सीता को रथारूढ़ करा प्रस्थान करते है। तब वन दर्शन कराते हुए लक्ष्मण के प्रति पावन भाव से वेदना का कारण ज्ञात करते हुए आत्मीयता से पूर्ण वर्णन है-

"सरिता, निर्झर गिरि शिखर मोदमय देखो।

झर रहे प्रेम रस स्त्रोत निरंतर देखो।।

लक्ष्मण क्यों मौन उदास समाकुल मन है?

स्वच्छंद प्रकृति है, विमल स्वच्छ जीवन है।।" [151]

सीता का लक्ष्मण से सम्बन्ध विवेचना में लक्ष्मण की अभिव्यक्ति के माध्यम से भाभी का सम्बन्ध

उदात्य रूप में वर्णित है-

"मिला आपसे भी बढ़कर वात्सल्य मुझे भाभी का।" [152]

देवी सीता का कवि के द्वारा वर्णित भाभी का चरित्र अपने देवर लक्ष्मण के प्रति अबाध विश्वास का प्रवाह है। अपने निर्वासन के सम्बन्ध में देवी सीता की लक्ष्मण से प्रश्न मई अभिव्यक्ति लक्ष्मण के अन्तः दुख को भी परख लेती है। स्पष्टतया अपनी पीड़ा के साथ दूसरे की पीडा की अनुभूति मानवीय सम्बन्धों के आदर्शता का उत्कृष्ट स्वरूप होता है-

"लक्ष्मण हे! क्या सम्बन्ध उन्होने तोड़ लिया ?
स्वामी ने क्या आजीवन मुख को मोड़ लिया?
उनकी ही हूं न अभी तक मै हे दुखी तात?
रवि हीन और शशिहीन नही तो दिवस रात ?" [153]

सतीत्व के रूप में :-

पति के निष्ठा, समर्पण आदर्श, मनः अनुरूपता में भी कवि ने अपनी देवी सीता का स्थान उच्च रखा है। कवि का दृष्टिकोण स्पष्ट करता है कि देवी सीता ने अपने जीवन के सुखों और दुखों को सम्पूर्ण रूप से अपने पति श्री राम के चरणों में समर्पित कर दिया था। अपने निर्वासन के कष्टों को वह तनिक भी स्मरण न करके अपने पुत्रों के द्वारा राम की सेना पर किये गये प्रहारों से अत्यन्त क्षुब्ध एवं दुखी होती है। इतना ही नही अपने सतित्व के सत्य पर आधारित पति समर्पित उदघोष प्रकृति के नियमों के विरूद्व भी सेवा को पुनजीवन देने के लिए बाध्य हो जाता है-

"सीता जी देख विकल होकर रोई अत्यन्त विलाप किया।
अपने सतीत्व बल से सारी सेना को आर्शीवाद दिया।।" [154]

तपस्वनी रूप में :-

कवि ने अपनी अभिव्यंजना मे सीता के आश्रम प्रवास में तपस्वनी वृन्द के साथ बडे ही समर्पित रूप से निवास करने का चित्रण किया है आश्रम में तपस्वनी भेष धारणी महारानी सीता सर्व आदरणीय होते हुए भी तपस्या की प्रतिमूर्ति बनकर परहित उपकार सेवा सुश्रुप्ता मे लीन रहती है-

"...........कर सेवा आश्रम तपस्विनी-वन्द की।
वे कब नही प्रभात-कमलिनी सी खिली।।" [155]

कवि ने सीता के तपस्विनी रूप को सहज सुकृति वृत्ति एवं लोकरंजित नीति के लिये समर्पित ततोधिका के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए नवीन वास्तविक स्फूर्ति से व्यंजित कर एक साम्राज्ञी होकर सहज वृत्त वाली राजपुत्री के रूप में पालन पोषण होकर भी भव सेविका की मूर्ति माना है-

"सामाग्री-होकर भी सहजा-वृत्ति है।
राजनन्दिनी होकर है भव, सेविका।।" [156]

त्रिलोक अखिलेश्वरी मां स्वरूप में :-

सीता के चरित्र को कवि ने उदात्तता की पराकाष्ठा में ले जाकर जगत माता के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए जगत जननी का अवतार माना है। अवतरण के पूर्व मिथलेस को अपने अवतरण की पूर्व सूचना देती है-

''अम्बे! दास कृतार्थ है स-जनता संलक्ष्य पूरा हुआ।

आया था सहपक्ष मे जिस लिए, सो पक्ष पूरा हुआ।।'' [157]

लक्ष्मण का चरित्र-चित्रण

भाई रूप में :-

लक्ष्मण का चरित्र-चित्रण वीरता की भावना से ओत-प्रोत अदाम्य साहस का प्रतीक तथा भाई और भाभी के आक्य प्रेम के प्रतीक एवं कुशल राज्यकार्य संयोगी के रूप में प्रस्तुत है। उनकी भावना भाभी सीता के प्रेम से भरी हुई होती है। जो इस लोकापवाद को सुनकर क्रोधित होते है। और भरत के अभिमत का समर्थन करते है। अतः वह अपनी अभिव्यक्ति में अपनी भाभी सीता को पूर्ण रूप से पवित्र मानते है और क्रोधित होते है-

''खौलता है मेरा लोहू

* * *

देवियों सी जिसकी छाया।।'' [158]

कवि का वर्णन लक्ष्मण के स्वाभावानुकूल ही है। वह रजक के कथन को उसका प्रमाद मानते है। वह वहक जाने की हद तक क्रोध प्रदर्शित करते है-

''राज्य मे जिसको वसना।

रजक की खिचवा लू रसना।।'' [159]

भाई के रूप में लक्ष्मण अत्यधिक ही भ्रात स्नेह में बंधे होने के कारण वह अपने भाई राम के स्नेहात्मक संलाप में फंसकर सपथ पूर्वक निर्वासिन जैसे छली कुकृत्य का भार अपने कंधो पर सहर्ष गृहण कर लेते है-

''तब तमक बोल बैठे होगे सोत्साह लखन,

* * * *

सौमित्र समर्पित करे प्राण।'' [160]

श्री राम की आज्ञा में बधें हुए अनुचर मात्र प्रतीत होते है। जैसे लक्ष्मण का जन्म मात्र आज्ञा को शिरोधार्य करने को ही हुआ है। गुप्तचर के द्वारा धोबी-धोबिन का वृतान्त ज्ञात होने पर श्री राम के आदेशानुसार देवी सीता का परित्याग करने हेतु श्री राम के आदेश को शिरोधार्य करते है। यहां तक की वन विसर्जन के पहले राम के मना करने पर देवी सीता और सुमन्त्र से परित्याग के सम्बन्ध मे कुछ नही बनाते है-

''रामचन्द्र कहने लगे, सुनो लखन हे तात।

सीता से कहना न तुम, बनोवास की बात।।'' [161]

लक्ष्मण का चरित्र चित्रण करते हुए कवि ने कथा परम्परा के अनुरूप अनुसंगित अनुज है। जो भ्राता और राजाज्ञा के विरोध में रंच मात्र भी प्रतिरोध नही कर पाते है। यद्यपि निर्वासिन आदेश सुनने के उपरान्त उस धीर

वीर के हृदय पर वज्र पात सा होता है। भाई की पीड़ा वा भाभी की विरह की कल्पना से मन क्षुब्ध हो जाता है-

> ''छिद गई गिरा नभ के कोने में
> उन्मत्त प्रभंजन लगा धीर खोने में।
> लक्ष्मण के उर में शूल छिद गया बांका
> धरणी डोली अम्बर का धीरज कांपा।।'' [162]

भाई रूप में सौमित्र भाई राम के आदेश आदेशित होने की बात को स्वीकार करते है। आदेश से बधें होने के कारण वह अपनी प्रिय भाभी का मन सन्ताप मुक्त कर वन विसर्जन करते है-

> ''नत मुख-शिर ग्रीवा कांपते वीर बोले।
> महिम मयि! मुझे यों आज आदेश।।'' [163]

भ्रात्य रूप में नृप आदेश अनुगामी है, जो भ्राता की इच्छा और नृप आदेश से असह कष्ट सहकर मी वन विसर्जन हेतु सीता को गंगा तट ले जाते है-

> ''मेरा वन निर्णय नही बन्धु! जैसे तैसे
> वाल्मीकि विपिन की सीमा तक ले जाना तुम
> वैदेही को गंगा तट तक पहुंचना तुम
> सह लेना तुम भी दुख जैसे मै सहता हूं।
> कह देना तुम भी कुछ, जैसे मैं कहता हूं
> छाती पर पत्थर रख लेना तुम भी भाई।'' [164]

देवर रूप में :-

अपनी भाभी सीता को माता के समान प्रेम करते थे। उनका सम्मान और प्रेम वन जाते समय में परित्याग के कारण हुए मन विषाद के चित्रण से स्पष्ट होता है-

> ''कभी दिखाते वितान्त-चिन्तित
> कभी विलोचन वारि रोकते'' [165]

अतः इसीलिये आश्रम में अपनी भाभी को छोडकर वापस आते है तो राम से उनके मुख मुद्रा की मार्मिक व्यथा का वर्णन करके अपने दुख को प्रकट करते है-

> ''मुझे बनाती रहती है अब भी व्यथित
> उसकी याद सताती है अब भी मुझे'' [166]

लक्ष्मण अपनी भाभी के विरह से इतने वेदनामयी होते है कि उनके मन में हठात् ही वन में विताये चौदह वर्ष की स्मृतियां प्रवेश करती है। सीता का सतीत्व और लोक कल्याण की भावना भले ही उन्हें व्यथा सहने की शक्ति दे दे पर लक्ष्मण से अपनी भाभी की विरह व्यथा नही सही जाती है अतः वो अपने भाई राम से कहते है-

> ''वे है महिमामयी सहन कर ले व्यथा
> उन्हें व्यथा है, उसको मैं कैसे सहूं'' [167]

भरत की ही भांति राज दरबार मे हो रहे विचार मन्थन ले सम्मिलित देवी सीता के ऊपर अनाम व्यक्ति के दोषारोपण को शक्ति से दबाने को उत्साहित होते है। क्योकि अग्निपरीक्षा देने के उपरान्त महारानी के ऊपर सन्देह को कोई अवचित्य ही नही उठता है लक्ष्मण का कथन-

"राज्य ऐसे नही चला करते।" [168]

देवर के रूप में कवि ने लक्ष्मण का वर्णन रथवान के साथ सीता को वन में छोड़ने आने पर आया है। रथवान अपनी अभिव्यक्ति में कहते है कि राम ने लक्ष्मण से वह कार्य करवाया है जो उनके लिये अत्यधिक कष्ट साध्य था। मां समान भाभी को वन छोड़ने की जुम्मेदारी उनके कंधे पर डाली थी।

"कि उन्हें यह राक्षसी काम सौपा गया ?
जिन भाभी को वे मां की तरह पूजते थे" [169]

निष्कासन के छलित आदेश के प्रहार से लक्ष्मण की श्रद्वा अपने मां के सदृश सीता के साथ किये गये दुर्निवार आघात से भ्रातत्व के भाव व्याकुल हो जाते है। वह भ्राता राम से भाभी के निष्कासन की सौगन्ध बन्धन से मुक्त होने के लिए कहते है। बदले में वह अपने प्राण उत्सर्जन करने का प्रस्ताव करते है-

"आदेश करो हे राम!
वह्नि में कूद जलूं।
पर मुक्त करो सौगन्ध-बन्ध से तात।" [170]

"यह जनक सुता, जान्हवी वंश की
* * * *
लखन की एक बात स्वीकार करो।" [171]

लखन का मन विचलित हो रोदन करता है-

" विश्वासमयी, ममता की इस
* * * *
हा ! कैसे कर पाऊगा।" [172]

वीर दर्प से अपने भाल को ऊंचा करने वाले लक्ष्मण जिन्हें सदैव अपने अग्रज के आदेश मात्र से सम्पूर्ण ब्राहाण्ड को गेंद की तरह उठा लेने की घोषणा की थी आज उन्ही के आदेश में छल और झूठे विश्वास की प्रपंचना के कारण अपनी वात्सल्यमयी भाभी को वन विसर्जन हेतु ले जाने में अश्वों की वल्गा भी नही सम्भाल पाते-

"ब्राहाण्ड उठाऊं कन्दुक इव
* * *
संभाल नही पाते" [173]

"छटपटा रहे अकुलाते प्राण निकलने को
सौमित्र मृत्यु-कामना लिये, याचना लिये।" [174]

देवर लक्ष्मण की अभिव्यक्ति-

"मां! मुझको शापित करो

घोर रौ रौ की दुखद यंत्रणा

मेरे पापों का प्रायश्चित हो।" [175]

"कितना पातकी, जघन्य, सुमित्रा-सुत दशरथ का एक तनय,

मै तुम्हे छोडने आया हूं घनघोर विजन में" [176]

कवि के लक्ष्मण को अत्याधिक मार्मिक आघात होता है अस्तु इसीलिये त्यागकर लौटने की कल्पना मात्र से व्याकुल हो जाते है। और परित्याग का समाचार सुनाते-सुनाते अवधपुरी की वीरता का वह स्तम्भ किसी अज्ञानी शिशु की भांति फड़क कर रोने लगते है। सोदाहरण से स्पष्ट है-

"कहती सीता हे लषणलाल, मेरे दुख से तुम दुखित न हो।

पर रोने का कारण धीरज, धर करके देवर शीघ्र कहो।।" [177]

लक्ष्मण का चरित्र वर्णन देवर के रूप मे कवि के द्वारा अति उत्कृष्ट वर्णित है। जिसमें निष्कासन की असह वेदना और अपने द्वारा होने वाले इस कुकृत्य से ह्दय उद्विग्न होता है। जो प्रस्थान से लेकर परित्याग तक प्रेम के प्रवाह में बहते हुए असह वेदना से व्याकुल होते है। वो अपनी भाभी को संम्बोधन से लेकर सम्मान तक माता के समान ही देते है-

"उठती तरंग जल मे अनेक/बढ़ती तरणी गन्तव्य देख

लक्ष्मण मुड़ मुड़ कर रहे देख/सीता लखती थी निर्मिमेष।।" [178]

लक्ष्मण का चरित्र वर्णन देवर के रूप मे वर्णित है। निर्वासिन के समय लक्ष्मण की पीडा सम्बन्धो की सन्निकटता को प्रकट करती है-

"निखिल विष्टिय विकट हो निष्प्रभ उठे।

अति विकम्पित उर्मिला-बल्लभ उठे।।" [179]

निर्वासिन के समय लक्ष्मण की पीड़ा करूण कृदन के रूप में परिणीत होती है। नृप निर्णय सुनाने के पूर्व अन्तस वेदना अश्रु बनकर प्रवाहित होने लगती है-

"सहसा लक्ष्मण रो उठे वहां शिशु के समान

*   *   *   *   *

पर, रूदन-रूदन ही रूदन-रूदन इस क्षण केवल" [180]

लव-कुश का चरित्र चित्रण

पुत्र के रूप में :-

कवि ने लव-कुश के बाल आमोद गुणों का वर्णन अत्यन्त भाव और रसमय सहित किया है।

"ए क्या है ? ए किसके क्यों है खेलती।

मां इनमें है कैसे दीपक बल रहा।।" [181]

दोनो बालकों की उदात्त जिज्ञासु भावनाओं का सलिल चित्रण सरस रूप से विद्यमान है-

काठ कहा जाता है गुरूतर वारि से।

क्यों नौका जल मे निमग्र होती नही।" [182]

लव-कुश का चरित्र-चित्रण वर्णन भी बडा ही मार्मन्तक है। वह मां के बदले राजपाठ नही चाहते और अपनी माता सीता को आत्मघात करने जाने में बल पूर्वक रोकने का प्रयास करते है। मां से बिछड़ने की करूणा से द्रवित दोनो पुत्र पिता के सानिध्य को भी सहारा नही मानते है।

''मां में सच कहता हूं

हमें राज-पाट नही चाहिए

बस, केवल तुम हमारे पास बनी रहो।'' [183]

लव-कुश का चरित्र निरूपण राम और लक्ष्मण के चरित्र निरूपण से अति उदात्त है। सीता अपनी वेदना से झटपटाती हुई राम के जन रंजन नीति के मिथ्या निर्णय के विरोध में युग प्रवर्तन की आकांक्षा लवकुश के चरित पर आधारित होकर निरूपित करती है। वही पर त्रिजटा के द्वारा तमसा तट पर दोनो तरूण बालको को राम और लक्ष्मण के स्वरूप व व्यक्तित्व से अधिक परिपूर्ण देखती है। राम और लक्ष्मण के स्वाभावानुकूल एक बालक धीर गम्भीर है तो दूसरा चपल और चतुर्यता से परिपूर्ण है। जिनका पालन पोषण मुनि आश्रम में सम्पूर्ण प्राकृतिक संरक्षण में होता है। त्रिजटा के माध्यम से प्रस्तुत कवि की अभिव्यंजना में लव-कुश द्वारा देवी सीता के सापेक्ष में व्याप्त लोकोपवाद व नर नारी के बीच असमान रूढ़िवादी, विचारवादी से उत्पन्न मिथ्याभास को मिटाने में पूर्ण सक्षम होने पर निहित है-

''लगी सोचने त्रिजटा बारंबार

जनक नन्दनी लौटेगी साकेत

आएंगे लक्ष्मण त्रुटि मार्जन हेतु

विनत वदन श्री राम रहेंगे मौन

यमज श्रुतों पर बरसेगी आशीष।'' [184]

कवि ने लवकुश युद्ध में लव-कुश का चरित्र अत्यन्त रोचक ढंग से करते हुए काव्य के विस्त्रतता के अनुरूप किया है। जिसमें दोनो बालक अत्यन्त वीर क्षत्रोचित धर्म से परिपूर्ण कुशाग्र और चपल है। अपनी गरिमा हेतु समस्त, न्यौछावर करने में तत्पर सहज मन से गुरू और मात्र भक्त है। जिनमें अच्छे शिष्य के रूप मे अपनी कुशाग्र बुद्धि के रूप में आश्रम के अन्य शिष्यों की अपेक्षा शिक्षण ग्राह शक्ति तीवृ होती है। अपने गुरू के प्रति समर्पित अर्चन वन्दन मे गुरू की सेवा का एक भी अवसर नही छोड़ते।

दोनो पुत्रों का चरित्र-चित्रण कवि ने अत्यन्त सुन्दरतम रूप से चित्रित किया है जो अपने प्रत्येक उपलब्धि को सहजता से माता सीता के समक्ष प्रस्तुत कर देते है। इतना ही नही मां की आज्ञा के प्रति किसी प्रकार का हठ अथवा कटाक्ष का कोई स्थान नही देते है।

वहीं पर रामराज्य में लवकुश का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत काव्य मे कवि के द्वारा रामायण गान के

अवसर पर दोनो बालकों के ओज से आकर्षित जन मानष को मुनि के द्वारा राम के पुत्रों के रूप में कराया जाता है-

''मुनि वाल्मीकि बोले रघुकुल भूषण से,

ये आत्मवंश, रघुवंश तुम्हारे ही है।'' [185]

लवकुश का चरित्र चित्रण वीर पुत्रों के रूप में किया है। जो पिता राम के द्वारा मां के परित्याग की घटना को जानने के उपरान्त अपमान समझकर प्रतिशोध लेने हेतु तत्पर होते है-

''जिस मां का हमने दूध पिया

उसका अपमान न देखेगे,

चम-चमकी इन तलवारों से

हम जा करके बदला लेगे।'' [186]

वाल्मीकि का चरित्र-चित्रण

महर्षि वाल्मीकि-गुरू स्वरूप :-

महर्षि वाल्मीकि ऋषि श्रेष्ठ सहृदय और सौम्यता के प्रतिमूर्ति गुरूकुल के श्रेष्ट संचालक जो धर्म ध्वज वाहक राम के द्वारा सीता को प्रसवावस्था में कुलपति आश्रम में भेजने का अनुमोदन करते है। तथा सीता को पित्र सदृश स्नेह देते है-

''पुत्रि जनकजे! मै कृतार्थ हो गया हूं।'' [187]

धर्म धुरन्धर महर्षि वाल्मीकि महारानी की दिव्यता को मानवीकरण से ऊपर उठाकर देवी का स्थान देने का प्रयास महर्षि की धार्मिक भावना को प्रतिष्ठित करती है।

''आप मानवी है तो देवी कौन है।'' [188]

गुरूता के कार्य को निष्ठा पूर्वक संचालित करते हुए प्रेयसी सीता की विरह वेदना को समन करते है। और संयम पूर्वक गर्भ कालिक नियमों का पालन करने हेतु सीता को प्रोत्साहित करते है-

''है मुझको विश्वास गर्भ-कालिक नियम।

प्रति दिन प्रतिपालित होगे संयमित रह।।'' [189]

प्रथाओं के अनुरूप ऋषि आश्रम की परम्परायें अलौकिक रूप से आयोजित करवाने का गुरूतापूर्ण कार्य आश्रम के अपूर्व प्रबन्ध थे-

''नामाकरण-संस्कार किया जब हो चुकी।

मुनिवर ने यह आदर महिमा से कहा।।'' [190]

लवकुश को शास्त्रों की शिक्षा रामयाण का गान आदि की समुचित शिक्षा प्रदत्त करते है।

महर्षि वाल्मीकि का वर्णन सीता के प्राश्रय दाता के रूप मे चित्रित है जो अपने आश्रम में प्रवासकर रही सीता को अयोध्या में होने वाले अश्वमेघ यज्ञ में उपस्थित होने के लिए समझाने का प्रयास करते है। वस्तुतः सीता के अन्तः पीडा से अनभिज्ञ राम को सीता का परित्याग तथा परित्याग से राम की अन्तः वेदना को प्रस्तुत करना, एवं पति राम के ऊपर लगाये गये सीता के द्वारा अभियोग को-

"यह तुम्हारा अन्याय है देवी

तुम्हारी बात चाहे छोड़ दे

पर प्रजा के सुख को इन्होने कभी नही भुलाया।" [191]

महर्षि वाल्मीकि जी का वर्णन कवि ने आंशिक रूप से करते हुए आश्रम में प्रवासनी सीता की करूणा से पीड़ित है-

"ऋषि की आंखो मे करूणा बन घहराई है।" [192]

वाल्मीकि का चरित्र योजन कवि के द्वारा वर्णित युग दृष्टा, दया व रामायण के रचनाकार होते हुए वेदना से लसित देवि के प्राश्रयदाता के रूप में है। जो सीता के पवित्रता का प्रमाण एवं उनके अवसान पर दया से क्षुब्ध हो जाते है-

"मै ही रह जाऊंगा ठूंठ-सम्मान

तपोभूमि का यह संरक्षित रूप।" [193]

महर्षि वाल्मीकि का चरित्र चित्रण करते हुए कवि ने सम्बन्धों की पराकाष्ठा को छूने का प्रयास किया है। महर्षि वाल्मीकि के विस्तृत स्वरूपों के वर्णन में कवि की लेखनी अद्वतीय है।

देवी सीता के विलाप का करूण शोर सुनकर उनके पास उपस्थित होकर पित्र सदृश्य अहलादित करने वाला स्नेह देकर प्रबोधित करना तथा प्रकट ज्ञात होने के उपरान्त की देवी सीता जगत माता है फिर भी बेटी सदृश्य सद्व्यवहार कर आश्रम में लाना उत्कृष्टता का प्रतीक है।

लवकुश के जन्म के उपरान्त नामाकरण से लेकर समस्त संस्कारों का सम्पादन पित्र सदृश्य कर्मो से परिपूर्ण होता है। उदाहरण से स्पष्ट है-

"अब आवश्यक रूकना न अधिक चलकर पवित्र आश्रम कर दो।

चिंता सब त्याग चलो बेटी, फलफूल आदि भोजन कर लो।।" [194]

"दो पुत्र हुये पैदा लवकुश मुनि ने यह नाम धराया था।

वैदिक द्वारा सब संस्कार आनन्द पूर्ण करवाया था।।" [195]

वाल्मीकि का महर्षि स्वरूप बिलसती सीता को क्रोध तथा आश्रम के सन्दर्भ विधानों से परिचित कराने से प्रतिविम्बित होता है। ऋषि के कलेवर में देवी सीता को जगत माता स्वीकार करने की अवधारणा स्पष्ट प्रतीक है-

"ऋषि वाल्मीकि ने जान लिया, जानकी जगत की माता है।

अत्यन्त शुद्व आचरण और, यह वेद शास्त्र को ज्ञाता है।" [196]

गुरूतर कार्यो में लवकुश की शिक्षा दीक्षा एवं संस्कारो के सृजन में महर्षि का महत्वपूर्ण योगदान है। दोनो वीर बालकों के सम्पूर्ण शिक्षा एवं प्रशिक्षण का कार्य स्वयं महर्षि के आश्रम में पूर्ण हुआ था।

महर्षि वाल्मीकि का चरित्र चित्रण कवि ने आशिंक रूप से किया है। जिसमें वो सीता के प्राश्रयदाता, आश्रम संरक्षक व रामायण के सम्पादक है-

"मुनि वाल्मीकि बोले रघुकुल भूषण से,

ये आत्मवंश, रघुवंश तुम्हारे ही है।
पावन कविते तू धन्य लेखनी पावन,
रामायण पूरी कथा आज सम्पादन।।'' [197]

ऋषि वाल्मीकि का चरित्र, चित्रण शान्तमुख तपोनिधि महर्षि के रूप में करते हुए कवि ने भविष्य दृष्टा और भक्त भाव से पूर्ण चित्रित किया है। आश्रम में सीता का स्वागत करते हुए जगत माता के रूप में प्रतिष्ठित होने वाली अम्ब का शिष्यों से परिचय करवाते हुए माता के प्रति अपनी भक्ति आस्था का स्वयं परिचय देते है-

''आदि, अवश्या, अजित, अयौनित, अर्पारमिता-अय अभिनीता।
बहा-बांधनी-विद्या-माया, बनी मैथिली-या-सीता।'' [198]

महर्षि वाल्मीकि मन वचन कर्म और चिन्तन से राममय होकर योग साधना में लीन वैदेही के प्राश्रयदाता बनकर करूणा में तनमय होते हुए मात्रत्व तपस्या में लीन सीता का रक्षण करते है-

''ऋषि वाल्मीकि रामायण-रचना में तन्मय
हो रही अनुष्टुप आत्म-छन्द की काव्य-विजय
जय पर जय होती जाती सीता के कारण।'' [199]

भरत का चरित्र चित्रण

भाई रूप में :-

भरत का चरित्र चित्रण कवि ने उच्च सलाहकार के रूप में किया है। भरत की आन्तरिक प्रतिभा उच्च स्तरीय राजनैतिक, अनुभव गम्य तथा राज्य संचालन में शक्ति और न्याय का समन्वित पक्षधर मानते है। परन्तु उनके तर्क लोक आराधन नीति से परिपूर्ण होते हुए भी भाभी सीता के पक्षधर होते है। अपने इसी दृष्टिकोण के कारण वह जनसामान्य को दो भागों में विभक्त कर देते है। जो यश और गौरव का गान करते है वह अच्छे होते है। तथा जो कटु बोलते है वह बुरे-

''बुरो को है प्रिय पर-अपवाद।
* * *
वही पर है बक-वृत्ति अनेक।।'' [200]

तथास्तु भरत इस जनरव को दुश्मन के कूटिनीति का एक कृत्य मानते हुए उसे बलात दबा देने का परामर्श देते है-

''अतः यह मेरा है सन्देह।
* * *
कब हुई हिंसा-वृत्ति विलुप्त।।'' [201]

भरत का चरित्र चित्रण राज्य के सजग कार्यवाह के रूप में कवि का चित्रण है। जो अपने भ्राता से नही अपने राजा राम से न्याय के उदात्त निर्वाहन दायित्व पर बहस करते है। तथा किसी भी नारी पर अनाम व्यक्ति के आक्षेप को अनाधिकार चेष्टा के रूप में देखते है।

''न्याय की दृष्टि में

वह भी अनाधिकार चेष्टा ही होती।'' [202]

परन्तु राजाराम के दृष्टिकोण को न्यायिक दृष्टि भी देते है। कि-

''न्याय को समग्र मानवता के

विशाल परिपेक्ष्य में देखना चाहिये।'' [203]

और वह रजक के कथन को सार्वजनिक रूप से दोषारोपण करता, इसीलिए उसे वह मात्र अपराध के रूप में नही राजद्रोह के रूप में देखते है। क्योकि कवि के भरत की इसे न्याय के परिपेक्ष्य में कम, अयोध्या के राज महारानी के परिप्रेक्ष्य में संप्रेषित था।

भाई रूप में :-

भ्रात्य प्रेम का आनन्दमयी वर्णन करते हुए भरत के प्रेम का भावुकता पूर्ण वर्णन है। अयोध्या में आते ही राम से मिलन को चित्रित किया गया है-

''बालकवत दौड़ भरत भाई

गिर गए राम के चरणों में'' [204]

देवर रूप में :-

निष्कासन का निर्णय सुनकर देवर भरत का ह्रदय भी विदीर्ण हो जाता है-

''वैदेही को यह दण्ड? भरत बोले सविनय

हे नाथ! वज्र वाणी से आज विदीर्ण ह्रदय!

ऐसा न कीजिए नही कीजिए हे राजन्

पावन-अति पावन सदा जानकी का जीवन।'' [205]

शत्रुघन का चरित्र चित्रण

भाई के रूप में :-

शत्रुघन की चारित्रिक व्यंजना भाई के धर्म को स्वीकार करते हुए राज्य कार्य में महत्वपूर्ण सहयोगी बनकर सहयोग करना ही नीहित है। इसीलिये वह मन्त्रणा गृह में जनरव के कुत्सित प्रपंचना में अपना अभिमत प्रस्तुत करते हुए कहते है।

''कुछ दिनों से लवणासुर की।

*   *   *

गहन हो पर है उत्पाती।।'' [206]

देवर के रूप में :-

शत्रुघन की चारित्रिक अभिव्यंजना कारूणिक रूप से प्रस्तुत है लवणासुर का वध करने के लिए जाते हुए आश्रम में रूकते है जहां अपनी भाभी सीता से उनका मिलन होता है। और शत्रुघन की करूणा झलक पडती है।

''................पग वन्दन किया सती का।

वन करूणा-भाव से कातर।।'' [207]

रिपुसूदन की भक्ति और प्रेम स्पष्ट हो जाता है-

"हो गया आपका दर्शन।

* * *

भू में भर भूरि-भलाई।।" [208]

शत्रुघन का भ्रात्य चरित्र प्रमुदित करने वाला है।

"आकर के शत्रुघन ने, सविनय किया प्रणाम,

वत्सलता से दे रहे, शुभाशीष श्री राम।" [209]

शत्रुघन का चरित्र चित्रण देवर के रूप में किया गया है। जिसमें वह माता समान भाभी के निष्कासन से दुखी होकर राम को निर्णय बदलने हेतु दबाव डालते है-

"चुप रहे नही शत्रुघन, कहा जो कहना था

* * * * *

करना ही है तो कोई अन्य उपाय करें।" [210]

अन्य पात्रों का चरित्र चित्रण

सत्यवती सखी :-

सत्यवती का चरित्र-चित्रण तपस्विनी भक्ति मूर्ति मती तथा देवी सीता के एकान्तमयी विरह क्षणों की सखी के रूप में उन्हें विरह व्यथाओं से युक्त करने के लिये नाना प्रकार समझाती और संम्भालती थी।

"इसीलिये वह थी विदेहजा सहचरी।

* * * *

व्याकुल होती तब थी उन्हें संभालती।।" [221]

आत्रेयी सखी :-

आत्रेयी का चरित्र-चित्रण कवि ने सत्यवती की प्रिय सखी के रूप मे किया है। जो सीता की विरह कथा को सत्यवती से सुनकर वाल्मीकि आश्रम पर सीता से मिलने आती है। बुद्धमती और विदुषी अत्रेयी सीता को प्रबोधित करती हुई आश्रम वास की समाचीनी प्रथा को प्रस्तुत करती है-

"..........कुल पति ने भी उस दिन था यह ही कहा।

देख रही हूं आप अब यही की हुई।।" [212]

कौशिकी :-

कवि ने कौशिकी का चरित्र-चित्रण देवी सीता की आश्रम सहचरी के रूप मे किया है। कौशिकी को सीता के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नही होता है। आश्रम-प्रवासिनी नारी के रूप में देवी सीता की रूग्णावस्था की परिचायिका तथा विरह व्यथा संम्वाद की सहभागनी व अश्वमेघ यज्ञ के आयोजन की सूचना संवाहिका मात्र है। जो सीता की वेदना से दुखी होकर उनकी वेदना का कारण जानते की आकांक्षणी है-

"इस तरह अपने मन को बंद रखना ठीक नहीं

मैने कितनी बार तुमको कहा हैं

तुम्हारे मन में जो कुछ हा सब बता दो।'' 213

अहिल्या :-

कवि ने भूमिजा काव्य प्रबन्ध में रामकथा की अहिल्या प्रशंग कथा का वर्णन कर मात्रत्व स्नेह से परिपूर्ण नारी के रूप में प्रतिष्ठित किया है जो सहज ही राज दुर्गुणों से राम के मन को परिवर्तित करती है। और राम का मन उन दुर्गुणों से वचने हेतु दृढ़ संकल्प देवी अहिल्या के समक्ष निवेदन करने हेतु समर्पित हो जाता है-

''छूकर, देवि तुम्हारे दोनों पैर

होता हूं मैं आज प्रतिज्ञाबद्व।'' 214

चरण :-

चरण पात्र का चरित्र चित्रण कवि ने आदिवासी वीर के रूप में किया है। जो वन निष्कासन के समय पर सीता का आश्रम में पहुंचने के पूर्व प्राश्रयदाता तथा राम की युद्ध लिप्सा एवं दिग्विजयी बनने की कामना को अपने भाष्य से प्रकट करता है। इतना ही नही उसने राजा राम को प्रजा के लिए विषरूपी राम का सम्बोधन दिया है। राम व राज्य के प्रति चरण अक्रोस कवि की अभिव्यंजना में इतना मुखर हो उठता है कि राम के प्रशस्त गायक वाल्मीकि पर भी अपने शब्द वणों में प्रहार करने में नही हिचकते। देवी सीता के समक्ष उसकी अभिव्यक्ति से राम राज्य की प्रजा के विद्रोह की झलक स्पष्ट हो उठती है-

''डाकू को वह जादू का शाल कहा/से मिला।

जिसे ओढ़कर वह कवि बन गया?'' 215

राजपुरूष :-

राजपुरूष पात्र की अभिव्यंजना कवि ने कथा का प्रारम्भ एवं राम राज्य की गुणवत्ता और महाराजा राम के दुखों का वर्णन किया है। तथा अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन से महारानी सीता के प्राप्त होने की सूचना देते है-

''सचमुच/महाराज ने/एक छोटी सी भूल का

बडा भारी मोल दिया है।'' 216

कृतान्तमुख-प्रधान सेनापति के रूप में :-

राजराज्य का प्रधान सेनापति कृतान्तमुख होता है। जो राम के आज्ञाकारी अनुचर के रूप में वर्णित है। राम के आदेशानुसार सीता का वन विसर्जन कातर मन से करते हुए सेवक धर्म को कोसता है-

''भृत्य जीवन से भली है, मृत्यु ही संसार में

मैं नियन्त्रित यथा बंदी बंद कारागार में।'' 217

वजृजंघ राजा रूप में :-

वजृजंघ का चरित्र-चित्रण पुण्डरीकपुर के स्वामी रूप में अंकित है। जो दयावान, धार्मिक न्यायिक, सुविवेकी, शासक है। जो वन में सीता के संकट काल में संरक्षण हेतु उनका परिचय मिलता है-

''ये पुण्डरीकपुर के स्वामी/इनके आगे सब स्पष्ट कहो।

है दयावान धार्मिक शासक/न्यायी, सुविवेकी, महाभाग।'' [218]

भाई रूप में :-

सीता को प्रबोधित करता हुआ वज्रजंघ सीता को धर्म बहिन के रूप में स्वीकार करता है। एवं भाई बहिन के सम्बन्धों का निर्वाहन निष्ठा पूर्वक करता है-

''भामण्डल तुल्य मुझे समझो/पीहर आते मत सकुचाओं।
बाई जी! अपने घर आओ।'' [219]

सिद्धार्थ-गुरू रूप में :-

सिद्ध पुरूष सिद्वार्थ का सम्बन्ध गुरू रूप में अंकित है। जिन्हें सीता के द्वारा दोनो बालको के शिक्षा-दीक्षा का कार्य सौपा जाता है और वह लवणांकुश को शिक्षा-दीक्षा देते है-

''स्व क्षयोपराम था प्रबल, सिद्व पुरूष संयोग।
सत्वर विद्याभ्यास का सफल हुआ उद्योग।'' [220]

नारद का चरित्र :-

नारद का चरित्र चित्रण नारद के स्वाभावानुकूल वर्णित है। जो यथासमय पहुंचकर सम्बन्धों का रहस्योद्‌घाटन करते है-

''अचानक रंग नया लाए/बडा रहस्योद्‌घाटन करने नारद जी।'' [221]

जनक :-

सीता के पिता के रूप में जनक का चित्रण करते हुए आदर्श नृप एवं पुनीत योगी के रूप में किया है। जिसके जनहित प्रयोजन से भुवनेश्वरी का सदेह अवतरण होता है-

''बोलो अहो विद्वज्जनो! किस यत्न से क्लेशान्त ही?
बलिदान ही में करो, दुर्दैव यो ही शान्त हो।।'' [222]

आधुनिक युग बोध की नारी सीता :-

सजग साहित्यकार कथा और पात्र का चयन अपने जीवित समाज से ही गृहण करता है समाज की संचित चित्तिवृत्तियों को कथा य पात्रों के माध्यम से मुखरित करता है। तभी उसका साहित्य समसामयिक और कालजयी एक साथ बनता है। सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में आधुनिक युग से पूर्व चरित्र प्रायः परम्परित रूप में ही अभिव्यक्त हुए है। एक निश्चित साचे में ढलकर उनका चित्रांकन हुआ है। इस दिशा में आधुनिक युग के कवियों का योगदान सराहनीय है। क्योकि उन्होने चरित्र चित्रण की युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला है।

'यत्र नार्रन्त्र पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' की सूक्ति साहित्य य धार्मिक ग्रन्थों में भले ही मिलती हो किन्तु कालक्रम एवं परिस्थितियों के कारण नारी भोग की वस्तु विलासनी और अनेक नायिका भेदों के भवाटवी में उलझकर स्वतंत्र व्यक्तित्व हीन हो गई। उसे सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक अधिकारों से वंचित करने की दुरभि सन्धि इतनी प्रबल हुई की उससे बाहर निकलना नारी के लिए कठिन हो गया।

भारतेन्दु के पश्चात विदेशी शासकों के सामाजिक आर्थिक एवं नर नारी सम्बन्धों की स्वतंत्रता के

कारण भारतीय समाज भी प्रभावित हुआ। आर्य समाज के आन्दोलन सांस्कृतिक ध्वज वाहकों के विचार तथा राजनीतिक क्षेत्र में महात्मा गांधी के प्रयासो से नारी उत्थान की ज्योति जागृति हुई। मनोविज्ञान के अनेक पुरूह जटिल सिद्वान्तों के प्रकाशित होने पर साहित्यकारों को यह एक ऐसा अवसर उपलब्ध हुआ जिससे वह पुराने मति को प्रतीकों चरित्रों की नये ढंग से व्यवस्था कर सके इन कवियों ने नये पुराने विषयों के अनुरूप नारी चरित्र के अस्मिता के उद्घोषणा हेतु तत्तसम्बन्धी कथानकों का चयन किया। ऐसा ही कथानक सीता निर्वासन का भी है। जिसमें पति द्वारा सतीत्व की परीक्षा लिये जाने पर भी पुनः लोकापवाद से भयभीत पति अपनी प्रियतमा पत्नी की सुरक्षा नही कर पाता और नारी भी इस बल की वेदी में अपनी आहुति करती प्रतीत होती है।

इसके विपरीत भारत भूषण ने अग्निलीक में सीता को अग्नि की लीक में ज्योति बताकर उसे उच्च सिंहासन पर विराजमान किया है जिससे पुरूष मात्र प्रेरणा ले सकता है। उसके दिखाये मार्ग पर चल सकता है। उसके समानान्तर पहुंचने में वह आश्रम है। ऐसे उच्च पद को प्राप्त करने के लिए नारी को विद्रोहणी स्वत्व सम्पन्न अपने अधिकारों के प्रति सजक और अस्मिता की रक्षा हेतु सुदृढ़ होना होगा। कहना नही होगा की अग्निलीक में सीता के इसी रूप को प्रतीकात्मक पद्धति से कवि ने हमारे सामने अभिव्यंजित किया है।

नारी के चरित्र को सच्ची यथार्थ दृष्टि से परखते हुए लोक आदर्श की प्रणेता सीता का चरित्र पुरूष पर पूर्ण आश्रिता की परिधि से बाहर निकलकर विविध आयामों के स्वरूप में चित्रित होते हुए पौराणिक विशेषताओं और मानवीय रूपों में सम्बद्ध होकर अनेकानेक चारित्रिक परिवर्तनों में प्रस्तुत है। अग्निलीक की नायिका देवी स्वयं सीता है। जो पति राम के अति उच्च महात्वाकांक्षी राज्य लोलुपता के कारण अपने समूल कष्टों का कारण तो मानती ही है परन्तु युद्ध की विभीषिका में प्रजा की कराह को सुनती हुई अपने अभिव्यक्ति को मुखर करती है। जिससे पति का दिग्विजयी लक्ष्य प्रजा हित में देवी को मुखर करने के लिए विवश करता है। देवि का यह चारित्रिक स्वरूप राज्य एवं राजनीति को आदर्श के उतुंग सोपोनो पर प्रतिष्ठित कर आधुनिक चरित्र का स्वरूप प्रस्तुत है-

''क्या तुम्हे/इस तुमुल विजय-निनाद के नीचे कराहता
अपनी प्रजा का हाहाकार सुनायी नही देता?/क्या तुम जानते हो
कि तुम अश्वमेघ के नाम पर/पाप कर रहे हो?/क्या तुम्हारा यह अटल प्रण है
कि तुम कभी सही समय पर सही काम न करोगे?या क्या सचमुच हम सब
किसी अन्ध नियति के हाथ की कठपुतलियां है
और अपनी गति पर हमारा कोई वश नही है?'' [223]

सीता का बदला हुआ आधुनिक स्वरूप राम की पत्नी की अपेक्षाकृत प्रेमिका का चित्रण अत्याधिक मुखर होकर वर्णित है। स्वयं ही वर का चयन करना सीता के मन प्रेरणा का निर्णय आधुनिकता के स्वरूप का चित्रण करता है एवं स्वप्रेम पर निर्भर निर्माण का प्रतीक है-

''मै पत्नी नही, प्रेयसी हूं,/नही प्रेयसी नही, प्रेमिका-/राम की प्रेमिका।
मैने राम से विवाह ही नही किया/मैने राम से प्यार किया है
आप याद कीजिए गुरूदेव, /मेरे पिता ने मेरी आंखे बंद करके

इनके हाथों में मेरा हांथ नही सौपा था,/मैने स्वयंवर रचाया था।'' 224

आधुनिक नारी का स्वरूप देवी के वनवास जाने के स्वयं के निर्णय से प्रस्तुत है। जिसे उन्होने अपना आदर्श कर्तव्य मानकर पूर्ण करते हुए कुल एवं सूरवंशी परम्परा के विरूद्ध पहला कदम था-

''मेरे श्वसुर तो यह बात सुनकर ही दंग रह गये थे।
मेरी सास ने मेरी जेट भरकर मुझे रोका था।
पर मै नही रूकी/क्योकि मै इन्हें प्यार करती थी,
जहां ये न हो वहां मै कैसे रह सकती थी?
क्या यह भी कोई शास्त्र की आज्ञा थी
या कुल की परम्परा?'' 225

आधुनिक युग बोध की नारी के रूप मे सीता का चित्रित स्वरूप ज्वलन्त अभिव्यक्ति लिए हुए कुप्रथाओं और अन्याय के विरोध मे पूर्ण सजकता के साथ खड़ी हुई है। जो अपने महत्वाकांक्षी पति राम के लिए स्वयं को समर्पित करने के पश्चात भी बदले में नारी जाति की उपेक्षा प्राप्त होने पर मुखर होती है-

''दुर्गम पहाड़ और ऊबड़-खाबड़ घाटियां
सब मैने हंस-हंसकर पार कीं
और अपने को धन्य मानती रही,
इनकी थकान को माथे लगाती रही।
पर ये उसे आश्रिता का धर्म समझते रहे,।'' 226

आधुनिक युग बोध की चरित्र को और उदात्य करते हुए बहुविवाह प्रथा को झकझोरने का प्रयास किया है। आदि काल से चली आ रही नारी निरीहता की सूचक प्रथा खोखले दम्म पर निर्भर इस बिडम्बना पर तीखा प्रहार किया है-

''हाय, वह पुरूष नारी के प्यार को क्या समझेगा
जिसके पिता ने तीन-तीन व्याह रचाये हो।'' 227

सीता का ओजस्वी अभिव्यक्ति लिए एक मुखर व्यक्तित्व की छाप अंकित करते हुए वर्तमान परिवेश में संजोने का प्रयास सीता को आज की युगीन नारी के रूप में प्रस्तुत किया है। जो नारी चरित्र में हो रहे सामाजिक प्रहारों पर व पुरूष के शक्ति सजोइत निर्णयों पर चुटीला प्रहार करती है-

''राम के मनाजगत में प्यार को कोई स्थान नही है।
किसी एक अपढ़, नासमझ प्राणी ने
क्रोध, की झोंक में कुछ अकथ्य कह डाला
और इन्होने आनन-फानन में मुझे घर से निकाल दिया।'' 228

देवी सीता की मुखर और निरलिप्त अभिव्यक्ति इतनी मुखर है कि वह पति राम के निर्णय को महत्वाकांक्षा की यज्ञ वेदिका मानते हुए सदियों की भांति मूक निरीह नारी की तरह दी हुई आहुति की समिधा मानती

है। जिसे राम ने अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु ही दी जाती है।

"महत्वाकांक्षा।

असागरा धरा को अपनी बांहो में भर लेने की इच्छा,

रघुवंश में अपनी कीर्ति सबसे ऊंची करने की लालसा,

जिसके आगे सारे नेह-नाते/सारे जीवन, सुख,

सारी धर्म प्रतिज्ञाएं/इन्हें छोटी जान पड़ती है/कहने को ये निर्लिप्त है,।" [229]

उग्र अभिव्यक्ति के साथ पुरातन नारी के उस प्राचीन स्वरूप की चादर को देवि द्वारा ऐसे झाड़ी गई है। जिसमें नारी का प्राचीन स्वरूप जो पति, पिता कुल और परम्परा के लिए कठोर से कठोर निर्णयों को मूकवत सहते हुए कष्टों का भोगमान करता था। देवि की प्रखर और स्वतंत्र अभिव्यक्ति इस प्रतीक को स्पष्ट करती है-

"कल तक मै आपकी टहलनी थी

*   *   *   *

आप अपनी निर्देशिका, आप अपनी कर्त्री और आप अपनी भोक्ता हूं।" [230]

सारांश यह है कि नारी के समानता का अधिकार वैदिक और उपनिषदों के काल में मिलता है। जिसका क्षयिष्ठु रूप चौथी पांचवी शताब्दी से मिलने लगता है। नवी शताब्दी के आस-पास मुस्लिम धर्म के प्रसार की व्यापकता और सक्राचार के मायावाद के कारण भारतीय समाज में नारी का प्राक्तन य परम्परित रूप लुप्त होने लगा। उसे सहचरी य सह धर्म चारिणी न मानकर विलास और भोग्या माना गया काम उत्तलिका रूप के उसके चरित्र को साहित्य और समाज में प्रस्तुत किया जाने लगा किन्तु अंग्रेजो के स्वामित्वकाल में वैज्ञानिक विकास के होने पर पुनरूत्थान युग में नारी को आर्थिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक अधिकार भी मिलने लगे। इन्ही परिस्थितियों में प्रभावित होकर रामकथा कारों ने नारी चरित्र के कौशेय पट का निर्माण किया है। जिसके ताने बाने में त्याग, तपस्या आदर्शो के अवस्थिति मानी गयी तो दूसरी ओर मानवता जनित समान अधिकार की चर्चा की जाने लगी। वैदेही वनवास, रामराज्य, और लवकुश युद्ध में इन्हीं मूल्यों का प्रतिफलन है। आगे चलकर नारी को पूर्ण स्वतंत्र इकाई मानकर उसके अस्मिता बोध और स्वत्व की रक्षा हेतु समाज में जो आन्दोलन चले तथा विदेशों में नारी मुक्त के जो प्रयास हुए उनका प्रतिफलन सीता निर्वासन सम्बन्धी उत्तरवर्ती रामकाव्यों में पडा। प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन अग्निलीक, और अरूण रामायण में आधुनिक नारी के विचारो को सूत्रवद्ध किया गया है। इस दृष्टि से भारत भूषण अग्रवाल नारी समानता के पक्षधर ही नही है अपितु वैचारिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी वो नारी के पूर्ण अस्तित्व पर विश्वास करते है। इसीलिए अग्निलीक में सीता को मुखरा बनाया गया है जो अपने त्याग के बावजूद नारी की ऐसी अग्निलीक छोड़ जाती है इस पथ पर चलकर राम व कोई भी पुरूष गौरवान्वित हो सकता है। इस नारी के विद्रोहणी रूप के मूल में **फ्रायड** का **जिजीबिसा** तथा **काल मार्क्स** का **नारी दर्शन** प्रतिबिम्बत हुआ है।

निष्कर्षत:- यह कहा जा सकता है कि कवियों ने परम्परित रूप में पात्रों का प्रयोग तो किया ही है। साथ ही आधुनिक युग बोध के अनुरूप भी पात्रों के व्यक्तित्व को ढालने का प्रयास किया है। पौराणिक रूप में प्रचलित पात्रों के अतिरिक्त कुछ काल्पनिक पात्रों की रचना इस धारा के कवियों ने किया है। जैसे अग्निलीक में राजपुरूष,

रथवान, कौशिकी और चरणदास है। प्रायः प्रमुख पात्र मूल कथा के अनुरूप अपना चरित्र सुरक्षित रखने में सामर्थ हुये है क्योकि कथा में आकस्मिक उतार चढाव नूतन घटनाओं का उपयोग कम ही हुआ है फिर भी आन्तरिक मनोविकारों के उपास्थापन में कवियों को जहा अवसर मिला है उनका उपयोग समयक रूपेण हुआ है। चरित्र-चित्रण करते समय पात्र के नाम के साथ वहां व्यक्तित्व और सौन्दर्य की सीमित झांकी प्रस्तुत की गई है। आन्तरिक व्यक्तित्व और उसके गुण तथा उनका पारिवारिक या प्रतीकात्मक व्यक्तित्व की स्थान-स्थान पर चर्चा की गई है। कहना नही होगा की राम सम्पूर्ण काव्यों में राजा, पति, मर्यादा निर्धारक, प्रजा सुचिन्तक, सहिष्णु प्रेमी और बिरही व्यक्तित्व वाले है। यदि सीता निर्वासन के पूर्व उनकी मनोव्यथा अर्न्तदहन न चित्रित किया जाना तो यह आधुनिक मनोविज्ञान सम्वत न होता। इसीलिए प्रवाद पर्व में सीता निर्वासन के पूर्व राम के मन में स्थिति इड, इगो, सुपर, इगो का आर्न्तद्वन्द्व निरूपित कर आन्तरिक वाह व्यक्तित्व की समरूपता स्थापित की गई है। इसी प्रकार निर्वासिता सीता राम अश्वमेघ की घटना सुनकर मौन और मूक रह जाती है। तो सम्भवतः नारी जाति का उद्धार उसके व्यक्तित्व की दृढ़ता के अंश ही तिरोहित हो जाते। अग्निलीक में दम्पति के प्रेम का आधार परस्पर विश्वास सेवा निष्ठा और अनन्यता प्रदर्शित हुई है। यही स्वतंत्र चेतना नारी के अस्मिता और उसके विद्रोहणी रूप में मुखर कर कवि नाटककार ने आधुनिक नारी के समानता के पक्ष को प्रबल रूप से मुखरित किया है। भरत, लक्ष्मण, लवकुश अपने चरित्र के दायरे मे ही रहकर भ्रात्य भक्ति के आदर्श रूप उपस्थित किया है। स्त्री पात्रों में अहिल्या, कौशिकी, सीता की सहेलिया, क्षणिक तारे के समान टिम टिमाकर तिरोहित हुई है। इस धारा के कवियों ने सामाजिक दायित्व में वैयक्तिक परिवारों की विदूषता एवं सामाजिक प्रतीकों के रूप में भाई, भाभी, देवर, प्रजा, राजा, पति, पत्नी, प्रेमी, वत्सला मां, परिकर आदि रूप भी अपने सुष्ठु एवं सम्यक रूप में चित्रित हुये है। सारांश यह है कि चरित्र चित्रण करते समय इन कवियों ने युग बोध और भाव धारा का ध्यान रखा है विषय य कथा भले ही अतिरंजित य अतार्किक लगे किन्तु चरित्र मानवीय धरातल पर ही चित्रित हुए है इस दृष्टि से वैदेही, वनवास, प्रवाद, पर्व, सीता, निर्वासन, अरूण रामायण प्रमुख काव्य है।

❁✦❁

❁ सन्दर्भ सूची ❁

1-	शब्द कल्पद्रुम-भाग 3-	पृ. 108
2-	गीता-	पृ. 13/5-6
3-	नाट्य शास्त्र भरत-	पृ. 34/17
4-	वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''-	पृ. 24
5-	वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''-	पृ. 24
6-	वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''-	पृ. 25
7-	वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''-	पृ. 58
8-	प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता-	पृ. 23
9-	प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता-	पृ. 33
10-	प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता-	पृ. 43
11-	प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता-	पृ. 46
12-	अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल-	पृ. 20
13-	अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल-	पृ. 33
14-	अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल-	पृ. 52
15-	अग्निलीक- भारत भूषण अग्रवाल-	पृ. 53
16-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 38
17-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 56
18-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 64
19-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 66
20-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 67
21-	सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच-	पृ. 75
22-	रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा-	पृ. 67
23-	प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'-	पृ. 81
24-	अग्नि परीक्षा-आचार्य तुलसी-	पृ. 21
25-	भूमिजा-नागार्जुन-	पृ. 54
26-	लव-कुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी-	पृ. 3
27-	अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण-	पृ. 622
28-	अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण-	पृ. 624
29-	अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण-	पृ. 624

30- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 625

31- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 637

32- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 58

33- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 61

34- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 60

35- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 35-36

36- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 62

37- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 65

38- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 49

39- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 49

40- सीता निर्वासन -उमाशंकर नगायच- पृ. 26

41- सीता निर्वासन -उमाशंकर नगायच- पृ. 27

42- सीता निर्वासन -उमाशंकर नगायच- पृ. 33

43- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

44- रामराज्य- रामप्रकाश शर्मा- पृ. 77

45- प्रिया या प्रजा- पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 83

46- अग्नि परीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 23

47- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 622

48- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण - पृ. 623

49- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 625

50- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 27

51- अग्निलीक -भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 17

52- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 21

53- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 22

54- अग्नि परीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 23

55- अरूण रामायण-पोछार रामावतार अरूण- पृ. 624/625

56- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 71

57- सीता निर्वासन- उमाशंकर नगायच- पृ. 59

58- अरूण रामायण -पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 622

59- अरूण रामायण -पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624

60- अरूण रामायण -पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624

61- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 11
62- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 76
63- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 40
64- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 59
65- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 63
66- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 98
67- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 102
68- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 138
69- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 138
70- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 130
71- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 76
72- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 77
73- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 81
74- प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 80-81
75- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 17
76- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 16
77- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 42
78- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 56
79- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 57
80- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 52
81- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 37
82- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 73
83- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 5
84- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 68
85- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 68
86- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71
87- प्रिया या प्रजा - गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 82
88- अग्निपरीक्षा- आचार्य तुलसी- पृ. 67
89- अरूण रामायण -पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 628
90- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 630
91- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण - पृ. 630

92- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण - पृ. 630

93- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 626

94- वैदेही वनवास- अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 58

95- वैदेही वनवास- अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 59

96- वैदेही वनवास- अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 99

97- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 46

98- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 46

99- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 48

100-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 49

101-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 50

102-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 32

103-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 629

104-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 90

105-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 92

106-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 173

107-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 176

108-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 55

109-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

110-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 631

111-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 631

112-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 632

113-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 39

114-भूमिजा - नागार्जुन- पृ. 67

115-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 66

116-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 66

117-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 69

118-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 70

119-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 70

120-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 145

121-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 134

122-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 50

123-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 14

124-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध"- पृ. 67

125-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध"- पृ. 69

126-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ.69-70

127-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 71

128-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 205

129-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 212

130-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 159

131-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 208

132-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 43

133-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 43

134-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 56

135-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 43

136-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 7

137-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 9

138-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

139-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 101

140-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 630

141-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 636

142-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 74

143-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 75

144-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 77

145-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 76-77

146-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 77

147-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 140

148-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 81

149-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 140

150-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 34

151-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 69

152-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 15

153-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 626

154-लव-कुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 15

155-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 160

156-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 164

157-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 109

158-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 36

159-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 37

160-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 21/22

161-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

162-रामराज्य-राम प्रकाश शर्मा- पृ. 67

163-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 77

164-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 625

165-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 87

166-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 107

167-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 108

168-प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 43

169-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 17

170-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 25

171-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 26

172-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 31

173-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 33

174-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 34

175-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 35

176-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 37

177-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 6

178-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 73

179-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 84

180-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 626

181-वैदेही वनवास- अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 205

182-वैदेही वनवास- अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 205

183-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 208

184-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 72

185-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 76

186-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 117

187-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 98

188-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 98

189-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 102

190-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 148

191-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 54

192-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 44

193-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 77

194-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 9

195-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 10

196-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 9

197-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 76

198-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 106

199-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण - पृ. 635

200-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 28

201-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 35

202-प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 40

203-प्रवाद पर्व-डा. नरेश मेहता- पृ. 41

204-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 10

205-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 623

206-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 38

207-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 138

208-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 146

209-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 10

210-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 634

211-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 163

212-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 170

213-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 24

214-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 57

215-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 38

216-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 18

217-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 59

218-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 77

219-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 80

220-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 107

221-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 113

222-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 107

223-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 33

224-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 47

225-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 48

226-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 49

227-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 49

228-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 51

229-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 53

230-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 55

अध्याय-चतुर्थ

आलोच्य काव्य-ग्रन्थों में रस परिपाक

- रस एवं उसके अवयव
- अंगी रस
- अन्य रस

पृष्ठ- 153-190

अध्याय-4

आलोच्य काव्य ग्रन्थों में रस परिपाक

भारतीय आचार्यो के अनुसार विभाव ,अनुभाव एंव संचारी भावों की समन्वित चेतना के आधार पर रस निष्पत्ति होती है । किसी भावनावान कवि की रचना में विभाव, अनुभाव एंव संचारी भावों की यह राशि बलपूर्वक एक स्थान पर नही बैठाई जाती वरन् इस सम्पूर्ण उपचार के पीछे कवि की सूक्ष्म एंव गहन काव्यात्मक अनुभूति का ऐसा अंकुठित तथा स्वाभाविक स्त्रोत प्रभावित होता है,जो सहृदयो को भाव निमग्न करा देने में समर्थ होता है । ''वाणी और अंगो के आश्रित अनेक अर्थो का विभावन कराने वाले विभाव कहलाते है। ये भावों के कारण होते है, इन विभावों के दो भेद होते है, आलम्बन तथा उद्दीपन। जिनके सहारे रस की निष्पत्ति होती है वे आलम्बन विभाव है। निमित्त रुप सामग्री जिससे जाग्रत भाव अधिकाधिक उद्दीप्त होता है; उद्दीपन विभाव कहलाते है । जिनके द्वारा रति आदि भावों का अनुभव होता है,उसे अनुभाव कहते है । अस्थिर मनोविकारों या चित्रवृत्तियों को संचारी भाव कहा जाता है।'' [1]

सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों के विषय में यह तथ्य विचारणीय है कि इनका अंगी रस क्या है। प्रायः शास्त्रकारों ने घटना के आधार पर,या फलागम को दृष्टि रखकर अंगीरस का निर्णय किया है। साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ प्रबन्ध काव्यों के अंगी रस के रुप में श्रंगार और वीर को ही रखा है। इसके विपरीत भवभूति ने करूण रस एक मात्र अंगीरस मानकर निमित्त भेदमात्र से अन्य रसों की चर्चा की है। यहाँ हम संक्षेप में सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों के अंगीरस निर्धारण के पूर्व इस समस्या का समाधान करना चाहते हैं।

बात यह है कि लोकोपवाद के कारण राम ने अपनी प्राण प्रिय सीता को अनिश्चित काल के लिए वनवास दे दिया था। सम्भवतः उनके मन में गहरे रुप से एक क्षीण सी आशा की किरण विद्यमान थी कि ऐसी कोई परिस्थिति अयोध्या के प्रजा जनो के समक्ष उपस्थित होगी। जिससे सीता निष्कलुष सिद्ध हो सकेगी और राम सीता का पुनः मिलन होगा, इस प्रकार की घटना जिन काव्यों में उपनिबद्ध है, ऐसे काव्यों का अंगी रस-श्रंगार रस है और इस परिप्रेक्ष्य में सीता या राम का विरह प्रवास-जन्य-विप्रलम्भ-श्रंगार के अन्तर्गत आयेगा।

इस कथा का उत्तर पक्ष बड़ा ही विचित्र रुप में दिखाई देता है। कुछ काव्यों में परीक्षणोंपरान्त् सीता पृथ्वी के गर्भ में समा जाती है। इन परिस्थितियों में यह निर्णय करना कठिन प्रतीत होता है कि वनवास के कार्य काल का विरह इस प्रकार का है। शास्त्रीय रुप में यह करुण रस-जन्य दुखः है,अथवा श्रंगार रस के अंर्तगत विप्रलम्भ श्रंगार के उपभेद के करुण विप्रलम्भ के अर्न्तगत आयेगा। **शोधकत्री** का यह मन्तव्य है कि जहाँ सीता पृथ्वी के गर्भ में समा जाती है और इस हृदय विदारक घटना के साक्षी राम का अन्तःकरण द्राक्षा रस की भांति गलित होता है,वहाँ करुण रस मानना चहिए और जहाँ ऐसा नही है वहाँ राम का विरह तो प्रवास-जन्य तथा सीता का विरह प्रवास और करुण विप्रलम्भ के अर्न्तगत आयेगा। इस परिप्रेक्ष्य में हम आलोच्य काव्यग्रन्थो में प्राप्त एतद्विषयक स्थलों की रस-परक व्याख्या करेंगें।

करुण रसः-

दशरुपककार ने लिखा है- " इष्ट का नाश या अनिष्ट की प्राप्ति से करुण रस की निष्पत्ति होती है। इसका स्थाई भाव शोक है। इसमें अश्रु पतन, परिवेदन,मुखशोषण,वैयवर्ण,निःस्वास आदि अनुभाग प्रकट होतें हैं। तथा निर्वेद ,ग्लानि, चिन्ता, उत्सुक्य, आवेग, मोह, श्रम, भय, विषाद, दन्य, व्याधि, जड़ता, उन्माद, अपस्मार, त्रास, आलस्य, मरण, स्तम्भ, वेपथु, स्वरभंगु, व्यभिचारी तथा सात्विक भाव प्रकट होते है। "[2]

सीता निर्वासन से सम्बन्धित दुखान्त कथा के अंगी रस के सम्बन्ध में विवेचन करते हुए कहा जा सकता है, कि सुखान्त कथा में यह निर्वासिन, सीता की विरह व्यथा राम का आवेग प्रवास जन्य विप्रलम्भ श्रंगार है। किन्तु दुखान्त कथा में यह करूण विप्रलम्भ है। अथवा करूण रस अंगी रस के रूप में प्रयुक्त है। इस पर आचार्यो में मतैक्य नही है। सीता निर्वासिन सम्बन्धी एतद् विषयक स्थलों की शास्त्रीय सैद्धान्तिक समीक्षा करते हुये उनकी पुष्टि उदाहरणों के द्वारा की जायेगी और निष्कर्ष रूप में तभी कोई निर्णय लिया जा सकता है।

"वैदेही वनवास" में करूण रस का आश्रम और आलम्बन सामान्य पात्र नही है। सीता, राम, लक्ष्मण, वाल्मीकि और आश्रम के ब्रह्मचारी छात्र, सभी संसार के प्रति अनासक्त परम संयमी दिखाई देते है। वे निर्वासिन की हृदय विदारक घटना से क्षुब्ध तो है, किन्तु उनकी लोक दृष्टि खुलकर इस विषय में अपने उद्‌गार व्यक्त नही करने देती। सीता निर्वासिन के बाद अवधपुरी में उदासी छा जाती है। देर रात तक वीणा की स्वरलहरी राम के हृदय को बेधती रहती है। राम एकान्त में आंसू भी बहाते है, किन्तु सार्वजनिक रूप से वे हृदय की इस पीड़ा को व्यक्त नही कर पाते। शोक में डूबी हुई एक गायिका इस करूण भाव को इन शब्दों में स्वर प्रदान करती है। दासी के इस मनोभाव में शोक अपने चरम पर दिखाई देता है-

"आकुल आंखे तरस रही है।
बिना बिलोके मुख-मयंक-छवि पल-पल आंसू बरस रही है।।
दुःख दूना होता जाता है सूना घर-घर घर खाता है।
ऊब ऊब उठती हूं मेरा जी रह-रह कर घबराता है।।
दिन भर आहे भरती हूं मै तारे गिन-गिन रात बिताती।
आअन्तरतल मध्य न जाने कहां की उदासी है छाती।।"[3]

वैदेही वनवास का उपसंहार उठारह सर्ग में सीता के स्वर्गरोहण से होता है। बारह वर्ष वाल्मीकि आश्रम में बिताने के बाद सीता पुनः राम का दर्शन करती है। सम्पूर्ण आश्रम वासी राम के अश्वमेघ यज्ञ को महिमा मण्डित करने अयोध्या की ओर प्रस्थान करती है। जैसे ही आश्रम वासियों का समूह नगर सीमा में प्रवेश करता है। राम उनका स्वागत करने के लिए स्वयं पहुंचते है। सीता राम के पुनः दर्शन पाकर इतनी भाव विह्वल हो राम का चरण स्पर्श करते ही वे निर्जीव मूर्ति निष्चेष्ठ हो जाती है। करूण रस की इस चरम परिणित को कवि ने इन शब्दों में साकार किया है-

"ज्योही पति प्राणा ने पति-पद-पद्य का।
स्पर्श किया निर्जीव-मूर्ति सी बन गई।।
और हुए अतिरेक चित्र-उल्लास का।

दिव्य-ज्योति में परिणत वे पल में हुई।।
लगे वृष्टि करने सुमनावलि की त्रिदश।
तुरंत दुंदुभी नभतल में बजने लगी।
दिव्य-दृष्टि ने देखा, है दिव-गामिनी।
वह लोकोत्तर-ज्योति जो धरा में जगी।।" [4]

रस की दृष्टि से वैदेही वनवास निश्चय ही करूण रस प्रधान महाकाव्य है। किन्तु करूणा की इस विभूति को राम और सीता के उच्च आदर्शों के बीज उस रूप में विकसित करने का अवसर मिला जिस रूप में सामान्य जन ऐसे क्षणों में शोक संतृप्त हुआ करते है। राम और सीता का जो आदर्श कवि ने सांस्कृतिक धरोहर के रूप में भारतीय वांङमय से प्राप्त किया था। उसे अक्षुण रखते हुए सीता निर्वासन को लोक साधना के समक्ष तर्क संगत सिद्ध करने में सारा ध्यान केन्द्रित रखने के कारण करूणा का प्रसार अपेक्षा के अनुरूप नही हो पाया।

यदि कोई व्यक्ति व्यक्तिगत मनोभावों से मुंह मोड़कर मात्र लोक साधना को अपना आदर्श मान ले और लोक के लिए अपनी व्यक्तिगत भावनाओं की आहुति दे दें। तो उसके जीवन में एक उदात्तता तो दिखाई देगी किन्तु वैसी व्याकुलता जैसी इन प्रशंगो में सामान्य जन की होती है, उसका सर्वागं निरूपण नही हो जायेगा। यही बात वैदेही वनवास में रस प्रकरण में कही जा सकती है। कवि का सारा ध्यान वैदेही वनवास को धर्म सापेक्ष सिद्ध करने मे रहा है, और इसीलिये ह्दय की मर्मान्तक पीडा को विशद रूप में प्रकट होने का अवसर नही मिला।

अग्निलीक भारत भूषण अग्रवाल का गीति नाट्य है, जिसकी कथा दुखान्त है। क्योकि इसमें सीता राम के समक्ष भू गर्भ में तिरोहित हो जाती है। इस घटना के पूर्व इसमें सीता के वियोग का ह्दय द्रावक वर्णन हुआ है। इस विरह वर्णन में सीता आश्रम, राम आलम्बन, दौर्वल्य, आवेग, अमर्ष, उन्माद, विषाद और ग्लानि संचारी भावों से सीता के प्रवास जन्य भावों का वर्णन किया गया है। मुमुर्षा अवस्था का उल्लेखकर नाटकार ने इस स्थल को करूण विप्रलम्भ में परिवर्तित कर दिया है-

"उनके जाने के समय तुम जो मूर्छित हुई
तो अब तक शय्या पर पडी हो।
पहले तो वैद्य जी बडे चिन्तित हो गये थे
तुम्हारी नाड़ी भी निस्पंद जान पड़ती थी
प्रभु की कृपा है कि अब तुम कुछ स्वस्थ हो।" [5]

नाटककार ने सीता का मोह, जड़ता, विबोध आदि संचारी भावों से उसके आन्तरिक व्यथा का निरूपण किया है-

"अपने आप से/मै डरती हूं/और मरने से डर जाऊं
जब मेरे चलने की घड़ी आये
तो कही यह न कह बैठू अभी नही, अभी कुछ दिन और।" [6]

आश्रम के उत्तर क्षितिज से धूल का बादल भयाक्रान्त पंक्षियों का कलरव और कौशिकी द्वारा रामचन्द्र सैन्य यात्रा की गाथा उद्दीपन विभाव के रूप में वर्णित है। जिसे सुनकर सीता का विरह उदीप्त होकर आवेग रूप

में प्रस्फुटित होता है। सीता को औत्सुक्य की व्यंजना इस प्रकार हुई है-

"रूक क्यों गयी बहन?/बताओं, बताओं-बताती चलों
कैसी है वह सेना, कैसे है सेनापति/उनके नायक कौन हैं
क्या स्वयं महाराज ?" [7]

उद्दीपन विभाव के रूप में नाटकार ने सैन्य संचालन और सैनिको का कोलाहल वर्णित है-

"भला किसमें साहस है कि इन महारथियों को ललकारें।
धनुर्धारियों, खडगधारियों शेलधारियों की पांत पर
जिनके आगे-पीछे रथारोही, अश्वरोही और / गजारोहियों के गुल्म
और फिर बीच-बीच में दुन्दुभी-मेरी, मृदंग मुरज/पटह तुर्य
और वंशीवादकों के दल-दल
जय-जयकार, चिघाड़, गरज, हिनाहिनाहट और रण/बाद्यों के स्वर मिलकर
दिग्दिगन्त को कपा देते है।
जब वे चलते है तो लगता है उत्साह का समुद्र उमडा/आ रहा हैं।" [8]

सैन्य यात्रा वृतान्त सुनकर सीता का अचेत होना उसके अनुभावों के साथ श्रम, मूर्छा और मोह संचारियों की व्यंजना इस प्रकार हुई है-

देवी "(धीरे धीरे आंखे खोलकर)/घबराओं मत बहेन,
मै ठीक हूं/बस कुछ थक गयी हूं/घोडा विश्राम कर लू/लेट जाती है।" [9]

नाटककार दे स्मृति के माध्यम से देवी सीता के अन्तस में राम दर्शन की अभिलाषा जागृत की है, किन्तु संकल्प और विकल्प को कारण उनका मन आवेग से भर जाता है। प्रभु के अश्वमेघ यज्ञ की घटना सुनकर सीता का आवेग, अमर्ष, उग्रता, मति और विषाद आदि संचारी भावों से उनके वियोग का भाव पुष्ट हुआ है-

"इस तुमुल विजय-निनाद के नीचे कराहता
अपनी प्रजा का हाहाकार सुनायी नही देता?
क्या तुम जानते हो कि तुम अश्वमेघ के नाम पर
पाप कर रहे हो।?
क्या तुम्हारा यह अटल प्रण है
कि तुम कभी सही समय पर सही काम न करोगे ?" [10]

तृतीय अंक में वाल्मीकि प्रबोध के पश्चात सीता का विरह और अधिक उद्दीप्त हो जाता है। राम के जीवन की घटनाओं का स्मरण कर सीता का उत्तेजित होना काइक अनुभाव के साथ उग्र रूप में वाचिक अनुभावों का तथा ग्लानि, विबोध, मति, आवेग, संचारी भावों का उल्लेख कवि ने किया है।

"हां अब तक स्वप्न ही देख रही थी,/आज पहली बार चेत हुआ है।
हाय,/मै इतनी अन्धी क्यों हो गयी ?/मैने क्यों मान लिया

कि जो पहले तिरस्कार कर चुका हैं/बहिष्कृत कर चुका है
धोखा दे चुका हैं/वह अब एकाएक सच्चा हो जायेगा ?
मै कितने बडे भूल मे थी।/एक मीठे वाक्य के भरोसे
मैने समझ लिया/कि बरसों का इतिहास बदल गया।'' [11]

सीता की विरह जनित शास्त्रीय दशाओं का चित्रांकन भी नाटककार ने बडे भाव बलित रूप मे किया है। चिन्ता, अभिलाषा, उद्ववेग, मरण इत्यादि दशाओं का कवि ने अच्छा निरूपण किया है। क्रोध, आवेग, मरण का आभास अमर्ष आदि संचारी भाव सीता के वाचिक अनुभाव से पुष्ट हुए है-

''ये आंसू नही है गुरूदेव, ये अंगारे है/यह मेरे जीवन की आग है
जो मेरे भीतर धधक रही है।/आप क्या जाने
इस संसार में नारी कितनी अकेली है!/उसका दुःख भी आंसू है,
उसका क्रोध भी।/मैं आपको कैसे समझाऊं
मै दुःखी नही हूं मै गरज रही हूं।/जो मेरे पति है
हाय, वे मेरे पुत्रों के पिता भी है।/नही तो मै आपको दिखा देती
कि नारी क्या कर सकती है !/पर मै लाचार हूं।
इतने बडे रामराज्य में/आज मुझसे ज्यादा निरूपाय कोई नही।
अब मै जीकर क्या करूंगी,/अब तो मरण ही मेरी मुक्ति है।'' [12]

तात्पर्य यह है कि अग्निलीक में विप्रलम्भ श्रंगार के भावुक गलित द्राक्षा रस की तरह सहृदय के हृदय को विगलित करने में समर्थ है। इन स्थलों में कही आलम्बन राम के रूप, गुण, शील, शक्ति, राज्यलिप्सा और महत्वाकांक्षा का निरूपण है तो कहीं आश्रय सीता के काइक, वाचिक, सात्विक अनुभाव, एवं गर्व, निर्वेद, आवेग, चपलता, मद, उन्माद, चिन्ता, मोह, स्मिृति, विषाद, विबोध, आमर्ष, उग्रता, व्याधि, आदि की व्यंजना अत्यन्त मार्मिम ढंग से की गयी है! इन स्थलों में विरह की एकादश दशाओं में चिन्ता, अभिलाषा, गुण कथन उद्वेग, मूर्छा, प्रलाप , और मरण की भी दशाओं का उल्लेख है। रस परिपाक की दृष्टि से इसका मुख्य रस करूण विप्रलम्भ ही है। जिसमें पूर्वराग का आभास प्रवास मान और करूण विप्रम्भ का हृदय द्रावक रूप में मिलता है।

करूण रस :-

आचार्य विश्वनाथ ने अनिष्ट प्राप्ति प्रिय जन की मृत्यु करूण रस के कारण बतायें है, अग्निलीक में भूगर्भ मे विलीन सीता को देखकर राम के मन में ग्लानि, पश्चाताप, अवसाद, अश्रु, विषाद, आदि भाव उदित हुए है- अश्रु मोह और विषाद का उदाहरण देखिये-

''आंखो पर हांथ फेरते है/नही, मै रो नही रहा हूं
भीतर ही भीतर टूट रहा हूं !/मेरे प्राणों के टुकड़े हो रहे है
और मैं उन्हें पूरे मनोबल से कस रहा हूं/क्योकि ये सचमुच ही टूट गये
तो मेरा जीवन ही खड्ड बन जायगा।'' [13]

बात यह है कि जहां अनिष्ट की प्राप्ति होती है अथवा प्रिय मिलन की आशा सदैव के लिए समाप्त हो जाती है। करूण रस वही माना जाता है। सीता का भूमि प्रवेश मिलन की आशा को तोड़ देता है। आशय राम की जड़ता संचारी भाव, विषाद से युक्त होकर कितनी मार्मिक बन गई है-

"जैसे एक कर्का कही लपकी/ और मुझे पत्थर बना गयी।" [14]

पश्चाताप, ग्लानि, आशंका राम के हृदयस्त शोक को भली प्रकार अभिव्यंजित करने में समर्थ है-

"मेरा सारा नियम-संयम आडम्बर बनकर रह गया है
और मैने अपनी आंखों देख लिया/कि प्रजा मुझसे दूर भागती है,
पत्नी क्षमा नही कर पाती,/और मेरे ही बच्चे मुझे चुनौती देते है।" [15]

सात्विक अनुभाव कम्प, और आशंका का निरूपण कवि नाटककार ने अत्यन्त संक्षम रूप में किया है।

"जिस दिन मैंने देवी को वनवास दिया था/उसी दिन मेरा दिल धड़का था
पर मैने उसे बलपूर्वक दबा दिया।/मेरी पूरी देह कंप-कपा उठी थी।" [16]

आश्रय राम आलम्बन सीता की अनन्य निष्ठा उसके गुणों का गायन को नाटककार ने उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत किया है। सीता का गुण कथन और राम की ग्लानि का एक साथ वर्णन नाटककार ने बड़े कुशलता पूर्वक किया है। यहां सात्विक भाव रोमांच और हर्ष पुलक आदि भाव सन्धि को इस प्रकार व्यंजित किया गया है-

"फिर कुछ सोचकर पुलक उठते है/देवी तुम धन्य हो!
जब यह अधम राम राजाधिराज बनकर/अपनी पत्नी से, प्रजा से, सन्तति से-
और अपनी भूमि के जीवन से मुंह मोड़कर/चाटुकारों से भरे एक संकीर्ण वक्ष में
यशोगान सुनने में व्यस्त था/तब तुम जीवन का अलख जगाती हुई
धरती की सच्ची संतान की भांति/धरती के जीवन से जुडी रही।" [17]

सीता की विलुप्त होने पर आश्रम राम जिस ग्लानि और पश्चाताप की अग्नि में जलते है उसमें उद्वेग विह्वलता आवेग के साथ मरण भाव को भी इस प्रकार व्यंजित किया गया है-

"जब देवी थी और मेरा स्वर्ग मेरे सामने था
और क्या इस परिताप की यातना से टूटकर
मै अपने ही हाथों से अपना गला घोट लूं?
पर अपने जीवन का ऐसा व्यर्थ अन्त करके
मै फिर एकबार पलायन ही करूगा।" [18]

अग्निलीक का समापन करूण रस से कर नाटककार ने भवभूति की परम्परा का पालन किया है। यह अनुगमन लक्षणा अनुधावन नही है, अपितु सीता द्वारा निर्दिष्ट अग्निलीक में स्नानकर राम अत्यन्त तेजोदृप्ति रूप में प्रकट हुए है। क्योकि कर्म से बढ़कर कर्ता का कोई अन्य स्मारक नही होता। आश्रय राम के मन में सीता के त्याग ने हर्ष, गर्भ, विबोध, मति, धृति, संचारी भावों का प्रार्दुभाव किया और वे सीता प्रदृत्त अग्नि में अपने जीवन की आहुति चढ़ाने के लिए संकल्पवान सिद्ध होते है। नाटककार ने एक दृष्टि से करूण रस का परियवसान एक नये रूप

में कर पाठकों को इसका अनुभव करने के लिए स्वतंत्र छोड़ देता है-

"इससे तो अच्छा है
कि मैं इन आंसुओं को अपने शेष जीवन में सीच दूं
और जो राम-राज्य
अभी केवल देवी की यन्त्रणा का ही इतिहास है-
उसे देवी के गौरव का स्मारक बना दूं
ताकि जब जाऊ तो गर्व से कह सकूं
चाहे मुझे तुम्हारी अग्नि मिल गयी
तो मैने उसमें अपने जीवन की आहुति चढ़ाई थी! " [19]

लक्ष्मण सीता को रथपर बैठाकर वन ले जाते है। वे चिन्ताग्रस्त और शोकाकुल मुद्रा में है। कवि विचार करता है कि लक्ष्मण की उदासी देखकर सीता ने उनसे उसका कारण जानना चाहा होगा और फिर लक्ष्मण का हृदय दुख और दैन्य से बैठने लगा होगा। सीता की विश्वास भरी बाते सुनकर लक्ष्मण पर जो प्रतिक्रिया हुई होगी उसका अनुमान कवि की इन पंक्तियो से लगाया जा सकता है। यहां अश्रु, जड़ता, विवशता दृष्टव्य है-

"छलछला उठे मस्तक पर,
मुख पर, स्वेद बिन्दु,
फिर सरक गिरी वल्गा
लक्ष्मण के हाथो से।
थम गये अचानक तुरंग
सूर्यवंशी स्पन्दन के वेगवान।
कितने निरी निरूपाय
नयन में भरे नीर-
पीछे मुड़ देख रहे सीता को शून्य दृष्टि।
छटपटा रहे अकुलाते प्राण निकलने को
सौमित्र मृत्यु कामना लिये, याचना लिये।" [20]

इन पंक्तियों में लक्ष्मण का शोक संतृप्त हृदय और उनकी छटपटाहट करूण रस को जन्म देती है। लक्ष्मण इस करूण रस का आश्रम, सीता आलम्बन और घटना चक्र से अनभिज्ञ सीता के विश्वास भरे वचन उद्दीपन, लक्ष्मण के मस्तक और मुख पर निकला पसीना उनके हाथों से घोड़ो की लगाम का गिर जाना, नेत्रों में जल भर आना, सीता को सून्य दृष्टि से ताकना अपने लिये मृत्यु की कामना करना आदि अनुभाव है। जिनके द्वारा कवि ने करूण रस का परिपाक किया है।

इसी प्रकार सीता निर्वासन, के समय कवि कल्पना करता है कि न केवल अयोध्यावासी बल्कि वनस्पतियां पशु पंक्षी आदि करूणा विगलित हो गये होगे। राम के हृदय की गति तो और भी दयनीय हो गयी होगी-

"कितनों ने प्राण तजे होगे/श्री हीन हुआ होगा
राघव का दीप्त मुकुट/आबाल बृद्ध छाती को पीट लिये होगे
मुरझाये होगे/उपवन के तरूलता गुल्म
शुक और सारिका /जला भोजन त्यागे होगे
परिचारक राजमहल के/हो मृत प्राय राम
आदेश तुम्हारे मौन विवश ढोते होगे,/सीता रानी का विहवल हो ले नाम किन्तु
एकान्त कक्ष में अश्रुपात करते होगे।" [21]

उपर्युक्त उदाहरण में जिस करूण भाव को कवि जगाना चाहता है, वह उसके अनुमान पर आधारित है। और अनुमान तथा वस्तु स्थिति में बहुत अन्तर होता है। कवि सोचता तो है कि सीता निर्वासिन के समय अयोध्या का सम्पूर्ण वातावरण शोकाकुल हो गया है, किन्तु वह उस वजृपात को अयोध्यावासियों के वास्तविक जीवन में पूरे वेग के साथ चित्रित नही कर सका। यह अनुमान करना की सीता निर्वासिन से दुखी होकर अनेक लोगो ने प्राण त्याग दिये होगे। बच्चों से लेकर बूढे तक अपनी छाती पीटी होगी। उपवन के तरूलता कुल मुरझा गये होगे। सुख और सारिकाओं ने जल और भोजन त्याग दिया होगा, राज महल के परिचालक मृत्यु प्राय हो गये होगे। आदि करूणा को जगाता तो है किन्तु यह इन सबको सीता के दुःख में वस्तुतः दुःखी चित्रित किया गया होता तो करूण रस की अधिक सांगोपांग और प्रभाव शाली अभिव्यक्ति हुई होती। इसी प्रकार सीता को तमसा तट पर छोड़ जब लक्ष्मण अयोध्या वापस आते है तो राज माताओं का संताप कितना करूणिक रहा होगा इसका अनुमान कवि अपनी उर्वर कल्पना से इन शब्दों में लगता है-

"जो हिन दिन करते अश्वों को/सुन, ललक कर/दौड़ी होगी आतुर
जल उतारने को,/पर रथ से केवल सौमित्र/उतर आये होगे,
चरणों पर गिरे दहाड़ मार/ रोये होगे/"भा.....भी, भाभी, प्यारी, भाभी"
का कृन्दन स्वर सुन चकित भीत मातायें/ विकल हुई होगी" [22]

इस वर्णन मे कवि ने राजमाताओं के ह्रदय का जो करूण भाव उभारने का प्रयास किया है। उसमें सीता के वन बिहार से लौटने की प्रतिज्ञा कर रही मातायें अचानक लक्ष्मण मात्र के वापस लौटने पर आश्चर्य चकित और भय से व्याकुल हो गयी होगी। सम्भवतः उन्हें सीता निर्वासिन के निर्णय का पहले से ज्ञान नही था। इसीलिए वे अश्वों की हिनहिनाहट से उतावली होकर सीता का स्वागत करने के लिए दौड़ती है और जब उस रथ के केवल लक्ष्मण भाभी का नाम लेकर दहाड़ मारते उतरते है, तो लक्ष्मण के करूण कृन्दन से माताये व्याकुल हो जाती है। इस पूरे वर्णन में करूणा का आश्रय मूलतः लक्ष्मण है। पर बाद में मातायें भी शोक संतृप्त हो उठती है और उनके ह्रदय में भी करूणा का उद्वेग हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि के ह्रदय का इस करूणा का सीधा आशय लक्ष्मण य माताओं के ह्रदय का शोक कवि के ह्रदय की प्रतिछाया मात्र है। यदि इस करूणा का सीधा आशय लक्ष्मण य माताओ को बनाया गया होता तो उनके ह्रदय की गहराई में डूबकर करूण रस का अधिक आस्वादन किया जा सकता था। आश्चर्य, भय, आदि संचारी भावों की योजना द्वारा कवि ने रस को पुष्ट करने का प्रयास

अवश्य किया है।

कवि की दृष्टि में सहज सात्विक और निर्विकार है तो भी उनके ह्रदय में अपनी कल्पना से कवि करूण भाव का दर्शन कर लेता है। पर वे करूण भाव खुलकर सामने नही आता, अधरों पर मंद हास उनके व्यक्तित्व को निरन्तर महान से महानता घोषित करता रहता है -

"अरे यह क्या,/अधरों पर हास/और आंखो में जल।" [23]

राम अपने राज्य धर्म का पालन करते है और धर्म की मर्यादा का निर्वाह करते हुए वैदेही का परित्याग करते है। अपनी विवशता को स्वीकार करते हुए और सीता के प्रति अपने अभिन्न सम्बन्धों का स्मरण करते हुए इस रूप में स्वयं को कोसते है-

"यह राम नही/कंकाल शेष हतभागे का/जो सीता निर्वासन से
है अस्तित्व हीन/नही शिव है/वह शव,/पर भिन्न
तुम्हारा राम/न कुछ कर सकता था,/सीता निर्वासन मात्र
राम के वश का था।" [24]

कवि के मानस पटल पर करूण रस का प्रभाव इतना अधिक है कि वह जब क्रोध, निर्वेद, वात्सल्य आदि का चित्रण करता है तब भी उसमें करूण का नितान्त अभाव नही हो पाता वह सीता निर्वासन के लिए राम पर आक्षेप लगता है और उनके इस न्याय को रोस भरी मुद्रा मे धिक्कारता भी है-

"धिक! धिक!/ हे राघव राम!/रजक का मात्र एक उल्लेख
रजक का, अधम रजक का राम/सिया के निष्कासन का हेतु।" [25]

कवि का यह आक्रोश उसके ह्रदय की करूण वेदना से ही निःसृत हुआ है। राम स्वयं अपने इस न्याय से बहुत संतुष्ट नही है। किन्तु इसके अतिरिक्त उनके सामने दूसरा विकल्प नही था अतः वे अपने मन की सारी पीडा दबाकर चुपचाप अपने आंसू पी जाते है-

"मै आत्म ग्लानि से गला/दबा अपराध बोध से /वैदेही से क्षमा मांगने का भी
साहस कर न सका।/पीता आया हूं आंसू/मै चुपचाप सतत।" [26]

राम ह्रदय की यह आत्मग्लानि निर्वेद मिश्रित है क्योकि वे संसारिक राग द्वेष से पूर्णतः निर्लिप्त है पर उनके इस शान्त भाव में भी करूणा का अंश विद्यमान है।

आचार्य तुलसी ने जैन परम्परानुरूप रामकथा का प्रणयन किया है। विमलसूरि से प्रभवित होकर कवि ने घटनाओं का ऐसा विन्यास किया है। कि वे जैन धर्म के सिद्धान्तों की व्याख्या प्रतीत होती है। कवि ने करूण रस के स्थाई भाव शोक और उसकी अभिव्यंजना में सहायक वितर्ण, विषाद, चिन्तन, आवेग, यत्र-तत्र मोह का सफल सन्निवेश किया है। जन प्रवाद के रूप में सीता के लच्छन को सुनकर राम कहते है-

"सुन अकल्पित कल्पना यह, राम दुखित हो गए।
खिन्न मन विश्राम, ग्रह में क्लान्त होकर सो गए।
ज्वार विविध विचार के ह्रदयाब्धि में आने लगे,

लहर बनकर ओष्ठ तट से शब्द टकराने लगे।'' 27

प्राणों से प्यारी सीता के प्रति इस कुचक्र का उदघाटन हेतु राम अनेक प्रकार के तर्क कुतर्क करते है। कानों में उगली डालकर दीर्घ प्रश्वास से अपनी विवशता व्यक्त की है

''दे कानो में अंगुली, ले लम्बा निःश्वास।

चले राम सहसा रूके, वृद्धजनों के पास।।'' 28

इसी परिपेक्ष्य में उद्‌दीपन विभाव के रूप में युवक समूहों द्वारा उपालम्भ का प्रयोग हुआ है। जिसका परिणाम सीता परित्याग के रूप में हुआ है। एक तरफ सीता का सतीत्व तो दूसरी तरफ परित्याग की कठोरता राम के विचार धारा को कुंठित कर देती है। तुलसी ने आश्रय राम के वितर्क संचारी भावों के माध्यम से हृदयस्त रस की मार्मिक व्यंजना की है।

सोच लू अब कौन सा पथ मुझे लेना चाहिए,

(क्या) जन कलंकित जानकी को छोड देना चाहिए।

मोह मन में मैथिली का, इधर जन विद्रोह है,

किसे छोडूं ? क्या करू? कर रहे ऊहापोह है,

हो उपेक्षा प्रजाजनों की कार्य अव्यवहार है

अतः उस पर ध्यान देना हो गया अनिवार्य है,

सूर्य कुल का सदा गौरवमय रहा इतिहास है,

क्षम्य उसमें नही, यह मालिन्य का आभास है।'' 29

दृष्यता निश्चय में परिवर्तित हो गयी निर्वासिन सीता अनिश्चित विरह सागर में मग्न हो गयी सीता के अश्रु, विश्वास,जड़ता, प्रमाद से सीता की दशा की व्यंजना कवि ने की है-

''यो आहे भरती हुई, फेक रही निःश्वास।

देख रही धरती कभी और कभी आकाश।

कभी मौन हो सोचती, टिका हाथ पर शीश।

कभी चीख में निकलती, अन्तर मन की टीस।

री सीता। क्यों कर रही व्यर्थ राम पर रोष।

वास्तव में तेरे सभी कृत कर्मो का दोष।

क्या है इस जीवन में, यो दुख ही दुख पाना ?

तिल तिल जल जल मन में, रो रो-कर मर जाना?'' 30

कवि ने इसी प्रशंग में नारी की पतित्व दशा और उसके उपायों की विस्तृत चर्चा की है। यह करूण रस इस आक्रोश के रूप में परिवर्तित होकर इस प्रकार व्यंजित हुआ है-

''जाकर उनसे लोहा लूंगी/सब प्रश्नों के उत्तर दूंगी,

पूंछूगी क्यों ऐसे छोडा ?/क्यों मेरे से नाता तोडा ?

वे पुरूष पात्र कहलाते है/अबला को यो ठुकराते है,'' [31]

कवि ने बडी कुशलता से अनिष्ट की प्राप्ति और उसकी आशंका जनित करूण रस की अभिव्यंजना इस काव्य से की है। निर्वासित सीता को वन भेज कर लौटते हुए लक्ष्मण के मन में जिस शोक ने अप्लावित किया कवि ने बडी कुशलता से उसके कायिक, वाचिक, सात्विक अनुभावों का वर्णन किया है। जिसमे जड़ता, मूर्छता शुक्कधर, शिथिल अंग, कम्प और अश्रुपात का वर्णन कवि ने किया है-

''ज्यो-त्यों कर सौमित्र, वहां बढ़ते जाते थे।
न थी हाथ में पाश, न हय वश में आते थे।।
शुष्क अधर, शिथिलांग विकम्पित अश्रु बहाते।
रथाधार ही धार, मृतक-वत निष्क्रिय जाते।।'' [32]

अश्वयुग्म का रोना अयोध्या नर नारियों की वैयवर्ण दशा उद्दीपन विभाव के रूप में प्रयुक्त हुई है-

''अश्र-युग्म संतप्त-विवश सा विचर रहा है।
सुदृढ़-वद्ध-श्रंगार-साज सब बिखर रहा है।।
निःश्रम ही श्रम-बिन्दु देह से द्रवित हुए है।
ज्यों निदाध-रवि अन्तरिक्ष से कुपित हुए है।।
आया कौशल-धाम निकट तम रोते धोते।
पडी नगर पर दृष्टि प्रात-द्युति होते-होते।।
शुभ्र-सदन-प्रासाद उषः की पीत-प्रभा-मय।
किन्तु मैथिली-विरह कालिया में होकर लय।।
गृहण-तुल्य निष्प्रभ नितान्त भय प्रद दरशाने।
उन्हे देख सौमित्र और अतिशय अकुलाने।।'' [33]

'रामराज्य में 'प्रयाण पर्व' में सीता निर्वासन की कथा दुखान्त रूप में वर्णित है। इसका अंगी रस करूण रस है। 'रामराज्य' में सीता निर्वासिन की सूचना सुनकर सीता का आमर्ष अश्रु उनकी विरह को व्यथित करते है-

''राम ने वनवास को क्योंकर छिपाया।/उर विवश निज बात प्रभु से कह न पाया।।
मम ह्रदय उद्विग्न भावावेश में है।/क्या दया के धाम घट-घट प्राण में है?
क्यों चरण रज अंत में, मैं छू न पाई?/ बात क्यों वन की प्रभू मुझसे छिपाई ?'' [34]

सीता की यह आशंका दृढ़ होने लगी कि यह वनवास उनके जीवनान्त में ही समाप्त होगा-

''क्यों कठिन रेखा विरह की खीच दी फिर।/नाव मेरी सिंधु में क्यो छोड़ दी फिर ?
यह परीक्षा है कि वृत की अंत सीमा।/गिन रही है श्वास प्रभु की नाम महिमा।।
बात अंतिम राम से है तात कहना!/झर रहे है नीर निशदिन, दीन नयना।।'' [35]

आशंका, आवेग, से सीता का विरह कवि ने इस प्रकार व्यंजित किया है। यह गहन शंका चाहते है।

सीता के अयोध्या वन प्रस्थान के वाद रामराज्य में राम की वियोग व्यथा भी संक्षिप्त रूप में व्यंजित है। सीता का वियोग राम को धर्म वीर बना बैठा सभा सदों के समक्ष राम का अमर्ष, आवेग इस रूप में व्यंजित है-

"सीते तुम हो मंगल निधान।/प्रति प्रेम मूर्ति
सीता को तोलो लोकपाल,/बल विक्रम मे जो हो विशाल,
भूपाल, सभासद न्यायपाल/हे पौरजनों, हे सत्यपाल,
सीता के प्रति,/शंकाकुल, कुत्सित मलिन भाव
यदि हो/तो तोलो,/कहता है अब राम आज।
लोकापवाद से,/धरणि सुता,/मम प्राणमयी पावन सीता,
मै त्याग सका,/नये लोक धर्म हित,/प्रिय वियोग की,
दीप्त ज्वाल में,/झुलस गया।/कर सकता हूं मै प्राणदान," [36]

'अरूण रामायण में बिना किसी अपराध के सीता को निर्वासन का दण्ड देना राम को पीड़ित करता है, पर वे इस पीड़ा को प्रकट रूप में व्यक्त नही कर पाते। राज्य धर्म का निर्वाह करते हुए राम, सीता निर्वासन का निर्णय तो लेते है। पर उनका मन इस निर्णय से अत्यन्त शोक संतप्त हो उठता है-

"सीता का निर्वासन अनुचित है, अनुचित है
इस निर्मम निर्णय से मेरा मन शोकित है
मै प्राण-व्यथित चिन्तित, पीडित इस निर्णय से
मन कांप रहा है बारम्बार-विरह-भय से!" [37]

राम लक्ष्मण को आदेश देते है, कि वे सीता को वन में छोड़ आये। लक्ष्मण राम के इस निर्णय से सन्तुष्ट तो नही थे किन्तु राजा राम को धर्म विवशता को ध्यान में रखकर वे सीता को रथ में बैठाकर वन की ओर प्रयाण करते है। जब सीता को वन में छोड़कर लक्ष्मण अयोध्या लौटने के लिए तैयार होते है, तो सहसा उनके ह्रदय की करूणा फूट पडती है। उनका कंठ अवरूद्ध हो जाता है, और वे पल भर के लिए किमकर्तव्यविमूढ़ हो जाते है। लक्ष्मण के विलाप मे कवि ने करूण रस की सुन्दर सृष्टि की है-

"सहसा लक्ष्मण रो उठे वहां शिशु के समान
अकुलाने लगे अचानक उनके प्राण-प्राण
जो कहना था, वह कुछ क्षण तक कह सके नहीं
आंसू पर उनके अशनि-शब्द बह सके नही!" [38]

वन के शान्त एकान्त वातावरण में सीता निःसहाय छोड़ दी जाती है। फिर भी सीता के मन में राम के प्रति स्नेह कम नही होता। वे राम की इच्छा का सम्मान करने में अपनी जीवन की सार्थकता मनती है। विरह ताप से दग्ध होने पर भी अपनी स्मृतियों में प्रतिपल राम की निकटता का अनुभव करती है। राम की स्मृतियां उन्हे सम्बल प्रदान करती है। राम की स्मृतियों में खोई हुयी सीता का यह आत्मचिन्तन ही करूण रस की निर्झरिणी बहाता है। स्मृति, धृति, मति इत्यादि संचारी भावों से रस का परिपाक हुआ है-

"जा रही तुम्हारी इच्छा से ही मै वन में
केवल तुम ही तुम हो हे प्रभु! मेरे मन में!
लगता कि चल रहे तुम भी मेरे संग-संग
भर रहे तुम्हीं मेरे मन में साहस-तरंग
तुम यहां-वहां-सर्वत्र दिखाई पड़ते हो
मेरे नयनों से तुम्हीं अश्रु बन झरते हो।
मेरे अधरों पर तुम्हीं मधुर मुस्कान देव,
मेरे तन में हो तुम्हीं चमकते प्राण देव।" [39]

सीता जब वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में प्रवेश करती है तो महर्षि उन्हें देखकर करूणा सागर में डूबने-उतरने लगते है। सीता की कारूणिक दशा देखकर महर्षि अपनी अन्तर दृष्टि से सम्पूर्ण घटना चक्र जान लेते है। सीता का कंठ अवरूद्ध है वे अपने बारे में एक शब्द भी कह नहीं पाती पर अब बिना कहे ही उनका सारा दुःख महर्षि के सामने प्रकट हो जाता है। वाल्मीकि और सीता के प्रथम बार आमने सामने होने पर करूणा पूरे वेग से प्रवाहित होने लगती है-

"देखकर जानकी को, उमडी करूणा अपार
दो ही क्षण में खुल गया स्नेह का दिव्य द्वार!
मुनि वाल्मीकि ने सीता को पहचान लिया
निर्वासित नारी का विनम्र सम्मान किया
कुछ ही वह बोल सकी कि बोल हो गया बंद
कंठ में अटक-सा गया हृदय का करूण छंद
दृष्टिा ऋषि ने अंतर-प्रवाह को देख लिया,
श्री जनक नन्दिनी के दुख का अनुमान किया" [40]

निर्वासन के समय सीता गर्भिणी थी वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया। मातृत्व लाभ से सीता का मन पुलकित हुआ। धीरे-धीरे वे बालक बडे होने लगे किन्तु सीता प्रिय वियोग के कारण अब भी शोक संतृप्त ही बनी रही अतीत की स्मृतियां उनके मन में पीड़ा को जन्म देती है और वह अपने आंसुओ को रोक नही पाती-

"सीता के दृग में नीर अभी भी पीर-भरा
सीता के अन्तरमन पर अब भी दुख बिखरा
दो-दो पुत्रों को पाकर भी माता अधीर
उसके तन-मन में नित नवीन सुधिमयी पीर
बीती बातों की याद सताने लगती है
स्मृति कभी-कभी बिजली चमकाने लगती है

सुख-सुविधा दुख की घटा दिखाने लगती है
पीडाएं अग्नि-कुसुम बरसाने लगती है!'' [41]

'अरूण रामायण' में करूण रस का चरम उत्कर्ष उस समय दिखाई पड़ता है। जब राम के सामने यह स्पष्ट हो जाता है कि लवकुश उनके ही पुत्र है और सीता ने ही इन तेजस्वी बालकों को जन्म दिया है। महर्षि वाल्मीकि के परामर्श से राम सीता को पुनः स्वीकार करने के लिए उद्यत होते है। राम, सीता को सामने देखकर व्याकुल हो उठते है। दूर से ही अपने प्रिय राम को प्रणाम करती है और पूरी विनम्रता से धरती माता का आवाहन करती है। कि यदि, वह मन, क्रम, वचन से पवित्र है तो धरती माता उसे अपनी गोद में शरण दे। राम यह दृश्य देखते रह जाते है, कि सहसा धरती फटती है, और सीता उसमें समा जाती है। राम धरती में समाती हुई सीता को पकड़ना भी चाहते है, किन्तु उनके हाथ कुछ नही लगता एक परम सती नारी का ऐसा कारूणिक अवसान दुर्लभ है-

''वैदेही की विनती सुन कर फट गई धरा
नीचे से आता-सा प्रकाश भू पर बिखरा
क्षण में ही सीता समा गई भू के भीतर
राम ने पकडना चाहा उठकर उसका कर
पर, हंसती सीता हंसती-हंसती चली गई
हो गई धरित्री, धरा-सुता वह स्नेह मयी
झुक गए सभी के मस्तक उसके जाने से
हे राम! लाभ क्या कुछ भी अब पछताने से!'' [42]

'अरूण रामायण' के करूण रस का शास्त्रीय विवेचन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि राम सीता महर्षि वाल्मीकि आदि लोकोत्तर पात्रों के मन में करूणा का अंकुरण तो होता है पर वे अपने उदात्त चरित्र से लौकिक भावनाओं पर नियन्त्रण कर लेते है। और उन विषम परिस्थितियों पर भी साधारणतया शान्त बने रहते है। अत्यन्त कारूणिक अवसर आने पर भी न तो राम सामान्य जन की तरह अपने शोक की अभिव्यक्ति कर पाते और न सीता ही खुलकर अपने आंसू बहा पाती। पर सहृदय पाठक अवश्य इस घटना चक्र से शोकाकुल हो उठता है। प्रशंग करूण होते हुए भी कवि ने राम और सीता के आदर्श चरित्र को ध्यान में रखते हुए कथा क्रम को गति तो प्रदान की है पर मर्यादा भंग न हो इसीलिए वर्णन के स्तर पर शोक व्यापक चित्रण नही किया। पाठक स्वमेव इस प्रशंग से शोक की अनुभूति कर लेता है।

अश्वमेघ प्रसंग में मृत लव को देख सीता शोक उमड़ पड़ता है-

''दुर्दृश्य पइप पइप हाय में मरी नही, दुर्भावना दुरन्त की भरी नही।
देखूं आरोध क्या विशेष देखना रहा, प्रावेण त्याग आज पुत्र शोक भी सदा।
दुर्भाग्य क्या कुभोग और क्या अनन्त हो, पृथ्वी फटे तुरन्त देह या दुरन्त हो।
रोती हुई अधीर मां आचेत हो गयी उत्ताप में त्रिताप के समीम खो गयी।'' [43]

श्रंगार रस :-

''प्रेमियों के मन में संस्कार रूप से वर्तमान रति इस अवस्था को पहुंचकर जब आस्वाद योग्य हो जाती है तब उसे श्रंगार रस कहते है। स्थाई भाव रति, नायक, नायिका, आलम्बन, सखा, सखी, दूत, चंद, उपवन आदि उद्दीपन, आलिगंन, चुम्बन, रोमांच, खेद, कम्प, अनुभाव, तथा उग्रता, मरण, जुगुप्सा को छोड़कर रोष, लज्जा, हर्ष, चिन्ता आदि संचारी भाव होते है।'' [44]

श्रंगार रस संयोग और विप्रलम्भ के भेद से दो प्रकार का होता है। संयोग श्रंगार में नायक के मिलने की चर्चा और विप्रलम्भ में दोनो की विरह अवस्था का वर्णन किया जाता है।

वैदेही वनवास करूण रस प्रधान महाकाव्य है जिसमें 'अठरह सर्ग' और प्रत्येक सर्ग के आरम्भ में प्रकृति का सुन्दर निरूपण हुआ है। प्रकृति सौन्दर्य के चित्र साधारणतयः श्रंगार रस की श्रेणी में रखे जाते है। प्रथम सर्ग का आरम्भ कवि प्रकृति के इसी श्रंगार परख रूप से करता है-

''लोक-रंजिनी ऊषा-सुन्दरी रंजन रत थी।
नभ-तल था अनुराग-रंगा आभा-निर्गत थी।
धीरे-धीरे तिरोभूति तामस होता था।
ज्योति-बीज प्राची-प्रदेश में दिव बोता था।।''
''किरणों का आगमन देख ऊषा मुसकाई।
मिले साटिका-लैस-टंकी लसिता बन पाई।।
अरूण अंक से छटा छलक क्षिति तल पर छाई।
भृंग गान कर उठे विटप पर बजी बधाई।।'' [45]

लोक जीवन में वैदेही वनवास की घटना अत्यन्त ह्रदय द्रावक है किन्तु जिस परिवार में इस घटना ने प्रवेश किया वह भारतीय इतिहास में एक आदर्श अनुकरणीय परिवार माना जाता है। एक नारी वृत होने के बावजूद और यह जानते हुए भी कि सीता पूर्णतः पति परायण है, राम सीता के निर्वासन पर कठोर निर्णय लेते है क्योकि उनकी दृष्टि में व्यक्तिगत भावनाओं से लोकहित अधिक महत्वपूर्ण है। राम धर्म के साक्षात विग्रह है वे परम संयमी है। लोकाराधन उनका प्रमुख लक्ष्य है वे आशान्ति में भी शान्ति खोज लेते है। और इसीलिए सीता निर्वासन का निर्णय लेते समय राम का आशान्त मन पूर्ण शान्त दिखाई देता है-

''करूणा बडे से बडा त्याग।
आत्म-निग्रह का कर उपयोग।।
हुए आवश्यक जन-मुख देख।
सहूंगा प्रिया असह-वियोग।।
मुझे यह है पूरा विश्वास।
लोक-हित-साधन में सब काल।।
रहेगें आप लोग अनुकूल।
धर्म-तत्वों पर आंखे डाल।।'' [46]

सीता को कवि ने वन पथ पर जाते हुए इस रूप में चित्रित किया है कि मानों उन्हें निर्वासन के निर्णय की कोई जानकारी न हो वे लक्ष्मण के चुप्पी पर आश्चर्य चकित है। और बार-बार उनसे प्रकृति सौन्दर्य का आनन्द लेने की बात कहते है-

''वन में बगरी जो श्री अनन्त
उसकी सात्विक दिव्यता,
बसाओं अन्तर में, प्राणों में
आत्मा में, तन-मन में रंध्र रंध्र में,
बसने दो रच जाने दो।'' [47]

यहां प्रकृति सौन्दर्य के माध्यम से श्रंगार की अनुभूति की है। आगे चलकर सीता एक ओर मोरनी के प्रणय सम्बन्धों की ओर लक्ष्मण का ध्यान आकर्षित करते हुए कहती है-

''वह देखों मत्त मंयूर/श्यामघन के नीचे
गर्भिणी मयूरी की परिक्रमा कर,/फैलायें पंख मुदित,
नर्तन रत है/तन्मय हो अपनी प्रिया मोरनी का
करता है मन रंजन।'' [48]

इन उदाहरणों में सीता के ह्रदय के सात्विक श्रंगार भाव को चित्रित किया गया है। वन प्रदेश के इन दृश्यों में उन्हें राम के प्रति अपने स्नेह और अपने प्रति राम के स्नेह का स्मरण होता है। और वे आनन्द की अनुभूति करती है। किन्तु पूरे खण्ड काव्य में करूण रस भाव की प्रधानता दिखाई पड़ती है। और वही इसका अंगी रस भी है। यह बात अलग है, कि कविता में कुछ नया पन लाने के लोभ में कवि ने प्रगतिशील विचारधारा का बीच-बीच में समावेश कर रस के सहज विकास में अवरोध खडा कर दिया है।

राम की इस पीड़ा का कारण सीता के प्रति उनका अगाध स्नेह है जिसे वे बार-बार स्मरण करते है। पर प्रकृति के विधान के सामने वे अपने को निरूपाय पाते है। वे सम्पूर्ण जीवन पर दृष्टिपात करते हुए अपने पीड़ा को इन शब्दों में व्यक्त करते है-

''हम /इतिहास की केवल वनस्पतियां भर हैं
हमारे चलने से सीता!/थोडी सी धरती सुन्दर हो उठती है,
हम /सम्भवतः एक छोटी सी सुगन्ध वहन कर सकते है
बस,/इससे अधिक कुछ नही।'' [49]

प्रवाद पर्व में वर्णित श्रंगार वियोग की आग में तपे हुए कुन्दन की तरह चमकता तो है पर साधारण पाठक को अपनी ओर खीचकर उसे रसमग्न नही कर पाता राम का सम्पूर्ण जीवन पत्नी वियोग की पीड़ा से भरा हुआ है। वे कभी खुल कर सीता के साथ संयोग श्रंगार का भरपूर आनन्द नही उठा सके उनके जीवन में निरन्तर उसे सोने का दुख ही झेला है। सीता को अपने रस असाधारण दाम्पत्य जीवन का स्मरण कराते हुए राम का ह्रदय इन शब्दों में प्रकट होता है-

"सीता!/तुम्हारे बाद्य में/केवल /एक ही राग आज तक बजता रहा
विषाद का ?/तुम्हें प्रत्येक बार/चाहे वह विवाह हो/या युद्ध
पाने की चेष्टा में/खोता ही गया हूं प्रिये।" [50]

राम की रति विषयक अनुभूति निरन्तर भय और जुगुप्सा के दबाव में घुटती रही है। वे सीता को स्मरण कराते है कि-

"सप्तसदी के बाद/तुम्हारे ये रक्त अलक्तक चरण
इच्वाउवों के राजभवन के/संगमरमरी सुगान्धित दलानों मे नहीं
वरन/निषाद, गृह और राक्षसों से भरें।
असुरक्षित/अगम आरण्यो की ओर बढ़ेगे?" [51]

सीता के निष्कासन पर निर्णय लेने के बाद राम का ह्रदय करूणा विगलित होता है। क्योकि वे जानते थे कि सीता निरपाराध है और उसके साथ ऐसा व्यवहार अमानुषिक है। पर पुनः वही निष्काम कर्म भावना उनकी रागात्मकता को काटकर फेक देती है। राम के ह्रदय की इस क्षोभ जनित पीड़ा को हम अपनी सुविधा के लिए वियोग श्रंगार रस का नाम दे सकते है-

"राम! क्या कभी इसकी कल्पना थी, कि/अपने ही हाथों
सौम्या/माधावी प्रिया को/चीनांशुक के स्थान पर
पुनः वल्कल पहना/ऐसी करूणी विदा देनी होगी?" [52]

इन उदाहरणों में विप्रलम्भ श्रंगार रस की झलक अवश्य मिलती है पर जिस रूप में एक ह्रदय कवि के द्वारा उक्त रस का परिपाक सम्भव होता है। वह प्रवाद पर्व के राम मे दिखाई नही देता। वस्तुतः प्रवाद पर्व के राम और सीता का चरित्र समष्टि का अभिभाज्य अंग बनकर उभरा है। जहां मनुष्य के साधारण मनोरागों का उतना मूल्य नही है। इसी तरह निर्वासन के बाद वन भृमण करते हुए राम को जंगल के वृक्ष, झरने सीता स्मृति की याद दिलाते है-

"दृगों के सामने सब दृश्य आये सुशोधी दृश्य सुस्मृति में दिखाये।
न रोके से रूकी दृग अम्बुधारा गमायी, चेतना वायु भान भूले।" [53]

विप्रलम्भ श्रंगार :-

सीता का वियोग राम के लिए असहनीय था फिर भी लोकापवाद से बचने के लिए उन्हें सीता निर्वासन का निर्णय लेना पड़ता है। सीता राम की इस विवसता को समझती है पर उनके ह्रदय में राम के प्रति अपार प्रेम विदाई के समय आंसू बनकर उनकी पलकों को गीला कर देता है विप्रल्भ की इस मनोदशा को प्रवास के लिए प्रदत्त सीता के चरित्र में कवि ने इस प्रकार अंकित किया है-

"जनक-नन्दिनी ने दृग में आते आंसू को रोक कहा।
प्राणनाथ सब तो सह लूंगी क्यों जायेगा विरह सहा।।
सदा आपका चन्द्रानन अवलोके ही मैं जीती हूं।

रूप-माधुरी-सुधा त्रशित वन चकोरिका सम पीती हूं।।

वदन विलोके बिना बावले युगल-नयन बन जायेगें।

तार बांध बहते आंसू का बार-बार घबरायेंगे।।

मुंह जोड़ते बीतते बासर राते सेवा में कटती।

हित-वृत्तियां सजग रह पल-पल कभी न थी पीछे हटती।।'' [54]

वाल्मीकि आश्रम में जाकर सीता अपना अतीत भूल नही पाती वे राम के साथ गुजरे क्षणों को प्रतिपल याद करती है। और कभी-कभी इन स्मृतियों में इतनी बाबली हो जाती है। उनकी आंखो से आंसू छलक पड़ते है। वियोग की इस पीड़ा को कवि ने इस रूप में उभारा है-

''बिना वारि के मीन बने वे आज है।

रहे जो नयन सदा स्नेह-रस में सने।।

भला न कैसे हो मेरी मति बावली।

क्यों प्रमत्त उन्मत नही ममता बने।।

रविकुल-रवि का आनन अवलोके बिना।

सरस शरद सरसीरूह से वे क्यों खिलें।।

क्यों न ललकते आकुल हो तारे रहे।

क्यों न छलकते आंखों में आंसू मिले।।'' [55]

वैदेही वनवास में चित्रित विप्रलम्भ श्रंगार मूलतः करूण रस का ही एक हिस्सा है। सीता निर्वासिन के समय सारे नगर में एक विचित्र उदासी छा जाती है। राम का आदेश पाकर लक्ष्मण सीता को रथ में बैठाकर वाल्मीकि आश्रम की ओर प्रयाण करते है। और बड़ी मुश्किल से नगर की सीमा से पार कर पाते है। रथ पर सवार सीता विचारों की भवर में डूबने उतरने लगती है। और लक्ष्मण अपने निष्ठुर कर्तव्य का पालन करते हुए सीता के मुख मंडल को देख संतप्त हो जाते है-

''चला वेग से अपूर्व स्पंदन।/चली गई यत्र तत्र जनता।।

विचार मग्न हुई जनकजा।/बडी विषम थी विषय गहनता।।

कभी सुमित्रा-सुमन ऊबकर।/वदन जनकजा का विलोकते।।

कभी दिखाते नितान्त चिन्तित।/कभी विलोचन-वारि रोकते।।'' [56]

कही-कही चिन्ताकुल राम भाव विह्वल होते हुए भी दिखाई देते है। अपने शयन कक्ष में सीता से बात करते समय उनका ह्रदय प्रारब्ध की निर्मम मार से चीत्कार करता हुआ देखा जा सकता है। मनुष्य की विवशता और लाचारी को इंगित करने वाला राम का यह कथन अत्यन्त मर्म स्पर्शी है-

''हम प्रत्येक बार/अथाह/अशान्त समुद्रों को चीर

क्षत-विक्षत/ज्यों ही शान्त तट पर/पहुंचने को ही होते है, कि

एक घटना/एक व्यक्ति/फिर हमें तूफानों के उबलते

उफनते पन में फेंक जाता है,/और हम/जल की विशाल हिल्लोलता में
विवश नारिकेल से/डूबने उतराने लगते है।'' [57]

''सौम्या/माधवी प्रिया को/चीनाशुंक के स्थान पर/पुनः वल्कल पहना
ऐसी कारूणी विदा देनी होगी?/उस प्रथम वनवास के समय/तुम थे
लक्ष्मण था और था एक प्रतिविश्वास/पर आज?
आशन्य मातृत्व की दुर्वह स्थिति में/प्रिया को किस प्राप्ति के लिए निर्वासित किया राम?
ऐसा अमानुषी आचरण तो/कोई वधिक भी आसन्न प्रसवा गौ के साथ नही करता
इतिहास की कितनी बडी आश्वस्ति पौराणिकता के किस अच्युत पद के लिए
इस सनातन हाहाकार का वरण किया राम?'' [58]

यहां आश्रय राम आलम्बन सीता चिन्ता उद्वेग मति, वितर्क इत्यादि संचारी भावों से राम के वियोग का वर्णन किया गया है। सौम्या प्रिया को चिनांसुक की जगह वल्कल पहनाकर कारूणिक विदा का दर्द इससे और अधिक क्या तीव्र हो सकता है, क्योकि आसन्न मातृत्व की दुर्वह स्थिति अमानुषी आचरण ही कहलायेगा। राम के अन्तमन में उठते अरन्तुद व्यथा की अभिव्यंजना बडी मार्मिक बन पड़ी है।

''भूमिजा'' में स्म्रति कथन के माध्यम से सीता की विरह गाथा वर्णित है। विरहिणी सीता आमर्ष और उद्वेग से अपनी मानसिक विरह दशा का वर्णन करती है मति-भृति, आवेग, वितर्क से आश्रय सीता का वियोग व्यंजित हुआ है-

''प्रमाणित क्या करना है मुझे?/पावनता अपनी? अपना शील?
प्रमाणित क्या करना है मुझे?/गुह्रा शुचिता? चारित्रिक ओज?
हाय रे राजा! हाय री नीति!/हाय री रूढ़िवद्व जन-भीति!
हाय रे पुरूष! हाय रे दंभ!/हाय रे एकपक्षीय वह न्याय
इकहरी मर्यादा का बोध/करे साडम्बर नारी-मेघ
बने पुरूषोत्तम जग-विख्यात/रचित होगा फिर-फिर इतिहास
हमारा क्या! हम तो है घास।'' [59]

जगदीश प्रसाद तिवारी 'प्रणीत' लवकुश युद्ध वीर रस प्रधान रचना है। इस काव्य का अन्त दुखान्त हुआ है। दुखान्त कथा के कारण सीता निर्वासन करूण विप्रलम्भ रस की व्यथा कथा है। जिसका परिपाक बड़ी कुशलता से हुआ है। वीर रस के साथ विप्रलम्भ श्रंगार का वर्णन कवि ने संक्षेप में किया है।

'लवकुश युद्ध' नामक रचना में सीता निर्वासन के मूल में रजक प्रशंग है। राम का वैयवर्ण उनकी मूर्छा से प्रिया सीता के विरह वियोग व्यंजित हुआ है। मूर्छा, वैयवर्ण, अनुभाव एवं संचारी भाव का प्रयोग हुआ है। गुप्तचर की सूचना उद्दीपन विभाव, रूप में व्यंजित है-

''समाचार सुन गुप्तचर, से सुन कर श्रीराम।
मूर्छित होकर गिर पड़े, एकदम लीला धाम।।

पड़ गया राम का मुख पीला व्याकुलत सभा मध्य छाई।
कुछ देर बाद फिर होश हुआ, जब आये वहां लषण भाई।।
यो बोले लषण आप रहते थे, भगवन तीनों काल सुखी।
है कारण कौन कहो मुझसे, इस समय हुये क्यों आप दुखी।।" [60]

आश्रम एवं ऋषि दर्शन के बहाने सीता को लेकर लक्ष्मण जंगल जाते है। इस विप्रलम्भ के पूर्व कवि ने अपशकुन व्यंजित कर सीता की आशंका का उल्लेख इस प्रकार किया है-

"जैसे ही राह विपिन की ली असगुन अनेक दिखलाते है।
हांकते सुमंत अश्वदोनो, आंखो से अश्रु बहाते है।।
सोचते सुमंत और सीता असगुन के कारण कौन हुए।
कारण लक्ष्मण जानते थे, पर वे विलकुल ही मौन हुए।।
सीता की जब आंखी फड़की, भयभीत हुई बोली ऐसे।
क्यों लषण आज है क्या कारण असगुन होते है यह कैसे।।
जो बात जानकी कहती थी, श्री लषणलाल गुनते जाते।
उत्तर कुछ देते नही मगर, चुपचाप उसे सुनते जाते।।" [61]

पति वियोग को दुःखमयी आशंका सीता की व्याकुलता एवं अपशकुन प्रवास जन्य विप्रलम्भ की भूमिका उपस्थित करते है-

"मुनि पतनीयों के आश्रम पर, जाती हूं करके मोह बडा।
पर सोच हाय न दुखदाई, होगा पति देव विछोह बडा।।
दुष्कर्म हाय मै कर बैठी, रह कर मन घबराता है।
असगुन अब बुरे दिखाते है, परिणाम बुरा दिखलाता है।।" [62]

लक्ष्मण से अपने निर्वासिन के दुखद समाचार सुन सीता मूर्छित हो गयी संदेश उद्दीपन विभाव, शोक वैयवर्ण, कम्प, रूपन, व्याधि, आदि संचारी भावों से विप्रलम्भ श्रंगार का पूर्ण परिपाक हुआ है-

"सुनते ही सीता खा पछाड़ गिर पड़ी वजृ सम लगा वही।
मुख की सब कान्ति हुई फीकी सुधि बुधि तक बिलकुल रही नही।।
यह दशा देख लक्ष्मण तुप्त, केलो के पत्ते लाते है।
फिर रोते-रोते सीता पर वे बारम्बार डुलाते है।।
धीरे-धीरे फिर पाठकगण जब मुख पर शीतल पवन लगी।
कुछ देर बाद श्री सीता की मूर्छा जो भी वह स्वयम् जगी।।" [63]

इसी प्रसंग में सीता का वितर्क अधैर्य आत्म प्रशंसा की व्यंजना कवि ने की है-

"ले दुख भरी स्वासा सीता, ने इस विधि से फिर वचन कहे।
सच-सच बतलाओं हे देवर क्या हंसी हमारी उडा रहे।

में करू प्रशंसा अपनी ही तो वह है धर्म विरूद्ध सदा।
पर परिवृत धर्म कर्म से हैं आत्मा हमारी शुद्ध सदा।
मुनि पतनीयों के पूजन की जो बात नाथ से कही वहां।
सो भूल अवश्य मानती हूं जिसका फल पाया आज यहां।।
नाना प्रकार कर कर विलाप दुख सिया प्रकट अब करती है।
देते है धीरज लषण मगर वह धैर्य न बिलकुल धरती है।।'' [64]

लक्ष्मण के जाने के बाद सीता की अभिलाषा, उद्वेग, उन्माद, प्रणाप, रूदन इत्यादि से उनका विरह अत्यन्त कारूणिक रूप में व्यंजित है-

''लेकिन जब दिखलाई न पड़े खाकर पछाड़ गिर पड़ी धरण।
कहती रह गई जानकी यो हा कहां गये देवर लक्ष्मण।।
इस बार बेकली बहुत बढ़ी, मूर्छा से हुई अचेत सिया।
चिक्कार मार कर रोती है मै रहूं किस तरह नाथ यहां।
इस निर्जन वन मे है भगवन, भटकती फिरू मै कहां कहां।।
देखती अनेको पथ लेकिन, है कौन कहां के जाने को।
मालूम न होता है मुझको, रस्ते पर कौन लगाने को।।
करूणा कर कर सीता रोती थी, था जिसमें संताप भरा।
श्री वाल्मीकि शिष्यों से यों बोले सुन शब्द विलाप भरा।'' [65]

'गोविन्ददास विनीत, प्रणीत प्रिया या प्रजा सुखान्त कथा है। लक्ष्मण से वन निर्वासन की सूचना सुनकर सीता जड़ हो गयी। चिन्ता, अश्रु, आर्त वचनों से उनका वियोग कवि ने व्यंजित किया है-

''चिंता-दमन-दृग-युग्म-जल बन वेदना बहने लगी1
आरति-हरण आरत-सरिस, सारति वचन कहने लगी।'' [66]

ग्लानि, ममर्ष, शोक संचारी भावों का कवि ने उपयोग किया है-

''भू-भार-हारी के ह्रदय का भू-तनूजा भार है।
हे सार-हीने! अब यहां अस्तित्व ही निस्सार है।।
तेरी प्रदूषित श्रांस मिलकर शांत-शुद्ध-समीर में।
विष-तत्व बर्द्धित कर रही है, वारूणी ज्यों क्षीर में।।
जग-युवतियों! फूलों-फलो, दाम्पत्य-जीवन के लिये।
है शुष्क-जीवन जानकी आजन्म ही बन के लिये।।
बन में रहूं, घर में रहूं, नीरस सतत अभिलाष है।
है श्वांस दुःख-दायी उन्हे,इतना मुझे विश्वास है।
कहती हुई इस भांति सीता भी वही मूर्छित हुई।'' [67]

इस वियोग में एक ओर सीता का आत्म कथन है। तो दूसरी तरफ उद्‌दीपन विभाव के रूप में प्रिय राम के गुणों का अनुसंस्मण और कथन है। सीता की सिथिलता मुख्य, शोषण, अधैर्य का भी कवि ने सटीक वर्णन किया है। कवि ने अलंकारिक रूप से सीता के अगाध अविरल अश्रु प्रवाह का वर्णन इस प्रकार किया है-

''या ह्रदय-सर-नीर दव-उत्ताप से।/मेघ-माला-मुरू नलनी पात्र से।।
वाष्प-वाहिक-वेष तज फिर अम्बु बन।/मोद-मलयज-संस्पर्शन मात्र से।।
वाह्‌-दैहिक-ताप खोने के लिये/धार-वाही-चाल से कुछ बह गया
पर स-नाल-मृणाल-यादिमक-पत्र से/अर्द्ध-रूंधित बीच ही में रह गया।
भीग भी न पाई वक्ष-स्थल-पटी/और भी भव की हुई प्रति-ज्वाल से।
अदृश्य गति धर कर पुनर्गमनित हुआ/या गया निर्वास यो ह्रत्ताल से।
आर्तृ-ध्वनि बन कर उठी वर वेदना/छा गया वन- व्योम वैध-विषाद से।'' [68]

इसी परिपेक्ष्य में भागना, जमीन में लोटना, मूर्ति के समान जड़ता, दीर्घ स्वास, इत्यादि काइक अनुभावों का कवि ने वर्णन किया है-

''प्रसूनानना शून्य-वन्य-स्थली में-/कभी लोटती है, कभी भागती है।
लता कंटिका संकटा वेलि-वल्ली/कभी थामती है, कभी त्यागती है।
द्रुमाली तले धार स्कन्ध-शाखा-/सटी सी कभी मूर्तिमाना खड़ी है।
कभी कांटकी-शुल्क-पर्णाशया में/कुशावर्त्त-कोली-सिता सी पड़ी है।'' [69]

उन्माद, प्रलाप, नयी रास्य इत्यादि भावों को कवि ने बडी कुशलता से इस विरह में स्थान दिया है-

''क्वचित् काल तक इसी व्यथा-मय रहा मैथिली का उन्माद।
कुछ संभाल-पश्चात् सती का उमड़ उठा वह विरह-विषाद।।
''अहह! कौन हूं? क्या बन-देवी? फिर मेरे वन-देव कहां।
ले चल ओ पवनेश! मुझे भी हों मेरे ह्रदयेश जहां।।'' [70]

इस विरह में कवि ने बडी कुशलता से मानवेतर पशु पंक्षी, सुमन, कलिकाओं को भी स्थान दिया है। जो सीता के दारूण विरह में सहानुभूति रखती है। उन्हें सन्त्वना बंधाते है-

''शकुनि-गण बंधाने लगे धैर्य मां को-/विटप मिल बुलाने लगे सान्त्वना से।
मुकुलित कलिकायें अश्रु-आस्राविता हो-/चरण-रज धुलाने लगी वेदना से।
सुमन-विमन रोये, पर्ण निष्कर्ष से थे।/स-जल-करूण-वेषी कंटिका-भूमि भी थी।
पवन-गति रूकी थी, तारिकायें झुकी थी-भ्रम-भय-विष-कारी निर्विषा वायु ही थी।'' [71]

इस वियोग का समापन कवि ने सतीत्व बल से मूर्छित राम सेना के जागरण से हुआ है।

अद्‌भुत रस :-

विभाव आदि के संयोग से विषमय नामक स्थाई भाव ही अद्‌भुत रस के रूप में व्यक्त होता है। लोकोत्तर वस्तु अथवा घटना व्यापार इसका प्रधान विभाव है। नैन विस्तार, अनिमेष, दृष्टि, रोमांच, अश्रु, स्तम्भ,

वेपथु साधुवाद हाहाकार, करचरण, अंगुल, भ्रमणादि को अद्भुत रस में प्रकट होने वाले अनुभाव कहे जायेगे। आवेग, संमभ्रम जड़ता, हर्ष गर्व, स्मृति, गति, श्रम, धृति, तर्क, विबोध, आदि उसके व्याभिचारी भाव माने जाते है। [72]

कवि ने सीता उद्भव के समय अद्भुत रस की व्यंजना की है। आश्चर्य जनक व्यक्तियों, विचित्र दृश्यों य अलौकिक घटना के द्वारा अद्भुत रस की उत्पत्ति होती है। दिव्य दर्शन य अलौकिक वस्तु आलम्बन दर्शक आश्रय होते है। कवि गोविन्ददास ने भूमि से निकलने वाली सिंहासना रूढ़ा तेजस्वी सीता का आलम्बन रूप में वर्णन किया है। जिसकी प्रार्थना सभी देवता कर रहे थे। जनक, प्रजा जन, आश्रय, नमस्कार प्रणाम कायिक अनुभाव, हर्ष, धैर्य, संचारी भावों से अद्भुत रस का पूर्ण परिपाक हुआ है-

''सिंहासनारूढ़ित स-मण्डल, शक्ति-संयुक्त निश्चली-
सुर-त्राण, महिसुर-मान-हित, प्रकटी पुहुमि से मैथिली।।
वह परम तेज-पुनीत-प्रतिभा, रूप वाचतीत था।
अनुभव-अगम, आत्मेय था, अभिरोच्य अभिनीत था।।
कमलेश, शेष महेश सब सुर, सांग्ङना आने लगे।
ऋषि-मुनि तथा योगीश-गण, सब प्रार्थना गाने लगे।।
सारा रहस्य खुला उन्हें, मिथिलेश भी योगेश थे।
उस ओर से हृत्प्रेरणा भी, कर रहे अखिलेश थे।
जब कियत क्षण-पर्य्यन्त वह-सुर-वृन्द अन्तर्हित हुए।
मण्डल-सहित मथिलेश तब, स्वच्छन्द-गति प्रणमित हुए।।'' [73]

अद्भुत रस का दूसरा स्थल इसी काव्य में सीता में सीता द्वारा शिव धनुष का उठाना है। जिससे सीता का अतुलित बल व्यंजित हुआ है। हाथ में हर धनुष लिये हुए सीता आलम्बन है। हर्ष, स्तब्धता, रोमांच, चिंता इत्यादि अनुभाव एवं संचारी भावों के माध्यम से जनक के हृदय में अद्भुत रस का उद्भव हुआ है-

''चकित रह गये जनक से-जनता, अनुपमेय वह देख-चरित्र।
करना पड़ा उन्हें भी एवं तदनुसार संकल्प विचित्र।।
कहा जनक ने ''इष्ट-बन्धु-जन! है विवाह लौकिक-व्यवहार।
गहन-विचार-युक्ति-वृत्ति-आश्रित'' है ऐसा धीमन्निर्धारि।।'' [74]

इसी परिपेक्ष्य में कवि ने राम के वृह्ममय रुप का वर्णन कर अद्भुत रस का परिपाक कवि ने किया है। आशंका हर्ष आदि भावों से आसृय जनक के भावों का वर्णन कवि ने किया है। आलम्बन रुप में राम आश्रृय जनक का चित्रण दृष्टव्य है-

'' राका चारी विमल-विधु को किन्तु ज्यों ही निहारा।
आया त्योंही उदक-निधि में भी परीवाह न्यारा।।
मेधा क्या थी ? लघु सरित ही आप उल्लेख द्वारा-

शोभा ही में प्रविशित हुई भूल बृह्मौक धारा।

आत्माढया थी विदित विरता किन्तु दोनों भुलाये।

साक्षात् ज्यों ही अप्रतिम प्रतिभा धार साकार आये।

पूछा-" हे हे मुनिवर ! कहिये ये महा-तेज-कारी।

हैं क्या वे ही अवपु पयु में बृह्म द्वै नाम धारी।

राजा हैं ? या नृय-तनय हैं ? लोक-लोकाधिकारी।

या मेरे ही रुचि-सदन के सदा से बिहारी।

शोभा-शाली, छवि-धर महा,कान्ति के कान्ति-दाता।

बोलो-दोनो मन-हर अहो ! कौन हैं? शान्ति-दाता।। " [75]

लवकुश के वाणों से घायल मुर्छित सेना सीता की सौगन्ध से चेतन्य युक्त हो जाते हैं। इस घटना का वर्णन कवि ने अद्‌भुत रस की व्यंजना के लिए कवि ने किया है। सीता की सौगन्ध से सेना का जागरण आलम्बन हैं। प्रजा जन दर्शक आश्रय है। जिनके हर्ष, नेत्र, विषफार जानकी की जय का उद्‌घोष में अद्‌भुत रस व्यंजित हुआ है।-

" पडी हुई थी सैन्य अचेतन रुधिर-सनित एवं निष्प्राण।

कहा दवि ने हाथ उठा कर-" जागृत हो दैवीय विधान !

यदि सीता सतीत्व पर ही हो, हो सत्पति राघव प्रतिपाल।

तो समस्त सैनिक-सेनापति, हो स-जीव जागृत तत्काल।।

वही हुआ, भ्रम-तम विनष्ट हो, हुआ सती-वृत-सूर्य्य-प्रकाश।

" जयति जानकी " इन शब्दों से, सहसा गूंज उठा आकाश।। " [76]

रौद्र रस :-

" जहां विरोधी दल की छेडखानी अपमान आदि से प्रतिशोध की भावना जागृत होती है वहां रौद्र रस होता है। विरोधी दल के व्यक्ति आलम्बन उनके द्वारा किये गये अनिष्ट कार्य,अपकार, कठोर वचन उद्दीपन मुख मण्डल पर लाली दौडना, भौंह चढाना, आंखे तरेरना, दांत पीसना, होंठ चबाना, हथियार उठाना, ललकारना, गर्जना, तर्जना, अनुभाव, उग्रता, आमर्ष, चंचलता, उद्वेग, मद, असूर्या, श्रम, स्मृति, आवेग संचारी भाव तथा स्थाई भाव क्रोध है। " [77]

सीता निर्वासन में रौद्र रस की मार्मिक व्यंजना हुई है। सेना का व्यू निर्माण वीरों की हुंकार मुछों पर ताव देना इत्यादि आश्रय लव-कुश के और वजृजंघ की सेनाओं को बनाकर रौद्र रस की व्यंजना की गई है-

" सेना का स्कन्धावार जमा है/है रचे रचाये विविध व्यूह,

शस्त्रास्त्रों से सब सज्ज-सज्ज/है अडे खडे सैनिक समूह,

भू कांप रही पाद-ध्वनि से/नभ बधिर हो रहा नारों से,

फुंकारों से हुंकारों से/ललकारों से टंकारों से,

आंखे अंगारे बरसाती/है आग धधकती अन्तर में।

रणभेरी गूंजी अम्बर में।/मूंछों पर ताव चढाते हैं

आपस में जोश जगाते हैं " [78]

आलम्बन रुप में अयोध्या की सेना को देख आश्रय की सेनाये प्रतिपक्षी पर टूट पडी-

" ज्यों ही कौशल की वरूथिनी रण-रेखा पर हुई खडी

त्यों ही प्रतिपक्षी सेना, भूखे वाघों ज्यों टूट पडी।

एक-एक भट लगा भागने, कोई भी टिक सका नही,

यथाख्यातचारित्र सामने क्या ठहरेगा मोह कही ? " [79]

इसी परिपेक्ष्य में आलम्बन की दशा का वर्णन कवि ने किया है। अयोध्या की सेना की पराजय सुन राम लक्ष्मण का क्रोध इस रुप में व्यंजित हुआ है।

" उन अज्ञात युगल वीरों से करने को संग्राम।

रोषारुण हो समराङ्गण में आए लक्ष्मण-राम।

अरुण नैत्र निष्करुण हृदय-त्यों निष्प्रकम्प निस्नेह,

थर-थर अधर दशन से डसते, शस्त्र सुसज्जित देह !

सोच रहे जन अरे ! हो गया है किसका विधु बाम।

भृकुटी चढी है, बडी व्यग्रता फडक रहे भुज-दण्ड,

कड़क रहे विजली ज्यों रिपु को कर देगे शत-खण्ड,

है प्रचण्ड को दण्ड हाथ में मूर्त रुप ज्यों स्थान । " [80]

आचार्य तुलसी ने सीता के भाई भामण्डल ने वजृजंघ और राम लक्ष्मण की सेनाओं से युद्ध का सजीव वर्णन कर रौद्र रस का संचार किया है। कवि ने आलम्बन गत क्रियाओं का वर्णन कर उनके कम्प जडता स्तब्धा भय से रस की पुष्टि हुई है।

"हाहाकार मचा सेना में संकट आ गया रे।

आंखों में अन्धेरी सन्नाटा छा गया रे।

हक्के बक्के सैनिक सारे,

कांप रहे है भय के मारे,

अब क्या महाप्रलय होगा रे !

बिगडी कौन सुधारे सव का जी घबरा गया रे !

सहसा संचित साहस टूटा,

मानों बान्ध धैर्य का फूटा,

सच्चा सबल सहारा छूटा,

रुठा भाग्य देवता उलटा चक्र चला गया रे ! " [81]

रसों के अतिरिक्त कवि तुलसी ने स्थाई भाव, भाव सन्धि और संचारियों के भी कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। सीता और उसके भाई भामण्डल के मिलने पर आश्चर्य, हर्ष, डाकुओं को आता देख सीता के मन का निर्वेद लव-कुश और उनके मामा के मिलन में भाव सन्धि का निरुपण कवि ने ठीक प्रकार से किया है। आश्चर्य और हर्ष का एक-एक उदाहरण दिया जा रहा है-

1- हर्ष :-

" आ गए नारद अयोध्या उछलते आनन्द में,
मात्र-मन के मोद को बान्धा न जाता छन्द में।
राम का शीघ्रागमन सुन सभी हर्ष विभोर है,
भरत-मन प्रमुदित अमित उल्लास चारों ओर। "[82]

"आ मात्र भूमि के अंचल में/चेहरे निखरे उल्लास भरे
बालक वत दौड़ भरत भाई/गिर गये राम के चरणों में"[83]

"प्रश्न सुनते ही भरत का गला सहसा भर गया।
हो गई पलकें छ्लाछल ज्वार-सा आया नया।
धैर्य का एकत्र सविनय ज्येष्ठ से कहने लगे।
भाव मन के स्त्रोत बन वदनाद्रि से बहने लगे।"[84]

2- आश्चर्य :-

"रक्खा वह चित्र पीठिका पर/पूजा सामग्री साथ-साथ
संसद से आते रघुवर का/हो गया सहज ही दृष्टिपात,
रावण के से ये पैर यहां/विस्मित हो, बैठे पूछ आर्य।
हम क्या जाने यह तो प्रभु की/प्रिय पटरानी का नित्य कर्म।"[85]

3- संचारी भाव :-

"चेहरे पर चिंता की छाया।/शोकाकुल मुखडा मुरझाया।
थर-थर कांप रहा तन सारा।/बरस रहे लोचन जल-धारा।
घबराए-घबराए आए।/राघव ने आसन्न बुलाए।
अश्वासित कर पास बिठाया,/मधुर स्वर से धैर्य बंधाया।
अरे! आज यों क्यों करते हो।/बोलो आहे क्यो भरते हो?"[86]

वीर रस :-

"मानव मन में साहसिक कार्य करने के लिये जो एक प्रकार का उत्साह विद्यमान रहता है। वही वीर रस का स्थाई भाव है। शत्रु, दीन, याचक, तीर्थ, पर्व आदि आलम्बन, शत्रु का पराक्रम, याचक की दीनदशा उददीपन, रोमांच, गर्वीली वाणी, अनुभाव गर्भ, धुति, मति, स्मृति, हर्ष, आवेग,संचारी भाव है।"[87]

आचार्यो ने इसके चार भेद बताये है। दयावीर, दानवीर, धर्मवीर, और युद्ववीर। मूल वाल्मीकि

रामायण में लवकुश के साथ राम सेना के युद्ध का अभाव है। फिर भी सीता निर्वासन सम्बन्धी कुछ काव्यों में इस युद्ध का उल्लेख है। अश्वमेघ यज्ञ के अश्व रक्षार्थ सेना के समक्ष लवकुश सामने आते है। अश्व के मस्तक पर स्वर्ण पत्र मे लिपि बद्ध भाषा को पढ़कर दोनो भाई लव-कुश उत्तेजित हो जाते है। वे दोनो अश्व को बांध लेते है। आश्रय लव-कुश स्वर्ण पत्र में लिखी वाणी उद्दीपन विभाव, गवोक्ति से व्यंजित वीर रस का उदाहरण दृष्टव्य है-

''आवें तो वे सम्मुख मेरे अब वे न गर्भ में कुछ फूलें।
वह मजा चखाऊंगा रण में जिससे न जन्म भर फिर भूलें।।
मन में समझे क्या बैठे है अब केवल है रणधीर हमी।
संसार शून्य वीरों से है अब है केवल रण वीर हमी।।'' [88]

कुश की युद्ध वीरता के समक्ष रघुकुल सेना सहित शत्रुघन आश्चर्य चकित हो गये। क्षिप्र लाघव, आवेग से कुश की अदम्य वीरता उसका उत्साह व्यंजित है-

''कुश बोले बालक मै हूं पर रण करने को सम्मुख आओ।
ताकत रखते हो कुछ तो अब यह अश्व छीनकर ले जाओ।।
कुछ वीर बढ़े आगे आये, उस घोड़े को छोड़ने लगे।
धनुबाणों से कुश एक-एक, के हाथ वही तोड़ने लगे।।'' [89]

शत्रु की ललकार सुनकर लव उत्तेजित हो जाता है। कुश की मूर्छा उद्दीपन विभाव तीव्रता उद्वेग धैर्य मति चपलता संचारी भाव है-

''ललकारा जाते ही लव ने त्योही घूमी सेना।
बोली इसको भी पकडो अब देखों न छोड़ हरगिज देना।।
मूर्छित थे कुश पर भाई की औझक सी कुछ पड़ गई कही।
होकर सचेत उठ खडे हुए आ गये भ्रात के पास वही।।
शत्रुघन और सेना सारी यह हाल देखकर घबराई।
था अभी एक ही पर मालुम होता है यह दो भाई।।'' [90]

आचार्य तुलसी ने लव-कुश युद्ध के समय वीर रस की व्यंजना की है। शत्रुघन लवणासुर के युद्ध की झांकी अंकित करते हुए कवि ने आश्रय की सत्वरता वण दृष्टि से युद्ध वीर जीवित हो उठा है। भृकुटि निछेप, नेत्रो की लालिमा के उदाहरण देखिए-

''भृकुटी-भंग से लगता मानों कुपित हुआ है काल,/अजब आंखो में अरूणाई।
कमर कसी तलवार हाथ में भाला, वरछी तीर,
पहने कवच, तान सीने को चलते बांके-वीर,/देखते अपनी परछाई।'' [91]

''म्यानों से निकली तलवारें/खरतर बाणों की बौछारें,
पवि नृप के सुभट न ठहर सकें/लगता अब हारे, अब हारे,
यो देख स्वपक्ष पराजय वे/झट उभय वीर ललकार उठे,

मानो सुषुप्त मृगपति जागे,/काले फणधर फुफकार उठे।

सुनकर टंकारे चापों की /टिक सके विपक्षी वीर नहीं

कैवल्य-युगल के आगे क्या?/रह सकते घातिक कर्म कही?

अवलोक पलायन सेना का/पृथु प्राण बचाने को आगे,

कोसों तक दूर खदेड़ दिया/वे थे पीछे, वे थे आगे।" [92]

वजृजंघ और लवणांकुश प्रशंग में भी उत्साह की व्यंजना से वीर रस का परिपाक दिखाया गया है। वजृजंघ से सीता निर्वासिन की कथा सुन उसके पुत्र कहते है-

"है कहां अयोध्या ? कहा राम?/लग गई आग सारे तन में।

माता को छोड़ दिया वन में।/जिस मां का हमने दूध पिया

उसका अपमान न देखेगे/चम-चमकी इन तलवारो से

हम जा करके बदला लेगे,/रे! दूर कौन सा कौशल है

वीरत्व स्वयं का तुम तोलो,/यदि थोड़ी सी भी क्षमता है

करके दिखलाओ कम बोलो।" [93]

वात्सल्य रस :-

इसका स्थाई भाव वात्सल य स्नेह है। पुत्र इसका आलम्बन है। उसकी चेष्टाये उसकी विद्या, बुद्धि, तथा शौर्य आदि उद्‌दीपन है। आलिंगन, स्पर्श, शिर चुम्बन, एक टक देखना, पुलक आदि भाव अनुभाव तथा अनिष्ट, संका, हर्ष, गर्व, उसके संचारी भाव है।"[94]

वाल्मीकि आश्रम में सीता दो सुन्दर पुत्रों को जन्म देती है। जिन्हें आश्रम के पवित्र वातावरण में पलने का सुअवसर मिलता है। धीरे-धीरे वे बालक बड़े होने लगते है और उनके स्वाभाविक विकास को देख मां का ह्रदय वात्सल्य रस से छलक उठता है-

"युगल-सुअन थे पांच साल के हो चले।/उन्हें बनाती थी प्रफुल्ल कुसुमावली।।

कभी तितिलियों के पीछे वे दौड़ते।/कभी किलकते सुन कोकिल की काकली।।"

ठुमुक ठुमुक चल किसी फूल के पास जा।/विहंस विहंस थे तुतली वाणी बोलते।।

टूटी फूटी निज पदावली में उमंग।/बार-बार थे सरस-सुधारस घोलते।।" [95]

आचार्य विश्वनाथ ने वात्सल्य रस का स्थायी भाव आपत्ति स्नेह माना है। पुत्र इसमें आलम्बन मां आश्रय है। अग्निलीक में लवकुश और सीता के मिलन एवं वियोग मे वात्सल्य रस देखा जा सकता है। वाल्मीकि के प्रवचन के पश्चात सीता अपने पुत्रों को छोड़कर धरती के गर्भ में विलीन हो जाती है। सीता अपनी विवशता व्यक्त करती है।

"मां से सच कहता हूं/हमें राज-पाट नहीं चाहिए

बस, केवल तुम हमारे पास बनी रहो।/छोड़ दो मुझे,

छोड़ दो मेरे बेटो।/मेरी और दुर्गति न कराओं।" [96]

यहां आश्रय सीता है। आलम्बन लव-कुश अमर्ष, ग्लानि आशंका, संचारी भावों से वात्सल्य रस अभिव्यंजित हुआ है।

एक आध स्थलों पर कवि ने वात्सल्य भाव को भी चित्रित किया है निर्वासित सीता के सानिध्य में वन के पशु पंक्षी गहरी आत्मीयता का अनुभव करते है। और सीता को पाकर उन्हें ऐसा अनुभव होता है मानों उनकी अपनी जननी ही मिल गयी हो। सीता के ह्रदय में भी इनसे मिलकर मातृत्व उमड पडता है-

> ''मां की आंखों जल ज्योति जगी,/फैली बाहें, भर लिया अंक में
> बिसरा आत्म ताप का ज्वर।/मस्तक ग्रीवा, सहलाती रही
> मुदित मन, माता बहुत देर।'' [97]

जो मातृत्व सीता के ह्रदय में गोवत्स के प्रति है वही अन्य मृग शावकों के प्रति भी दिखाई देता है-

> ''वनचारी भोले छौनों को भर अंक/फेर, कर पल्लव सर,
> लो टिका कंठ कोमल कपोल/मां सिसक पडी ''प्यारे छौनों'' [98]

यहां भी वात्सल्य के साथ करूणा का समान रूप से मिश्रण दिखाई देता है। सीता के ह्रदय का मातृत्व और अपनी विषम परिस्थिति का शोक एक साथ चित्रित हुआ है।

पुत्र विषयक रस इसका स्थाई भाव लव-कुश आलम्बन, सीता, आश्रय, बच्चों की तुतली बोली उनकी किलकारियां, उद्‌दीपन विभाव, हर्ष औत्सुक्य चिंता मोह संचारी भाव है-

> ''एक बूंद, दो बूंद, चार- छै बूंद/उतर रहा था इतना भर ही दूध
> सूखे गये थे वत्सलता के स्त्रोत/भूल गई थी कोमलता का नाम
> कैसे-कैसे ये जुडवां-नवजात/अनुप्राणित रह गए प्रसव के बाद
> करूणा विगलित तापसियों के मध्य/हुआ भरण-पोषण इनका किस भांति
> सारी बातें आतीं मुझको याद/कहां-कहां से इन्हें मिला था स्नेह
> किस-किसने वरसाया इन पर प्यार/शब्द-रूप-रस-गंध-स्पर्श- सब बोध
> इनमें विकसित हुए साथ ही साथ/किस प्रकार तो फूटे इनके बोल
> तुतलाहट में कांपे कैसे होठ/कैसे पाए जननी को पहचान
> चलना-फिरना पाए कैसे सीख/हिले-मिले थे मुनि-शिशुओं के मध्य
> इनमें-उनमें था क्या कुछ भी भेद/लव था चंचल, जाने कितनी बार
> नापे होगे मृग-छौनो के नेत्र/ले जाते थे उसको अपने साथ
> विजन विविन में अक्सर शवर किशोर'' [99]

''अरूण रामायण'' में कवि ने सीता निर्वासिन के प्रशंग में वात्सल्य रस का भी यत्र तत्र संचार किया है। सीता वाल्मीकि के आश्रम में अपने सम्पूर्ण अतीत पर दृष्टिपात करती है। उनकी स्मृतियों में बचपन से लेकर यौवन तक की सभी बाते एक-एक करके आती है। इन स्मृति चित्रों में वात्सल्य और श्रंगार के अनेक चित्र उभरते है। वे याद करती है-

"माता का प्यार-दुलार, पिता का स्नेह सुखद
ऋषियों के प्रिय अनमोल वचन नित शिक्षाप्रद
क्रीड-विनोद नित दुपहर में प्रिय सखी-संग
कितनी आनन्ददायिनी थी शैशव-उमंग" [100]

सीता ने जब पुत्र लाभ प्राप्त किया और एक नही दो-दो पुत्रों को एक साथ जन्म दिया तो सम्पूर्ण आश्रमवासी वत्सल्य भाव में डूब गये माता सीता का हृदय आनन्द विभोर हो गया ऋषि वाल्मीकि ने असीम सुख का अनुभव किया-

ऋषि वाल्मीकि की उर-प्रसन्नताऐं अछोर/आश्रमवासी के तन-मन में हर्षित हिलोर
वन वनिताओं में गीतों के चंचल झकोर/पुत्रोत्सव का आनन्द विपिन में सभी ओर
माता ने सुत को दूध पिलाया प्रेम-सहित
उस क्षण उसकी आंखे, आंखो पर स्नेह-नमित" [101]

सीता एवं आश्रम वासियों की कायिक चेष्टाएं माता द्वारा दूध पिलाना आंखो में वात्सल्य-भाव भर कर पुत्रां को देखना-हर्ष, पुलक, चचंलता, आवेग, इत्यादि से रस का पूर्ण परिपाक हुआ है।

इस प्रकार अरूण रामायण में सीता निर्वासिन से सम्बिन्धित रस निरूपण करने पर करूण रस की प्रधानता और शान्त, वात्सल्य, श्रंगार आदि रसों की आंशिक उपस्थिति दिखाई देती है।

"इसी तरह अश्वमेघ प्रसंग में रामसेना तथा लव का उत्साह आवेग, क्षिप्रर्ता, बल, शक्ति, प्रलाप, दृढ़ता से वर्णित हुआ है।" [102]

शान्त रस :-

संसार से अत्यन्त निर्वेद होने पर तत्व ज्ञान द्वारा वैराग्य का उत्कर्ष होने पर शांत रस की प्रतीति होती है। संसार की असारता का बोध य परम तत्व का ज्ञान आलम्बन/सज्जनो का सतसंग तीर्थटन, दर्शन शास्त्र, धर्मशास्त्र, धर्मशास्त्र पुराण का अध्ययन उद्दीपन/दुखी दुनियां को देखकर कातर होना/झंझटो से घबराकर संसार त्याग की तत्परता अनुभाव धृति, गति, हर्ष, ग्लानि, दैन्य, असूय, निर्वेद, जड़ता, संचारी भाव तथा स्थाई भाव निर्वेद य सम है। [103]

करूणा की पृष्ठभूमि में शांत रस का इतना उदात्त चित्रण अत्यन्त दुर्लभ है। वाल्मीकि आश्रम में जहां सर्वत्र शांत रस का साम्राज्य था संसार के प्रतिपूर्ण विरक्ति थी वहां स्वाभाविक रूप से शांत रस की धारा प्रवाहित हो रही है। पूरा वायुमण्डल सम्पूर्ण प्रवृति दिव्य शांति बिखेर रहा है-

"स्त्रोत-पाठ स्तवनादि से ध्वनित थी दिशा।/सामगान से मुखरित सारा-ओक था।।
पुष्य-कीर्तनो के अपूर्व-आलाप से।/पावन-आश्रम बना हुआ सुरलोक था।।"
हवन किया सर्वत्र सविधि थी हो रही।/बडा-शांत बहु-मोहक-वातावरण था।।
हुत-दृव्यों से तपोभूमि सौरभित थी।/मूर्तिमान बन गया सात्विकाचरण था।।" [104]

राम और सीता परस्पर उदात्त प्रेम के बंधन में आवद्ध है। उनके लिए प्रेम का अर्थ व्यक्तिगत मनों

भावों को संतुष्ट करना नही है बल्कि उनके प्रेम का पौधा धर्म की छत्रछाया में पलता बढ़ता है अपने निर्वासन से सीता उतनी दुखी नही है। जितनी प्रशन्नता उन्हें राम के लोकाराधन से है। मन के सारे अन्तर द्वन्द्व मिटा कर वे शांत भाव से राम की इसी समाज सापेक्ष दृष्टि की भूरि-भूरि प्रशंसा करती है-

''धर्म्म धुरंधरता है ध्रुव जैसी अटल।/सदाचार सत्यवृत के वे सेतु है।।
लोकोत्तर है उनकी लोकाराधना।/उडते उनके कलित-कीर्ति के केतु है।।'' [105]

इसी प्रकार सीता के बारे में राम पूरी तरह आश्वस्त है और राम के अन्य भ्राता भी उसी तरह सीता के शान्त स्वभाव की प्रशस्ति करते है-

''देवि! आपका त्याग, तपोबल, आत्मबल।/पतिवृत का परिपालन, संयम, निमय।।
सहज-सरलता, दयालुता, हितकारिता।/लोक रंजिनी नीति-प्रीति है दिव्यतम।।'' [106]

करूण रस के अतिरिक्त कवि ने सीता निर्वासन के प्रसंग में शान्त रस का विशेष ध्यान रखा है। राम जैसे उदात्त चरित्र को जगत गति व्याप्त भी कैसे हो सकती है। वे तो जन मंगल को ही सर्वोपरि मानते है और जनहित के लिए वे बडा से बडा दुख सहने के लिए तैयार रहते है। सीता का निर्वासन राम के लिए अत्यन्त कष्टकारी है। पर वे अपने अन्तर्द्वन्द्व को दबाकर करूणा के क्षणों मे भी शान्त रस की सृष्टि करते है-

''चाहे मै दुखी रहूं पर, प्रजा रहे पुलकित
मै करूं लोक-इच्छा से ही शासन का हित
जन-मंगल-हित करना ही होगा आत्म-त्याग
भरना ही होगा विश्व-हेतु मन में विराग!'' [107]

सीता भी जब शयन-कक्ष में राम को उदग्नि और चिन्तित देखती है तो वे इसका कारण जानने का आग्रह करती है पर जब उन्हें पता चलता है कि एक साधारण जन द्वारा मेरे चरित्र पर ऊंगली उठाने के कारण चिन्ता ग्रस्त हुए है तो वे अन्दर से टूट नही जाती बल्कि राम की न्याय प्रियता को प्रोत्सहित करते हुए उस साधारण जन के साथ न्याय करने का परामर्श देती है-

''आर्यपुत्र!/यदि सभासद/मंत्री और आपके बंधु
उसके साथ अन्याय कर रहे हो, तो/आपको/मुझे और
इस राज्य को भी त्याग कर/उस अकेले व्यक्ति के पक्ष का समर्थन करना चहिए।
मैं या/कोई भी /राष्ट्र न्याय और सत्य से बडा नही।'' [108]

भरत, लक्ष्मण तथा पूरी मंत्री परिषद के विचार सुनने के बाद राम अन्ततः न्याय का साथ देते है। और आसन्न मात्रत्व के बोझ से लदी सीता और स्वयं को पुनः उस कठिन परीक्षा में निर्लिप्त भाव से झोंक देते है। अपना अन्तिम निर्णय सुनाते हुए राम उस प्रकरण का अभिन्न हिंसा होते हुए भी तटस्त ही बने रहते है। उनका निर्णय था कि-

''कल सूयोदय के साथ ही/सीता/वनवास के लिए प्रस्थान करेगी।
वनवास-काल में/वह किसी भी राजकीय पद

मर्यादा, सुविधा और सुरक्षा की अधकारिणी नही होगी,/और सीमान्त तक

लक्ष्मण उनके रथ का सारथ्य ग्रहण करेगें।'' [109]

राम और सीता के इस प्रकार तक और न्याय संगत विचारों और निर्णयों में परम्परागत रसों और उनके स्थाई भावों को तलासना व्यर्थ होगा क्योकि जहां तर्क का साम्राज्य ही वहां मनोविकारों का कोई वश नही चलता प्रवाद पर्व में इसीलिए शास्त्रीय रस विवेचन अत्यन्त कठिन साध्य प्रतीत होता है। पर पूरा काव्य रस सून्य हो ऐसा भी नही कहा जा सकता। उदाहरण के लिए काव्य के आरम्भ में ही राम कहते है कि-

''क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध ? कि/कर्म निर्मम कर्म

केवल असंग कर्म करता ही चला जाए?/भले ही वह कर्म

धारदार अस्त्र की भांति/न केवल देह/बल्कि/उसके व्यकित्व को

रागात्मिकताओं को भी काट कर रख दे।'' [110]

भयानक रस :-

''भयदायक वस्तुओं के देखने य सुनने से अथवा प्रबल शत्रु के विद्रोह आदि करने से जब ह्रदय में वर्तमान भय स्थाई भाव होकर परिपुष्ट होता है तब भयानक रस उत्पन्न होता है।'' [111]

''भयदायक वस्तु य व्यक्ति आलम्बन शत्रु की काइक चेष्टाएं उद्दीपन कम्प, खेद, वइवर्ण, स्वर भंगिमायें, विकृत हो जाना अनुभाव चिन्ता शंका, दैन्य, अपसमार इसके संचारी भाव है।'' [112]

''ध्रुव से ध्रुव तक/धू-धू करती/यह कर्म की/कृत्या

अपनी अग्नि-गुंजलक में/सारे अक्षांश और देशान्तरों, को लपेटे,

जीवमात्र की कंण्ठमाल धारे/यह उदार चरिता/महाकाली

एकान्त और कोलाहलों पर आसित है।'' [113]

इन उदाहरणों में, दो टूक शब्दों मे किसी रस का नाम लेकर उसमे अकंठ डूबा नही जा सकता और रससिक्त करने का कवि ने कोई विचार भी नही किया वह तो देश और काल की परिधि में न्याय और अन्याय का विश्लेषण करने में ही अपनी दृष्टि जमाये हुए दृष्टिगत होता है। कवि ने भयानक और आश्चर्य जनक दृष्टि में भी सहज सत्य की अभिव्यक्ति देखी है-

''यदि किसी /एकान्त/भयावह बावड़ी की/काई खाई

जर्जर विद्रूप चटटानों को फोडकर/प्रतिइतिहास का तेजस्वी

पीपल-पुरूष/हरहराने लगे तो/उसे चुनौती के स्थान पर

सहज सत्य की अभिव्यक्ति/क्यो नहीं माना जाना चाहिए?'' [114]

प्रकृति के कोमलपक्ष का वर्णन प्रायः सभी कवियों ने किया है किन्तु उसके भयंकर रस पर दृष्टिपात नही हुआ जिन कवियों ने उसके भयंकर रस का चित्रण किया है उन्होने या तो प्रकृति को विभीषिका रस के दर्शन कराये है या फिर उसके विराट रस का वर्णन किया है-

''धारे चारों ओर हाहाकार का शोर मानो रूद्र का आक्रोश था।

अन्धकारा छन्न हो आकाश भी आर्त शोकोच्छवास आहों से भरा।

थूलि थरा से दिशायें ध्वान्त हो वेदना पीड़ा व्यथा से रो रही।

दूर से भी क्रूर झोक-झोक में सृष्टि नष्ट सी होने लगी।'' [115]

वीभत्स रस :-

''इसका स्थाई भाव जुगुप्सा है जो किसी अनभिमत गरहणीय अथवा उद्वेग जनित वस्तु को देखकर य सुनकर अथवा गन्ध रस स्पर्श द्वेष के कारण उत्पन्न होती है। इसमें शान्त, शव, चर्वी, सडा मान्स, रूधिर, मल-मूत्र, घृणा उत्पादक वस्तु और विचार आलम्बन विभाव।'' [116]

''आवेग, मोह, व्याधि, जडता, चिंता, निर्वेद, ग्लानि आदि संचारी भाव होते है।'' [117]

जानकी जीवन में युद्ध के समय ग्रंद्धादि को प्रीति भोज दिया गया है-

''सेही श्रंगाल श्वानं खान पान में लागे।

अहवानं गान तान मान दान में लगे।

निश्शंक अंक अंक नोच काक कंठ थे।

चिल्लादि चिल्ल पो मचा छके अटंक थे।'' [118]

कहना नही होगा की सीता निर्वासिन सम्बन्धी काव्यों का अंगीरस शास्त्रीय दृष्टि से विवादास्पद स्थिति यह है कि एक आध अपवाद को छोड़कर शेष सभी काव्य दुखान्त है। सुखान्त काव्य में यह समस्या खड़ी होती है, कि राम व सीता का विरह करूण विप्रलम्भ य करूण रस है। शोध कत्री ने यह निरूपित किया है कि दुखान्त काव्यों में करूण रस ही उसका प्रधान काव्य है। राम ने जनापवाद के कारण सीता का निर्वासिन अनिश्चित काल के लिये कर दिया था। पुर्नमिलन की संम्भावना न होने के कारण अनिष्ट जनित शोक ही इस करूण रस का प्रधान स्थाई भाव है। अनुभाव, संचारी भाव तथा इनके संयोग से पुष्ट करूण रस की मार्मिक अभिव्यंजना वैदेही वनवास, जानकी जीवन, रामराज्य, अरूण रामायण, और अग्निलीक, रस पेसल एवं ह्रदयावर्जक रचनाये है। वैदेही वनवास में पुटपाक की तरह परिव्याप्त करूण रस सीता के पृथ्वी विवर में विलीन होने के पश्चात अयोध्या नर नारियों को भी आकंठ निमज्जित कर देता है। इस करूण रस की सफल अभिव्यंजना हेतु राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा) और अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध ने स्मृति रूप अथवा दृश्यावलोकन के रूप में पूर्व चरित की चर्चा कर संयोग श्रंगार एवं दाम्पत्य प्रेम की उज्वल झांकी अंकित की है। वीर रस के लिए लवकुश युद्ध रचना प्रमुख है। सीता निर्वासिन के पूर्व विप्रलम्भ श्रंगार के अन्तर्गत विवेक, वितर्क, विबोध, विचार की विस्तृत पृष्टि भूमि प्रवाद पर्व में प्रस्तुत की गयी है। अग्निलीक का करूण रस अपने उज्जवल रूप में प्रस्तुत हुआ है। जिसमे सीता के पृथ्वी प्रवेश को प्रतिकात्मक रूप में अभिव्यक्त कर राम को आत्माहुति नई अग्निलीक की प्राप्ति हुई है। भावोक्षलन पूर्ण रसभिव्यंजना उद्दीपन विभाव, आश्रय की काईक वाचिक सात्विक अनुभाव की दृष्टि से वैदेही वनवास अरूण रामायण और अग्निलीक सफल रचनाये है। इसके अतिरिक्त यथा अवसर कवियों ने यत्र-तत्र प्रत्यक्ष अथवा स्मृति आधारित संयोग श्रंगार का भी वर्णन किया है। लवकुश युद्ध के समय वीर, रौद्र, रस का परिपाक तथा सीता के भूमि विवर प्रवेश के समय अद्‌भुत रस की व्यंजना बड़े सफल रूप में हुई है। कहना नही होगा कि सीता निर्वासिन में

संयोग, वियोग श्रंगार, करूण,रौद्र, वीर, भयानक, अद्भुत इत्यादि रसों को स्थान मिला है। प्रमुखता करूण और श्रंगार की है। जानकी जीवन में रस का पूर्ण परिपाक बहुत सफल वहीं हो पाया। इस दृष्टि से वैदेही वनवास, अरूण रामायण, अग्निलीक प्रमुख काव्य ग्रन्थ है।

☸ सन्दर्भ सूची ☸

1- विस्तृत अध्ययन के लिए काव्य प्रकाश, साहित्य दर्पण, रस सिद्धान्त विश्लेषण-डॉ. दीक्षित दृष्टव्य है।

2- रस सिद्धान्त स्वरूप विश्लेषण-डॉ.आनन्द प्रकाश दीक्षित- पृ. 353

3- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 105

4- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 250/251

5- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 23/24

6- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 25/26

7- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 28

8- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 28/29

9- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 30

10- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 33

11- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 41

12- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 45

13- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 60

14- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 60

15- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 62

16- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 65

17- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 66

18- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 67

19- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 67

20- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 33/34

21- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 39/40

22- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 50

23- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 57

24- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 70

25- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 56

26- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 62/63

27- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 35

28- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 39

29- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 48

30- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 64
31- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 85
32- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 122/123
33- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 123
34- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 70/71
35- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71
36- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 77/78
37- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 625
38- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 626
39- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण - पृ. 633
40- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 637
41- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 637
42- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 642
43- जानकी जीवन-राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा)- पृ. 20/34/35
44- काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 179
45- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 1
46- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 43
47- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 30
48- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 32
49- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 63
50- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 65
51- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 66
52- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता पृ. 108/109
53- जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा)- पृ. 16/116/123
54- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 58-59
55- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 174
56- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 87
57- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 58/59
58- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 109
59- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 59
60- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

61- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 4
62- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 5
63- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 6
64- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 6/7
65- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 8
66- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 80
67- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 80
68- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 92/93
69- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 93
70- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 94
71- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 96/97
72- रस सिद्वान्त-स्वरूप विश्लेषण-डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित- पृ. 367/68
73- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 108
74- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 114
75- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 116
76- प्रिया या प्रजा-पं.गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 124/125
77- काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 196
78- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 123
79- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 125
80- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 126
81- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 140
82- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 8/9
83- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 10
84- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 11
85- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 29
86- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 31
87- काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 192/193
88- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 12
89- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 13
90- लवकुश युद्ध- पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 14
91- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 109

92- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 111
93- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 117
94- रस सिद्धान्त-स्वरूप विश्लेषण-डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित- पृ. 295
95- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 182
96- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 57
97- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 42
98- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 44/45
99- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 68/69
100-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 629
101-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 636
102-जानकी जीवन-राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा)- पृ. 20/49
103-काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 221
104-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 95
105-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 215
106-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 226
107-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 623
108-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 80/81
109-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 103/104
110-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 19
111-काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 199
112-रस सिद्धान्त-स्वरूप विश्लेषण- पृ. 377
113-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 25
114-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 34
115-जानकी जीवन-राजाराम शुक्ल (राष्ट्रीय आत्मा)- पृ. 12/23
116-रस सिद्धान्त-स्वरूप विश्लेषण- पृ. 372
117-काव्यदर्पण-रामदहिन मिश्र- पृ. 217
118-जानकी जीवन-राजाराम शुक्ल- पृ. 19/96
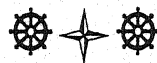
अध्याय-पंचम

आलोच्य काव्य-ग्रन्थों में शिल्प विधान

- भाषा-शब्द विधान
- अलंकार योजना
- छन्द योजना
- शब्द शक्ति
- बिम्ब विधान

अध्याय-5

आलोच्य काव्य ग्रन्थों में शिल्प विधान :-

पिछले पृष्ठों में यह निरुपित किया जा चुका है, कि रसात्मकता काव्य का प्राण तत्व है। कवि अपनी अनुभूतियों को सामाजिक या पाठक तक सम्प्रेषित करने के लिए जिन तत्वों का आश्रय लेता है, उन्हे दों रुपों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम को हम भाव पक्ष कहते है, इसके अन्तर्गत कवि कथा विषयक मर्म स्पर्शी स्थलों की पहचान कर उनकी भावात्मक व्याख्या करता है। इस व्याख्या का आधार कलापक्ष ही है, भाषा या कलापक्ष वह साधन य सम्भार है जो भावनाओं को पाठक के मानष पटल पर अयेन्द्रिय विम्ब उपस्थित करता है। कवि चाहे जितना ही अनुभूति प्रवण हो, भावनायें चाहे कितनी भी सशक्त हो, बिना भाषा के उनका प्रगटीकरण संम्भव नही यदि ये कहा जाए कि भाषा के आभाव में भावोंदधि में न जाने कितनी अनुभूतियाँ अव्यक्त रुप में ही रहती तो अत्युक्ति नहीं होती।

बात यह है कि भाषा तथा उसका कलापक्ष कवि का प्रमुख साधन य कारक तत्व है उसके माध्यम से ही वह अपने भावों को सार्थक बनाता है। प्रायः यह देखा जाता है कि कुछ कवि अनुभूति प्रधान होते है, किन्तु उनकी भाषा उतनी सक्षम अभिव्यंजना वैविध्यपूर्ण नही होती तो कुछ कवि शिल्प पक्ष के अतिशय आग्रह के कारण भाषा में पच्चीकारी दिखातें हैं। वस्तुतः रससिद्ध भावनावान सहृदय वही कवि है जिसके पास अनुभूतियों का विस्तृत संसार है और इस संसार की अभिव्यंजना के लिए भाषिक उपकरण भी समृद्ध है।

राम कथा भाव निधियों का अक्षय भंडार है। भावनाओं के आवेग में जिन कवियों ने शिल्प पक्ष की उपेक्षा की है वे महत्वहीन सिद्ध हुए है। आधुनिक युग में परिवर्तित होती हुई समस्यायें परिवेश के कारण रामकथाकारों ने रामकथा को भी नूतन शिल्प विधान में ढालने का प्रयास किया है। यहां हम पूर्वोत आलोच्य काव्यों में प्रस्तुत शब्द भंडार मुहावरें, प्रयुक्त प्रमुख अलंकार, छंद योजना, एवं शब्द शक्तियों के साथ काव्य के अनुसंशन हेतु नवीन स्वीकृत मानदण्ड बिम्ब एवं प्रतीक योजना की दृष्टि से मूल्यांकन करेंगे।

1- भाषा :-

आलोच्य काव्य ग्रन्थों की भाषा गत वैविध्य एवं उसके प्रयोग का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन न करके कवियों की शब्द योजना शब्द भण्डार की प्रवृत्ति तत्सम, देशज, विदेशज एवं विभिन्न प्रत्यों के संयोग से निर्मित विशिष्ट शब्दो का उल्लेख कर उनकी भाषा विषयक दृष्टि का मूल्यांकन करेगे। सर्व प्रथम प्रत्येक काव्य की अलग-अलग तत्सम तद्भव, इत्यादि शब्दों की सूची प्रस्तुत की जा रही है।

1- वैदेही वनवास :- ''तत्सम शब्द''

पदार्पण, उत्कंठ, विविध, उद्विग्न, संदिग्ध, उदग्रीव, प्लावन, कृतान्त, सुक्रतिरता, संलाप, मृदुगामी, कलुषित, क्षिति तल, प्रफुल्ल, सत्पथ, कंटकित, दाम्पत्यदिव्यता, अनिष्ट, तरू पल्लव, सत्पथ, सग्ड़िनी, दाम्पत्य दिव्यता, युगल सघर्ष, सहधर्मिणी क्लेषित, सुधा लसित, प्रजा बंद समीर, सद्गंध सदन, मुग्ध, व्योम, विहंग वृन्द, उत्फुल्ल, बदनांबुज, कंदन, मृदुता,निमग्र, उल्कापुंज, प्रवृत्ति, कुत्सित, गर्जन, सद्भावना, सामंजस्यता, संताप,

अर्पित, प्रलयंकर, असंख्य ब्राहाण्ड, त्रण,संसृति, उदधि, विध्वंस, रहस्यमय पुण्यकृति, विदिता, शक्तिमत्ता, रघुवंश, मणि लोक, ललाभ, कलाकृति, यथातत्यथा, मुग्धकर, विकंपित गात, क्रुद्र, षटमास, पुनग्रहण, धर्म मर्म अज्ञात, निन्द्रित उदगार, प्रतिबिम्ब, बुध वृन्द, अनुलंघनीयता, कृतकार्यता, उदंडता, ह्रदय, प्रभंजन, मलय समीर, अंगणित, उत्पात, लोक लासक, खिन्न नितान्त, लांक्षित वृथाकलंक, ग्रहीत, दुर्वृत्त, असंगत, अकीर्ति, आद्योपान्त, उपकृत, करबद्ध, अधमता, विलुप्त, दुष्प्रवृत्ति, दुदन्ति, दण्ड, वज्रनिपात, विमुक्त, अनर्थ, भव परिताप, भव्यता, प्रलाप, श्रेष्ठतर, सुकृति, परिधान ललकित, गगन दिव्यता, नियति नटी नर्तनरत, गयंदगति, प्रस्ताव, अपवर्ग, उत्सर्गित, शिरोधार्य, कण्ठित, धर्म परायणता, आकांक्षा, अतीव, उर तिमिर, धृत हीन कलरवित घृष्टता, जर्जरित, उद्वेगांबुधि, प्रीति, प्रपंचों, श्रुतिकीर्ति, स्तंभ, अनुष्ठिता, हितैषिता, कृतज्ञा, रथाधिरूढ़ा तथापि विषकंठ, सहसांशु, नरत्व उन्मेष, गन्तब्य, दुर्निवार, निष्ठुरता।

प्रवाद पर्व :-

प्रत्पंजा, सन्धान, अपौरूषेय, सन्नद्व, प्रतिध्वनि, जिज्ञासा, तपस्या, प्रतीक्षा, ब्रहाण्ड, वृद्व, व्योमसिद्व, सृष्टि, रहस्य, शताब्दी, तटस्थ, अनुष्ठान, निष्कृति, प्रतिहवन कुण्ड, अग्निपर्व, स्मृतिहीन, अभिषेक, सम्पन्न, उच्चरित, निजत्व,श्वास-मन्त्रों, उर्ध्व, व्याघृचर्म, कृत्या, गुंजलक, आक्षांश, कष्ठमाला, कशघात, वैश्वानरी, अगम्यताओं, व्याप्त, वर्चस्व, संकल्पजलों, अनासक्त, राजसी गरिमा-तर्जनी, राजतंत्र, प्रतिऐतिहासिक, संज्ञाहीन, उत्कीर्णित, प्रति शिलालेख, राजदण्ड, संज्ञाहीन, उत्कीर्णित, प्रमाणिकता, चेष्टा, पुराण, श्रेयस, विरूद्व, विद्वेष, सहिष्णुता, अभिव्यक्ति, सम्मुख, विधि मण्डित, खड्ग, उदत्तता, चित्रित, जीवन्तता, कंण्ठश्री, परिधानित, वैजयन्ती, जर्जर, विद्रूप, परात्पर, ऋतम्भरा, दुस्साहस, चेष्टा, आतुरता कर्मठता, सर्वसत्तात्मक, राजशक्ति, समग्र, परिपेक्ष्य, सर्वविदित, समदर्शी, प्रतिष्ठापित, दोषारोपण, दुर्भाग्यपूर्ण, तपस्या, अर्जित, निरंकुश, अधिपत्य, मेधावी, चक्रवर्ती, समुद्रघोष, प्रतिध्वनि, साम्राज्य, रूद्रप्रिय, विद्याधर, दिकपाल, स्वत्वहीन, उद्भट विकट विषमता, प्रताड़ित, प्रणार्पण, चक्रवर्ती, प्रकम्पित, संकल्प, स्तम्भ, महोत्सव, चंदनगंधी, पुष्पीय, आख्यान, निर्वेद, आसक्त, पक्षधर, उद्विग्न, प्रथक, निजत्व, क्षत-विक्षत, आशान्त, व्यर्थता, मानवीय, उद्यम, संघर्ष, व्याकुल, दुदन्ति, आद्यन्त, स्वत्वीय, अगत्य, विषाद, सुगन्धित वल्कल, पगड़ड़ियों, विस्तीर्णता, अदृशा, सम्पन्ता, स्वर्णप्रिय, कौस्तुम, नगण्य, पार्श्व, पुष्पवाटिका, क्षणान्त, अकंण्ठ, ऊर्ध्व, विघ्न, पात्रान्त, अविभाज्य, दाम्पत्य, सन्धानित, समर्पित, दुष्कर, निर्णयात्मक, औचित्य, तर्क संगत, निष्कलुष, नारीत्व, तिरस्कार, कृत्य, दुराग्रहों, षडयंत्र, वक्तव्यों, आक्षेपात्मक संस्कारों, अनुत्तरदायित्व, सभासदवृन्द, गन्तव्यों, संस्पर्शिता, अग्रसर, समग्रता, वर्चस्व, पृथुज्जन, स्वर्ग्रीय, पित्रत्व, अनुजत्व, अक्षुण्ण, दग्ध, दण्डित, निरंकुशता, उदात्त, निस्प्रह, सौम्यता, सारथ्य, प्रकम्पिताः, चारूपात्रा, चीनांशुक, निष्णात,

अग्निलीक :-

पौरूष, दिग्दिगन्त, उत्साह, अश्वमेघ, मुक्त, धर्म, कष्ट, व्यंजित, यंन्त्रणा, अबोध, दर्द, सूर्य, अर्ध्य, निश्चल, पूर्णाहुति, वंशधर, शिरोधार्य, विह्वल, अग्निशाला, आकाश, मिथ्या, प्रस्थान, राक्षसी, कुकर्म, भाग्य, क्षोम, शय्या, परिचर्या, नितान्त, अनन्या, विकल, राज्य, रणवाद्यों, व्यस्त, दुर्बल, रूचती, चक्रवर्ती, वैभव, पखवारे, मूर्छित, व्यस्त, दान, पुण्य, कलंक, ठुकराया, सत्य, धनुर्धारियों, निस्पंद, दुर्घटना, लक्ष्मी, अतीत, समर्थन, दुर्भाग्य, स्वस्थ,

शेष, निष्प्रयोजन, प्रलाप, सौगन्ध, परिवेश, असंप्रक्त, नितान्त, पथ, घुमडता, नेपथ्य, चौकन्ने, अश्व, दिग्विजय, उत्तेजित, पवित्र, तुमुलनाद, दिव्य, उर्जस्थित, सामर्थ्य, तरूण, शौर्य, धर्मवृती, कीर्तिवान, नेत्र, विध्न, चुनौती, भूकम्प, उत्तेजित, युद्ध लिप्सा, बहिष्कृत, अन्वेषण, अपव्यय, ग्रस्त, त्रस्त, लक्ष्य, स्वप्न, सतर्क, आडम्बर, आत्मजयी, क्षुद्र दृष्टि, वृत्त निष्कासित, विच्छिन्न, स्तब्ध, संकीर्ण, रहस्यपूर्ण, विश्राम, आश्रम, निर्वात, राजदण्ड, निषाद, प्रतिष्ठा, यन्क्रोच्च, स्मरण, खड्ग, परकोटे, परिणीता, सौगन्ध, टहलनी, निष्कलंक, सम्भाषण, स्वानिर्मित, यन्त्रणा, संकल्प, स्वयंवर, न्यौछावर, संग्राम, निर्विशेष, सार्थकता, विग्रह, निरादर, निर्जीव, स्पन्दित, उत्तराधिकार, दम्भ, चंगुल, मृत्यु, अनाविष्ट, उत्तेजित, अस्तित्व, उन्माद, महात्वाकांक्षा, अकथ्य, वज्रपात, कटिबद्ध, दण्ड, स्वार्थान्धि, निर्लिप्त, निर्विकार, प्रकोप, मात्रत्व, असागरा, धरा, सूक्ष्मता, श्रोताओं, अनुष्ठान, उत्तेजना, भोक्ता, निष्ठुर, पत्नीत्व, भार्या, खड्ड, मनतव्य, कृत्य।

सीता निर्वासन :-

लावण्य, साम्राज्ञी, उद्विग्नमना, निष्कम्प, प्लावित, प्रचण्ड, अक्षम्य, संलाप, कुकृत्य, सोत्साह, सौगन्ध, समर्पित, तत्क्षण, सुदीर्घ, प्रश्वास, वज्राघात, दुर्निवार, चरणामृत, प्रकम्पित, विदीर्ण, अवरूद्ध, कुत्सित, निष्पादन, मर्मान्तक, सुकीर्ति, प्रस्थापित, इन्द्रायुध, अभीष्ठ, अविलंवित, ध्वजवाह, उद्भाषित, उद्विग्नमता, सघःप्रशिप्त, मिथ्यारोपण, कुसुमांजालिबद्ध, चिरस्अभीप्रिसत, द्रुतगमित, कमलानय, सर्वग्रास भक्षी, प्रतिशोध वृत्ति, शिलाशिना, धावित, मुष्ठिका, हर्षिता, प्रफुल्ल, स्नेहयुक्त, दाम्पत्य धर्म, तात्कालिक, सम्पदा, ।

भूमिजा :-

आसीन, प्रलम्बित, विश्राम, मध्याहोन्तर, स्फीत, समृद्व, विहवलता, आख्यान, स्गिन्ध, हिमाच्छन्न, मर्मान्तक, करपल्लव, तत्क्षण, जलविन्दु, कम्पित, निस्तेज, अग्रज व्यथित, हंसाकृति, उदगम, महात्मय, परिदग्ध, समग्र, आर्शीवाद, प्रवाह, स्तवन, दिगन्त, त्रिविध, संस्पर्श, तत्काल, विलम्ब, परिलक्षित, दुर्गन्ध, महाराण्य, वृतान्त, तरूनिषदं, निश्चेष्ट, संलग्न, संस्कार, कृमिदष्ट, आक्रान्त, दुर्विदग्ध, पूर्णाहुति, भ्रमण, स्पंदन, ह्रदयाधार, प्रकृतिस्थ, पुंश्चलि, आकृति, उद्भाव, आस्वाद, उत्कृष्ट, अनिरूद्ध, संक्रान्त, प्रतिज्ञाबद्ध अर्पित, अनाघात, भावाविष्ट, उज्जवल, रूढ़िवद्ध, आम्रकानन, उत्साह, वत्सलता, भूकम्पन, उपलखंड, गरिष्ठ, शोकान्तक, निर्विकल्प, विमुग्ध, तरूणियां, अन्तदहि।

लवकुश कुश युद्व :-

अत्यन्त, तेजस्वी, उत्सुक, उत्साह, हर्षाय, संग्रह, अनर्थ, निवृत, वृत्तान्त निन्दनीय, तत्काल, सम्मुख, सामग्री, प्रतिकूल, विरूद्व, भृष्ट, दुष्कर्म, संकुचित, व्याकुलता, दृष्टि, गर्जन, सर्वथा, शास्त्रोक्त, स्मरण, त्रणतुल्य, सम्पत्ति, दुर्भाग्य, आर्शीवाद, सष्टांग, निर्जन, शास्त्र, स्वीकार, संस्कार, एकाग्रचित, वीरत्व, निर्मय, स्वर्णपत्र, रणस्थान, सैन्ययुत, सतीत्व, मस्तक, स्वदेश

प्रिया या प्रजा :-

सक्रम, संयुक्त, स्फूर्ति, प्राच्छालन, निस्तब्ध, जीर्णोद्वरित, वीभत्स्य, विहंगम, निष्कल्प, दुर्दान्त, बृहल्कंठकाकीर्ण, चतुर्दिक, संभ्रामित, क्लान्ति, बाहुल्यता, संहारिणी, ज्ञातव्य, सौहार्दता, दुर्भावना, युक्तिशः विस्तारण,

वत्सल, उन्मोक्ष, सत्याथन्वक्ता, उदण्डता, सर्वाग्ङ कर्तव्य, सर्वेश, कम्पित, तत्पर, वीरत्व, शरच्छेदित, उन्माद, उदभव, मस्तक नैराश्य, कृतान्त, स्वरक्षित, विकंपित, सन्मार्ग, भवितव्य, तेजस्विता, निस्तेज, श्रद्धाजंली, उन्मोचना, ज्योतिर्मयी, ज्योत्सना, आत्मजा, हृताल, निस्पक्षता, समर्पण, अदम्य, दिग्गजों, मृदुलता, आख्यान, आप्रलय युगान्तर, सत्संयम, सुकृतासीन, द्रुमाली, शिथिलतांग, फ्लावित, संस्पर्शन, अघृष्ठा, उल्लास, सान्ध्य सुकृति, जागृति, प्रादुर्भाव, नैसर्गिक, अन्तस्तली, क्लेशांत, जीवात्म, धीमन्निधरि, विद्युतप्रवाह, लावण्यता, शिरोमणिता।

रामराज्य :-

धर्मादित, चतुर्दिक, विहग्ङम, स्वर्ग गज्जरित, रश्मियां, स्वर्णिम, सुगान्धित, मनस्वी, वितृष्णा, मिथ्यावाद, निर्मुक्त, शंखध्वनि, उन्नत, नास्तिक, पराक्रम, परद्रोह, नर्कगामी, स्वछन्द, सुशोभित, शुभ्राकिंत, मातृवंदन, सन्नाद, भुविभार, समर्पित, अपव्यय, पुष्यजल, विहग्ङम, सत्विकी, निःस्वार्थ, परिपूर्ण, दुर्वव्य, दुस्तर, अन्यायी, आदित्य, अपकीर्ति, सत्यसंघ, उन्मत, प्रकम्पित, क्षितिज, कुत्सित, समर्पण, आर्शीवर्चन, मृदुल, उल्लास, सर्वत्र, आम्रकुंज, उन्मुक्त, सर्वत्र, सौजन्य, सम्बल, प्रतिक्षण, दुर्गम, अवरूद्ध, दुस्तर, निर्बल, उदीप्त, त्रिपुण्ड,हव्यमान आर्तजन, निष्कलंक कीर्तिमान, गुंजरित, मकरन्द. निर्निमेष, पुष्पित।

अरूण रामायण :-

दिब्याभा, दृगदल, पुरूषोत्तम, महातपस्वी, दुर्भाग्यमयी, परिव्यक्ता, दिव्यात्मक चित्र, समदर्शी, अग्रसर, उज्जवल, गुंजित, सात्विकता, अमृत, नाद, संप्राप्ति, प्रतिबिम्ब, स्नेह, सुरभित, आमृवन, सौभाग्य, स्वर्ण मृग, निष्ठुर, प्रतिपल, ज्योतिर्मय, दुस्सह, दुर्दिन, निर्दय, आत्मिक, नारीत्व, मातृत्व, कुसुमित, विभासित, सत्वर, सास्वत, तमस, बहिर्न्तर, प्रशान्ति, उन्नत, अन्तर, प्रवाह, तत्क्षण, सौभाग्यवती, स्वर्णिम, सर्वदा, अनुष्टुप, कृपादृष्टि, पुत्रोत्सव, तल्लीन, विद्यार्जन, आमंत्रित, गिरिवृज, आनर्त, कान्तिवान, श्रवणासुर, करूणोल्लास भावात्मक, मस्तक, संज्योति, उल्लास, प्रार्थित, आध्यत्मिक, संतुष्ट, पुलकित, सन्ताप, शिरोधार्य, अत्यन्त उपस्थित, विदीर्ण, विनष्ट, निरूत्तर, प्रणमय तपस्या, स्वीकार, निर्मम, निर्णय, असमर्थ, आश्चर्यचकित, जागृत, निष्प्राण, स्मरण, दुस्सह, कृन्दन।

जानकी जीवन :-

इन्द्राहारात, शिवसंकल्पमस्तु, गुंजीवाः, त्यक्तेन, मूर्च्छापूणडिकुला, दिवाकरातिमितं, दृगकान्त, कृपाकटाक्षा, तीक्ष्णातितीक्षण। सत्पथगामिनी, सन्मार्ग, संदर्शिनी, सदाचारिणी, प्रणायिनी, संकल्प, उमांगिनी भ्रमवारिणी, निमाज्जिता, मुण्डमालिका, प्रेफुल्ल, कत्सोल, लवाग्नि, संकल्प, उमंगिनी।

अग्निपरीक्षा :-

उत्फुल्ल, मस्तिष्क, रहस्य, सन्निकट, चक्राक्रमण, क्लान्त, सम्मान, परमार्थ, रहस्योद्घाटन, उज्जवल, वात्सल्य, नयनानंदन, उदग्रीव, प्रमुदित स्वीकृति, अप्रतिहत, उन्माद, मनस्विनी, अत्युष्ठा, प्रतिमूर्ति जाज्वल्यमान, सौम्याकृति, व्यक्तित्व, स्वर्णिम, उद्घोष अंगणित, अर्हदतनु, सदज्ञानोपरि, चीत्कार, हर्षातिरेक, दुर्जेय, ज्योतिर्धर, अपनत्व, चार्तुमासिक, क्रान्तिकारकों अभिनिष्क्रमण, स्पष्टवादिता, निमज्जित, स्मृतियां, स्नेहाकुल, विसमित, संरक्षण, अन्तर्ध्यान, पित्रप्रवर, विरक्त, बहिष्कृत, संवत्सरार्ध, प्रोत्साहित, अखण्डित, उच्छंखल, सर्वांगीण, प्रकम्पित, संस्मरणों,

बहिष्कार, अस्तित्व, विस्तृत, स्वीकृत, सोल्लास, भावोत्पादिनी, आकस्मिक।

तदभव शब्द :- ''वैदेही वनवास''

आंख, कांन, आंसू, दांत, धुन, पशु, निछावर, सांस, अनूंठी, मति, हंसता, जीभ, तामस, पांच, मुंह, आंच, पांव, बसन, रीझ, हंस, गहने, बांध, बांस, कलह, पाठ, काठ, सुख, कंधा, धीरज, छबीली, ठुमुक-ठुमुक,।

प्रवाद पर्व :-

अंगुली, हाथ, आग, आज, काल, दिन, रात, पैरों, सुख-दुख, घर, कल, धरती, पीली, आवाहन, काल, भीतर, हाट, विवाह, सांकल,।

अग्निलीक :-

मुंह, हाथ, रथ, घोडे, आदमी, आंसू, आंखो, सुख-दुख, भाई, हंसती, खलबली, जल, वन, पैर, संगिनी, धरती, कानों, मरती, अंधेरे, वैरागी, भूख, सूखा, तन-मन कान, हथेली, पहाड, ताल, पल, सिर।

सीता निर्वासन :-

आज, सरजू, कंधा, बैठ, उलट, पलट, हताभ, हत्भागी, बसना, प्रिया, गेह, आंसू बछडा, सांस, आंख, कान, हांथ, भाग मुस्कायें, मुरझी-मुरझी,।

भूमिजा :-

पैर, हांथ, आंख, नाव, मुंह, कपोल, गोद, मुख, कान, नाव, नभ, लाल, पथ, पानी, दिन रात, सुख, तलवे, देह, पलक, ओठ, परनर, शिर, लहू, आंसू, तन-मन, शाप, घुटने, फूल, दांतों, जीभ, वसुधा, बांह, कोख,माथ, गोद, गाल, धरती।

लवकुश युद्ध :-

मन, मगन, मुख, सुखी, रथ, शीश, चलना, आंखो, पैर गुनते, जग, हाथ, मोह, मरने, दुख, पवन, रोने, दिन, घोडा, फूल, शर, पयान, सजवाते,।

प्रिया या प्रजा :-

चढ़ाव, पथ, मुख, दिन, मद, मुस्कान, जल, दुःख, फूलों, घर, सन्तान, सुख, देह, बेटी, हाथ, बसन, गेह, तन, नर, मोहती, सुख, पद, उलझाव, गगन, कान, हाथ।

रामराज्य :-

गगन, निशा, पथ, सुख, दुखों, वसुधा, देह, हाथ, नैन, दया, धरती, पलकों, उर, मुसकरायें, सूरज, तन, पद, मुख, कानन, सुमनों, काज, नाव, छाती, नीर, धरा, दिन, राती, पीर, माथ, रज, भाल, मुस्काकर, मानव, कंध, जगत वसन, फूल,।

अरूण रामायण :-

नीर, गगन, छाती, नाव, आंसू, मुंख, नयनों, उर, बादल, मुस्कान, घर, ओठो, रवि-शशि, आंखे, बांह, पंकज, पत्तों रथ, उर, प्यार, कानन, देह, पथ, हाथ, घर।

जानकी जीवन :-

सुख, बुढापे, मुंह, शोक, देह, खान, पान, घन, लखती, जग।

अग्निपरीक्षा :-

पथ, नभ, शीश, मुस्काए, तन, दुःख, मुख, कान, नीद, नैन, आंसुओं, दिन, गला पलके, नाव, कंधो, दाएं-बाएं, गोदी, हाथ, प्रेम, फूल, घुन, ताने, देह, रात, खिले, राह, नयन, धरती, मानव, कपडे, हवा, पैर पांव, हथेली, छाती, होठो, नीर, मुंह, हंसे, आंसू, घोडों, ललाट।

ध्वयांत्मक शब्द/देशज शब्द :-

वैदेही वनवास :-

घर-घर, भर-भर, फूंक-फूंक, कल-कल, बह-बह, घर्घरित, थर्राता, कर-कर, धू-धू, टपकती, लहलही, गूंज-गूंज, छिक-छिक, अभर, छिटिक-छिटिक, झल-झल, घराघर, छलांग, चढ़ा-चढा, हाहाकार, घूम-घूम, मंह-मंह-मंह मंह।

प्रवाद पर्व :-

धू-धू, धकेले, हरहराने, हिल्लोलित, हाहाकार, खटखटाओं, सन्नाटा।

अग्निलीक :-

बिलम, ताबड़तोड अखर, छलछला, ठौर, लद, सराप, पसार, चिघाड, घमघमाहट, थर्रा, हिनहिनाहट, गरज, चरमराये, पखार, भीतर, खिसलने, हूंह, धकधक, चकनाचूर विसार, अथक पथक, कलपती, धधक, थपथपा, अर्राते, हाहाकार, झलमलाता, जगमगाता, ढील, समेटकर,।

सीता निर्वासन :-

धडाम, कंपकपा, छलचले, टप,टपकी, ढोंग, घुट-घुट, फूट, घर-घर, झुरमुट, छलकती, दहाड़, सिसक,।

भूमिजा :-

तुतलाहट, अचपल, गूंज, हिरनौटा, ठूंठ, भीतर, भंग, हिलकोर, पग-पग, डग-ठाढ, झंझकार, ललकार, रह रह, चीत्कार, चकमक, चांपने, हाहाकार, देहात, आंधी, बरबस, दंग, दहिना, होडो, संहार, टिमटिमा, धरकर, धिक्कार, संग, गदगद, पसार, सूंध, दंभ, आंच, घर-घर।

लवकुश युद्ध :-

धमकाता, मारग, यकदम, असगुन, चखाऊंगा, फड़की, ठौर, अकुलाती, पछाड टारेगे, ललकारा, टकटकी, चिक्कार, धराया, जै-जै कार,।

प्रिया या प्रजा :-

विसारों, हाहाकार, हलचल, जयकार, अखरेगा, पधारे, धरेगी, हहर-हहर, गाजती-बाजती, गूंज निहारा, ठौर-ठौर, घर-घर।

रामराज्य :-

लहराती, बांधते, मचलती, भोगते, जगमगाते, झर-झर, गूंजे, गरजती, बरसती, संभार, विचरती,

बांधकर, कण-कण, क्षण,क्षण, गदगद, धरकर, भरकर, झूम-झूम, मझधार, भरमाया, फूट-फूट, घट-घट, गूंजा, मंद-मंद चराचर, ।

अरूण रामायण :-

थर-थर थर, ठांव, हहराती हा-हा-हा, घर-घर, तना-तना, भीतर, कलकल, छल-छल-छल, झरर, झरती, ढुलका, ठांव।

अग्निपरीक्षा :-

पल-पल, जयजयकार, झनझना, दल-दल, धधकती, हलचल- खलबल पसारे, दशकंधर, सरसाने, छलाछल।, उमडती, भर-भर गूंज, घुंकारो, रह रह घर-घर, झायं-झायं धुंकार, समूचे भीतर, थर-थर, कर-कर, ललकारा, टप-टप-टप, छल-छल, कल-कल, धांय-धांय, सांय-सांय, ।

विदेशज शब्द :-

वैदेही वनवास :-

अजब, समा, विदा, बेबसी, सेज, परदा, सहेम, कुहरा, फबीले, कराह, कलेजा, गजरे।

प्रवाद पर्व :-

दस्ते, फलक, दस्तक, तरासते, तराश, बावजूद, विदा, आवाज, संगमरमर, दलान, हवा।

अग्निलीक :-

परदा, उदास, चेहरे, आनन-फानन, लगाव, वेचैन, चांद, बदहवास, चादर, दर्द, हक्के बक्के।

सीता निर्वासन :-

विदा, रिस्ता, बेजोड, गुमसुम।

भूमिजा :-

सुफल, विदा, खरतर, वदन, ।

लवकुश युद्ध :-

बदनाम, बेसुमार, पयान, चैलेंज, वरना, हरगिज, ख्याल।

प्रिया या प्रजा :-

वदन, सेफालिका, तल्लीन।

रामराज्य :-

सहवास, आनन, ।

अरूण रामायण :-

जहर, राह, चांद, ।

अग्निपरीक्षा :-

चेहरे, मुखडा, उजडे, बदनाम, खैर, चांद, खामोश, जामा, मजाक/दिलगीर, मौत।

2- अलंकार एवं उपमान संयोजन :-

"अलंकारोति इति अलंकारः" कह कर भारतीय आचार्यो ने अलंकार की महत्ता स्थापित की है। आचार्य दण्डी ने लिखा है- "काव्य शोभा करान् धर्मान् अलंकारानि पच्छते"[1] के अनुसार काव्य के शोभा कारक धर्मो को अलंकार कहा जाता है। राम कथा के प्रारम्भिक काव्यों में स्वतः आयातित अलंकारो का प्रयोग हुआ है। किन्तु पाण्डित्व एवं आर्चार्यत्व प्रदर्शन हेतु अलंकार प्रधान राम काव्य लिखे जाने लगे श्लेष काव्य एवं विलोम काव्य इसके उदाहरण है। हिन्दी में भी छिट पुट प्रयोग इस प्रकार के दिखाई देते है। आधुनिक काव्य में द्विवेदी युग छायावादी प्रवृत्ति एवं छायावादोत्तर प्रवृत्तियों के अनुकूल इन काव्यों में अलंकारों का प्रयोग हुआ है। वैदेही वनवास, जानकी जीवन, अरूण रामायण, इत्यादि काव्य ग्रन्थों में प्रायः सभी अलंकार मिलते है, जबकि प्रवाद पर्व, अग्निलीक, भूमिजा, उत्तरायण, में अपेक्षाकृत नवीन पद्धति के अलंकार अधिक प्रयुक्त है।

यहां आलोच्य काव्य ग्रन्थों में प्राप्त अलंकारों को केन्द्र बिन्दु बनाकर उनका संक्षिप्त लक्षण और उदाहरण के रूप में आलोच्य काव्य ग्रन्थों की पंक्तियां उद्धत कर अलंकार प्रयोग सम्बन्धी कवियों के वैशिष्ट का मूल्यांकन किया जायेगा। यहां ये स्मरणीय है कि अलंकारों का विभाजन शब्द और अर्थ के आधार पर ही किया जायेगा।

प्रमुख अलंकारो के उदाहरण दृष्टव्य है-

अलंकार :-

आलोच्य काव्यों में शब्दालंकार -

शब्दालंकारों में मुख्य रूप से अनुप्रास, यमक, वक्रोक्ति और श्लेष अलंकार के उदाहरण मिलते है। अतः अलंकारों के लक्षण और उदाहरण देना समीचीन प्रतीत होता है।

1- अनुप्रास :-

समान वर्णो के न्यास को अनुप्रास कहते है। भामह एवं मम्मट ने लिखा है-

(क) "रूप वर्ण, विन्यास अनुप्रास प्रचच्छते"

(ख) "वर्ण साम्यम् अनुप्रास"[2]

आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है स्वरों में विषमता होने पर भी केवल व्यजनों के साम्य में अनुप्रास अलंकार होता है।

"अनुप्रास शब्दसाम्यं वैषम्येऽपि स्वरस्य यतः"[3]

मोटे तौर पर अनुप्रास के वर्ण अनुप्रास और पदानुप्रास तथा वर्ण के छेक, वृत्त, श्रुत्य, और अन्तय अनुप्रास कहे गये है। बात यह है कि वर्णो की आवृत्ति से एक विशेष प्रकार का संगीतमय नाद उत्पन्न होता है। जो कृति की कलात्मकता में वृद्धि करके रसाभिव्यक्ति को पुष्ट करता है। इसी अर्थ में तो वह शोभा कारक होता है। आधुनिक सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में अनुप्रास विधान प्रयास जन्य नहीं है, फिर भी ये नहीं कहा जा सकता कि इनके द्वारा उत्पन्न सौन्दर्य का प्रयोग कवियों ने नहीं किया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

1- छेकानुप्रास :-

छेक विदग्ध (रसिक)पुरूष को कहते है उससे प्रयोग किये जाने से यह छेकानुप्रास है। साहित्य

दर्पणकार ने व्यंजनों की एक बार आवृत्ति को ही छेकानुप्रास माना है-

''ललित लताओं को अब वे थी चूमती'' [4]

''तब कितनी कपट कला

आंखो में भर तुमने'' [5]

''भोले भावों के दल सीचे'' [6]

''यह कैसी वैश्वानरी विवशता है'' [7]

''जाओ जाकर घर पर विश्राम करों'' [8]

''कियत बार विलोक पाद-पुनीत वे।'' [9]

''भ्रम में सब भूल गयी सीता यह क्या अनर्थ अब करती है।'' [10]

''नलिन विलोचन, विधुमुख आयतकर्ण

तरूण तपस्वी का, प्रिय दर्शन रूप'' [11]

''पावन पति वृत्ति की रेक विश्व ने जानी'' [12]

''सह सकती वैदेही अपयश विष डंक नही'' [14]

वृत्यानुप्रास :-

जहां एक य अनेक वर्णो की आवृत्ति अनेक बार हो वहां वृत्तयानुप्रास होता है जैसे-

''प्रभा प्रभावित थी प्रभात को कर रही।

विहंग-वृन्द की केलि-कला कमनीय थी।'' [14]

''कोमलतम किशलय से कान्त नितान्त वन'' [15]

''केकी कीर कपोत कोकिला कलित कंठ से'' [16]

''आकुल व्याकुल भावों का/भीषण महाकाव्य'' [17]

''तुम कौन हो कहा की हो क्या तुम्हारा कहीं कोई भी नहीं

कोई सगा सम्बन्धी'' [18]

''कलिलता कवि कोविद क्या कहे,

ललितता लखती ललचा रही।'' [19]

''माता के मन की क्षमता को मै तुम्हें बताने आया हूं

माता के मन की समता को मै तुम्हें बताने आया हूं।'' [20]

''सुरमित सुचि शान्ता वालि वाही नहीं है'' [21]

''इस बार बेकली बहुत बढ़ी मुरछा से हुई अचेत सिया'' [22]

''सभ्यता सुमन में संस्कृति का सौरभ अषेश'' [23]

''संशय प्रसून में शक्ति सुरभ भरनी होगी'' [24]

''सीते संताप शोक कैसा'' [25]

"नीरज नीर निरभ्र परम रमणीय" [26]

श्रुत्यानुप्रास :-

जहां एक ही स्थान से उच्चरित होने वाले अनेक व्यजनों की आवृत्ति हो वहां श्रुत्यानुप्रास होता है।

"उसी पूत पद पोत सहारे विरह उदधि को पार करूंगी
सुन्दर वर वदन ध्यान कर सारा अन्तर तिमिर हरूंगी" [27]

"परिमल पराग मकरंद पगा नित नूतन सुषमा से मंडित" [28]

"सब सभ्य सभासद, महीपाल,/गुंजरित गगन में एक नाद,
सीता सुमेरू से भी उतुंग,/युग-युग तक सीता निष्कलंक।" [29]

"उसके तन मन में नित नवीन सुधिमयी पीर
बीती बातो की याद सताने लगती है।" [30]

"राम चन्द्र कहने लगे सुनो लखन के तात
सीता से कहना न तुम वनोवास की बात" [31]

"जगदेव देवेश को थे मनाते
महा-खेद खंभार था खेचरों में।" [32]

"आतंकित खग मृग कृमि किन्तु भुजंग
दूर-दूर तक रहे न फटके पास" [33]

अंत्यानुप्रास :-

जहां छन्दों के अन्तिम चर्णो में समानता हो वहा अत्यांनुप्रास होता है- जैसे-

"है उसकी दिव्यता दमक किरणें दिखलाती
जगी ज्योति उसको ज्योतिर्मय है बतलाती" [34]

"सौमित्र देखने आकाश बार-बार/संयुक्त उक्ति से हुए युक्तास बार-बार" [35]

"झोलियां भर भर गई उस रंक की,/जो दया की भीख केवल मांगता।
ठोकरें दर-दर मिली जिस दीन को,/द्वार से खाली न फिरना जानता।।" [36]

"रथ खडा महल के द्वारे पर सामग्री जो चाहो धर लो
मै साथ आपके चलता हूं जल्दी से तैयारी कर लो" [37]

"वैदेही की विनती सुनकर फट गयी धरा
नीचे से आता सा प्रकाश भू पर विखरा" [38]

श्लेष अलंकार :-

शिलिष्ट पदों के अनेक अर्थो का अविधान होने पर श्लेष अलंकार होता है।

"शिलष्टैः पदैरनेकार्थभिधाने श्लेष इत्यते।/वर्ण प्रत्ययलिङनां प्रकृत्योः पदयोरपि।।" [39]

अर्थात यदि पदों के अनेक वाच्य अर्थ हो और वह उन्ही अर्थो की अभिव्यंजना भी करते हो तो वहां

श्लेष अलंकार होता है। प्रायः कवि अनेकार्थक बोधी शब्दों के प्रयोग से यह चमत्कार उत्पन्न करता है।

''बिन्दु निचय ने रवि के कर से मोती पाया'' [40]

''सरयू सर ही नही सरस वन है लहराती'' [41]

''सुमनस मानष हरते थे सारे सुमन'' [42]

''मृदु शब्द सुमन लक्ष्मण की छाती'' [43]

''अपने वृत्ति से निष्कासित और विच्छिन्न'' [44]

''उनके जीवन रस में केवल उज्जवला लहर'' [45]

''की भेंट सीता ने वहीं, वर-माल श्री रघुवीर को।'' [46]

''झर रहे प्रेम रस स्त्रोत निरन्तर देखो/सुमनो का मन आमोद भरा है कैसा'' [47]

''सहेज दो जीवन जीवनेस को/रखे न आशा निज नाम धाम की।
तरंग माली इसको समेट ले/सप्रेम दोनो मिल एक रस हो।'' [48]

अर्थालंकार :-

अर्थालंकार वहां होते है। जहां अलंकार का सौन्दर्य शब्द पर न निर्भर होकर उसके अर्थ पर निर्भर करता है, किसी शब्द के स्थान पर उसके पर्यायवाची शब्द का प्रयोग कर दिये जाने पर भी जहां सौन्दर्य नष्ट नहीं होता वहा अर्थालंकार होता है।

(1) उपमा अलंकार :-

अर्थालंकार में उपमा का महत्वपूर्ण स्थान है। कुछ आचार्यो ने इसे अनेक अलंकारो का बीज भूत कहा है। उपमा के चार अंग गये है। उपमेय जिस वस्तु का उपमान के साथ सादृश्य का वर्णन होता है उस वस्तु को उपमेय कहते है। कवि प्रायः मानव और उसके व्यापार को उपमेय रूप में प्रयुक्त करता है। उपमेय की तुलना जिस वस्तु से दी जाती है वह उपमान कहलाती है। उपमेय और उपमान में समान रूप से पाये जाने वाले धर्म को साधारण धर्म कहा जाता है तथा उपमेय और उपमान को समानधर्म के साथ जोडने वाले शब्द को वाचक शब्द कहा जाता है। उपमा की परिभाषा करते हुए आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है-

''साम्यं वाच्यमवैधर्म्य वाक्यैक्य उपमा द्वयोः'' [49]

''आह! वह सती पुनीता है।/देवियों सी जिसकी छाया।।'' [50]

''ज्योंही पति प्राणा ने पति-पद पद्म का।/स्पर्श किया निर्जीव-मूर्ति सी बन गई।'' [51]

''व्याल के सदृश कुण्डली मार/लखन की आत्मा को घेरा होगा।'' [52]

''भू धर सी लक्ष्मण की काया'' [53]

''मेरे प्राणों में आंधी की तरह घुमडता रहता है'' [54]

''जो पिता की भांति पालन करते है/और भाई की भांति स्नेह देते है।'' [55]

''जन जन के हित के लिए/सीमा पर नियुक्त किसी रक्षक-सा'' [56]

यज्ञ के चारूपात्र सी पवित्र तथा मांगलिक सीता को/लक्ष्मण

तुम्हारी राज्य-सीमा पर तुम्हारे ऐतिहासिक निर्णय के/प्रतीक स्वरूप
काग-ग्रास सा रख आएंगे।'' [57]

''भले ही वह कर्म/धारदार अस्त्र की भांति/न केवल देह
बल्कि उसके व्यक्तित्व और/सारी रागात्मकताओं को भी काटकर फेंक दें।'' [58]

''सीता गंगा-सी है पवित्र हे महाराज !'' [59]

''पतझर के पत्तों-सा ही शब्द-पत्र मर्मर'' [60]

''धन में विद्युत सम छिपी मातु प्रभु मन में।।'' [61]

''बालक से विवश अम्ब छूटी, बृाम्हण से बृम्ह-क्रिया छूटी।
किंवा तरू मूल-विहीन हुआ, रामानुज राम-प्रिया छूटी। [62]

''त्रण तुल्य प्राण देती मैं देवर देरी करती न अभी'' [63]

''मै ही रह जाऊंगा ठूंठ-समान'' [64]

''वृद्ध पिता के सजल स्निग्ध वे नेत्र !/शिशिर निशा के हिमाच्छन्न शशितुल्य'' [65]

''चकोरियां सी कर मुग्ध नारियां/विदेहजा राजित चन्द्र की कला।'' [66]

''मझधार नाव को छोड़ चले/क्या पूंछ रहे हैं आज कुशल।
बच्चों से नाता तोड़ चले।/क्या पूंछ रहे हैं आज कुशल।'' [67]

रूपक अलंकार :-

अत्यन्त सादृश्य स्थापना के कारण से प्रसिद्ध भेद वाले उपमेय और उपमान में अभेद स्थापित किये जाने पर रूपक अलंकार होता है। आचार्य मम्मट ने लिखा है

''तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः।'' [68]

आचार्य विश्वनाथ ने निषेध रहित उंपमेय रूपित उपमान के आरोप को रूपक अलंकार कहा है।

''रूपकं रूतोपाद्वि (पो वि) षये निरपह्नवे'' [69]

''सदा आपका चन्द्रानन अवलोके ही मैं जीती हूं।
रूप-माधुरी-सुधा तृषित बन चकोरिका सम पीती हूं।।'' [70]

धीरे-धीरे तिमिर-पुंज था टल रहा।/रवि-स्वागत को ऊषा-सुन्दरी थी खडी।'' [71]

''जन जीवन में समृद्धि,/शान्ति की तृप्ति दायिनी
फसल सुखद मंगल विधायिनी उगती है।'' [72]

''इतिहास से परिधानित होने दो,/लगे कि/इतिहास
मानवीय विष्णु की कंण्ठ श्री/वैजयन्ती है।'' [73]

''सत्ता के गोमुख पर बैठकर/उसके सारे शक्ति-जलों को
अपने ही अभिषेक के लिए/सुरक्षित रखना
यह कौन सा दर्शन है लक्ष्मण?'' [74]

''मन मरालों के मचल कर मुक्त मानस तर रहे है।'' [75]

''सह सकती वैदेही अपयश-विष-डंक नही !

संशय-प्रसून में सत्य-सुरभि भरनी होगी'' [76]

''वाष्प-वाहिक-वेष तज फिर अम्बु बन।/मोह-मलयज-संस्पर्शन मात्र से'' [77]

''ज्वार विविध विचार के हदयाब्धि में आने लगे।

लहर बनकर ओष्ठ तट से शब्द टकराने लगे।'' [78]

''ओ विकल्पिक पुत्र मेरे/परिस्थितियां धेनु है,

दुहो इनको निष्ठर अंगुलियों से दुही।'' [79]

उत्प्रेक्षा अलंकार :-

उत्प्रेक्षा का व्युत्पत्ति परक अर्थ होता है। किसी वस्तु को प्रकष्ट रूप में देखना **मम्मट** ने लिखा है कि अपकृत के साथ प्रकृति की सम्भावना होने पर उत्प्रेक्षा अलंकार होता है।

''सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्'' [80]

आचार्य विश्वनाथ ने वाच्च और प्रतीयमान की दृष्टि से शाब्दी और अर्थी उत्प्रेक्षा की कल्पना की है।

''भवेत, संभाषनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना।/वाच्या प्रतीयमाना सा प्रथमं द्विविधा मता।।

वाच्येवादि प्रयोगे स्वाद प्रयो में परा पुनः।/जाति गुंणः क्रिया द्रव्यं यदुत्प्रेक्ष्यं द्वपोरवि।।''[81]

उत्प्रेक्षा में संम्भावना पर अधिक बल दिया जाता है। प्रायः मन, मानव, मनुहु जन, जिमि, ज्यो, वाचक शब्दों से उत्प्रेक्षा अलंकार की व्यंजना की जाती है। हिन्दी में वस्तुत्प्रेक्षा, हेतुत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा की चर्चा की जाती है। सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों से कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''मृदृ शब्द सुमन/लक्ष्मण की छाती पर/बन बज्राघात लगे

लो गिरे धरा पर,/ज्यों हिमाद्रि का स्वर्ण श्रंग।'' [82]

''वह वक्ष कि जिसने/मेघनाद के शक्ति बाण का

झेला हो आघात प्रखर/ऊपर नीचे, नीचे ऊपर

इस गति से उठ उठ बैठ बैठ,/लगता जैसे-अगले ही क्षण

हो कर विदीर्ण/बिखरेगा राघव के चरणों पर/शतदल सा'' [83]

''बाहर की हवा का हलका-सा झोंका/जिसे ऐसे कंपा जाता है

मानो भूकम्प आया हो'' [84]

''मानो मैं ईश्वर हूं/और जीवन उसी लीक चलेगा जिस पर मैं चलाऊंगा'' [85]

''बह रही सरयू हिलोरें उठ रही निर्मल सलिल में।

ज्यों मनस्वी को मिला हो दान का संतोष मन में।।'' [86]

''मातृ मंदिर देवगृह सम भव्य सुंदर लग रहे हैं।

सत्य के आचार मानो भूमितल पर जग रहे है।।'' [87]

"कोटि-कोटि नक्षत्र खचित आकाश,

अमित नेत्रमय मानो श्याम शरीर" [88]

"तू स्वतः अमर वरदानमयी शोभा अशेष

मंगलमय विश्व-हेतु तेरा आश्रम-प्रवेश!" [89]

"अध्यात्म-प्रभु-पूजोपचर्या के लिये

देने लगी मकरंद मानो खीच के।" [90]

"शुक-कपोत-पिक-मैना, श्यामा, खंजनादि का सदा बिहार।

मानो उस पुनीत-आश्रम में, सतत बसन्ती था विस्तार।।" [91]

"समय-गति दिखा के मित्र ज्यों हो सिखाता

सरस सहृदता का पाठ भूले हुओं को-" [92]

प्रतीप अलंकार :-

प्रसिद्ध उपमान की निष्फलता का यदि वर्णन हो तो प्रतीप अलंकार होता है। साहित्य दर्पणकार ने लिखा है-

"प्रसिद्धस्योयमानस्योपमेयत्व प्रकल्यनम्

निष्फलत्वाभिधानं वा प्रतीपर्यामति कथ्यते" [93]

आचार्य **मम्मट** ने दो प्रकार का प्रतीप बतलाते हुए एक में उपमान की व्यर्थता का और दूसरे में उपमान को उपमेय बना देने का उल्लेख किया है-

"आक्षेप उपमानस्य प्रतीपमुपमेयता।

तस्यैव यदि व कल्प्या तिरस्कार निबन्धनम्।।" [94]

"पं. राज जगन्नाथ ने प्रतीप को उपमा का ही एक भेद माना है।" [95]

तात्पर्य ये है कि प्रतीप में उपमा का उलट कथन होता है। कहीं उपमान की व्यर्थता कहीं उपमान को उपमेय बनाना इसके प्रमुख तत्व है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

"तेज जिसकी पावनता का।

नही पावक भी सह पाया।।" [96]

"मैने अवनी में अब तक देखी नहीं।

वे मनोज्ञता-मानवता की मूर्ति है।।

भरी हुई है उनमें भवहित-कारिता।

पति-परायणा हैं पातिवृत-पूर्ति हैं।।" [97]

"व्यक्ति का

निर्वैयक्तिक उदार चरित में परिणत हो जाना

संयासी की गैरिकता से भी

अधिक भयानक होता है राम !'' [98]

''सीता सुमेरू से भी उतुंग'' [99]

''पावन सरोजिनी-सा सीता का दिव्य गात

गंगा से भी जानकी सुनिर्मल है राजन !

जैसा सुन्दर है तन उसका, वैसा ही मन

निर्मलता की ऐसी नारी भू पर न कहीं

जानकी-सदृश कोई नारी ऊपर न कहीं।'' [100]

''आज सोलह वर्ष बाद

जब बीती बातें किसी पूर्व जन्म की घटनाएं लगती है-

तुमने अचानक/मेरी आंखो के सामने अपनी माया पसार दी है

और मेरा निभृत लोक चरमराने लग गया है!'' [101]

''दायी ओर विराजमान उनकी छाया यथा माण्डवी।'' [102]

व्यतिरेक अलंकार :-

आचार्य मम्मट के अनुसार उपमान की अपेक्षा उपमेय में अधिक्य का वर्णन किये जाने पर व्यतिरेक अलंकार होता है-

''उपमानाद यदन्यस्य व्यतिरेकः स एव सः।'' [103]

साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ ने उपमान की न्यूनता में भी व्यतिरेक माना है-

''आधिक्यमुपमेयस्योपमानान्न्यूनताऽथवा।/व्यतिरेकः'' [104]

तात्पर्य ये है कि व्यतिरेक में उपमेय के उत्कर्ष वर्णन य उपमान के अपकर्ष वर्णन होता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार है-

''आह! वह सती पुनीता है।

देवियों सी जिसकी छाया।।

तेज जिसकी पावनता का।

नही पावक भी सह पाया।।'' [105]

''है प्रधानता आत्मसुखों की विश्व में।

किन्तु महत्ता आत्म-त्याग की है अधिक।।

जगती में किसे स्वार्थ प्यारा नहीं।

वर नर है परमार्थ-पंथ के ही पथिक।'' [106]

''तो हमसे तो ये जानवर ही अच्छे हैं,

नियम से काम, नियम से आराम,

किसी बात की कोई चिन्ता नहीं।

पर आदमी को कभी चैन नही मिलता,

सोता है तो सपने देखता है, जागता है छटपटाता है।'' [107]

''नही मिलेगी ऐसी उर्बर भूमि

नही मिलेगा ऐसा सुन्दर देश

कही चराचर किंवा त्रिभुवन मध्य,

ऐसी मिट्टी नही मिलेगी तात!'' [108]

अर्थान्तरन्यास अलंकार :-

आचार्य मम्मट के अनुसार सामान्य का विशेष से अथवा विशेष का सामान्य से साधर्म य व्ययिधर्म के द्वारा समर्थन किया जाए वहां अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है-

''सामान्यं व विशेषो व तदन्येन समर्थ्यते।

यत्तु सोऽथन्तिरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा।।'' [109]

''होती है सुर-सरिता अपुनीता नहीं।

पाप परायण के कुत्सित आरोप से।।

होगी कभी अगौरविता गौरी नहीं।

किन्हीं अन्यथा कुपित जनों के कोप से।।'' [110]

''कज्जल गृह में करके निवास

निर्मल कोई रह सका भ्रात?

साम्राज्ञी सीता वही आज।

रघुवर की प्रेयसि बनी आज।।'' [111]

''दमन-नीति का अर्थ यही है, है वह राज्य-नाश प्रस्ताव।

पड़ता नहीं सतत जनता पर, अस्त्र, शस्त्र का सफल प्रभाव'' [112]

''मर्यादा जहां नहीं, आस्था भी वहां नहीं

मानव-जग में उठती है शंका कहां नहीं

त्याग ही प्रेम को आलोकित कर पाता है

सुख-दुख का चक्र काल ही नित्य घुमाता है!'' [113]

''हा धर्म विरूद्ध स्त्रियों को, मिलता न स्वर्ग मे ठौर कहां।

स्त्री के लिये पति से बढ़कर, जग में कोई पूज्य नही।'' [114]

''सुसाधनों का जग में आभाव क्या,

आसाध्य कोई शुभ साध्य है नहीं,

अड़ी-खड़ी है करबद्ध सिद्धियां

उन्हे सुधी साधक सिद्ध चाहिए।'' [115]

"राम और सौमित्री का जैसा अन्तर-स्नेह।
सूक्त सार्थ वह हो रहा, एक जीव दो देह।
एक गुफा में दो-दो मृगपति, एक म्यान में दो तलवार" [116]
"शूली से भी कष्ट दा ,होती स्त्री को सौन।
सौत न देना सांवरा, दे दे चाहे मौत।" [117]

दीपक अलंकार :-

प्रस्तुत य अप्रस्तुत दोनो के गुण क्रिया या धर्म द्वारा संयुक्त होने पर दीपक अलंकार माना है-

(अ) "सकृदवृत्तिस्तु धर्मस्य प्रकृतापकृतात्मनाम्
सैव क्रियासु वह्वीषु कारकस्येति दीपकम।।" [118]

(ब) "अप्रस्तुतयोदीपक तु निगद्यते।
अथ कारकमेकं स्यादनेकासु क्रियासुचेत।।" [119]

कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

"खग-मृगों के शावकों को मातृ सम अनुराग देती।
निर्बलों का बन सहारा डूबते को तार देनी।।" [120]
"अपनी आंखो को नहीं अश्रु से सजना नुम" [121]

असंगति अलंकार :-

कार्य एवं कारण यदि भिन्न-भिन्न आश्रयों में वर्णित हो तो असंगति अलंकार होता है। साहित्य दर्पणकार ने इसका लक्षण इस प्रकार लिखा है-

"कार्यकारण योर्मिन्नदेशतायामसङ्गतिः।" [122]
"तन वहां तुम्हारा है लेकिन मन यहां साथ" [123]

विरोधाभास अलंकार :-

आचार्य मम्मट ने कहा है वास्तव में विरोध न होने पर भी जहां पर विरोध का आभास हो वहां विरोधाभास अलंकार होता है-

"विरोधा सोऽविरोधेऽपि विरूद्धत्वेन यद्वचः" [124]
"अनुताप बहि में दग्ध/मुझे शीतल करने," [125]
"अधरों पर हास" [126]
"है हर प्रकार से मेरा निर्णय-मर्म मौन
मेरा सब कुछ है मौन किन्तु मै मौन नहीं"
पी रहा अमृत के लिए हाय, मै आज जहर" [127]
"वे निठुर, नहीं पर निष्ठुर उनका निर्णय है
वे दयावान, पर निर्णय उनका निर्दय है" [128]

''उस भक्ति-शक्ति को त्याग यहां, आधार-हीन आधार बना'' [129]

सन्देह अलंकार :-

समता के कारण जब उपमेय में उपमान के संसय का वर्णन होता है। तब सन्देह अलंकार होता है।

''सन्देहः प्रकृतेऽयस्य संशयः प्रतिभोत्थितः।।
शुद्धो निश्चयगर्भोऽसौ निश्रयान्त इति त्रिधा।'' [130]

''मै देख रहा/प्रतिमा अकूल लावण्य भरी
वनदेवी है साक्षात् या कि साम्राज्ञी है
आनन विषण्ण उद्विग्नमना'' [131]

''क्या मै ईश्वर हूं?/मानव नहीं हूं क्या ?'' [132]

''कौन जाने कृपा है या रोष है'' [133]

''वैराग्य-रागनी का रागी या बन बद्धित अनुराग चला'' [134]

''त्रिभुवन-द्युति-द्योसा, या त्रिलोकेश-जाया-
शचि-रति-कमला की या उमा-स्वामिनी है।
स्वगत प्रकट माया विश्व-आभा-निकाया-
विरति-निरति-दात्री दिव्य ही दामनी है।'' [135]

''मेरे भीतर प्रकाश है अथवा अन्धकार ? '' [136]

अपन्हुति अलंकार :-

उपमेय का निषेधकर यदि उपमान की स्थापना की जाये तो अपन्हुति अलंकार होता है-

''प्रकृतं प्रतिध्यान्यस्थापनं स्यादपहुनुतिः।'' [137]

''मैं नहीं राजपुत्री,/मै धन्या धरती की,'' [138]

''यह राम नहीं/कंकाल शेष हतभागे का
जो सीता निर्वासन से/है अस्तित्व हीन'' [139]

''नहीं, यह मोह नही
यह क्षोम है जो यन्त्रणा बनता जा रहा है।'' [140]

''ये आंसू नही है गुरूदेव, ये अंगारे हैं
यह मेरे जीवन की आग है।'' [141]

''मेरा वन-निर्णय नहीं बन्धु ! जैसे-तैसे
वाल्मीकी-विपिन की सीमा तक ले जाना तुम।'' [142]

''तुम मानव आज नही निर्मम भगवान आज!'' [143]

''चोटे चली चटकती कलियां नहीं खिली।
छूटे महा प्रखर शायक पंच बाण के!

भागों बचों अब वियोगिनियों वियोगियों।

फैले सुधांशु कर ग्राहक प्राणि प्राण के।'' [144]

मानवीकरण अलंकार :-

यह पाश्चात्य काव्य शास्त्र से आगत अलंकार है इसमें मानवेतर उपादानों को मानव के समान हर्ष, शोक इत्यादि भावनाएं व्यक्त करते हुए दिखाया जाता है। प्रकृति के उपादानों को मनुष्य के समान आचरण दिखाना ही मानवीकरण अलंकार है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''तुम हो मूर्तिमती दयालुता दीन पर द्रवित होती हो।'' [145]

''विनोद-मग्ना सरयू-सरी थी।।'' [146]

''उदारता है उनकी जीवन-संगिनी।

पर दुख-कातरता है प्यारी-सहचरी।।'' [147]

''भुज फैलाये भर लेने को अंक,

मुझे आत्मीय लग रहे।

सगे सहोदर भूतनया के

रोमांचित है भाग जग रहे'' [148]

अतिशयोक्ति अलंकार :-

जहां प्रस्तु वस्तु का असाधारण रूप से बढ़ा चढा कर वर्णन किया जाये वहां अतिशयोक्ति अलंकार होता है। विश्वनाथ ने इसे इस रूप में परिभाषित किया है। मूलरूप से अध्यवसान रूपा अतिशयोक्ति का लक्षण दिया गया है-

''सिद्धत्वेऽध्यवसायस्यातिशयोक्तिर्निगद्यते।

भेदेऽव्यभेदः सम्बन्धेऽसम्बन्धस्त द्विपर्ययौ।।'' [149]

''ब्रहाण्ड उठाऊं कन्दुक इव/अनुशासन पा।

पाकर आदेश राम का वे ही लखन आज,

अश्वों की वल्गा तक/संभाल नही पाते,'' [150]

''कोमल सी कुसुम लता पर

गज गयंद का बल।'' [151]

स्मरण अलंकार :-

साहित्य दर्पणकार ने कहा है कि तुल्य पदार्थ के अनुभव से किसी पदार्थ का स्मरण होने से स्मरण अलंकार होता है-

''सहशानुभवाद्वस्तुमृतिः स्मरणमुच्यते'' [152]

''यह कितनी क्रूर और/अमानुषी लीला है प्रिये!

जो प्रत्येक बार/हमारे और तुम्हारे बीच

आकाश की ऊंचाइयां छूती/एक अभेद्य प्राचीन किले कीअन्धी
मृत, बुभुक्षित प्राचीर/प्रतिप्राचीर सी आ खडी होती है।'' [153]

''प्रिया ने उस दिन सच कहा था राम कि/व्यक्ति जब
इतिहास को समर्पित हो जाता है/तब ऐसी त्रासदी का घटना
अनिवार्य हो जाता है?जीवन भर इतिहास का सन्धान करने वाला
यह भूल जाता है कि/वह व्यक्ति भी है,और/उसके पार्श्व में
कोई एकान्तकांक्षिणी प्रिया खड़ी है'' [154]

''आ रही क्रौचवध-घटना की इस समय याद
है श्लोकवद्ध उस दिन का मेरा वह विषाद'' [155]

''शिलायें देखते अनुमान होता, अहिल्या सी पडी परित्यक्त सीता।
करूं उदगार संचित शक्ति खोयी प्रिया की वीर से मुंह मोडने से।'' [156]

''निज शान्त तम निकेतन में बैठी मिथिलेस कुमारी
हो मुग्ध विलोक रही थी नवनीत जल्द छवि न्यारी,
यह सोच रही थी प्रियतम तन सा ही है यह सुन्दर,
वैसा ही है दृग रंजन वैसा ही महामनोह'' [157]

यमक अलंकार :-

आचार्य भामह ने लिखा है, सुनने में एक समान किन्तु अर्थो में परस्पर भिन्न वर्णो का पुर्नकथन यमक अलंकार होता है।

''तुल्यश्रुतीनां भिन्नानामभिधेयैः परस्परम्।
वर्णनां यः पुनर्वादो यमकं तन्निगद्यते।।'' [158]

आचार्य मम्मट य विश्वनाथ के अनुसार अर्थ के होने पर भिन्न अर्थ वाले स्वरों और व्यजनों के आवृत्ति को यमक कहते है-

''सत्यर्थे पृथगर्थायाः स्वरव्यजन सहतेः
कृमेण तेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते'' [159]

''अर्थे सत्यर्थीभिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः।'' [160]

कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''किसने कहा, मै चरण हूं?
क्या मै तुम्हें चरण दीखता हूं?'' [161]

''अटा अटा में छटा भरी है।'' [162]

''बृम्हा वहां आचार्य थे, हरि-हर स-जाति-स्वरूप थे।
रति-पति स-रति चारण तथा, किंकर स-शचि सुर-भूप थे।।'' [163]

उल्लेख अलंकार :-

आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है, जहां विषम य धर्म के भेद से पदार्थ का जब अनेक प्रकार से उल्लेख किया जाता है वहां उल्लेख अलंकार होता है।

''क्वचिद् भेदाद् ग्रहीतणां विषयाणा तथा क्वाचित।
एकस्यानेकधोल्लेखो यः स उल्लेख उच्यते।।'' [164]

तात्पर्य यह है कि बहुगुण सम्पन्न वस्तु का भिन्न-भिन्न लोगो के द्वारा भिन्न-भिन्न कथन अत्यन्त स्वाभाविक होता है डा. मुरली मनोहर प्रसाद सिंह ने उल्लेख अलंकार के चमत्कार के मूल में तीन बातों का निर्देश किया है। ''वस्तु का भिन्न-भिन्न गुणा से युक्त होना भिन्न-भिन्न लोगों के द्वारा उसका भिन्न प्रकार से कथन, एक व्यक्ति कई प्रकार की दृष्टि भंगियों से उस वस्तु को देखकर वर्णित करता हो।'' [165]

''ये पुराण, ये उपनिषद/ये इतिहास, ये उपाख्यान/सब सम्बोधनहीन हो जाएंगे
जिह्वाहीन हो जाएंगे लक्ष्मण!/जड़ता/सम्बोधनहीनता ही तो है।'' [166]

''शब्द ही सत्य है, शब्द ही धर्म है,/शब्द ही वेद है, शब्द ही ईश्वर है।'' [167]

''राजभवनों और राजपुरूषों से ऊपर/राज्य और न्याय को
प्रतिष्ठापित होने दो भरत!/यदि ये तत्वदर्शी नहीं होते/तो एक दिन
निश्चय ही ये भय के प्रतीक बन जाएगें,/और/तब कौन इसमें
प्रजा बनकर रहना चाहेगा?/राज्य को सामूहिक आकांक्षा का
प्रतीक बनने दो भरत!/प्रजा के भी अधिकार होते है।'' [168]

''तू महाकाव्य की ज्योति, स्वयं तू दिव्य कथा
हे निर्वासिता मैथिली! तू ही काव्य-व्यथा
उर्मिला-विरह से भी तुझमें अब अधिक दीप्ति
तू सभी रसों की स्वयं अलौकिक करूण तृप्ति!'' [169]

''हे जगत वन्द्य नयनाभिराम,/पुरूषोत्तम धर्मध्वज ललाम,
पावन नैतिकता के आश्रय/मेरे प्राणों के इष्ट राम,'' [170]

निदर्शना अलंकार :-

भामह, दण्डी तथा वामन के अनुसार निदर्शना अलंकार वहां होता है जहां कार्यान्तर में प्रवृत करता अपने कार्य से किसी कार्य का बोधन कराता हो-

''क्रिययैव विशिष्टस्य तदर्थस्योपदर्शनात्।
ज्ञेया निदर्शना नाम यथेववतिभिर्विना।।'' [171]

''अर्थान्तर प्रवृत्तेन किंचिंत तत्सदृश्य फलम्
सदसद्वां निदर्शेत यदि तत्स्यान्निदर्शनम्।।'' [172]

''क्रिययैव स्वतदर्थान्वयख्यापन निदर्शनम्'' [173]

आचार्य **विश्वनाथ** ने निदर्शना को परिभाषित करते हुए कहा है जहां पदार्थ सम्बन्ध कहीं संम्भव होता हुआ और कहीं असंम्भव होता हुआ विम्ब प्रतिबिम्ब भाव का बोधन करे वहां निदर्शना अलंकार होता है।

''सम्भवन वस्तुसम्बन्धोऽसम्भवन् वाऽपि कुत्रचित्।
यत्र बिम्बानुबिम्बत्वं बोधयेत्सा निदर्शना। [174]

''यथा अनेक-तत्व मिश्रित है, नभ-सीमित-प्राण-पद-बात।
तथा कहीं उसका क्षम करके, अन्य अंश करता है घात।।'' [175]

''इतनी प्रगाढ़ वेदना काव्य के सृजन-हेतु?
अति दुःख से ही बनता है क्या आनन्द-सेतु?'' [176]

''वह चलकर प्रतिकूल नियति के नियम के।
भव व्यापिनी प्रकृति के प्रबल प्रकोप से।
कभी नहीं बचता होता विध्वंस-है।
वैसे ही जैसा तम दिनकर बोध से।'' [177]

दृष्टान्त अलंकार :-

दृष्टान्त अलंकार में उपमेय और उपमान दो स्वाधीन पृथक-पृथक वाक्य होते है इस अलंकार को परिभाषित करते हुए **मम्मट** ने कहा है उपमान उपमेय और उनके साधारण धर्मो में विम्ब प्रतिबिम्भ भाव होने पर दृष्टांत अलंकार होता है-

''दृष्टांत पुनरेतेषा सर्वेषां प्रतिबिम्बनम्।'' [178]

ऐसी मानता आचार्य **विश्वनाथ** की भी है। वे इसे साधर्मय और वैयधर्म दो प्रकार का मानते है।

''यदि सीता सी सती शिरोमणि, ही भूतल पर कोई नारि।
कर न सके-तो उसका भी, विष्णु, विरंच तथा कामारि।।'' [179]

''कैकेयी सा ईर्ष्या-ममता, करती है मनोर्थ-संहार।
कु पथ-गामियों का सहकारी कभी नही होता संसार।।'' [180]

''यो फूलों की चाह में, बोती हाय! बबूल।
किन्तु मिलेगे अन्त में, तीक्ष्ण नुकीले शूल।'' [181]

एकावली अलंकार :-

इसका अर्थ है एक लडी य माला जहां पूर्वोत्तर कथित प्रत्येक वस्तु का विशेष्य विशेषण भाव से समर्थन य निषेध हो वहां एकावली अलंकार माना जाता है। आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है।

''पूर्व-पूर्व प्रति विशेषणत्वेन परं परम् ।।
स्थाप्यतेऽपोह्यते वा चेत स्यान्तदैकावली द्विधा।'' [182]

तात्पर्य ये है कि एक उपमेय का वर्णन कर उसके साथ दूसरे उपमान में आधार आधेय भाव के क्रम वर्णन में जो श्रृखला बनती है उसे ही एकावली कहा जाता है।

"निराकार साकार बना फिर, एकाकार अनेकाकार।

त्रिविधि-सृष्टि-रचना-स्व-तत्वधर क्रिया प्रकट माया-आधार।।" [183]

परिकरांकुर अलंकार :-

साभिप्राय विशेष्य से प्रकृति अर्थ का अभिधान परिकराकुंर अलंकार कहलाता है। आचार्य **विश्वनाथ** इसे परिकर कहते है उन्होने लिखा है-

"उक्तैर्विशेषणैः साभिप्रायैः परिकरो मतः।" [184]

"मां! तुम्हे विदित है रघुपति की सब माया।

करूणाकर प्रभु ने करूण दृश्य दिखलाया।।

मा! रोम-रोम में राम तुम्हारे बसते।

निज कर्मयोग हित जीव दुःख नित सहते।।" [185]

"तुम पुरूषोत्तम की इच्छा पूरी करो भूमि!" [186]

"अशोक नाम्नी वह शोक वाटिका।" [187]

रूपकाक्तिशयोक्ति अलंकार :-

जहां उपमेय और उपमान का इतना अभेद वर्णन हो कि केवल उपमान का ही कथन किया गया हो वहां रूपकाक्तिशयोक्ति होता है। इस अलंकार में उपमान के द्वारा उपमेय को निगल लिया जाता है। उपमान कुछ ऐसा रमणीय एवं सम्ययुक्त होता है कि उसी से उपमेय का भी संकेत मिल जाता है। इस अलंकार में प्रयुक्त उपमान रूढ़ि य प्रतीक होते है। इस अलंकार में गणीव साध्यावसाना लक्षणा होती है-

"दोनो के दोनो फूल सट गए छाती से" [188]

अनन्वय अलंकार :-

अनन्वय का अर्थ है अनन्वय य सम्बन्धन न होना अर्थात एक वस्तु का सादृश्य दूसरी वस्तु से न होना इस प्रकार अनन्वय अलंकार वहां होता है जहां एक ही वस्तु का उपमेय और उपमान के रूप में वर्णन हो **दण्डी, रूदृट** तथा **भोज** ने इसे उपमा के अन्तर्गत माना है, पर **भामह, उदभट, वमन, रूइयक** और आचार्य **विश्वनाथ** इसे स्वतंत्र मानते है। **विश्वनाथ** ने लिखा है (एक वाक्य में एक ही पदार्थ उपमान और उपमेय हो तो अनन्वय अलंकार होता है)-

"उपमानोपमेयत्वमेकस्यैव त्वनन्वयः" [189]

"राघव का यह दुर्निवार आघात

मात्र तुम, सह सकते हो,

तुमको ही सहना होगा," [190]

"धरती पर कोई नही, सिया सी बड़भागिन।" [191]

"तुम जैसा देवर, अनुज,

लखन! केवल तुम हो।" [192]

परिसंख्या अलंकार :-

किसी प्रश्न के उत्तर के प्रसंग में अन्य संम्भाव्य उत्तरों का निषेध परिसंख्या अलंकार कहलाता है। वस्तुतः परिसंख्या शब्द मीमांसा दर्शन से लिया गया है, जिसका अर्थ है- अनेक कार्यो में एक की स्वीकृति और अन्य का निषेध। आचार्य **विश्वनाथ** ने इसे परिभाषित करते हुए इस प्रकार लिखा है-

"प्रश्नादप्रश्नतो वापि कथिताद्वस्तुनों भवेत।
ताद्यगन्यअ्ययोच्श्रच्छव्द अर्थोऽथवा तदा।।" [193]

"कालिमा केवट निशा के गर्भ में विश्राम करती।
तिक्त कटुता निम्ब द्रुम के पत्र पत्रों पर मचलती।।" [194]

विभावना अलंकार :-

विभावना का अर्थ है विशिष्ट भावना य कल्पना विभावना के मूल में अतिशयोक्ति होती है क्योकि इसमें कारण के आभाव में भी कार्य उत्पत्ति का वर्णन किया जाता है। आचर्य **विश्वनाथ** ने लिखा है कारण के बिना कार्य की उत्पत्ति जब कही जाती है वहां विभावना अलंकार होता है।

"विभावना बिना हेतु कार्योत्पत्तिर्यदुच्यते।
उक्तानुक्तनिमित्तत्वाद, द्विधा सा परिकीर्तिता।।" [195]

मम्मट का भी मन्तव्य है-

"क्रिया प्रतिषेऽपि फलत्यक्ति विभावना" [196]

भामह और **दण्डी** आदि आचार्यो ने इस अलंकार का उल्लेख कर कारण के निषेध की कल्पना का सूत्रपात किया है।

"दैव के संकेत से सब चल रहे है। बिन चलाये।।" [197]

वीत्सा अलंकार :-

जहां किसी शब्द की पुनरूक्ति हो अर्थात शब्द दो बार प्रयुक्त होकर किसी मनोभाव की अभिव्यंजना कराता हो वहां वीत्सा अलंकार होता है। प्रायः इसे पुनरूक्ति का ही भेद मान लिया जाता है। पुनरूक्ति से इसका अन्तर स्पष्ट करते हुए ये कहा जा सकता है कि वीप्सा में मनोभावाभिव्यंजक शब्दों की पुनरूक्ति होती है।
कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

"वैदेही के देवर की/मुरझी-मुरझी छवि,
कुछ ध्वस्त ध्वस्त," [198]

"जो रग रग में था/टीस कसक भरता रहता
वह आज तुम्हारी शल्य क्रिया से शब्दों की
झर चला त्वरित बहता।" [199]

"हे राम! राम!!/दो फूल बचे है लवकुश बस" [200]

पुनरूक्तिदाभास अलंकार :-

जहां प्रथम दृष्टिया अर्थ दोहराया गया प्रतीत हो वहां पुनरूक्तिदाभास अलंकार होता है। इसमें शब्द भिन्न आकार के किन्तु अर्थ समान होते है इसीलिये पुनरूक्ति का आभास कहा गया है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''आकुल व्याकुल भावों का/भीषण महाकाव्य'' [201]

''शेषावतार लक्ष्मण/हा कितना अवश विवश'' [202]

''धरती को उलट पलट करने का/अमित शेष'' [203]

''उधर वे घुलते हैं/इधर हम तड़पते है।'' [204]

''आसक्ति की भूमियां है/केवल निर्वेद!!
केवल निर्वेद ही अनासक्ति है!!'' [205]

''लौटे-लौटे कर टकराते हैं
और टूटते है/टूटते ही चले जाते है।'' [206]

''कभी रिझाती उन्हे वेणु वीणा बजा।
तरह तरह के खेल वह खेलाती कभी।।'' [207]

मालोपमा अलंकार :-

मालोपमा उपमा अलंकार का ही एक भेद माना जाता है एक ही उपमेय के लिए अनेक उपमानो के गुम्फन को मालोपमा कहते है। आचार्य **विश्वनाथ** ने लिखा है-

''मालोपमा यदेकस्योपमानं बहु दृश्यते।'' [208]

कवि अपने वर्णन विषय को किसी एक उपमान के सहारे व्यक्त करने में जब असमर्थ हो जाता है। तब उसे उपमानों की सहायता लेनी पड़ती है। इस प्रकार मालोपमा में माला के रूप में उपमानों की श्रृंखला प्रस्तुत की जाती है।

''मुनि के पीछे,/मैथिली/दीप्त मणि सी,/आहुति सी दृव्यमान,
प्रज्ञा की पावन शिखा/योग में दीप्त मान,/बृम्हा की श्रुति,
गायत्री का श्रुति,/गायत्री का श्रुति मंत्रज्ञान/पति धर्म लीक सी,
सूर्य वंश में कीर्तिमान,/श्रद्धा, मेघा, तप क्षमा/शील सी मूर्तिमान।'' [209]

''वचन-मूल्य हो तो दशरथ सा, गुरू वशिष्ठ सा शिला-दात्र।
कौशिल्या सी कृति-वीरा हो, त्यागिन रूप सुमित्रा मातृ।'' [210]

वक्रोक्ति अलंकार :-

आचार्य **मम्मट** ने लिखा है वक्ता द्वारा अन्य अर्थ में कहां हुआ वाक्य यदि श्रोता द्वारा श्लेष य काकु से अन्य अर्थ में गृहण कर लिया जाये तो वक्कोक्ति अलंकार होता है-

''यदुक्तमन्यथा वाक्यमन्यथाऽऽन्येन योज्यते।
श्लेषेण काक्वा व ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा।।'' [211]

तात्पर्य यह कि वक्ता का इष्टार्थ कुछ और श्रोता उसे भिन्न अर्थ में गृहण करता है। यह अर्थ का गृहण

य तो शब्द में शिलिष्ट अर्थ छिपा होगा अथवा कंठ विकृति के कारण दूसरा अर्थ निकाला जायेगा। आचार्य विश्वनाथ की भी ऐसी धारणा है-

''बनोवास देते समय इतना तो सोचते
कि जब उन्हे बनोवास मिला था
तो मै उनके साथ गयी थी।'' [212]

''राम पाले वंश की मर्यादा जग में।
धरती हूं वंश गौरव में ह्रदय में।।'' [213]

''तू मुझे समझ मत राम यहां, सीता रावण के घर रहके।
कुछ भी विचार तक किया, नही रखलिया शुद्ध उनको कहके।।'' [214]

उक्त उदाहरणों से यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थातरन्यास, दृष्टान्त, प्रतीप, और व्यतिरेक अलंकार अनायास रूप में प्रयुक्त है। वैदेही वनवास, रामराज्य, अरूण रामायण, लवकुश युद्ध, सीता निर्वासन, अलंकारों की दृष्टि से समृद्धि रचनायें है। वैदेही वनवास में प्रायः शब्द और अर्थ अलंकार के सभी उदाहरण मिलते है। अरूण रामायण में अनुनाशिकता के कारण अनुप्रास सहंगयमका भास, प्रवाद पर्व में नूतन अप्रस्तुति विधान का प्रयोग किया गया है। रामराज्य शब्दांकार और अर्थालंकार की दृष्टि से समृद्धि रचना है। कहना नहीं होगा कि इन रचनाओं से अप्रस्तुत विधान अथवा कथा प्रवाह की अतिशयता अथवा पात्र के उद्दाम ह्रदयोदगार के कारण अलंकार स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त होकर अर्थ सौरस्य की अविवृद्धि करने में पूर्ण सक्षम है।

3- शब्द शक्तियां :-

शब्द शक्ति का अध्ययन व्याकरण एवं निरूक्ति के अन्तर्गत किया गया है। शब्द मुख्यतः अभिव्यक्ति दो रूपों में रहता है। अभिव्यक्त शब्द के चार वैशिष्ट कहे गये है-

1- कैनेन्द्रिय द्वारा श्रवण किये जाते है।

2- बुद्धि द्वारा ग्राही हो।

3- प्रयोग द्वारा व्यक्त हो।

4- आकाश में व्याप्त हो।

काव्य शास्त्र में शब्द शक्तियों का विवेचन व्याकरण शास्त्र से प्रभावित है। जिसकी चरम सीमा स्फोर्ट पर मानी गयी है। दार्शनिको ने अर्थबोध के लिए, आकांक्षा, योग्यता, सन्यधि, और तात्पर्य चार तत्व माने है। नैयायिक अमिधा, लक्षणा तथा व्यंजना को शब्द शक्ति के रूप में गृहण किया गया है।

किसी पद य शब्द में शक्ति का प्रवेश एवं उसका बोध कैसे होता है। इसकी विस्तृत चर्चा व्याकरण दर्शन एक काव्य शास्त्र में हुई है। इन्हें ही संकेत ग्रह कहा जाता है। इस प्रकार संक्षिप्त रूप में हम अमिधा, लक्षणा, व्यंजना के आधार पर सीता निर्वासन से संम्बन्धित काव्यों की समीक्षा करेगीं।

1- अभिधा :-

नैयायिको ने अविधा को तीन भागों में विभक्त कर विस्तृत लक्षण उदाहरण प्रस्तुत किया है।

1- रूढ़ि :-

जिसमें शब्दों के टुकडे तो होते हो किन्तु उनका अलग-अलग कोई अर्थ न हो दोनो खण्ड मिलकर किसी निश्चित अर्थ का बोध कराते है।

2- यौगिक :-

इन शब्दों के खण्ड होते है और प्रत्येक खण्ड का एक अर्थ होता है योगिक शब्द अवयवार्थ बोधक होते है।

3- योगरूढ़ :-

इसके अन्तर्गत वे शब्द आते है जिनके खण्ड तो होते हो और प्रत्येक खण्ड का अपना एक अर्थ हो किन्तु दोनो खण्ड मिलकर एक अर्थ में रूढ़ हो जाते है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''विपिन कैसे होगा विचलित।
हुए कुछ कुजन्तुओं का डर।।
किये कुछ पशुओं के पशुता।
विकंपित होगा क्यों गिरिवर।।'' [215]

''कही चर रहे पशु विलोक रथ।
चौक-चौक कर थे घबराते।।
उठा-उठा कर स्वकीय पूछें।
इधर उधर दौड़ते दिखाते।।'' [216]

''क्या बीती होगी राम!/राज माताओं पर
जो चौखट से लग खड़ी/राह लखती होगी,
जो सिया बधू का/वन बिहार से श्रमित रूप
आंखो में आंज रही होगी।'' [217]

''तो इस ताल के किनारे कुछ बिलम लें,/मुंह-हाथ धोकर नये हो लें।
अब भला दूर ही कितना है!/देखिए न,
वह सामने जो केसारिया झण्डी चमकती है-
वही वाल्मीकि-आश्रम है,/बस,घड़ी-भर में पहुंच जायेगे।'' [218]

''अतः/कल सूर्योदय के साथ ही/सीता
वनवास के लिये प्रस्थान करेंगी।'' [219]

''उस पार मैथिली को तट पर पहुंचाया।
लक्ष्मण का उर फिर फूट कर गाया।।
मां साक्षी गंगा नीर धरा की छाती।
दे दिया दैव वनवास शूल दिन राती।।'' [220]

"विलग समझ लीजै, मानिये या लगी भी
सुलभ बन रही हूं, और दुष्यायनी हूं।" 221

"कष्ट सहे है जन-मन रंजन हेतु
आजीवन जिन नरपतियों ने खूब
उनके कुल का रहा यही इतिहास
उन भवनों में ढला यही आचार" 222

"तुम गर्भवती हो इस कारण, बतलाओं हमको प्राण प्रिये।
किस वस्तु की इच्छा चलती, सीता सुनती थी ध्यान दिये।" 223

"राजा ने सबकी सुन ली ममतामयी बात
लेकिन उनके मन पर आलोकित ज्योति-प्रात
गंभीर-धीर श्री राम, अडिग प्रणमय शरीर
रोते नयनों को देख, नयन में आज नीर" 224

लवकुश से विजयी विनयी हैं कितने आज सुपुत्र कहो ?
कितना घर है आज स्वर्ग से जहां पुत्र उत्सूत्र न हो?
और पिता भी कहां राम का दिखलाएं आदर्श उजारा?
स्नेह सुधा से सिंचित कण-कण आज अयोध्या का सारा।" 225

लक्षणा :-

लक्षणा शक्ति को नैयायिको ने स्थान दिया है। वे अभिधा को प्रमुख शक्ति मानते है किन्तु कभी कभी ऐसे शब्द प्रयुक्त हो जाते है। जिनकी लोक संगति सिद्ध नही होती अतः लक्षणा द्वारा इस संगति को सिद्ध किया जाता है। **आनन्द वर्धन** ने भाक्त्य मतवालों को लक्षणा व्यापार से सिद्ध किया है। उनके अनुसार मुख्यार्थ वाचक एवं लक्षक का संम्बन्ध लक्ष्यगत धर्म और उन धर्मो की प्रतीत में प्रयोजन तत्व कहे गये है। आचार्य **वामन** ने लक्षणा शब्दाश्च कह लक्षणा की महत्ता निरूपित की है। व्याकरण समार्थक ध्वनिवादी **आचार्य आनन्द वर्धन, अभिनव गुप्ता** एवं **मम्मट** लक्षणा की विशेष विस्तार पूर्वक चर्चा करते है।

इसमें मुख्यार्थ की बाधा के कारण अन्य के साथ उसके रूढ़िवान य प्रयोजन बस सम्बन्ध होने पर जहां वाच्यार्थ से भिन्न अर्थ का बोध हो वहा लक्षणा होती है-

"मुख्यार्थबाधे तदयोगे रूढ़ितोऽथ प्रयोजनात।
अन्योऽर्थो लक्ष्यते पत्सा लक्षणारोपिता क्रिया।।" 226

आचार्य विश्वनाथ ने भी इसी परिभाषा को इस प्रकार दोहराया है-

"मुख्यार्थ बाधेतदयुक्तौ ययान्योर्थः प्रतीयते।
रूढ़े प्रयोजनाद्वसी लक्षणाशक्तिरर्पिता।।" 227

सामान्यतः लक्षणा के अनेक भेद होते है। जिनमे से रूढ़ा, प्रयोजनवती, सारोपा, साध्यावसाना मुख्य

भेद है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

"सरल सुधा सी भरी उक्ति के।
नितान्त-लोलुप श्रवण रहेगे।।
किन्तु चाव से उसे सुनेगे।
भले-भाव जो भली कहेगे।।" [228]

"घर घर, घर घर, रव करता रथ
सम्पदा अवध की लिये
विकल सा वन पथ पर" [229]

"यह जनक सुता, जान्हवी वंश की
मस्तक पर हृदयस्थल पर धारो,
इसका सत्कार करो।" [230]

"जब उन्हे पूरे दिन चढ़े थे" [231]

"और देश की लक्ष्मी देश से चली गयी।" [232]

"मैं जानती हूं, मैने तो पत्थर प्राण पाये है।" [233]

"दिकपाल, देवता/नर या किन्नर/गन्धर्व या विद्याधर
कोई था/जो उस कुबेरजित से असहमत हो सकता था?
इस जाज्वल्य आधिपत्य के सम्मुख/सारी भाषाएं
अभिव्यक्तियां/भयातुर विस्फारित नेत्र बन चुकी थी।" [234]

"छिद गई गिरा नभ के कोने-कोने में।
उन्मत्त प्रभंजन लगा धीर खोने में।।
लक्ष्मण के उर में शूल छिद गया बांका।
धरणी डोली अम्बर का धीरज काया।।" [235]

"झूठ गलेगी जबकि मोम की भांति
सहज सुलभ होगा जब सबको न्याय
स्वेच्छा-संयत होगे जन-समुदाय
झूठ-मूठ की ग्लानि, असत्य, प्रवाद
नहीं रहेगे जन जीवन में शेष" [236]

"मित्रो! सुगन्धि प्रसून की, पाषाण से तुलसी नहीं।
चर्माक्षु से प्रत्यक्षता, परमेश की खुलती नहीं।।" [237]

"सीता की जब आंखी फड़की, भयभीत हुई बोली ऐसे।" [238]

"छाती पर पत्थर रख लेना तुम भी भाई!

जीवन कि सब से कठिन घडी मेरी आई'' [239]

''प्राण प्रिय नयन सितारे

टूटे जीवन-तंत्री के तार है।'' [240]

व्यंजना :-

अभिधा और लक्षणा का क्षेत्र सीमित है, वे एक बार कार्य करके विरत हो जाते है जबकि व्यंजना पर ऐसा कोई प्रतिबन्ध नही है बात यह है कि साहित्यालोचन के सिद्धान्त में ध्वनि सिद्धान्त व्यंजना शक्ति पर ही आधारित है। व्यंजना शक्ति की प्रतिष्ठा **आनन्द वर्धन** ने की थी किन्तु इसका प्रयोग अति प्राचीन काल से चला रहा था **डा. गोविन्द त्रिगुणायत** ने व्यंजना के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है, ''कि अभिधा और लक्षणा नामक शब्द शक्तियों की सीमा समाप्त हो जाने पर जिस शब्द शक्ति द्वारा अभिधा मूलक और लक्षणा मूलक अर्थ के अतिरिक्त एक नये अर्थ की प्रतीत होती है उसे व्यंजना वृत्ति कहते है। तथा जिस शब्द का व्यंजना वृत्ति द्वारा वाच्यार्थ और लक्षणार्थ से भिन्न अर्थ का भान होता है। उसे व्यंजना और उस अर्थ को ब्यंज्ञार्थ कहते है। व्यंजना का सम्बन्ध शब्द और अर्थ दोनो से माना जाता है।" [241]

तात्पर्य यह कि अभिधा और लक्षणा के विरत हो जाने जिसके द्वारा अन्य अर्थ का बोध होता है। वह शब्द व्यंजना है, और उसकी शक्ति व्यंजना शक्ति कही गयी है। **आचार्य विश्वनाथ** ने रस भाव आदि पदार्थो का अपलाप नहीं करने से शब्द आदि के अन्वय और व्यतिरेक व्याप्ति का अनुशरण करने से अनुमान आदि प्रमाण से अज्ञेय होने अभिधा, लक्षणा और तात्पर्य वृत्ति से अबोध्य होने वाली वृत्ति को व्यंजना कहा है।

''सा चेयं व्यंजना नाम वृत्ति रित्युच्यते बुधैः।

रसत्यव्क्तौ पुनवृत्ति रसनाख्यां परे बिदुः।।'' [242]

व्यंजना के मुख्य रूप से दो भेद किये गये है शाब्दी व्यंजना, दूसरा अर्थी व्यंजना।

1- शाब्दी व्यंजना :-

जब अनेक अर्थो से संयुक्त शब्दों के किसी एक अर्थ का प्रयोग कवि संयोग, वियोग, साहचर्य, विरोध, प्रकरण, औचित्य इत्यादि की दृष्टि से करता है। तो इसे अविधा मूलक शाब्दी व्यंजना कहलाती है।

शाब्दी व्यंजना का दूसरा भेद होता है। लक्षणा मूलक शाब्दी व्यंजना इसके द्वारा प्रयोजनवती लक्षणा में प्रयोजन को इसी व्यंजना द्वारा व्यक्त किया जाता है।

2- आर्थी व्यंजना :-

आर्थी व्यंजना उस शक्ति को कहते है जिसके द्वारा वक्ता काकु वाच्य, प्रश्ताव, देशकाल, आदि के अनुकूल अर्थ का बोध होता है। **मम्मट** आदि आचार्यो ने इसके अनेक भेद बताये है किन्तु यहां मुख्य रूप से कुछ उदाहरण दिये जा रहे है-

''होता सुख का राज, कहीं दुख लेश न होता।

हित रत रह, कोई न बीज अनहित का बोता।।

पाकर बुरी अशान्ति गरलता से छुटकारा।

बहती भव में शान्ति-सुधा की सुन्दर धारा।।'' [243]

''क्या कहा तात, हा, भाभी का!

माता सीता का निर्वासन!..........'' [244]

''भाभी देखो,/कितने कर्कश हाथों से मेरे प्राणों को,

भैया निचोड़ते जाते है,/रोको इनको, बरजो इनको,

भा..........भी..........हा.......भाभी''

कह कर लुढ़क गये रथ पर दशरथी लखन।'' [245]

''मेरे तो नेत्र सजल हो गये।'' [246]

''रावण से बडा इतिहास पुरूष कोई था लक्ष्मण?'' [247]

''मेरे जीवन धन राम आत्म सम्बल है।

क्या प्रिय वियोग का शल्य छिदा उर तल है?'' [248]

''सूख गये थे वत्सलता के स्त्रोत/भूल गई थी कोमलता का नाम

कैसे-कैसे ये जुडवां-नवजात/अनुप्राणित रह गए प्रसव के बाद'' [249]

''पहुंचे राघव वहां अन्त में, सकुचे अपनी निधि पहिचाने।

भला कहां तक छिप सकती, शुद्ध-बिन्दु-प्रसवित संतान।'' [250]

''वह त्रिलोक का कौन कार्य है, जो न सती से पाये पूर्त्ति।।'' [251]

त्रण तुल्य प्राण तज देती मै देवर देरी करती न अभी।

पर क्या मै करूं सगर्भा हूं इससे यह कर सकती न कभी।।'' [252]

''हे पावन पुरूषोत्तम! तुम इतने हो कठोर?

क्या अब न उठेगी कभी हृदय में नव हिलोर?

हे महातपस्वी, योगी! तुम पाषाण आज

तुम मानव आज नही निर्मम भगवान आज !'' [253]

''मेरी इज्जत में धूल मिलाई,

सिंचित सब आब गमाई,

पुरूषों का कैसा अत्याचार?'' [254]

4- आलोच्य काव्य ग्रन्थों में गुण :-

जिस प्रकार आत्मा की महत्वा प्रकट करने के लिए त्याग, वीरता, उदारता, इत्यादि शारीरिक गुणों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार श्रेष्ठ काव्य के लिए रस रूप आत्मा के होते हुए उसको व्यक्त करने वाले शब्दों में ही गुणों का होना अपेक्षित है। गुणों से युक्त होने पर काव्य की सरसता में वृद्विं अवसंम्भावी है। **आचार्य विश्वनाथ** ने लिखा है-

''रसस्याग्ङित्वमाप्त धर्माः शौर्यादयो यथा'' [255]

काव्य गणों की चर्चा भरत के काल से चली आ रही थी उन्होने लिखा है-

> ''अलंकारैर्गुणश्चेत बहुभि समलंकृतम्।
> भूषणेरिव चित्रार्थोस्तत् भूषणनिति स्मृतम।'' [256]

आचार्य दण्डी ने भी गुणों की आवश्यकता पर बल दिया है।

गुणों के विवेचन में एक ओर श्लेष, प्रसाद, संताप, माधुर्य, सुकुमारता, अर्थव्यक्ति, उदारता, ओज, कान्ति और समाज की चर्चा आचार्य **भरत** ने की है। आचार्य **वामन** ने दश शब्द गुणों के साथ दश अर्थ गुणों की भी चर्चा की है। परन्तु हिन्दी में तीन ही गुण प्रमुख रूप से स्वीकृत है। माधुर्य, ओज, और प्रसाद, यहां सीता निर्वासन से सम्बन्धित काव्यों में प्राप्त गुणों का विश्लेषण कर इस दृष्टि से उनका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जायेगा।

माधुर्यगुण :-

आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है चित्त के आर्द्रता स्वरूप सुख विशेष को माधुर्य कहते है।

> ''चित्तद्रवीभावमयों हलादो माधुर्यमुच्यते'' [257]

इसकी व्याख्या करते हुए ये कहां गया है स्वाभाविक जो अनावेश तत्स्वरूप जो काठिन्य तथा शोक और क्रोध आदि से उत्पन्न जी दीप्तत्व एवं आश्चर्य और हास्य आदि से उपस्थिाति जो विक्षेप, उन सबका परित्याग कर रति, हास आदि विषयों से संवलित आनन्द के आविर्भाव से सहृदय के चित्त का जो आर्दृप्रायत्व है वही द्रवीभाव (द्रुति) है। इस गुण को स्पष्ट करते हुए आचार्य **भरत** ने लिखा है-

> ''बहुशो यच्छु तं काव्यमुक्त वापि पुनः पुनः
> नोद्वेजयति तस्याद्वि माधुर्यमुदाहत्तम्।'' [258]

इस प्रकार भंगिमा के द्वारा प्रकर्ष वान अर्थ को व्यंजित करने के कारण माधुर्य गुण विशेष आकर्षक होता है। माधुर्य गुण की व्यंजना करने वाले शब्दों और रसों से उसका सम्बन्ध निरूपित करते हुए आचार्य **विश्वनाथ** ने लिखा है। कि इसमें समास वृत्ति रहित, अल्प समास वर्गो के अन्तिम वर्ग से युक्त वर्ण संयोग करूण, शान्त रसों में प्रमुख रूप से माधुर्य गुण पाया जाता है।

सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में माधुर्य गुण की प्रधानता है क्योकि इसकी कथा में विप्रलम्भ श्रंगार वात्सल्य और शांत रस की प्रचुरता है। इन रचनाओं में कर्ण प्रिय, साम्यनासिक शब्दावली, छन्दसिक प्रवाह य मुक्त छंदो में लय का पूर्ण उपयोग इस गुण के वृद्धि करने में सहायक हुआ है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

> ''शीतल मंद समीर सौरभित हो बहता है।
> भव कानों में बात सरसता की कहता है।।
> प्राणि मात्र के चित को वह पुलकित करता है।
> प्रातः को प्रिय बना सुरभि भू में भरता है।।'' [259]

> ''यह सघन विजन वन,/नंदन का सा खण्ड प्रान्त,
> परिमल, पराग, मकरंद पगा,/नित नूतन सुषमा से मंडित,

कल कल निनादिनी निर्झरिणी,/कुसुमांजलि बद्ध घाटियां ये,
महिमा मंडित उत्तुंग शिखर,/जिन पर गर्वित मयूर के दल'' [260]
''यह धूप का महोत्सव/दाक्षिणात्य चन्दनगंधी हवाएं
गंधमादन की पुष्पीय विपुलता/वानस्पतिकता का उदार
विपुल परिवार/आकाश-गंगा से लेकर
ग्राम गंगा तक की यह/सम्पूर्ण विराट विनम्र/सृष्टि'' [261]
''जा रही तुम्हारी इच्छा से ही मै वन में/केवल तुम ही तुम हो हे प्रभु ! मेरे मन में !
लगता कि चल रहे तुम भी मेरे संग-संग/भर रहें तुम्हीं मेरे मन में साहस-तरंग
तुम यहां-यहां-सर्वत्र दिखाई पडते है।/मेरे नयनों से तुम्हीं अश्रु बन झरते हो!
मेरे अधरों पर तुम्ही मधुर मुस्कान देव,/मेरे तन में हो तुम्हीं चमकते प्राण देव !'' [262]
''अति मधुर, करूण संगीत तान सुन सुनकर,
सब समा चकित, रघुनन्दन द्रवित बने थे।
ये मुनि बालक गन्धर्व, देव बालक है?
सीता की करूणा सुन लोचन भर आये।।'' [263]
''ले दुख भरी स्वासा सीता, ने इस विधि से फिर वचन कहे।
सच-सच बतलाओं हे देवर क्या हंसी हमारी उडा रहे।।
मै करू प्रशंसा अपनी ही तो वह है धर्म विरूद्ध सदा।
पर परिवृत धर्म कर्म से है। आत्मा हमारी शुद्ध सदा।।'' [264]
''गृह गृह प्रतिमांनो कान्ति में कान्ति दात्री,
निखिल नगर में थे चन्द्रिका चारू आयी
कनक-कलश धारे दिव्य दीपावली से
सज सज कर द्वारे आम्र-पत्रावली में।
रच-रच कर रम्भा खम्भ में बेलि डाली,
मणि, मरकत मानो मुग्ध हेमांचली में।।
प्रचरित, प्रतिभा में वायु की वीचियों से,
भुवन-भुवन भू की सूचना दे रही थी।
विशद जनकजा की वैभवी वैजयन्ती
उन महिम मया की या जयन्ती यही थी।।
ललक लटकती थी तोरणी मालिकायें,
विविध विधि विधानों की विभा सोहती थी।
कलित युवतियों के कंठ से कूंजती सी

ललित ललित वाणी विश्व को मोहती थी।।'' [265]

''शब्द-रूप-रस-गध-स्पर्श सब बोध

इनमें विकसित हुए साथ ही साथ

किस प्रकार तो फूटे इनके बोल

तुतलाहट में कांप कैसे होंठ

कैसे पाए जननी की पहचान

चलना-फिरना पाए कैसे सीख

हिले-मिले थे मुनि-शिशुवों के मध्य

इनमें उनमें था क्या कुछ भी भेद'' [266]

''पुत्र पिता से, पिता, पुत्र से परम मुदित मन मिलते है।

शशि को देख सिन्धु, रवि दर्शन के पंकज ज्यों खिलते है।

विनय और वत्सल्य बरसता है भोगी पलकों के द्वारा।

स्नेह सुधा से किंचित कण-कण आज अयोध्या का सारा।'' [267]

''नभ पर चमकाती यामनी तरूणा वली,

गृह गृह दमकाती यामिनी दीप माला।

तन द्युति उनकी यो दीप्त होती अमा में,

घन सघन घटा में दामिनी की छटा ज्यों।'' [268]

ओज गुण :-

जहां किसी रचना का पढने य सुनने में उत्साह आदि भावों का संचार होता है। वहां ओज गुण होता है। आचार्य ने ओज गुण का लक्ष्मण और उसकी व्यंजना करने वाले शब्दों का लक्षण इस प्रकार लिखा है-

ओजश्रित्तस्य विस्तार रूपं दीप्तत्व मुच्यते।।

वीरवीभत्सरौद्रेषु क्रमेणाधिक्यमस्य तु।

वर्गस्याघृततीयाभ्यां युक्तौ वर्णो तद्न्तिमौ।।

उपर्यधो द्वयोर्वा सरेफष्टठडढैः सह।

शकरच्श्र षकारच्श्र तस्य व्यञ्जकता गताः।।

तथा समासो बहुलों घटनौद्वत्यशालिनी।'' [269]

सीता निर्वासिन से सम्बन्धित काव्यों में ओज गुण की अभिव्यक्ति या तो राम के निर्णय के विरूद्ध अथवा लवकुश युद्ध के समय ओज गुण की व्यंजना मिलती है। अतः कुछ उदाहरण दृष्टव्य है-

''कितनी फैला वदन निगलना चाहती।

कितनी बन विकराल बनाती चिन्तिता।।

ज्वालायें मुख से निकाल आंख चढा।

कितनी करती रहती थी आतंकिता।।
कितनी दांतो को निकाल कटकटा कर।
लेलिहान-जिह्व दिखला थी कूदती।।
कितनी कर वीभत्स-काण्ड थी नाचती।
आप देख जिसको आंखे थी मूंदती।।'' [270]

''जल उठी स्वर्ण नगरी,/राक्षस कुल ध्वंस हुआ,
कट गये शीश दस, हाथ बीस,/विध्वंस हुआ
पर भीत कपोती, विश्व संपदा/सीता मां पर
कब कोपा लंकेशवीर,/जिसकी सहोदरा को तुमने
क्षंत अंग किया।/पौलस्त्य शक्ति धर कुछ भी हो
हे राम!/नीतिधर, विनयशील था/न्यायी था।'' [271]

''नहीं लक्ष्मण!/अनाम लोगो और/भयातुर, प्रताड़ित प्रजा ने
अपने स्वत्व/स्वाधीनता, अभिव्यक्ति और/जीवन-मूल्यों तथा आदर्शों के लिए
प्राणार्पण किया था,/एक चक्रवर्ती के विरूद्ध/साधारणता ने
युद्ध का आवाहन किया था।'' [272]

''तापस वेषी, मुख दीप्त कण्ठ में माला,/तूणीर, शरासन बाण, कंध पर धारे।
उद्दीप्त भाल पर श्वेत त्रिपुण्ड लगाये,/स्वर, ताल छंद में राम सुयश गाते थे।।'' [273]

''यह व्यर्थ ख्याल वे करते है, अब भी वीरों से देश भरा।
वीरों से खाली कभी नहीं होती वीरो से देश भरा।
मुनियों के बालक बोल उठे हम बार-बार समझाते है।
यह आप बांध कर अश्व बृथा की क्यों अब रार बढ़ाते है।
कुश बोले तुम लोग हो, विप्रों की सन्तान।
तुम जाओं जाऊं न मैं, तज कर रणस्थान।।'' [274]

''सजग ! वायु-गण ! सजग, न आये वायु सती पर।
सजग ! मेघ-पति ! रवि न पड़े रवि-कुल-महती पर।।
सजग ! वरूण ! जलकण न गिरे जल-निधि-जाया पर।
सजग ! विपिन सुर-वृन्द ! न माया हो माया पर।।
हां, सजग ! दिशाओं, दिग्गजों, दिक्पालों, हित-बार है।
इस जगज्जननि का आज ही, तुम सब पर आभार है।।'' [275]

''सीता का निर्वासन अनुचित है, अनुचित है
इस निर्मम निर्णय से मेरा मन शोकित है

मै प्राण-व्यथित, चिन्तित, पीडित इस निर्णय से
मन कांप रहा है बारम्बार-विरह भय से!
पर, यह चारित्रिक प्रश्न! अमिट आक्षेप एक
इसका उत्तर देने में अक्षम है विवेक'' [276]

''घुमा-घुमा कर जोश जगाया,
मार शत्रु आदेश लगाया,
त्वरित तड़ित गति चक्र चलाया,
छाया है भय महा-प्रलय सा सारे चित्राकार।'' [277]

''मज्जा निमज्जिता सुसंजितातित चण्डिका,
थारे हुए विशाल वीर मुण्डमालिका।
कत्सोल बोल बोलती प्रेफुल्ल गात्र थे,
आहार मांस, पेय रक्त शीर्ष पात्र थे।'' [278]

''तीक्ष्णातितीक्षण सूक्ष्म से लवाग्नि बाण से
कल्याण प्राण का न त्राण शीर्थ त्राण से।'' [279]

प्रसाद गुण :-

आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है, जैसे सूखी लकड़ी को अग्नि व्याप्त करता है, उसी तरह जो रचना पाठक के चित्त में शीघ्र व्याप्त हो जाती है उसे प्रशाद गुण वलित रचना कहते है। प्रशाद गुण विशिष्ट वृत्तियों से युक्त अन्तःकरण की प्रशन्नता है रसानुभूति के लिए चित्त की यह दशा अनिवार्य है। काव्य शास्त्र में वहीं रचना प्रशाद गुण युक्त मानी गयी है जिसके अर्थ ग्रहण में कोई कठनाई न हो जिसके पढ़ते य सुनते ही चित्र प्रशन्न हो जाये तत्काल आनन्द की अनुभूति होने लगे। माधुर्य और ओज का क्षेत्र सीमित है, क्योकि वो दोनो विरोधी होकर सीमित रसों से ही व्यंजित होते है, जबकि प्रशाद गुण का कोई विरोधीगुण नहीं और उसका क्षेत्र व्यापक है। इसीलिए वह सभी रसवती रचनाओं में मिलता है। वैदेही वनवास, सीता निर्वासिन, प्रवाद पर्व, अग्निलीक, और अरूण रामायण इस दृष्टि से महत्वपूर्ण काव्य है जिनके उदाहरण दृष्टव्य है-

''जिस दिन तुमको किसी लाल का चन्द्र-बदन दिखलायेगा।
जिस दिन अंक तुम्हारा रवि-कुल-रंजन से भर जायेगा।।
जिस दिन भाग्य खुलेगा मेरा पुत्र रत्न तुम पाओगी।।
उस दिन उर विरहांधकार में कुछ प्रकाश पा जाओगी।। '' [280]

''सुन जनक सुता के, मोद आनन्द, वाक्य।
भूधर सी लक्ष्मण की काया/कंप कपा गई।
''हा सुखद भाग्य पर,/इतराती भाभी जिस बल,
उस बल संबल के हाथों/भोली छली गई।'' [281]

''मानवीय प्रारब्ध के ललाट पर
यह कैसा अग्नि-त्रिपुण्ड लिख दिया गया है कि
चारों ओर/केवल स्वाहा ही स्वाहा की/आवाह-वाणी
वनस्पतियों से लेकर व्यक्तित्वों तक /सुनायी दे रही है।'' [282]

''मै लोक धर्म की सत्य पताका लाया।
दुस्तर सागर में शांति पोत बन आया।।
जन जन मानस को प्रेम सुधा लाया हूं।
पतवार नाव की बनकर मै आया हूं।।'' [283]

''हा धर्म विरूद्ध स्त्रियों को, मिलता न स्वर्ग में ठौर कहां।
स्त्री के लिये पति से बढ़कर, जग मे कोई पूज्य नही।।
मै पति सेवा करने ही में, आनन्द मानती रही सदा।
हो गई हमारी बुद्धि भ्रष्ट, निज हाथ बुलाती यह बिपदा।।'' [284]

''विटप-वन नहीं वे, बाट,-बाटी नहीं वे।
सरित-सर नहीं वे, घाट-घाटी नहीं वे।।
सुरभित-शुचि शान्ता वायु बाही नहीं है।
प्रिय ! पथ यह मेरे लक्ष्य का ही नहीं है।।
अहह ! प्रथम आये, किन्तु भूले यहां हो।
प्रियवर ! ठहरो तो आज जाते कहां हो ?।।
यदि अन समझे हो भूल तो भूल माने।
अपितु समझ द्वारा भल भी क्लेश ही है।।'' [285]

''मर्यादा जहां नहीं, आस्था भी वहां नहीं
मानव-जग में उठती है शंका कहां नहीं
त्याग ही प्रेम को आलोकित कर पाता है
सुख दुख का चक्र काल ही नित्य घुमाता है'' [286]

''एक बूंद, दो बूंद, चार- छै बूंद
उतर रहा था इतना भर ही दूध
सूख गये थे वत्सलता के स्त्रोत
भूल गई थी कोमलता का नाम
कैसे-कैसे ये जुडवां-नवजात
अनुप्राणित रह गए प्रसव के बाद'' [287]

''क्या वासुदेव बलदेव नए ?

दोनो यें धरती पर उतरे
क्या अच्छरेग होने वाला ?
कुछ भी न रहस्य समझ पाएं'' [288]

''श्रद्वा सत्यथगामिनी सुनयनी सन्मार्ग संदर्शिनी।
कल्याणी उपकारिणी प्रणयिनी साध्वी सदाचरिणी।
मित्रां श्रमवारिणी विहरिणी मान्या मनोहारिणी।
संकल्प प्रचारिणी विचरणी सौहार्द संचारिणी।'' [289]

सारांश यह है कि मूलतः सीता निर्वासन की कथा विप्रलम्भ श्रंगार और वात्सल्य रस की कथा है। वीर और रौद्र रस उपग्रहण के रूप में प्रयुक्त है अतः माधुर्य गुण की दृष्टि से वैदेही वनवास सीता निर्वासन प्रिया य प्रजा अग्निलीक, और अरूण रामायण प्रमुख है। ओज गुण की दृष्टि से लवकुश युद्ध प्रिया या प्रजा, अग्निलीक, सीता निर्वासन, और अरूण रामायण प्रमुख काव्य ग्रन्थ है। तीनो गुणों की दृष्टि से वैदेही वनवास, अरूण रामायण ऐसी रचनाये है जिसमें ओज, प्रसाद, माधुर्य गुणों के लिये भाषा, भाषा शिल्प में नया प्रयोग है। अग्निलीक और सीता निर्वासन में विद्रोहणी सीता के द्वारा व्यंग्योक्तियों में जहां ओज गुण दिखाई पड़ता है वहीं भाषा का कितना महत्व है यह हम वैदेही वनवास, सीता निर्वासन, अग्निलीक, उत्तररामायण और अरूण रामायण में सहज ही देख सकते है।

उपर्युक्त उदाहरणों से यह निष्कर्ष सहज ही निकाला जा सकता है कि कुछ अपवादों को छोड़कर सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में ओज गुण कम ही मिला है लवकुश युद्ध अथवा जहां कही पात्र के प्रबल भावावेगो को अभिव्यक्ति दी गयी है। ओज गुण वही प्रयुक्त है। इन गुणों ने जहां एक ओर भाषा को सामृद्धि किया है, वही दूसरी ओर रस परिपाक कराने में पूर्ण समर्थ हुए है। **'अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध'** एवं **रामावतार पोद्दार** तथा **राम प्रकाश शर्मा** के काव्य ग्रन्थ इस दृष्टि से उल्लेख्य है। सीता निर्वासन की भाषा प्रवाहमयी, कोमल कान्त शब्दावली प्रधान है। अतः उसमें माधुर्य गुण का बाहुल्य है अग्निलीक गीत नाट्य विधा पर लिखी गयी रचना है जिसमें प्रतिकात्मकता के माध्यम से रस बिम्ब उपस्थित किया गया है उसमें प्रसाद गुण आदयन्त दिखाई देता है।

5 :- छन्द योजना :-

वेदांग में छन्द को भी परिगणत कर इसकी प्रचीनता पर प्रकाश डाला गया है। पाणनीय शिक्षा में छन्दः पादौतु वेदस्य कह कर इसे वेद के चरण कहा गया है। छन्द भावों को आछादित कर उन्हे समष्टि रुप प्रदान करतें है। इसीलिए छन्दाशि छादनाद् कहा गया है। वैयाकरणों यद्यक्षर परिणामं तद्क्षन्दः कहा है। जिसका अर्थ है, जिसमें अक्षरों के परिणाम में वर्णो की संख्या निहित होती है उसे छन्द कहा जाता है। मनुष्य के भावावेग छन्दबद्ध होते हैं। छन्दों की परिभाषा करते हुए **डा. जगदीश प्रसाद कौशिक** ने लिखा है- ''छन्द काव्य के उस तत्व का नाम है जिसमें वर्णो की य मात्राओं की संख्या गुरु लघु का क्रम यति गति की व्यवस्था निर्धारित हो छन्द में लयात्मकता प्रमुख होती है। गति और तुक उसके प्रमुख कारक एवं भेदक तत्व है।"

सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों का अध्ययन करते समय मैने देखा है कि इसमें युगानुकूल छन्दों का प्रयोग हुआ है। प्रारम्भिक काल की रचनाऐं छन्द बद्ध थी जिनमें निश्चित मात्रायें य गण विभाजन मिलता है। परवर्ती

काल के काव्यों में छायावाद, प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का प्रभाव भी इन छन्दों में पडा है। अतः इस प्रकार की रचनाओं में मुक्ति छन्द प्रयुक्त हुऐ है। यहां इस दृष्टि से हम इन काव्यों का वर्गीकरण करेगें। सर्वप्रथम वर्ण वृत्त य वर्णित छन्द उसके बाद मात्रिक छन्द और अन्त में मुक्त छन्दों के उदाहरण देकर एतद् विषयक वैशिष्ट का निरुपण अन्त में करेग

सीता निर्वासन काव्यों में वर्णित छन्द :-

इस छन्द के प्रत्येक चरण में 17 वर्ण होते हैं और उन्हे मगण, भगण, नगण, तगण और दो गुरु के क्रम में अनुस्यूत किया जाता है-

" योगाचारी जनक नृप थे बृद्धि माया-विहीना-
अद्वैता भा-प्रगति-पथिका सर्वथा आत्म-लीना-
अहापूरा सतत् सरिका तुल्य थी, किन्तु कैसी ?-
बृह्मधीना उदधि-सहिता सुस्थिरा शान्त जैसी। " [290]

मात्रिक छन्दों में- मन हरण कवित्त :-

इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 31 वरण होते हैं। 16-15 पर यति होती है, अन्त में गुरु होता है।

" तार-तार तरिकायें आरती उतार चलीं,
हृदय निहार हार वदन विनीता का।
बार-बार बारि चली बारिजा हिमालजा भी,
धारणा संभाल चली भाल अभिनीता का। " [291]

सखी छन्द :-

यह मात्रिक छन्द है। इसके प्रत्येक चरण में 14 मात्रायें होती हैं-

" हम सब भी साथ चलेंगी।
सेवायें सभी करेंगी।।
पर घर पर बैठी रह कर।
नित आहें नही भरेंगी।। " [292]

तिलोकी छन्द :-

इस पद्य के प्रत्येक चरण में 21 मात्रयें हो अन्त में लघु गुरु का क्रम प्रयुक्त हो उसे तिलोकी छन्द कहते हैं।

" कर उसका रसपान मधुप थे घूमते।
गूँज-गूँज कानों का शुचि गाना सुना।।
आ-आ कर तितलियाँ उन्हे थी चूमती।
अनुरंजन का चाव दिखा कर चौगुना।। " [293]

दोहा :-

यह अर्धसम छन्द है। प्रत्येक चरण में 24 मात्रायें होती है पहले और तीसरे चरण में तेरह दूसरे और चौथे चरण में ग्यारह मात्रायें होती है-

" तो स्वामी वनवास में, रही आपके साथ।
बढ़ा प्रेम ऋषि पत्नियों, से तब था हे नाथ।। " [294]

" इतना कह रघुवंश-मणि, दिखा अतुल-अनुराग।
सदन सिधारे सिय सहित, तज बहु-विलसित बाग।। " [295]

पादाकुलक :-

यह सोलह मात्राओं का छन्द होता है। कहीं-कहीं इसमें चार-चार मात्राओं के चौकल भी बनाये जाते हैं -

" प्रवहमान प्रातः-समीर था।
उसकी गति में थी मंथरता।।
रजनी-मणिमाला थी टूटी।
पर प्राची थी प्रभा-विरहिता।। " [296]

मत्तसमक :-

यह भी सोलह मात्राओं का छन्द है। इसमें नवी मात्रा लघु होती है :-

" दमक रहा है नगर, नागरिक-
प्रवाह में मोद के बहे हैं।।
गली-गली है गई संवारी।
चमक रहे चारु चौरहे हैं।। " [297]

ताटंक :-

यह तीस मात्राओं का छन्द है। जब ताटंक में गुरु लघु का विशेष नियम न प्रयुक्त हो तब यह लावनी छन्द बन जाता है। जैसे -

" प्रकृति-सुन्दरी विहंस रही थी, चन्द्रानन था दमक रहा।
परम-दिव्य बन कान्त-अंक में तारक-चय था चमक रहा।।
पहन श्वेत-साटिका सिता की वह लसिता दिखलाती थी
ले-ले सुधा-कर-कर से वसुधा पर बरसाती थी। " [298]

पदपालाकुलक :-

यह सोलह मात्राओं का छन्द है। प्रारम्भ में द्विकल दो मात्राओं का प्रयोग होता है :-

"आस्थाओं में भूडोल उठा
झंझावाती मन डोल उठा
विश्वासों के गहरे तल में
हे राम ज्वार बेजोड़ उठा। " [299]

रोला :-

इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्रायें होती हैं। अन्त में गुरु य लघु होते है -

" किरणों का आगमन देख ऊषा मुसकाई।
मिले साटिका-लेंस-टंकी लसिता बन पाई।।
अरुण-अंक से छटा छलक क्षिति-तल पर छाई।
भृग्ङ गान कर उठे विटप पर बजी बधाई।। " [300]

चौपदे :-

यह चौदह मात्राओं का छन्द है। अन्त में गुरु होता है -

" जानकी ने कहा प्रभु में।
उस पथ की पथिका हूंगी।।
उभरे काँटों में से ही।
अति-सुन्दर-सुमन चुनुँगी।। " [301]

सवैया :-

समान सवैये में चार चरण प्रत्येक चरण में 32 मात्रायें और सोलह मात्राओं पर यति का प्रयोग हुआ है।

" श्री रामचन्द्र की आज्ञा से मै तुम्हे त्यागने आया हूँ।
छोड़ते न बनता करू कौन युक्ती इससे घबराया हूँ।।
सुनते ही सीता खा पछाड़ गिर पड़ी वजृ सम लगा वहीं।
मुखकी सब कांति हुई फीकी सुधि-बुधि तक बिलकुल रही नही।। " [302]

घनाक्षरी :-

इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 30 वर्ण होते हैं। 8-7 वर्ण पर यति होती है -

" बिटप-वन नही वे, बाट-बाटी नही वे।
सरित-सर नही वे, घाट-घाटी नही वे।।
सुरभित-शुचि शान्ता वायु बाही नही है।
प्रिय ! पथ यह मेरे लक्ष्य का ही नही है।।
अहह ! प्रथम आये, किन्तु भूले यहाँ हो।
'प्रियवर ! ठहरों तो आज जाते कहां हो ?।। '
यदि अन समझे हो भूल तो भूल माने।
अपितु समझ द्वारा भल भी क्लेश ही है।। " [303]

गीतक :-

गीतक चार चरण चौबीस मात्राओं का छन्द है -

" आ कपीश्वर ने सुनाया नहीं आती जानकी

है न उसको फिर अपेक्षा आर्य के सम्मान की।
नहीं होना जा अयोध्या अब अधिक बदनाम है,
स्पष्ट कहती राम से मेरे न कोई काम है। " [304]

चतुष्पद :-

चार वर्णो का छन्द है इसमें 15 मात्रायें होती है -

"कला कृति इतनी थी कमनीय।
दिखातें थे सब चित्र सजीव।।
भाव की यथातथ्यता देख।
दृष्टि होती थी मुग्ध अतीव।। " [305]

1- छन्द वद्धय रचना :-

सीता निर्वासिन काव्यों में कुछ ऐसे छन्द-प्रयुक्त है जो 16 मात्राओं के है। कुछ में चार चरण और कुछ छन्द मुक्त हैं।

" लहरे कहती थी राम राम।
लक्ष्मण बोले माता प्रमाण।।
मुझको कर देना क्षमा मात।
जीवन में मुझसे हुआ घात।। " [306]

" अवरुद्ध कंठ,
जो भरे हुए आवेग ज्वार
जिसमें आक्रोश असीम-दमित " [307]

" हे जगत वन्ध नयनाभिराम,
पुरुषोत्तम धर्मध्वज ललाम,
पावन नैतिकता के आश्रृय
मेरे प्राणों के इष्ट राम " [308]

सोरठा :-

इसमें पहले और तीसरे चरण में 11-11 मात्रायें होती हैं। दूसरे और चौथे चरण में 13-13 मात्रायें होती हैं। दोहे का उल्टा सोरठा है -

" सुन जनता की आह ! दोनो हाथों से सपदि।
कर आकृष्ट प्रवाह सीता ने सीमित किया।। " [309]

मुक्त छन्द :-

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने छन्दों को रुढिवद्धता से मुक्तकर उसे एक नया आयाम दिया था। सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में भी मुक्त छन्दों का उपयोग किया गया है। इन मुक्त छन्दों के प्रयोग में कुछ ऐसे

छन्द है, जिसमें समान मात्राओं का प्रयोग कर उसे छन्द का रुप दिया गया है। प्रत्येक पंक्ति में समान मात्रायें प्रयोग कर अन्त में छन्द को तोड़ने के लिए न्यून य अधिक मात्रायें प्रयुक्त की गई हैं। यहा अष्टकों के योग से छन्दों का निर्माण किया गया है। जैसे -

''अवरुद्ध कण्ठ,/जो भरे हुए आवेग ज्वार
जिसमें आक्रोश असीम-दमित/धरती को उलट पलट करने का
अमित रोष/शेषावतार लक्ष्मण/हा कितना अवश विवश।
आकुल व्याकुल भावों का/भीषण महाकाव्य।। '' [310]

मुक्त छन्दों में यह स्मर्णीय है कि जानबूझकर लय तोड़ने के लिए पंक्ति को बीच से तोड़ देना य कोलन-अल्प विराम य किसी विराम चिन्ह का प्रयोग कर छन्द बनाने का नया प्रचलन हिन्दी के प्रयोग वादी काव्यधारा में चला था। सीता निर्वासन में भी यत्र-तत्र इस प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। यद्यपि प्रवाद पर्व, अग्निलीक, प्रभृति काव्यों में मुक्त छन्दों में भी लय का पूर्ण विस्तार मिलता है। जैसे -

''निर्मम है/क्रूर कठोर धर्म/तुम सच कहते हो बन्धु
सिया का मात्र नाम उल्लेख/सिया के निष्कासन का हेतु
घोर अन्याय अधम/ पर अधम नही वह रंजक
बन्धु वह अधम नहीं है/रजक, राम का प्रिय जन है। '' [311]

प्रवाद पर्व में अर्थ की अन्युति के लिए कवि ने हिन्दी की प्रकृति के अनुसार क्रिया को अन्त में रखकर मुक्त छन्दों का सफल प्रयोग किया है -

''अभिव्यक्ति स्वातन्त्रय का अर्थ/यह नही होता कि
हम अपने व्यक्तिगत राग द्वैषों/आधारहीन अभिमतों
वक्तव्यों और शंकाओं को/सार्वजनिक रुप से
आश्रेयात्मक वाणी दें जिससे/सामान्य जन-जीवन
राज्य और राष्ट्रीय गरिमा तथा
शीर्षतम व्यक्तियों की चरित्र-मर्यादा पर/आंच आये। '' [312]

अरुण रामायण में प्रायः 24 मात्राओं के छन्द का प्रयोग किया गया है। इसमें लयात्मकता है। अनेक स्थानों पर कवि ने भावाभिव्यंजना के लिए वाक्यांशों की आवृत्ति की है। जैसे -

'' वैदेही की विनती सुन कर फट गई धरा
नीचे से आता-सा प्रकाश भू पर विखरा
क्षण में ही सीता समा गई भू के भीतर
राम ने पकड़ना चाहा उठकर उसका कर-
पर हंसती सीता हंसती-हंसती चली गई '' [313]

शक्ति पूजा छन्द :-

यह 24 मात्राओं का मुक्त छन्द है। कही 10+14 कहीं 17+7 और कहीं 5+11+8 मात्राओं के संयोग से यह छन्द बनाया गया है -

'' हे राम !/तुम्हारे मुझ पर है/ उपकार बहुत/ मुझ विद्रोही पर
अब आशीष विछाओं ना/ है प्रलय बाढ़ सी हलचल जिस मानस तल पर
उस पर अब अपनी शैया-शेष/विछाओं ना ।'' [314]

इसके अतिरिक्त मुक्त छन्द प्रधान रचनाओं में कवियों ने भावानुकूल भाषा का प्रयोग कर मुक्त छन्दों का भावाग्राही उपयोग किया है। ऐसे छन्दों में प्रवाहमयता, आवेग और लयात्मकता को महत्वपूर्ण स्थान मिला है। जैसे -

'' सौम्या/माधवी प्रिया को /चीनांशुक के स्थान पर/पुनः वल्कल पहना
ऐसी कारुणी विदा देनी होगी ?/उस प्रथम वनवास के समय '' [315]
'' कि इन्होने बड़ा त्याग किया है/पत्नी को छोडकर बड़ा कष्ट भोगा है,
पर मै आपसे पूछती हूँ/इन्होने पत्नी को अपनाया ही कब था ? '' [316]

सारांश यह है कि छन्द विधान की दृष्टि से सीता निर्वासन काव्यों को दो भागों में बांटा जा सकता है छन्द वद्ध रचना, छन्द मुक्त रचना। छन्द वद्ध रचनाओं को भी हम दो भागों में बांट सकते हैं। वर्णिक एवं मात्रिक छन्द बद्ध रचनाऐं वर्णिक छन्दों में वंशस्त्र, मालिनी, मन्द्राकान्ता एवं मात्रिकर छन्दों में दोहा, ताटंक, तिलोकी, रोला, पादाकलक, सखी मत्तसमक, चतुष्पद, सवैया, धनाक्षरी, छन्द प्रमुख है। मुक्त छन्द रचनाओं में भी दो प्रकार के छन्द प्रयुक्त है। कुछ ऐसी रचनायें हैं। जिनमें मात्राओं का क्रमबद्ध रुप मिलता है शेष अन्य रचनाओं में लय एवं गति की प्रधानता है। बात ये है कि द्विवेदी युगीन रचनाओं में छन्दों के प्रयोग का अतिशय आग्रह था इनमे वैदेही वनवास, जानकी जीवन, प्रिया या प्रजा, रामराज्य प्रमुख हैं। परवर्ती काल में वैचारिकता प्रखर हो गयी कथा य घटना गौण अतः छन्द इस प्रवाह मयता में बाधक सिद्ध हुआ इस हेतु कवियों ने छन्द के व्यामोह का परित्याग कर लय बद्धता को प्रमुखता दी है। प्रवाद पर्व सीता निर्वासन, अग्निलीक, इसीकोटि की रचनाऐं है छन्द विधान की सामर्थ की दृष्टि से वैदेही वनवास,जानकी जीवन एवं अग्निलीक महत्वपूर्ण रचनाऐं है। अरुण रामायण में प्राचीन छन्द विधान को न अपना कर लय प्रधान तुकान्त छन्द का प्रयोग किया गया है जिसमें भावानुकूल छन्द विधान,लयात्मकता और गत्यात्मकता मिलती है।

6- विम्ब :-

काव्य का मर्म य उसके रसपेशलता की व्याख्या में भारतीय काव्य सम्प्रदाय की खोज हुई। अलंकार, रीति, ध्वनि, वक्क्रोक्ति, रस, औचित्य इत्यादि को काव्य की आत्मा माना गया है। साथ ही नये मानदण्डों की आवश्यकता बताई गई है। इस दृष्टि से विम्ब नया मानदण्ड आधुनिक समीक्षकों द्वारा स्वीकृत है। बात यह है, कवि अपनी रागात्मक अनुभूतियों को ऐसे माध्यम से व्यक्त करना चाहता है जो भावक को ग्राह हो इस प्रक्रिया में विम्ब विधान बड़ा सशक्त माध्यम है।

विम्ब विधान अमूर्त के सम्मूर्ति करण की प्रक्रिया कवि काव्य में अनुभूतियों को चित्रगुण से युक्त कर

इस रुप में अभिव्यंजित करता है कि सहृदय के मनष चक्षुओं के समक्ष वर्ण विषय का एक चित्त सा अंकित हो जाता है और वह कवि की अनुभूतियों से ऐन्द्रिय साक्षात्कार कर तादात्म स्थापित करता है। यह विम्ब अंग्रेजी शब्द(**इमेज)** का हिन्दी रुपान्तर है जिसका प्रथम प्रयोग आचार्य **रामचन्द्र शुक्ल** ने किया है, इसकी परिभाषा लिखते हुए **डा. नगेन्द्र** ने कहा कि,'' सर्जना के क्षणों में अनुभूतियां नाना रूपों में शब्द अर्थ के माध्यम से मानष छबियों के रुप में व्यक्त होती है इन्हे ही विम्ब कहते हैं।'' 317

विश्वकोष में ( )के अर्थ बताते हुए वस्तु का पुर्नरुपादान करना चित्तबद्ध करना मानषी प्रति कृति निर्मित करना इत्यादि अर्थ दिये गये है। विम्बों के निर्माण में अनुभूति, भाव, ऐन्द्रियता, स्मृति, कल्पना प्रत्यक्षी करण आदि तत्वों का महत्वपूर्ण योगदान है।

विम्बों का वर्गीकरण कठिन कार्य है। **डा. नगेन्द्र** ने इन्हे पाँच वर्गों में, **डा. सुशीला शर्मा** ने दो वर्गों में, **डा. केदारनाथ सिंह** आठ वर्गों में बांटकर इनका अध्यन किया है। यहां हम अध्ययन की सुविधा के लिये दो प्रकार के विम्बों को प्रस्तुत करेगें -

(1) ऐन्द्रिय विम्ब

(2) मानष विम्ब

ऐन्द्रिय विम्बों में दृश्य विम्ब, स्पर्श, घ्राण, श्रवण, आस्वाद एवं वस्तुओं के सहज और अलंकृत विम्बों के रुप में आलोच्य काव्य ग्रन्थों के उदाहरण प्रस्तुत करेगें तथा मानष विम्बों में भाव एवं विचार सम्बन्धी विम्बों के उदाहरण प्रस्तुत किये जायेगें।

आलोच्य काव्यों में ऐन्द्रिय विम्ब :-

सीता निर्वासन सम्बन्धी कथाओं में प्रमुख रुप से राजदरबार जनसामान्य, आश्रम, जंगल इत्यादि क्षेत्रों से कथा का सम्बन्ध है अतः कवियों ने श्रोत के आधार पर इन्ही क्षेत्रों से वस्तुओं से ग्रहण कर उसके सहज य अलंकृत तथा इन्द्रिय संवेदनाओं से वलित विम्बों का प्रयोग किया है। सीता निर्वासन से सम्बन्धित आलोच्य काव्य कुछ द्विवेदी युगीन कुछ छायावादी युगीऩ एवं कुछ छायावादोत्तर काल से सम्बन्धित रचनाऐं हैं। जिनका प्रभाव विम्ब संरचना पर भी पड़ा है। कहना नहीं होगा द्विवेदी युगीन इन काव्य ग्रन्थों में भाषा अपने प्राथमिक रुप से दिखाई देती है अविधा की प्रधानता के कारण विम्ब बहुत स्पष्ट नहीं है, जबकि शेष रचनायें इस दृष्टि से सफल और सम्बद्ध विम्ब वाली कही जा सकती है।

एन्द्रिय विम्ब से तात्पर्य यह की एतद् सम्बन्धी चाक्षुष गन्ध आस्वाद, स्पर्श और ध्वनि विम्बों के उदाहरण देकर संक्षेप में उनकी व्याख्या प्रस्तुत की जायेगी।

वस्तु विम्ब :-

वस्तु विम्ब का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है कवि का कथाव्यापार जिन भौगोलिक स्थलों का स्पर्श करता है तत् सम्बन्धी वस्तुओं का वह साधारण या विम्ब के रुप में प्रयोग करता है। सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों का क्षेत्र राजदरबार, जनसामान्य, नहीं, आश्रम, जंगली जीव जन्तुओं से सम्बन्धित है अतः कवियों ने एतद् विषयक वस्तुओं का सहज-सरल संस्लष्टि लक्षित या अलंकृत रुप में विम्बों का प्रयोग किया है।

''अहा, कितना दिव्य अश्व है !
सारे मंगल चिन्हों से युक्त, हिम-धवल और ऊर्जस्वित
सोने के उसके साज पर जब सूरज की किरणें पड़ती है
तो कैसा झलमलाता है ! '' [318]

''इतिहास को इतना दास बनाकर कि/वह राजभित्तियों पर चित्रित तथा
शिलालेखों पर उत्कीर्णित/हमारी चारण-गाथा लगे,
और जीवन्तता के आभाव में/उन चित्रों, शिलालेखों को '' [319]

''आशान्त समुद्रों को चीर/क्षत-विक्षत/ज्यों ही शान्त तट पर
पहुंचने को होते हैं,कि/एक घटना/एक व्यक्ति
फिर हमें तूफानों के उबलते/उफनते पन में फेंक जाता है,
और हम/जल की विशाल हिल्लोलता में/विवश नारिकेल से '' [320]

''राज्य भवनों पर पताका मुक्त लहराती गगन में ।
व्योम दूतों ने विजय संदेश ज्यों भेजा निलय में ।।
नृत्य करतीं रश्मियां प्रासाद के स्वर्णिम शिखर पर।
चन्द्रिका से धौत, शुचि कौशलपुरी के दिव्य मन्दिर ।।
बह रही सरयू हिलोरें उठ रही निर्मल सलिल में ।। '' [321]

''कुछ चकित सी चंचला सी चौकती/पा गयी फिरती हुई उपरस्थली।
जा चढ़ी सावेग वेग-प्रयोग से-/वेदिता, आवेदिता मां मैथली
पर न जब देखा कहीं सौमित्र को-/मुख कमल पर कर-कलम जाते हुए।'' [322]

''शुष्क अधर, शिथिलांग विकम्पित अश्रु बहाते।
रथाधार ही धार, मृतक-वत् निष्क्रिय जाते।।
अश्रृ-युग्म संतप्त विवश सा विचर रहा है।
सुदृढ़-बद्ध श्रृंगार-साज सब विखर रहा है।।
नि:श्रय ही श्रम-बिन्दु देह से द्रवित हुए है।
ज्यों निदाध-रवि अन्तरिक्ष से कुपित हुए हैं।। '' [323]

'' कलकल सरिता-तट,छल-छल-छल उज्वल प्रवाह
वनफूल-धूल से सुरभित हरित अरण्य-राह
ऊँची-ऊँची गिरिमाला पर तरु-हरियाली
फैली-फैली हर ओर लताओं की जाली
रुपहली रात, सुनहला दिवस, सन्ध्या स्वर्णिम
ऋषि की महिमा से तपोभूमि नित काव्य-महिम

झन-झनन्-झनन् वीणा-वादन रस-आराधन '' [324]

''लहरों-सी तू गिरती-उठती चलती जाती
तू अकुला जाती किन्तु न पथ में घबड़ाती
रो-रो कर भी तू पुनः फूल सी मुसकाती
उनकी ही सुधि तो सदा विरह-पथ में आती ! '' [325]

''सुखद स्वागत की नगर में हो रही तैयारियां।
पुरुष कार्य-व्यस्त सारे थी न पीछे नारियां । '' [326]

''जब राम-राम वह करती थी
अलके विखरी थी गालो तक
टप टप टप आंखे झरती थी
जब गिरी मुद्रिका गोदी में । '' [327]

''विश्व-वातावरण सारा तम निमन्जित हो रहा
जन-समूह अनूह निशि के व्यूह में था सो रहा।
टिमटिमाते तारकों की क्रान्ति ज्योति-विहीन थी
प्रकृति ध्वान्तावरण में तल्लीन सर्वाग्ङीण थी। '' [328]

''दीर्घ-विलम्बित-श्वेत-श्मश्रु, मुख-सौम्यता।
थी मानसिक महत्ता की उद्बोधिनी।।
शान्त-वृत्ति थी सहृदयता की सूचिका।
थी विपत्ति- निपतित की सतत प्रबोधिनी।। '' [329]

''कभी किलकिलाते थे दांत निकाल कर।/कभी हिलाकर डाले फल थे खा रहे।।
कहीं कूद आंखे मटका भौहें नचा।/कपि समूह थे निज-कपिता दिखला रहे।।'' [330]

''जनक नन्दिनी जैसी सरला कोमला।/परम-सहृदया उदारता-आपूरिता।।
दयामयी हित-भरिता पर दुख-कातरा।/करुणा-वरुणालया अवैध-विदूरिता।।'' [331]

''है वही लखन/दर्पीले धारे धनुष वाण/जो वीर दर्प से भाल किये ऊंचा
सदैव घोषित करते/बृह्माण्ड उठांऊ कन्दुक इव/अनुशासन पा।'' [332]

''उत्तर क्षितिज से एक धूल का बादल आता दिखायी दिया था
देखते-देखते वह सारे आश्रम पर छा गया
हम सब चकित और चौकन्ने होकर/उस पर आंखे गड़ाये रहे '' [333]

''स्वर्ण, रशितम, श्वेत, नीलम रंगपुष्पों से भरा वन। '' [334]

''फट गई धरा,/फूटा धरणी से तेज-तेज
निकली प्रकाश की दीप्त रेख,/हे राम ! राम !!

दो फूल बचे हैं लव कुश बस/पूरी पूजा, हे पूर्णकाम,
ले लो राघव अन्तिम प्रणाम/सीता प्रकाश में लीन,
मौन आलोक,/गगन आवाक शान्त/विस्फरित लोचन राम " [335]

वस्तुओं के सहज एवं अलंकृत विम्ब :-

पहले लिखा जा चुका है कि कवियों के वर्ण विषय का क्षेत्र बहुत सीमित है इन्ही क्षेत्रों के कुछ वस्तु विम्ब दृष्टव्य है -

" वैसे ही हो केलि-निरत मछलियाँ भी।/है बच्चों के सहित सलिल में विलसती।।
देखो तो कैसा हिल मिल है खेलती।/मिला मिला कर मुहं कैसी है सरसती।।" [336]

"गोवत्स कि जिसका अंग-अंग/सुगठित सुडौल
स्निग्ध धवल चर्माम्बर कामधेनु/कामधेनु सा सुत
पा गंध शिलासीना सीता की/आता है दौड़ा-दौड़ा
बिछुड़ा शिशु जैसे पाकर/माँ की झलक
किलक दौड़े सत्वर।" [337]

"मेरी आंखों का तरल तत्व/सौन्दर्य नहीं है
छलना है/जो तृषा शान्त कर सके
न ऐसा जल/मुरुथली वंचना है।/यह गरल मानवी जीवन का
अमृत करके/मेरी आंखों से पीने दो " [338]

"उस क्षण मेरे प्यार का महल जैसे टूटा था/मेरा मन जैसे चकनाचूर हुआ था " [339]

"मैने सिद्ध कर दिया कि ग्रन्थों की नीव पर
अन्धकार के ही परकोटे खड़े होते हैं " [340]

"सत्ता के गोमुख पर बैठकर/उसके सारे शक्ति-जलों को
अपने ही अभिषेक के लिए/सुरक्षित रखना।।" [341]

"अपने राजसी कुल-गोत्र को/खण्डित यज्ञोपवीत की भांति उतार
साधारण अनामता धारण कर" [342]

"चक्रवाकों के युगल जल में कलोले कर रहे हैं।
मन मरालों के मचल कर मुक्त मानस तर रहे हैं।।" [343]

"देह में रघुवंश के अंकुर छिपे हैं।/राज वंशी राम मन मन्दिर बसे हैं।।" [344]

"हरित वसन धारे भूमि भत्या हुई थी/छलित-छवि छिपी थी क्षोणि के पात्र ही में।
क्षिति पर छिटकी सो छद्मता दिव्यता में/द्वि-दल-मपि अनोखी कान्ति थी अंकुरों की।
झुलसित लतिकाएं लोलिता ले रही थी,/विरस-मृति सजीवा हो गई दादुरों की।।" [345]

"जा रही-जा रही वह, प्राणों में पीर लिए/अपनी ही ज्योति लिए सीता चल रही आज

वह भा-रत धर्म-दीपिका-सी जल रही आज!/आते झोंके, जाते झोकें पर वह आकाम
उसके प्रत्येक श्वास में गुंजित मात्र राम/लगता कि स्वयं सीता ही रामायणीराग'' [346]

''वर्षाऋतु में घन-विद्यतु की शोभा आपार/धनखेतों की हरियाली का सुषमा-प्रसार
खिलते थे सुन्दर-सुन्दर कमल सरोवर में/गमका करती थी प्रिय शेफाली घर घर में
देखा था पहली बार उन्हे मन्दिर में ही/वे रहे चमकते उस दिन मेरे उर में ही'' [347]

रंग विम्ब :-

मूलतः रंग विम्ब चाक्षसु विम्ब है कवि वस्तुओं के सहज और अलंकृत विम्बों के साथ जहां उनके क्रियात्मक विम्ब उपस्थित करता है वही वह नेत्रों को आनंदित करने हेतु रंगो के अलग-अलग एवं मिश्रित रंग विम्ब प्रस्तुत करता है। सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में लाल,पीला,हरा, केसरिया अथवा उसके संयोग से मिश्रित विम्ब प्रस्तुत हुए हैं।

''स्वर्ण, रश्तिम, श्वेत, नीलम रंग पुष्पों से भरा वन।
देह की बुझती तपन, नव गंध से भरता सुभग मन।।'' [348]

''जिसे देख-वांच कर/शक्ति/पीली पड़ जाए
परन्तु शक्ति/मानवता या बन्धुभाव कुछ नही मानती'' [349]

''लाल-लाल-दल ललित-ललिमा से विलस।/वर्णन कर मर्मर-ध्वनि से विरुदावली।।
मधु ऋतु के स्वागत करने में मत्त था।/मधु से भरित मधूक वरस सुमनावली।।'' [350]

''गगन छवि हुई थी पीतमा नीलमा-या-/हरित पट मया सी नग्र की दिव्यता थी।'' [351]

''पड़ गया राम का मुख पीला व्यकुलता सभा मध्य छाई।
कुछ देर बाद फिर होश हुआ, जब आये वहां लषण भाई।।'' [352]

''देखिये न/वह सामने जी केसरिया झण्डी चमकती है-
वही वाल्मीकि आश्रम है-'' [353]

''सुनती जब सुत का किंचित दुख/ पीला पड़ जाता उसका मुख
उसकी उद्वेलित आत्मा को मैं तुम्हे दिखाने आया हूँ।'' [354]

गात्यात्मक विम्ब :-

गात्यात्मक विम्ब भी वस्तुओं के सहज विन्दुओं से सम्बन्धित है। कवि जगत के विभिन्न क्षेत्रों से चयनित वस्तुओं के जहां सरल विम्ब उपस्थित करता है वहीं कथा प्रवाह में गत्यात्मकता लाने के लिए ऐसे विम्बों का प्रयोग करता है जो हमारे नेतेन्द्रिय में गतिशील विम्ब उत्पन्न होते है। चहचहातें पंछी, कलकल, छलछल करती नदी, चौकडे भरते मृग, नाचते मयूर, सोना वरसाती रश्मियां किसका मन नही मोह लेती -

''कल-कल निनादिनी निर्झरिणी/कुसुमांजलि बद्ध घटियां ये
महिमा मंडित उत्तुंग शिखर/जिन पर गर्वित मयूर के दल
चौकड़ी भरे मृग शशक/और गर्जन करते शार्दूल सिंह

ज्योत्सना विखरते निशानाथ/ तारक दल सेवित

सोना बरसाते रश्मिरथी/दिनकर महान।'' [355]

गन्ध विम्ब :-

ऐसे विम्बों मे इस प्रकार की अनुभूतियों को स्थान मिलता है जो पाठक के घ्राणेन्द्रिय सन्निकर्ष जन्य विम्ब बनाते है। गन्ध की विविधता को पकडकर उसके साथ तदात्म कर सार्थक शब्दों द्वारा गन्ध विम्ब की सृष्टि की जाती है इसके अर्न्तगत उनके प्रभाव का नूर्तन किया जाता है।

''जब तक सीता की गंध/लखन की सांसों में '' [356]

''दाक्षिणात्य चन्दनगंधी हवाएँ/गन्धमादन की पुष्पीय विपुलता '' [357]

''क्योंकि उस व्यक्तित्व की गन्ध में/फूलों की कमनीयता तथा '' [358]

स्पर्श विम्ब :-

स्पर्श संवेदना मानवीय व्यापार की एक महत्वपूर्ण प्रविधि है इसका माध्यम हमारी त्वचा है। कवियों ने शीत, गर्मी, मृदुलता, कठोरता, कोमलता सिहरन इत्यादि की संवेदना इन विम्बों से जाग्रति की है कुछ उदाहरण निम्न हैं -

''है कठोरता, काठ शिला से भी कठिन।/क्यों न प्रेम-धारायें ही उनमें बहें।।

कोमल है तो बनें अकोमल किस लिए।/क्यों न कलेजे बने कलेजे ही रहें।।'' [359]

''अवसर पर तट रखकर, शीतल तपन में।/जीवन से उनमें है जीवन डालती।।'' [360]

सरलता की जो है प्रतिमूर्ति।/सहजता है जिसकी प्रिय-नीति।।

बड़े कोमल है जिसके भाव।/परम-पावन है जिसकी प्रीति।।'' [361]

''लखन के माथे पर/दो गरल गरम बूंदे/टप से टपकी होगी।'' [362]

जो कृमि कीटों की पीड़ा देख/सिंहरती है,/जो वायु वेग से कम्पित

गात लताओं के लख/कंप जाती है'' [363]

''अनुताप वहि में दग्ध/मुझे शीतल करने'' [364]

ध्वनि विम्ब :-

इन विम्बों का सम्बन्ध नाद संवेदना से होता है। इसका क्षेत्र बहुत विस्तृत है। बादलों की गर्जना से लेकर युद्धों के समय शस्त्रों की झनकार पंछियों का कलरव और मानवीय कोलाहल में ध्वनि विम्ब मिलते हैं।

''शीतल मंद समीर सौरभित हो बहता है।

भव कानों में बात सरसता की कहना है।।

प्राणि मात्र के चित को वह पुलकित करता है।

प्रातः को प्रिय बना सुरभि भू में भरता है।।'' [365]

''मै सर्वग्रास भक्षी/धू-धू कर धधका हूँ '' [366]

''अरे, यह शब्द कैसा है ?/या कि मेरे कान बज रहे हैं

ये भेरियाँ, यह चिंघाड, यह घमघमाहट- " [367]

"अर्राते निर्सर और उफनती नदियाँ " [368]

"समुद्रघोष की भांति/जब वह बोलता था तो

आज्ञा पालन करती/दिशाएं/प्रति ध्वनित होती थी।

पूरे साम्राज्य/देश और काल के मन्वन्तरीय फलक में" [369]

"आत्मा प्रसन्न पर प्राण और मन थर-थर-थर।" [370]

"भायोत्पादक विकल-सी वे तुमुल कल कल नांदिनी

बह रही उन्मत्त नदियां विविध भावोत्पादिनी।

गहन झंगी शिवर जंगी पूर्णतम का राज्य है,

सघन सावन घन घटा से हो रहा वह प्राज्य है। " [371]

आस्वाद विम्ब :-

जो पदार्थ हमारे जीह्वा संवेदना को जाग्रत करते है, उन्हे आस्वाद विम्ब कहते है। इनके अर्न्तगत पदार्थों के स्वादगत वैशिष्ट का उल्लेख होता है। मधुर, कटु, कसाय, लवण, तिक्त, खारे के माध्यम से मूर्त और अमूर्त विम्ब उपस्थित किये गये है।

"सहज मधुरता मानस के त्यागे बिना।

अमधुर बनती नही मधुर-वचनावली।" [372]

वस्तुओं के इन्द्रिय सन्निकर्ष विम्बों को सहज और अलंकृत दो विम्बों में बांटा गया। सहज विम्बों के अर्न्तगत वस्तुओं के सरल स्वाभाविक विम्ब प्राप्त होते है। अलंकृत विम्बों में कहीं काव्यशास्त्रीय अलंकारों के माध्यम से मानवीय अथवा प्राकृतिक क्रिया व्यापार को रेखांकित किया गया है कुछ कवियों ने वस्तुओं के क्रियात्मक विम्बो का भी उल्लेख किया है इसप्रकार के विम्बों में मानव और मानवेतर वस्तुओं क्रियाओं का ऐसा सटीक और मार्मिक चित्रांकन किया गया है कि पाठक के मनः पटल पर वस्तु की मानस छवियां- सटीक रुप में अंकित हो गई।

पौराणिक विम्ब :-

इसके अर्न्तगत कवियों ने वस्तु य पात्र की वर्तमान दशा का चित्रांकन करने के लिए पुराण विर्णित किसी प्रथित-ग्रथित पात्र का उल्लेख कर उसके क्रियाव्यापार का चित्र अंकित किया जाता है।

"श्लोक ? यह श्लोक नही पहेली है।/अहेरी पूछता है

ओ रे अकेले पक्षी/तू मेरे तीर से कैसे बच गया

अपने साथी के संग तू भी क्यों नही मरा ?/तो पंक्षी कहता है

तेरी बात का उत्तर पीछे दूंगा/पहले तू वह बता

डाकू की वह जादू का शाल कहा से मिला/जिसे ओढ़कर वह कवि बन गया?" [373]

"जब मुझे तुम्हारी अग्नि मिल गयीतो मैने उसमें अपने जीवन की आहुति चढ़ायी थी।" [374]

"मानवीय प्रारब्ध के ललाट पर /यह कैसा अग्नि-त्रिपुण्ड लिख दिया गया है कि

चारों ओर/केवल स्वाहा ही स्वाहा की '' [375]

''यह महारास/यह विधान/यह खेल/यह प्रारब्ध

अन्नत देवगगांओं के पार भी/असीम है/अक्षत है।'' [376]

मानस विम्ब :-

एन्द्रिय संवेदना जन्य विम्बों की व्याख्या करते हुए हमने देखा है कि एन्द्रियता विम्बों का मूलाधार है कविता में उन्ही विम्बों की बहुलता रहती है कुछ समर्थ सक्षम और भावुक कल्पनाशील कवि ऐसे विम्बों का भी उपयोग करता है पाठकों में बुद्धि तत्व का संशपर्श करते है। ऐसे विम्ब भाव य विचार विम्ब कहलाते हैं।

(1) भाव विम्ब :-

भावों के अर्न्तगत प्राचीन काव्य शास्त्र में वर्णित स्थाई भावों से सम्बन्धित विम्बों के सौन्दर्य का उद्घाटन किया जाता है। सीता निर्वासिन सम्बन्धी काव्यों करुण, वात्सल्य,वीर भावों के लिए ऐसे विम्ब प्रस्तुत है। सीता निर्वासिन **उमाशंकर नगायच** की रचना में तथा अग्निलीक में आक्रोस जन्य भाव विम्ब सीधे कवि तथा सीता द्वारा प्रयुक्त भावनाओं से व्यंजित किये गये हैं।

''उसी ओर अति-आकुल-आँखे लग गई।

लगी निछावर करने वे मुक्तावली।।

बहुत समय से कुम्हलाई आशा-लता।

कल्यवेलि सी कामद बन फूली फली।।'' [377]

''फट गया-फट-गया सुनते ही सुकुमार हृदय !

हो गई विमूर्च्छित वह, गिर पडी नदी तट पर

गंगा ने छिटक दिए जल बिन्दु शुभ्र मुख पर

शीतल समीर ने झट मूर्च्छा का हरण किया

जाग्रत सीता ने दुस्सह दुख का वरण किया:'' [378]

''जैसे फट पड़े अचानक/ज्वालामुखी कही

सब अस्त व्यस्त संत्रस्त/चतुर्दिक हो जावे

वैसी ही हलचल पीडा/लहराई तन में'' [379]

''जब वे चलते है तो लगता है उत्साह का समुद्र उमडा आ रहा है

जो रोकेगा वही काल का ग्रास बन जायेगा।'' [380]

''नव कला, विज्ञान,बृह्माज्ञान का संयोग अनुपम।

ज्यों त्रिवेणी ने बनाया हो अवध में पुण्य संगम।।'' [381]

जिस दिन/प्रथम बार पुष्पवाटिका में

आपके आकाशवर्णी पुरुष को देखा था/क्षणान्त में ही

मेरे रोंम-रोंम/शिरा-उपशिरा/आकण्ठ व्यक्तित्व में

यह गायत्री-सत्य/अनुस्यूत हो गया था कि

मैने किसी/सामान्य राजकुमार के नहीं'' [382]

''सुनती जब सुत का किंचित दुःख/पीला पड़ जाता उसका मुख

उसकी उद्वेलित आत्मा को मै तुम्हे दिखाने आया हूँ।'' [383]

''प्रश्न सुनते ही भरत का गला सहसा भर गया

हो गई पलकें छलाछल ज्वार सा आया नया

धैर्य का एकत्र सविनय ज्येष्ठ से कहने लगे

भाव मन के स्त्रोत बन वदनाद्रि से बहने लगे।'' [384]

(2) विचार विम्ब :-

इसके अन्तर्गत वे विम्ब आते है पढ़कर पाठको के मन में विचारोत्तेजना होती है। इस प्रकार के विम्बों के लिए दर्शन विज्ञान के विविध क्षेत्र सभ्यता और संस्कृति के विकास यात्रा सम्बन्धी विम्ब आते है। प्रस्तुत आलोच्य काव्यों में कथा वस्तु का क्षेत्र विस्तार संकीर्ण है किसी दार्शनिक मत या वाद की व्यख्या कवि को अभिष्ट नहीं है। प्रकृति के क्रिया कलापों में किसी दर्शन की अभिव्यंजना नहीं है। अतः वैचारिक प्रखरता वाले विम्ब बहुत कम मिलते है। कुछ स्थल दृष्टव्य है -

''मुनि के पीछे/मैथिली/दीप्त मणि सी/आहुति सी हव्यमान

प्रज्ञा की पावन शिखा/योग में दीप्तमान/बृह्म की श्रुति

गायत्री का श्रुति मंत्रज्ञान/पति धर्म लीक सी/सूर्यवंश में कीर्तिमान

श्रद्धा, मेघा, तप, क्षमा/शील सी मूर्तिमान।'' [385]

''क्या इसलिए मनुष्य/देश और काल की विपरीत चुम्बकताओं में

एक प्रत्यंचा सा तना हुआ'' [386]

''इस निर्मम निर्णय से मेरा मन शोकित है

मै प्राण-व्यथित, चिन्तित, पीड़ित इस निर्णय से

मन कांप रहा है बारम्बार-विरह-भय से !'' [387]

सारांश यह है कि काव्य भाषा सामान्य भाषा से विशिष्ट होती है। काव्य भाषा चिन्तन और अनुभव को मूर्तित करती है। अमूर्त जीवन के अनुभव मनः स्थितियों संवेदनाओं को व्यक्त करने वाली काव्य भाषा एक ओर व्याकरणिक नियमों में आबद्ध होकर चलती है तो दूसरी ओर वह लक्ष्णानुधावन की चिन्ता भी नही करती कथा विकास क्रम को विश्लेषित करते हुए लिखा गया है कि सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों की साहित्यक पृष्ठिभूमि द्विवेदी युगीन साहित्यक परिस्थितियों से लेकर प्रयोगवाद कालिक प्रवृत्तियों का प्रतिफलन हुआ है। अतः इन काव्यों में प्रयुक्त भाषा शिल्प भी तद्नुसार प्रयुक्त है। इस हेतु शोधकत्री ने इन काव्यों में तत्सम अर्द्ध तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज, ध्वन्यात्मक, नवीन पद्धति से निर्मित शब्दों की संक्षिप्त सूची देकर यह कहने का प्रयास किया है कि शब्द भण्डार की दृष्टि से वैदेही वनवास, जानकी जीवन, एक धारा को प्रतिनिधि करने वाले काव्य है तो प्रवाद पर्व,

सीता निर्वासिन, अग्निलीक दूसरे छोर पर स्थिति है। प्रवाद पर्व में **नरेश मेहता** ने नये प्रकार के शब्दों का प्रयोग पुष्कल रुप में किया है।

भाषा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी सार्थकता उसकी सम्प्रेषणियता में होती है। इस हेतु कवियों ने बहु प्रचलित मुहावरे एवं अलंकारों का बहुविध उपयोग किया है। इन अलंकारों के उपयोग से काव्य की शोभा में अभिबृद्धि हुई है। वैदही वनवास, जानकी जीवन, लवकुश युद्ध, प्रिया या प्रजा और रामराज्य में शब्दालंकार और अर्थालंकारों में उपमा, रुपक, उत्प्रेक्षा प्रतीप का बहुल उपयोग है। प्रवाद पर्व, सीता निर्वासिन और अग्निलीक में मानवीकरण के विशिष्ट प्रयोग है।

वैदेही वनवास, जानकी जीवन, लवकुश युद्ध, प्रिया या प्रजा में द्विवेदी युगीन व्यावरणात्मकता का प्राधान्य है। काव्य भाषा के रुप में इतिवृतात्मकता के कारण भाषा में रचानात्मकता संवेदना का आभाव है। यद्यपि मानव तथा प्रकृति के सम्बन्धों के आधार पर **हरिऔध** ने चित्रात्मक भाषा का कुछ रुप खड़ा करने में समर्थ हो गये है। अरुण रामायण और अग्निलीक में भाषा के संवेदना स्वरूप को पूर्ण रुपेण प्रतिष्ठत किया है। अग्निलीक की भाषा में तो प्रखरता ओजस्वता और जो प्रवाह मयता मिलती है वह प्रयोग वादी काव्य भाषा का निदर्शन है।

यहां यह कहना असंगत न होगा कि इन कवियों ने अविधा, लक्षणा, व्यंजना आदि शब्द शक्तियों में भाषिक प्रतिमानों के माध्यम से व्यंजनाये उक्तियां अनेक अर्थ छवियों को प्रकट करने में समर्थ हुई है। प्रवाद पर्व में भाषा का नूतन प्रयोग शुद्ध तत्सम् परिमार्जित संस्कृतनिष्ठ कृदन्तीय शब्दों का वाहुल्य है। नये शब्द विधान से मन की प्रश्नाकूलता व्यक्त करने में कवि को पूर्ण सफलता मिली है। इसी परिप्रेक्ष्य में काव्यों के अनुसंशन य आस्वादन के लिए शोधकत्री ने विम्ब विधान का यत्किचिंद सहारा लेकर आलोच्य कवियों की सम्प्रेषणियता का विश्लेषण किया है। देखा ये गया है कि वैदेही वनवास प्रिया या प्रजा, में वस्तु विम्ब के सहज अलंकृत विम्बों की प्रचुरता है। प्रवाद पर्व एवं अग्निलीक में मानसिक पुष्ट विम्ब मिलते है। इन विम्बों के उपयोग से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि कवि ने घटना य व्यापार को चित्रित करने के लिए जिन विम्बों का प्रयोग किया है उसमें कवि को पूर्ण सफलता मिली है। कहना नहीं होगा कि तत्सम तद्भव संस्कृतनिष्ठ शब्दों के उपयोग से अनायास आगत अलंकारों का स्वाभविक प्रयोग, भावानुकूल भाषा में लोकोक्त एवं मुहावरों का सफल उन्निवेश यत्र-तत्र लक्षणा एवं व्यंजना से नयी अर्थ छवियाँ उत्पन्न कर चाक्षुस एवं मानसिक विम्बों के साथ नाट्य विम्ब (अग्निलीक) धार्मिता से यह काव्य अपने-अपने युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। भाषा प्रवाह एवं सामर्थ की दृष्टि से वैदेही वनवास, जानकी जीवन तथा आधुनिक भाव बोधों की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त नूतन भाषिक प्रतिमानों की दृष्टि से अरुण रामायण एवं अग्निलीक महत्वपूर्ण और सार्वभौमिक रचानाऐं हैं।

❁ सन्दर्भ सूची ❁

1- काव्यालंकार - पृ. 2/5

2- काव्यप्रकाश - पृ. 9/79

3- साहित्य दर्पण - पृ. 10/30

4- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 94

5- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 26

6- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 28

7- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 25

8- अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 38

9- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्द दास 'विनीत' - पृ. 91

10- लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 2

11- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 71

12- रामराज्य - राम प्रकाश शर्मा - पृ. 68

13- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 623

14- वैदेही वनवास - अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 94

15- वैदेही वनवास - अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 180

16- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 29

17- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24-25

18- अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 25

19- जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल ''राष्ट्रीय आत्मा'' पृ. 8/45

20- अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 6

21- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 76

22- लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 8

23- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 617

24- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 624

25- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 73

26- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 40

27- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 92

28- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 28

29- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 78

30- अरुण रामायण - पोद्दार रामावातार अरुण - पृ. 637

31- लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 5

32- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्द दास 'विनीत' - पृ. 96

33- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 74

34- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 5

35- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्द दास 'विनीत' - पृ. 90

36- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 17

37- लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 4

38- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 642

39- साहित्य दर्पण - पृ. 10/11

40- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 2

41- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 4

42- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 156

43- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 23

44- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 33

45- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 628

46- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 121

47- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 69

48- जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 1/64

49- साहित्य दर्पण - पृ. 10/14

50- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 16

51- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 250

52- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 21

53- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 32

54- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 26

55- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 15

56- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 61

57- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 108

58- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 109-110

59- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 623

60- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 626

61- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 70
62- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 90
63- लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 7
64- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 77
65- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 36
66- जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 2/95
67- अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 11
68- काव्य प्रकाश - पृ. 10/23
69- साहित्य दर्पण - पृ. 10/28
70- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 58
71- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 47
72- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 67
73- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 34
74- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 40/41
75- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 63
76- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 626
77- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 92
78- अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 35
79- अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 103
80- काव्य प्रकाश - पृ. 10/92
81- साहित्य दर्पण - पृ. 10/40/41
82- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 23
83- सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24
84- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 32
85- अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 64
86- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 61
87- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 63
88- भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 45
89- अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 633
90- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 92
91- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 101

92- प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 103

93- साहित्य दर्पण - पृ. 10/87

94- काव्य प्रकाश - पृ. 201/133

95- रस गंगाधर - द्वितीय अध्याय- ....

96- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 36

97- वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 238

98- प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 108

99- रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 78

100-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 640-641

101-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 31

102-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल 'राष्ट्रीय आत्मा' - पृ. 1/3

103-काव्य प्रकाश - पृ. 10/105

104-साहित्य दर्पण - पृ. 10/52

105-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 36

106-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 236

107-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 12

108-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 35

109-काव्य प्रकाश - पृ. 10/109

110-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 51

111-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 66

112-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 125

113-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

114-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 5

115-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल 'राष्ट्रीय आत्मा' - पृ. 2/32

116-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 21

117-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 25

118-काव्य प्रकाश - पृ. 10/103

119-साहित्य दर्पण - पृ. 10/48/9

120-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 63

121-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 632

122-साहित्य दर्पण - पृ. 10/69

123-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 632

124-काव्य प्रकाश - पृ. 10/110

125-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 63

126-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 57

127-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

128-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 629

129-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 90

130-साहित्य दर्पण - पृ. 10/35

131-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 17

132-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 62

133-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 24

134-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 90

135-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 97

136-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 626

137-साहित्य दर्पण - पृ. 10/37

138-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 60

139-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 70

140-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 31

141-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 44

142-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

143-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 627

144-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 6/55

145-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 60

146-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 82

147-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 233

148-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 29

149-साहित्य दर्पण - पृ. 10/46

150-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 33

151-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 47

152-साहित्य दर्पण - पृ. 10/27

153-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 60

154-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 110

155-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 633

156-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 16/128

157-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 11/31/32

158-काव्यालंकार - पृ. 17

159-साहित्य दर्पण - पृ. 10/8

160-काव्यप्रकाश - पृ. 9/83

161-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 34

162-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 80

163-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 121

164-साहित्य दर्पण - पृ. 10/37

165-साहित्य दर्पण - पृ. 10/37

166-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 52

167-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 64

168-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 42

169-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 633

170-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 19

171-काव्यालंकार - पृ. 3/33

172-काव्यादर्श - पृ. 2/348

173-काव्यालंकार सूत्रवृत्ति - पृ. 4/3

174-साहित्य दर्पण - पृ. 10/51

175-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 105

176-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 635

177-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 14/1/43

178-काव्य प्रकाश - पृ. 10/102

179-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 125

180-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 125

181-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 30

182-साहित्य दर्पण - पृ. 10/37

183-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 105

184-साहित्य दर्पण - पृ. 10/57

185-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 70

186-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 641

187-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 2/85

188-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 636

189-साहित्य दर्पण - पृ. 10/26

190-सीता निर्वासंन - उमाशंकर नगायच - पृ. 23

191-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 32

192-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 34

193-साहित्य दर्पण - पृ. 10/81

194-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 61

195-साहित्य दर्पण - पृ. 10/66

196-काव्य प्रकाश - पृ. 10/107

197-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 64

198-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24

199-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 61

200-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 79

201-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24/25

202-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24

203-सीता निर्वासिन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24

204-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 21

205-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 54

206-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 60

207-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 163

208-साहित्य दर्पण - पृ. 10/26

209-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 76/77

210-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 125

211-काव्य प्रकाश - पृ. 103/78

212-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 16

213-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 72

214-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 3

215-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 36

216-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 87
217-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 50
218-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 11/12
219-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 103
220-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 70
221-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 99
222-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 65
223-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 1
224-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 624
225-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 148
226-काव्य प्रकाश - ....
227-साहित्य दर्पण - ....
228-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 96
229-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 27
230-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 26
231-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 17
232-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 20
233-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 24
234-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 45/46
235-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 67
236-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 67
237-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 121
238-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 4
239-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625
240-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 62
241-शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त - भाग एक - पृ. 465
242-साहित्य दर्पण - पृ. 10/15
243-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 9
244-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 22
245-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 35
246-अग्निलीन - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 28

247-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 45

248-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 69

249-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 68

250-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 124

251-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 125

252-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 7

253-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 627

254-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 64

255-साहित्य दर्पण - पृ. 8/1

256-भरत नाट्य शास्त्र - ....

257-साहित्य दर्पण - पृ. 8/2

258-भरत नाट्य शास्त्र - ....

259-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' - पृ. 11/1

260-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 28

261-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 51

262-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 631

263-रामराज्य -रामप्रकाश शर्मा - पृ. 76

264-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 6

265-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 110/111

266-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 68

267-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 147

268-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 315

269-साहित्य दर्पण - पृ. 8/4/5/6

270-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" - पृ. 101

271-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 55

272-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 49

273-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 75

274-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 12

275-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 89

276-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

278-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 19/99

279-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 20/22

280-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 62

281-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 32/33

282-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 22

283-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 74

284-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - ....

285-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 76

286-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

287-भूमिजा - नागार्जुन - पृ. 68

288-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 143

289-जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल - पृ. 8/39

290-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 116

291-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 110

292-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 74

293-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 45

294-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 1

295-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 14

296-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 65

297-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 80

298-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 55

299-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 20

300-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 1

301-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 63

302-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 6

303-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 76

304-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 156

305-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 15

306-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 72

307-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24

308-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 19

309-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 170

310-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 24/25

311-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 64

312-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 92

313-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 642

314-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 52

315-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 109

316-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 45

317-काव्य विम्ब - डा. नरेश मेहता - पृ 61

318-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 27/28

319-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 33

320-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 58-59

321-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 61

322-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 92

323-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 123

324-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 634

325-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 631

326-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 9

327-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 53

328-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 47

329-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 96

330-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 230

331-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 238

332-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 33

333-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 26/27

334-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 63

335-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 79

336-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 207

337-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 42

338-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 45

339-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 51

340-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 66

341-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 40-41

342-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 66

343-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 63

344-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

345-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 112

346-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 628

347-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 629

348-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 63

349-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 47

350-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 178

351-प्रिया या प्रजा - पं. गोविन्ददास 'विनीत' - पृ. 118

352-लवकुश युद्ध - पं. जगदीश प्रसाद तिवारी - पृ. 3

353-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 12

354-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 7

355-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 28

356-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 37

357-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 51

358-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 72

359-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 194

360-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 209

361-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 22

362-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 37

363-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 46

364-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 63

365-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 11

366-सीता निर्वासन - उमाशंकर नगायच - पृ. 48

367-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 26

368-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 49

369-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 44/45

370-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

371-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 71

372-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 194

373-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 37/38

374-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 67

375-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 22

376-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 63

377-वैदेही वनवास - अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध'' - पृ. 250

378-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 626

379-सीता निर्वासन · उमाशंकर नगायच - पृ. 33

380-अग्निलीक - भारत भूषण अग्रवाल - पृ. 29

381-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा- पृ. 62

382-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 71-72

383-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 7

384-अग्निपरीक्षा - आचार्य तुलसी - पृ. 11

385-रामराज्य - रामप्रकाश शर्मा - पृ. 76-77

386-प्रवाद पर्व - डा. नरेश मेहता - पृ. 19

387-अरुण रामायण - पोद्दार रामावतार अरुण - पृ. 625

अध्याय-षष्ठम्

सीता निर्वासन काव्यों में सांस्कृतिक तत्व

- संस्कृति-स्वरूप एवं तत्व
- सामाजिक परिवेश
- राजनीतिक अवधारणा
- लोक जीवन एवं दर्शन

अध्याय-6

सीता निर्वासन काव्यों में सांस्कृतिक तत्व

भारतीय संस्कृति और उसके तत्व :-

किसी भी जीवन्त समाज को समझने हेतु उस समाज में निहित सांस्कृतिक अवधारणाओं को समझना पड़ता है। यह सांस्कृतिक अवधारणा सामाजिक संरचना परस्पर सम्बन्ध राजनीतिक विचारधारा, दर्शन, रहन-सहन, विश्वास, रूढ़ियों अन्धविश्वासो से अभिव्यंजित होते है। मानव सम्यता के सम्पूर्ण इतिहास में भारतीय संस्कृति का गरिमामयी परम्परा का प्रतीक है जिसमे ज्ञान, कला, विश्वास और मानवता के क्षेत्र में सम्पूर्ण विश्व को कुछ न कुछ दिया है। जहां विश्व की अनेक सभ्यतायीं काल कवलित हो गयी वहां अनेक आक्रान्ताओं के ध्वंसकारी रूप को सहकर भी भारतीय संस्कृति सनातन बनी हुई है।

संस्कृति का व्युत्पत्ति परक अर्थ है परिष्कृत य परिमार्जित इसकी परिभाषा करते हुए ये कहा जा सकता है संस्कृति उन वस्तुओं के आनन्द से सम्बन्धित है। जिन्हें संसार सुंदर मानता है। यह उस ज्ञान से सम्बन्धित है, जिसे मानवता मूल्यवान समझती है। तथा यह उन सिद्धान्तों का निरूपण करती है, जिनको समूह ने सत्य मान लिया है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों की कुछ परिभाषाये इस प्रकार है-

संस्कृति की परिभाषा :-

''संस्कृति शब्द सम् उपसर्ग पूर्वक ''डुक्रअ्करणे" धातु के तिन् प्रत्यय का योग करने पर निष्पन्न होता है। सम और परि उपसर्ग पूर्वक डक्रअ्करणे धातु से भूषण एवं संघात अर्थ अभीष्ट होने पर सुट् का आगम होता है।" [1] अस्तु संस्कृति का अर्थ है, भूषण भूत सम्यक कृति। इस प्रकार संस्कृति से परिष्करण या परिमार्जन की क्रिया अथवा सम्यक रूपेण निर्माण का अर्थ ग्रहण किया जाता है। [2]

ऋग्वेद मे संस्कृति [3] यजुर्वेद में संस्कृति [4] और संस्कृति [5] तथा ऐतरेय ब्रह्मणमें संस्कृति [6] शब्द का प्रयोग मिलता है। **डा.पी.वी. काणे** का मत है कि ऋग्वेद (5/76/2)में प्रयुक्त संस्कृति शब्द का अर्थ धर्म (वर्तन) है। [7] **सायण** ने धर्म का अर्थ यज्ञ माना है। [8] इस प्रकार **सायण** के मत से ऋग्वेद (5/76/2) में संस्कृति शब्द का प्रयोग संस्कार युक्त यज्ञ के लिये प्रयुक्त हुआ है। [9] यजुर्वेद (7/14)में संस्कृत शब्द का प्रयोग भाष्यकार **उवट** के मत से सत्कार [10] के अर्थ में और भाष्यकार **महीधर** के मत से संस्कार [11] के अर्थ में हुआ है। अस्तु संस्कृति शब्द को **कल्चर** के आधार पर गढ़ा हुआ तथा आधुनिक युग में नवप्रयुक्त मानना अयुक्तिपूर्ण है। इस शब्द का वैदिक युग से प्रयोग होता रहा है। हां अर्थ विस्तार के द्वारा आधुनिक युग में संस्कृति शब्द से पहले की अपेक्षा अधिक अर्थ गाम्भीर्य की अभिव्यक्ति होती है यह कहना समुचित है। बाबू गुलाब राय ने लिखा है कि, संस्कृति शब्द का सम्बन्ध संस्कार से है, जिसका अर्थ है संशोधन करना उत्तम बनाना, परिष्कार करना। संस्कार व्यक्ति के भी होते है और जाति के भी। जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहते है। [12] **डा. मनमोहन शर्मा** के अनुसार संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति संस्कार शब्द से मानना अधिक युक्तिसंगत होगा, क्योकि संस्कार का अभिप्राय किसी वस्तु के मुल-दोष को दूर कर उसको सिद्व साधक बनाना है। मलापनयन और अतिशयाधान, संस्कारो के

ये दो रूप है जिनसे न केवल शरीर किन्तु आत्मा या अन्तःकरण भी शुद्व हाता है। सम्यक संस्कारो से युक्त कृतियां ही संस्कृति है।[13] संस्कृति का समानार्थी अंग्रेजी शब्द **कल्चर** (Culture) है, जिसका अर्थ है कृषि परिष्कार, सभ्यता की स्थिति।[14] आक्सफोर्ड डिक्शनरी में कल्चर शब्द परिभाषा करते हुए कहा गया है कि, मन का शिक्षण तथा परिष्करण, जिनसे रूचि तथा व्यावहारिक आचरण का निर्माण होता है, संस्कृति के उपादान है संस्कृति सभ्यता का बौद्धिक पार्श्व है। जिससे हम सर्वोत्तम के साथ अपना सम्पर्क स्थापित करते है।[15] **इनसाइक्लोपीडिया** में कहा गया है कि संस्कृति मानव के सभी प्रकार के आन्तरिक जीवन, बौद्धिक, नैतिक और धार्मिकता को व्यक्त करती है। आधुनिक मनोविज्ञान ने इस तथ्य पर अधिक जोर दिया है कि बुद्दि और कर्म में बडी समानता है। संस्कृति भावानात्मक और क्रियात्मक पद्धतियों के द्वन्द्व के परिहार का प्रयत्न है। मन और कर्म में अंतरंग और बहिरंग जीवन में सामजस्य ही संस्कृति का मूलाधार है।[16] **टाइलर** के अनुसार संस्कृति संश्लिष्ट अभियोजना है, जिसमें समाजगत ज्ञान, विश्वास, कला, नैतिकता, विधि, रीति-भीति तथा लोगो की सभी प्रकार की क्षमताएं तथा आदते सम्मिलित रहती है।[17] **मैकाइवर** के मत से संस्कृति हमारे दैनिक व्यवहार में कला, साहित्य, धर्म, मनोरंजन, और आनन्द में पाये जाने वाले रहन-सहन और विचार के तरीकों मे हमारी प्रकृति की अभिव्यक्ति है।[18] **ए.डब्लू ग्रीन** के अनुसार संस्कृति ज्ञान, व्यवहार तथा विकास की उन आदर्श पद्धतियों एवं ज्ञान और व्यवहार से उत्पन्न उन साधको को कहते है, जो सामाजिक रूप से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होते है।[19] **गोल्डेन वाइजर** के शब्दों में हमारी प्रवृत्तियां, विश्वास और विचार हमारे निर्णय और मूल्य, हमारी संस्थाऐ राजनैतिक, वैधानिक, धार्मिक और आर्थिक हमारी नैतिक संहिताएं और शिष्टाचार के नियम हमारी प्रवृत्तियां, धार्मिक और आर्थिक हमारी पुस्तके और यंत्र, हमारे विज्ञान, दर्शन, एवं दार्शनिक ये सब और दूसरी बहुत सी चीजे संस्कृति मे सम्मलित है।[20] **डा.वासुदेव शरण अग्रवाल** ने लिखा है कि, विचार और कर्म के क्षेत्र में राष्ट्र का जो सृजन है, वहीं उसकी संस्कृति है।[21] **डा. मंगल देव शास्त्री** का मत है कि, देश या समाज के विभिन्न जीवन-व्यापारों में या सामाजिक सम्बन्धो में मानवता की दृष्टि से प्रेरणा प्रदान करने वाले उन आदर्शो की समष्टि को ही संस्कृति समझना चाहिए।[22] **डा. प्रभुदयाल मीतल** के मत से संस्कृति का सम्बन्ध संस्कार या संस्करण से है, जिसका अभिप्राय बुद्धि सुधार संशोधन परिमार्जन अथवा अभ्यन्तर रूप के प्रकाशन से होता है। इस प्रकार मानव समाज के वे सब संस्कार जो लौकिक और पारलौकिक उन्नति के मार्ग को प्रशस्त करते हुए उसके सर्वागींण जीवन का निर्माण करते है, उसको संस्कृति कहा जाता है, संस्कृति के अन्तर्गत देश, जाति या समाज के चिन्तन, मनन, आचार-विचार, रहन-सहन, बोली भाषा, वेश-भूषा, कल-कौशल आदि सभी तत्वों का समावेश है। ''संस्कृति का प्रतिबिम्ब धर्मोपासना में झलकता है वह कला एवं साहित्य के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति करती है।''[23] **चतुरसेन शास्त्री** के अनुसार अध्यात्मिक और अधिभौतिक शक्तियों को सामाजिक जीवन के लिये उपयोगी तथा अनुकूल बनाने की कला संस्कृति है।[24] **डा. देवराज** के मत से नृ विज्ञान में संस्कृति का अर्थ समस्त सीखा हुआ व्यवहार होता है, अर्थात वे सब बाते जो हम समाज के सदस्य होने के नाते सीखते है।[25] इस अर्थ में संस्कृति शब्द परम्परा का पर्याय है। संस्कृति मानवीय व्यक्तित्व की वह विशेषता या विशेषताओं का समूह है, जो उस व्यक्तित्व को एक खास अर्थ में महत्वपूर्ण बनाता है।[26] संस्कृति का दार्शनिक विवेचन नामक ग्रन्थ में **डा. देवराज** ने लिखा है कि संस्कृति का अर्थ है सृजनात्मक

अनुचिन्तन। उसका निर्माण उन क्रियाओं द्वारा होता है। जिनके द्वारा मनुष्य यथार्थ की सार्थक किन्तु निरूपयोगी छबियो की सम्बद्ध चेतना प्राप्त करता है। संस्कृति उन क्रियाओं का समुदाय है जिनके द्वारा मनुष्य के आत्मिक (मानसिक)जीवन मे विस्तार समृद्धि और गुणात्मक उच्चता आती है। सामान्य रूप से हम कह सकते है कि संस्कृति मानव जाति के सर्वग्राह आत्मिक जीवन रूपों की श्रृष्टि और उनका उपयोग, [27] **डा. देवराज** एक अन्य प्रसंग में लिखते है कि संस्कृति उन समस्त क्रियाओं को कहते है जिसके द्वारा मनुष्य अपने को विश्व की निरूपयोगी किन्तु अर्थवती छबियों से, चाहे वे छबियां प्रत्यक्ष हो अथवा कल्पित सम्बन्धित रखता है। [28] **डा. मुशीराम शर्मा** का मत है कि संस्कृति का अर्थ है संस्करण परिमार्जन, शोधन, परिष्करण अर्थात ऐसी क्रिया जो व्यक्ति में निर्मलता का संचार करे। जब हम किसी देश, प्रदेश अथवा प्रान्त की संस्कृति की चर्चा करते है, तब हमारा उद्देश्य इस प्रदेश के विकसित आचार विचार रीति-रिवाज, पर्व-उत्सव, संस्कार, कला-कौशल, ज्ञान-विज्ञान, पूजा आदि के विधि विधान एवं अनुक्रम का ही उल्लेख करना होता है। एक व्यक्ति और समग्र समाज का भी विकसित एवं संस्कृत जीवन इन्ही रूपों में प्रकट होता है। [29]

पो. इन्द्र विद्यावाचस्पति के मत से किसी देश की आध्यत्मिक, सामाजिक और मानसिक विभूति को उस देश की संस्कृति कहते है। संस्कृति शब्द में देश के धर्म साहित्य, रीति-रिवाज, परम्पराओ, सामाजिक संगठन आदि अध्यात्मिक और मानसिक तत्वों का समावेश होता है। इन सबके समुदाय का नाम संस्कृति है। [30] **डा. भगवत शरण उपाध्याय** के अनुसार संस्कृति जिस रूप में हम उसे आज मानने लगे है, जो विचार, विकास की मंजिलो की ओर उतना संकेत न कर अधिकतर उन सूक्ष्म तत्वों से सम्बन्ध रखती है जो विचार, विकास, रूचि कला आदर्श आदि की दुनियां है। [31] **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी** के अनुसार संस्कृति मनुष्य की विविध साधनाओ की सर्वोत्तम परिणीत है........भारतीय जनता की विविध साधनाओं की सबसे सुन्दर परिणीत को ही भारतीय संस्कृति कहा जा सकता है। [32]

डा. बलदेव प्रसाद मिश्र का मत है कि संस्कृति का अर्थ हुआ, क्रिया अथवा वह अवस्था, जो समूचे मानव जीवन को अपवित्रता की ओर से हटाकर पवित्रता की ओर तथा अशुद्धि की ओर से हटाकर शुद्धि की ओर ले जाये। [33] मंजी-संवारी, जीव-वृत्ति तथा जीवनचर्या का ही नाम संस्कृति है। [34] **डा. राम जी उपाध्याय** में लिखा है कि प्राकृतिक जीवन को व्यवस्थित और शालीन बनाकर संवारना तथा जीवन में अध्यात्मिक, कलात्मक सेवात्मक पक्ष की प्रतिष्ठा और विकास करना संस्कृति है। संक्षेप में हम कह सकते है। कि संस्कृति मानव व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया है। संस्कृति का मौलिक अर्थ सुधारना अथवा सुन्दर या पूर्ण बनाना है। [35] इस प्रकार हम कह सकते है कि मनुष्य ही सुन्दर कृतियों स्थूल एवं सूक्ष्म और चिन्तन की अभिव्यक्ति का नाम संस्कृति है।

संस्कृति और सभ्यता :-

इसी परिपेक्ष्य में सभ्यता का अर्थ स्पष्ट करते हुए संस्कृति से उसका अन्तर निरूपित किया जायेगा। सभ्यता का शब्दिक अर्थ है। सभा मे बैठने की योग्यता **डा. प्रशान्त कुमार** के अनुसार साभ्यता शब्द शिष्टाचार के नियमों के साथ ही सामाजिक उत्तरदायित्व सामाजिक प्रतिबंध और सामाजिक आचरण का भी निर्देश करता है। संस्कृति मानव समाज की बाह्य और मौलिक सिद्धियों का मापदण्ड है। और संस्कृति उसकी आन्तरिक तथा

मानसिक सिद्धियों का। **डॉ. विशम्भर दयाल अवस्थी** के अनुसार यदि सभ्यता उसका शरीर है, संस्कृति उसकी आत्मा बोलचाल, वेशभूषा और व्यवहार में साधुता सभ्यता को सूचित करती है। और परदुःखकातरता, परसेवा, करूणा और परस्वार्थ साधन आदि रूप में संस्कृति की अभिव्यक्ति होती है। [36] **श्री गुलाबराय** ने अध्यात्मिकता परलोक एवं आवागमन में विश्वास समन्वय बुद्धि वर्णाश्रम विभाग, वाह्य और आन्तरिक शुद्धि, अहिंसा, करूणा, मैत्री, और विनय, प्रकृति, प्रेम उत्सव प्रियता। [37] तथा **डॉ. रामजी उपाध्याय** ने सार्वजनिकता, सर्वांगीणता, देवपरायणता, धर्मपरता, आश्रम व्यवस्था, अध्यात्मिकता, कर्मफल एवं जन्मान्तरवाद संस्कृति के तत्वों के रूप में उल्लिखित किया है। [38]

तात्पर्य ये है कि सामाजिक सम्बन्ध उसकी व्यवस्था राजनीतिक समस्याओं और उसका स्वरूप आर्थिक स्थति एवं धार्मिक उपासना इत्यादि, संस्कृति के तत्व हो सकते है। इन्ही आधार पर सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों की समीक्षा की जायेगी।

तात्पर्य यह कि संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित होने वाले गुण है। यह प्रत्येक समूह की आदर्शमयी स्थिति है। संस्कृति एक सामाजिक घटना है। भारतीय संस्कृति की कुछ विशेषताये है, सामाजिक सम्बन्ध, धार्मिकता, अध्यात्मिकता, लोक कल्याण की भावना, समन्वय, स्थायित्व, इत्यादि। यहां पर हम सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में सामाजिक परिवेश, लोक विश्वास, नारियों की स्थिति राजनीतिक अवधारणाये, प्रेम, धर्म, कर्तव्य इत्यादि सांस्कृतिक गुणों की झांकी अंकित करेगे। सामाजिक सम्बन्धों में पति-पत्नी, देवर-भाभी, पिता-पुत्री, सास-बहू इत्यादि सम्बन्ध प्रमुख है। जिनका विवेचन आगे किया जा रहा है।

सीता निर्वासन काव्यों में सांस्कृतिक तत्व :-

1- सामाजिक परिवेश :-

वैदेही वनवास का प्रणयन करते हुए लेखक ने रामकथा परम्परा को मर्मस्पर्शी बनाते हुए सत्य का अद्‌भुत विकास किया है। सती सिरोमणि, लोक पूज्या भगवती सीता का चारित्रिक बखान करते हुए समसामायिकता पर बुद्धि संगत पर गहरी दृष्टि डालते हुए भ्रान्ति दोषों से दूर हटकर वर्णन किया है।

सत्य और न्याय का विकास करना रामराज्य के सामाजिक परिवेश का प्रथम दृष्टिकोण था। जहां पाप प्रवृत्ति और अत्याचार का उन्मूलन कर प्रजा के समस्त उत्तरदायित्वों का अधिकार संरक्षित रामराज्य का सामाजिक परिवेश पूर्णरूप से मानवतावादी था। जहां भेद, प्रजा का सम्पत्ति पर अधिकार, कर और 'व्याज' रहित व्यापार का संचालन, कर्मचारियों का कर्तव्य के प्रति निष्ठा एवं विश्व के सभी शुभ कर्म रामराज्य पर विद्यमान थे। इतना ही नही प्रकृति भी रामराज्य के नियमों के अनुरूप मानवीय अवश्यकताओं की पूर्ति करती थी।

''समय पर जल देते है मेघ।
सताती नही रीति की भीति।।
दिखाते कहीं नहीं दुर्वन्त।
भरी है सब में प्रीति प्रतीत।।'' [39]

प्रवाद पर्व में समकालिक वैचारिक गुरूता का साक्षात महत्व वर्णन किया गया है। कर्म और धर्म को

मानवीय चैतन्यता समरसता को स्थापित करने हेतु राजा के निजत्व से परे राज्य की प्रभुसत्ता अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। रामराज्य का सामाजिक परिवेश यथार्थ भूमि पर कर्म और भय रहित निजत्व को प्रदान करने वाला स्वतंत्रता का पोषण करते हुए इतिहास में अभिष्ट स्थान बनाने की परिकल्पना से सन्निध्य है-

''कर्म के इस तटस्थ/भागवत-अनुष्ठान से

कोई मुक्ति नही/कोई निष्कृति नहीं।।'' [40]

अग्निलीक का सीता वनवास प्रसंग सच्ची यथार्थ व आदर्श की दृष्टि से पौराणिक व ऐतिहासिक चरित्रों की मानवीय रूप का अनवेषण करते हुए रचना की गई है। गद्य और पद्य को मिलाकर इस खण्ड काव्य को योजनावद्ध परिवर्तनो के माध्यम से राम और सीता के चरित्र को बहुत आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया है। अग्निलीक की रचना करते हुये कथानक में कवि ने मर्यादा पुरषोत्तम राम के चरित्र को शुद्ध मानव के रूप में प्रस्तुत किया है। राम के कार्यो की आन्तरिक समीक्षा करके कथा के सामाजिक प्रवेश को सहज विश्वानीय एवं प्रभावकारी बना दिया है रचनाकार का स्पष्ट मत निःसन्देह मर्म स्पर्शी कृति है।

उमाशंकर नगायच जी के द्वारा सीता निर्वासन में पौराणिक प्रेरक तत्वों से अपने पात्रों के सामाजिक परिवेश में सामाजिक सम्बन्धों का मनोहारी एवं भाव पूर्ण वर्णन किया है। सीता निर्वासन की मर्मान्तिक पीड़ा जहां धर्म और समाज के प्रति उत्तरदायी सम्बन्धों को पीड़ा देता है, वही परस्पर पात्रों के सम्बन्धों को झकझोरता है। कवि की पीड़ा सम्बन्धो के प्रवाह में काव्य की पावन गंगा बनकर बहती है-

"तुम मुझे कृतघ्नी कहो,/कहो पथ भ्रष्ट भ्रमित,

उत्तर ले छोडूंगा।/मुझको बहलावों ना।।" [41]

रामराज्य की रामकथा में सामाजिक परिवेश का वर्णन प्रियजनों के प्रेम बन्धन में आवध्य सम्बन्ध सत्यता के आचार संघिताओं में रामराज्य के उपवन को अपनी सुरभि से सुरक्षित करते हुए प्रतीत होते है। धन धान्य और सम्पत्ति से रामराज्य की सम्पूर्ण वसुधा सुशोभित होती है-

"लोक मंगल प्रति चरण पर नित समार्पित हो रहा है।

शांति, सुख, वैभव अवध का बीथियों मे बह रहा है।।" [42]

सीता निर्वासन काव्यों में सास्कृतिक तत्वों का वर्णन लोक मान्यताओं के अर्न्तगत भाग्य पुरूथार्थ सामाजिक परिवेश, सामाजिक सम्बन्ध, राजा-प्रजा आदि का दायित्व तथा कथित आधुनिकतावादी परम्परा में, कवि का अद्यतन महाकाव्य अरूण रामायण जन सामान्य की भाषा में रचित कृति अनुभूति और अभिव्यक्ति की उदात्तता के दर्शन कराती है। अद्यतन महाकाव्य की रचना अरूण रामायण में रामकथा के सीता निर्वासन दृष्टान्त पर परिवारिक सम्बन्धों की व्याख्या सुरूचि और विस्तृत है।

"लवकुश युद्ध" की रचना करते हुए कवि ने रामकथा के मूल से कथा पर कहीं नहीं भटके है। तत्कालिक राज्य, समाज तथा सामाजिक परिवेश में मानवीय सम्बन्धों का चित्रण पूर्ण उदात्तता के साथ किया है। जहां पर लेखक का दृष्टिकोण राम के औतारवादी चरित्र को प्रतिष्ठित करता है। वहीं भारत भूमि के लोक जीवन नायक का जन-मन-रंजन हेतु समर्पित होते हुए, भारत के लोक जीवन एवं सामाजिक सम्बन्धों का अक्षुण आदर्श

बनकर प्रस्तुत है।

प्रिया या प्रजा का सामाजिक परिवेश अवतारवाद पर आधारित जिसकी घटनाएं परोक्ष रूप में परलोक अधिनायक के पूर्व नियोजित योजना अनुरूप घटित होती है। रामराज्य के समाज का यह विश्वास भाग्य पर आस्थावान होता है। निष्कासन से लक्ष्मण की वेदना को कम करने हेतु आकाशवाणी होती है। जो भविष्य में निष्कासन से परिवर्तन का संकेत देती है-

''इस अभिलीला का भी यहां, भावी-सूचक अर्थ है।
इस कारण ही सौमित्र प्रिय! व्याकुल होना व्यर्थ है।'' [43]

अग्नि परीक्षा में कवि ने कथावस्तु को कथा की भावी घटनाओं का समयानुकूल विशिष्ट वर्णन करते हुए प्रमाणिक बनाने के निरन्तर प्रयास किया है। जैन परम्परा अनुसार रचना के विविध पहलू रामराज्य के सामाजिक परिवेश को सत्य, दया और धर्म की उज्जवल कीर्ति से देदीप्यमान करता है। वज्रजंघ द्वारा सीता को धर्म बहन बनाकर संरक्षण देना, रामराज्य युग के सामाजिक परिवेश का अनुपम उदाहरण है-

''सीता को सानन्द, वज्रजंघ लाया स्वगृह।
अति घनिष्ट सम्बन्ध, जुडा एक परिवार-सा।।'' [44]

पारिवारिक सम्बन्ध

पति-पत्नी का सम्बन्ध :-

वैदेही वनवास में पारिवारिक सम्बन्धों का अनुरंजनकारी वर्णन विद्यमान है। लोकोपवाद से हुए उद्गिन मनः राम गुरू आश्रम सीता जी के लोकोपवाद सम्बन्धी मन्त्रणा करते हुए देवि के स्थानान्तरण की बात कह अपनी पीडा प्रकट कर पारिवारिक सम्बन्धों में अपनी प्रियता के प्रति अपने उत्कृष्ट प्रेम को प्रदर्शित करते है।

''इन बातों से तो अब उत्तम है यही।
यदि बनती है बात, स्वयं मै सब सहूं।।
हो प्रियतमा वियोग, प्रिया व्यथिता बने।
तो भी जन-हित देख अविचलित-चित्त रहूं।'' [45]

राजभवन की अट्टालिकाओं पर स्निग्ध चन्द्रिका की आभा में चिन्तित चित्त श्री राम को देखकर उनके चिन्ता का कारण ज्ञात कर देवि सीता के आंखो में अनवरत अश्रु प्रवाह होने लगते है। अविवेकी जनता के असह्य कथन को एवं राम के स्थानान्तरण निर्णय को सुनकर अपना कलेजा थाम लेती है। तथा अपने पति के लोक आराधन हेतु विरह दुःख सहना ही अपना धर्म मानती है।

''वह तो स्वाभाविक प्रवाह था जो मुंह से बाहर आया।
आह! कलेजा हिले कलपता कौन नही कब दिखलाया।।
किन्तु आपके धर्म का न जो परिपालन कर पाऊंगी।
सहधर्मिणी नाथ की तो मै कैसे भला कहाऊंगी।।'' [46]

प्रवाद पर्व में पति पत्नी सम्बन्धों का वर्णन एकान्त और वैयक्तिक क्षणों में किया गया है। जो अनाम

व्यक्ति के आक्षेप से उद्विग्न मनः राम की पत्नी सीता राम को इतिहास पुरूष बनने हेतु निजतत्व को समर्पित करने को कहती है-

''मै जानती थी आर्यपुत्र! कि/इतिहास के निर्माता
घर-परिवार की भाषा में/बाते नहीं किया करते'' [47]

वैयक्तिक नितान्त क्षणों में राम की चिन्ता अनाम व्यक्ति के द्वारा उठाई गई उंगली के कारण मानवीय पुरूषार्थ की विडम्बना से हा-हाकार भरा मूल्य चुकाने हेतु राम का मन खिन्न होता है-

''एक ही राग आज तक बजता रहा है-/विषाद का ?
तुम्हें प्रत्येक बार/चाहे वह विवाह हो/या युद्व
पाने की चेष्टा में/खोता ही गया हूं प्रिये!'' [48]

अग्निलीक की रचना में पति पत्नी के सम्बन्धो की व्याख्या करते हुए सम्बन्धो की अवधारणा में प्रजा के मध्य व्याप्त भ्रम को समाप्त करने के लिये राजपुरूष के उद्‌गारो से राम की अन्तः पीडा को चित्रित करने का प्रयास किया है। रचना की यथार्थ परख राजपुरूष के कथन से मानवीय सम्बन्धो की सूक्ष्मतम व्याख्या प्रस्तुत है-

''इसका दुःख हम सबसे ज्यादा /स्वयं महाराज को है।
जो हानि, जो ग्लानि वे भोग रहे हैं
हम तुम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते।
हमने क्या खोया है मात्र एक छत्र छाया/लेकिन उन्होनें
अपने प्राणों की प्रेयसी, अपने जीवन की संगिनी,
अपनी अर्धागिंनी खोयी है।'' [49]

रामराज्य की प्रजा में सीता निर्वासन से फैली हुई भ्रान्ति मयी पीड़ा जनमानस को अश्रु रंजित बनाकर स्नेह की यन्त्रणा से तड़पा रही थी। देवि का वियोग सामान्यजन के मन की आग की तपस से झुलसा चुका था। इसीलिये राम की पत्नी प्रियता पर प्रश्न वाचक जनरव बना हुआ था। परन्तु निर्वासन की पीड़ा के उपरान्त भी प्रेम चेतना जागृत हो उठती है-

''आज सोलह वर्ष बाद
जब बीती बातें किसी पूर्व जन्म की घटनाएं लगती है
तुमने अचानक/मेरी आंखो के सामने अपनी माया पसार दी है
और मेरा निभृत लोक चरमराने लग गया है!'' [50]

कवि ने सीता निर्वासन में पति पत्नी के सम्बन्ध को गौरव गरिमा का मान देकर प्रतिष्ठित किया है। लोकोपवाद के उपरान्त सीता निर्वासन का राम के द्वारा निर्णय राम की आदर्श नीति का कारण था। निष्कासन की पीड़ा का आघात निरन्तर राम के ह्रदय पर होता था पति पत्नी के बीच सम्बन्धो की व्याख्या कवि के सन्तुलित शब्द रचना से प्रस्तुत किया है-

''सीता अर्धागी नही,/राम की सर्वेश्वरि/जिस पर विचार,

न्याय का नही/नीति का था।'' [51]

वही पर पत्नी का पति के प्रति समर्पण सम्पूर्ण ह्रदयाभावो से होता है। कदाचित यही कारण है कि अपने प्रिय पति राम से निष्कासन का दण्ड प्राप्त करने के उपरान्त भी स्वयं को पति की यज्ञ वेदिका की समिधा मानती है-

''रामत्व तुम्हारा ज्योतिवंत/सीता की आकांक्षा अशेष
सीता का सीता तत्व/तभी होगा सार्थक
सौ बार जन्म ले/होगी निर्वासित विशेष।'' [52]

पति-पत्नी के सम्बन्धो की मर्यादा को भूमिजा के सामाजिक परिवेश में नागार्जुन कवि ने बहुत ही आदर्शमयी ढ़ग से प्रस्तुत किया है। सीता की स्मृतियों में मुनि पत्नी अहिल्या से वचन वन प्रवास में स्वमेव याद आ जाता है। जो पत्नी वृत शीलता और एक पत्नी बृत के लिए अपना जीवन अर्पित करता है। इससे बडा पति पत्नी के मध्य समर्पित सम्बन्ध का आदर्श अद्वतीय बन जाता है-

''जीवन भर वह तुम्हें रखेगा याद/नारी के प्रति कभी न होगा क्रूर
नहीं करेगा वह दूसरा विवाह/सदा रहेगा एक पत्निवृत-शील'' [53]

पति-पत्नी का सम्बन्ध आदर्श के उच्चतम सोपानो पर तिष्ठित है। त्याग और आदर्श के मोती सत्विकता के धागे में पिरोये हुये है। जिनमें पारस्परिक समर्पण और निःस्वार्थ सेवा, का मंत्र सम्बन्धो के साधना मे प्रयुक्त होता है। सम्बन्ध चाहे पति-पत्नी का हो, देवर भाभी का हो पिता पुत्र का हो या गुरू शिष्य का सम्बन्ध हो। उनकी व्याख्या रामराज्य के सामाजिक परिवेश को उत्कृष्टता के परिधानों से सुसज्जित करती है। लोकापवाद का विषदंस विछोह की पीडा से पति-पत्नी को तड़पाता है-

''रघुवंश मूक, सुस्थिर गंभीर।/मन में करूणा की विषम पीर।।
विषदंस लग गया हो तन में।/चुभ गया शूल प्रभु के मन में।।'' [54]

लोकापवाद की सूचना के उपरान्त पति राम की पीडा उनके अन्तः मन को झकझोरती है-

''राम के राज्य में होगा यह अन्याय घोर
आएगा मेरे मन पर भी दुख का झकोर।'' [55]

पति राम की पीड़ा का उपरोक्त उदाहरण है जो पत्नी के विरह की आशंका से विह्वल होता है। जो कि उत्कृष्ट प्रेम सम्बन्धो का संकेत है। वही पर देवी सीता का उत्कृष्ट प्रेम संस्कृति को निर्वासन के उपरान्त भी जीवन्त रखता है। इसी कारण वह निर्वासन वेदना सहकर भी निरन्तर पति कीर्ति की कामना करती है-

''तुम मेरे महाविरह से और विभासित हो
मेरे निर्वासन से तुम शक्ति सुबासित हो।'' [56]

कथा वर्णन में वर्णित पति पत्नी के सम्बन्धों की उदात्त विवेचना प्रस्तुत करते हुए लेखक ने देवी सीता के गर्भिणी अवस्था में वन दर्शन एवं ऋषि पत्नियों को पारितोषक वितरक हेतु वन जाने की अनुमति लेना, तथा मुदित मन से राम का अनुमति देना, परस्पर सम्बन्धों का स्नेहमयी सूचक है-

"हो जाती उनसे उऋण नाथ, कुछ वस्तु भेंट यदि कर आती।
अपने को धन्य समझती मै, जो प्रभु की आज्ञा पा जाती।।
श्री सीता जी के वचन वहां, सुन रामचन्द्र जी मुसकाने।
फिर बोले शुभ दिन ले जाओं, जो वस्तु हो मन में ठाने।।" [57]

पति-पत्नी के सम्बन्धो का विवेचन आंशिक है। जिसमें सीता परिचय देते हुए अयोध्या के राजा की पत्नी निरूपित किया है-

"अहह! वह अयोध्या-नाथ की योग-दात्री,
सघन-विपिन-भू में पडी है अनाथा।" [58]

पति पत्नी का उत्कृष्ट वर्णन सीता के द्वारा प्रधान सेनापति से भेजे गये संदेश में प्राप्त होता है। जिसमें निष्कासन के उपरान्त भी अपने कर्मो को दोषी मानते हुए श्री राम को निर्दोश बताती है। जिससे पति-पत्नी का सम्बन्ध उत्कृष्ट हो जाता है-

"जो हुआ दोष सब मेरा है
निर्दोष निरन्तर रहे राम,
कृत कर्मो का ही कुपरिणाम
जिसमें उनकी मति हुई बाम।" [59]

देवर भाभी का सम्बन्ध :-

देवर भाभी के सम्बन्धों का वर्णन करते हुए कवि ने परिवारिक सम्बन्धो को प्रस्तुत किया है। यद्यपि कथा वर्णन में सीता पर उठे लोकोपवाद की पीडा भरत और शत्रुघन के अभिव्यक्ति से परिलक्षित होती है परन्तु लक्ष्मण की पीडा पूर्णरूप से प्रकट हो जाती है-

आपकी कुत्सा किसी तरह।
सहज ममता है सह पाती।।
पर सुने पूज्या की निन्दा।
आग तन में है लग जाती।।" [60]

जहां देवरों के सात्विकाचरण का अपूर्व आधार वर्णित है। वहीं पर भाभी का देवरों के प्रति भाभी के मन में अन्वय प्रेम का सागर लहराता हुआ प्रतीत होता है। पति आदेशित जानकी जी को लक्ष्मण के द्वारा अयोध्या से रथारूढ़ कराकर ले जाने में हो रही वेदना को लक्ष्मण की अधीरता से पहचानकर देवि सीता ने उन्हे परितोषित करने के लिये पति आदेश में ही अपने आत्म सुखों की विवेचना करती है।

"किन्तु सुनों सुत जिस पति-पद की।
पूजा कर मैने यह जाना।।
आत्मसुखों से आत्मत्याग ही। सुफलद अधिक गया है माना।।" [61]

अग्निलीक का सामाजिक परिवेश देवर भाभी के मध्य सम्बन्धों का प्रतीकात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत

करता है। रथवान के कथन पर भाभी के प्रति लक्ष्मण का समर्थन स्पष्ट होता है-

"और छोटे महाराज का ऐसा कौन-सा अपराध था
कि उन्हे यह राक्षसी काम सौपा गया?
जिन भाभी को वे मां की तरह पूजते थे
उन्ही को अनाथिनी बना गये।" [62]

देवर भाभी के सम्बन्धो की जीवन्त व्यंजना करते हुए सम्बन्धों मे संस्कारों का स्थापन करते हुए सम्बन्धों की निष्ठा को अतुलनीय ऊचाइयां प्रदान की है। श्री राम के द्वारा निर्वासन के लिये आदेशित वीर लक्ष्मण के तन में प्रकम्पन होता है, और वह वेदना के ज्वार में झुलसते हुए मूर्छा ग्रस्त हो जाते है-

"वैदेही के देवर की/मुरझी मुरझी छवि,
कुछ ध्वस्त ध्वस्त,/स्खलित प्राय तूणीर
और शिथिलित सर चाप/प्रकंम्पित तन," [63]

भाभी का भी स्नेह देवर लक्ष्मण के प्रति आत्मीय है जो सम्बन्धों की महिमा को गौरवान्वित करता है। वन विसर्जन के लिये जाते हुए अज्ञात सीता के द्वारा देवर लक्ष्मण की पीड़ा बार-बार देवी सीता को आन्दोलित करती है। इसीलिये वह रामानुज की वेदना का कारण देने वाले चाहे वह स्वयं राघवेन्द्र से ही क्यों न हो सत्याग्रह को तत्पर हो उठती है। कवि के द्वारा देवर भाभी के सम्बन्ध विवेचन उत्कृष्टता का प्रतीक है-

"तुम जैसा देवर, अनुज,/लखन! केवल तुम हो।
बोलो मैं कैसे प्राण विसर्जन करके भी तुमको दे सकती हूं।
सुख शान्ति, अपार हर्ष।" [64]

देवर-भाभी के सम्बन्ध का वर्णन अत्याधिक मौलिकता से प्रस्तुत है। भरत, रिपुसूदन के वर्णन दर्शन तो आंशिक ही मिलते है। परन्तु लक्ष्मण की करूण वेदना मानवीय सम्बन्ध के देवर-भाभी सम्बन्ध को अनरूप बनाता है-

"आहत गति लक्ष्मण, करूण वेदना लेकर।
सारी पूंजी निज गंवा शांति सुख देकर।।
अन्तःपुर में सीता पद वंदन करके।
नत नयन मूक, पद नख से लेखन करते।" [65]

देवर भाभी के सम्बन्धों की व्याख्या सीता के भूमि प्रवेश करने के उपरान्त लक्ष्मण की पीड़ा का वर्णन कर किया है-

"होगा लक्ष्मण को भारी परिताप
लव-कुश वापस जाएंगे साकेत" [66]

कवि के द्वारा देवर भाभी के सम्बन्धों की व्याख्या विस्तृत रूप से प्रस्तुत है। शब्द रचना सम्बन्धों को जीवन्त बनाते है। मन्त्रणा कक्ष में भरत का उद्बोधन भाभी सीता को सम्बन्धों के विश्वास पर ही गंगा सी पवित्र

बताते है। और राम से निष्कासन का विरोध करते है-

"ऐसा न कीजिए, नही कीजिए हे राजन्!

पावन-अति पावन सदा जानकी का जीवन" [67]

सीता माता के निष्कासन की पीडा से देवर शत्रुघन भी अत्यधिक पीडित होते है। राम के सम्मुख अपने विरोध शब्द जो कह सकते थे कहते है-

"चुप रहे नही शत्रुघन कहा जो कहना था

क्या अब तक दुख ही दुख माता को सहना था?

हे विमल अयोध्यापति ! उनके प्रति न्याय करें

करना ही है तो कोई अन्य उपाय करें।" [68]

सम्बन्धों की प्रासंगिकता को वर्णित करते हुए भारतीय सामाजिक परिवेश के अनुसार अत्याधिक उदात्त बना दिया है। निष्कासन की पीड़ा देवर लक्ष्मण को दुखी करती है। वही भाभी के द्वारा बारम्बार सांत्वना मयी शब्दों से देवर की पीड़ा जानने का प्रयास करना इसबात की तत्विक विवेचना है-

"सीता ने अब हठ ठान लिया, रोने का कारण लषण कहो।

मुझकों दुःख मिलता मिलने दो, पर चितिंत मन में आप न हो।।" [69]

देवर और भाभी का सम्बन्ध लक्ष्मण की मार्मिक पीड़ा से प्रकट होता है। सीता निष्कासन के उपरान्त लक्ष्मण की पीडा सम्बन्धो के प्रेम की कारूणिक विवेचना है। मूर्छित सीता को देख लक्ष्मण के विचार पीड़ित होकर आंखो से प्रवाहित होते है।

"अब न प्रथम ऐसा उक्ति-चातुर्थ्य ही था,

न वह सरसता से मर्म आलोचना थी।

अविरल गति बांधे नेत्र थे निर्झरों से,

अधर, विबिर मानो भाव-उन्मोचना थी।" [70]

देवर भाभी का सम्बन्ध लक्ष्मण के द्वारा माता कौशिल्या के बन स्मृतियां प्रस्तुत करते हुए भाभी के प्रेम का बखान करते है। लक्ष्मण की इस अभिव्यक्ति से जहां भाभी को मात्र सम्बोधन मिलता है वही देवर लक्ष्मण को भाभी मातृत्व वात्सल्य मिलता है-

"मिला आपसे भी बढ़कर वात्सल्य मुझे भाभी का" [71]

सास-बहू का सम्बन्ध :-

प्रसव मंगल कामना की एवं लोक उपकार हेतु देवि का प्रस्थान वर्णन में, कवि ने भारतीय लोक मानस के सम्बन्धों की विवेचना हृदयस्थ भावों के अन्तस गहराइयों में उतरकर किया है। कवि के वर्णन में सांस्कृतिक रीति-रिवाज तो विद्यमान है ही परन्तु सम्बन्धों का मर्यादा अनुकूल वर्णन है। देवि सीता का वन जाने के पूर्व माता कौशिल्या से अनुमति हेतु सीता की अभिव्यक्ति संम्बन्धो की उत्कृष्टता को प्रस्तुत करती है।

"दुःख है अब मैं कर न सकूंगी।

कुछ दिन पद-पंकज की सेवा।।
आह प्रति-दिवस मिल न सकेगा।
अब दर्शन मंजुल-तम-मेवा।।'' [72]

वही पर माता कौशिल्या की अभिव्यक्ति को प्रस्तुत कर सास का अन्वय प्रेम बहू के प्रति परिलक्षित होता है। माता कौशिल्या का प्रेम अश्रु प्रवाह से निकलकर प्रत्यक्ष प्रस्तुत हो जाता है-

''किन्तु नहीं रोके रूकता हैं।
आंसू आंखो में है आता।।
समझाती हूं पर मेरा मन।
मेरी बात नहीं सुन पाता।।'' [73]

सास वधू के सास्वत् सम्बन्धों के स्नेह का मार्मिक वर्णन कर सम्बन्ध की मर्यादा को मार्मिक बना दिया है। निर्वासन के उपरान्त माताओं की पीड़ा का वर्णन किया है-

''सीता निर्वासन की आदेश शिला दुर्धर
मां की कोमल छाती पर रख पाया होगा?'' [74]

रामराज्य की रामकथा में सासबहू के सम्बन्ध का वर्णन भी भावपूर्ण है। सीता के निष्कासन की पीड़ा का चित्रण कवि ने किया है। सीता के मन को अपनी सास (मात्र) चरणों के सेवा का दायित्व पूर्ण न कर पाने की पीड़ा पति विछोह की पीड़ा से कम नही होती-

''मात्र चरणों में नमन शत बार करना।
मैथिली का मात को संदेश कहना।।
क्रूर है दुर्दैव, सेवा कर न पाई।
अब क्षमा दे, निज व्यथा कुछ कह न पाई।।'' [75]

पारिवारिक सम्बन्धों में बहू और सास के सम्बन्धो का चित्रण कथा को सुसोभित करता है। जिसका अनुपम उदाहरण काव्य के प्रारम्भ से ही प्राप्त हो जाता है। वन अभियान से अयोध्या वापस पहुंचने के उपरान्त वधू सीता अपने श्रद्धा सुमन माता कौशिल्या के चरणों में अर्पित करती है। वही सास कौशिल्या वधू को प्रेम मयी आशीष देती है-

''पैरो में गिरती सीता को बोली अपराजिता सगव,
बेटी! सदा सुखी रह, तेरी सफल कामनाएं हो सर्व।'' [76]

बहन/देवरानियों का सम्बन्ध :-

देवरानी एवं बहनों के प्रेम का अनुरागमयी वर्णन परस्पर प्रेम की धारा को प्रवाहित करता है। वाल्मीकि आश्रम के प्रस्थान को सुनकर हृदय कलुषता से भर उठता है। परन्तु देवि सीता के द्वारा उपदेशित कर स्वधर्म के प्रति निष्ठावान रहने का पथ बतलाया है-

''है मुख्य-धर्म पत्नी का।

पति-पद-पंकज की अर्चा।।

जो स्वयं पति-रता होवे।

क्या उससे इसकी चर्चा।।'' [77]

पुत्र और माता का सम्बन्ध :-

कवि का वर्णन श्री राम की सहधार्मिणी देवि सीता के दिव्यतामयी चरित्र का गौरव गान करते हुए परम उत्तम सम्बन्धो का वर्णन विधान किया गया है पुत्रों के प्रति स्नेह और पालन को लोकाराधन हेतु ही समर्पित किया है। तात्पर्य यह कि पुत्रों के प्रति ममता का निःस्वार्थ समर्पण लोकाराधन हेतु ही समर्पित होता है-

''हां यह आर्शीवाद कृपा कर दीजिये।

मेरे चित को चंचल-मति छू ले नहीं।।

विविध व्यथायें सहूं किन्तु पति-वांछिता

लोकाराधन-पूत-नीति भूले नही।।'' [78]

देवी सीता के अन्तः करण में पनपा प्रलाप अपने पुत्रों के प्रति स्नेह की वर्षा करता है। वह अपने विचारों में पुत्रों के पोषण सम्बन्धी आभावों से उद्विग्न मनः हो उठती है-

''अनुप्राणित रह गए प्रसव के बाद

करूणा विगलित तापसियों के मध्य

हुआ भरण पोषण इनका किस भांति

सारी बातें आती मुझको याद।'' [79]

माता का सम्बन्ध पुत्रों से पुत्रों का सम्बन्ध माता से गुरू का सम्बन्ध शिष्यों से बडा ही मार्मिक है,माता और पुत्रों के सम्बन्धों का वर्णन आशिंक और सांकेतिक है। लवकुश के द्वारा शत्रुघन से युद्व में अपना परिचय सीता के पुत्रों के रूप में दिया जाता है-

''लवकुश बोले सीता देवी मेरी माता का नाम यहां।

पर मै न जानता पिता कौन रहते है उनका धाम कहां।।'' [80]

पुत्र से माता का ममत्व सास्वत होता है। परन्तु वर्णित कथा में राम कौशिल्या लवणांकुश सीता के मध्य मां बेटो के सम्बन्धों की व्याख्या विस्तृत की गई है। परन्तु माता और पुत्र के सम्बन्ध का उदात्य वर्णन कौशिल्या का लक्ष्मण से ममता भाव, सम्बन्धों की चरम सीमा को छूता है-

''सर पर धर कर हाथ पूछती बेटा ! कहा हुआ था घाव?

लालन क्या बतलाऊं कैसा उभरा था ममता भाव।

बार-बार तन को सहलाती, कोमल हाथों से संस्पर्श

अस्फुट शब्दों में आता बाहर रह -रह अन्तर का हर्ष।'' [81]

पिता और पुत्र का सम्बन्ध :-

पिता और पुत्र के सम्बन्धों का बडा ही मार्मिक उदाहरण पेश किया है। लवकुश के बारे में देवी सीता

अपने कलंक की परछाई पड़ने का विचार कर विह्वल हो जाती थी। पुनः इतिहास को दोहराये जाने की कल्पना करती है-

"देवर प्रभु वन जाने का आदेश
हो जाएंगे मूर्छित अपने-आप
सह पाएंगे कैसे पुत्र-विछोह
मर्यादा का पालन रघुकुल रीति
एक मात्र बस वो ही चरम विधेय।" 82

भाई का सम्बन्ध :-

श्री राम के द्वारा भाई के सम्बन्धों का सम्मान किया जाता है। इसीलिए अपनी पीड़ा के अनुरूप ही बन्धुओं की पीडा समझते है-

"है अभी तुम्हारी जैसी ही मेरी दुःख गति
व्यक्तिगत रूप से मुझको भी तो असह कष्ट।।" 83

अरूण रामायण में शास्वत जीवन के मानवीय सम्बन्धों का दृष्टान्त वर्णन भाषा भाव की गरिमा से आलोकित करता है। भाई के सम्बन्धों का वर्णन करते हुए काव्य धारा को परिवारिक सम्बन्धों की पावन गंगा बना दिया है। धोबी का वृतान्त गुप्तचर से जानने के उपरान्त राम द्वारा अपनी पीड़ा लक्ष्मण से सर्वप्रथम कहना, एवं निष्कासन का निर्णय सुनाना। तथा लक्ष्मण द्वारा दुखी होकर भी भाई के निर्णय को स्वीकार करना, समर्पित सम्बन्धों का सूचक है-

"असमंजसता के साथ लषण बोले कि नाथ मै जाता हूं।
पर महलों में सियबन को सुन जायेगी नहीं बताता हूं।।" 84

भाई के सम्बन्धों की विवेचना करते हुए परस्पर प्रेम का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत है। भरत को राम का राज्य सौपना और राम का राज्य सत्ता का लेने से इन्कार करना, सम्बन्धों को मार्मिक बनाता है-

"राज्य छोड़ना भरत चाहते, राम न लेने को तैयार
आज राज्य लेने देने की आपस में होती मनुहार।" 85

सामाजिक दायित्व :-

रामराज्य के सर्व सामानता पूर्ण समाज का दायित्व निर्वाहन परम देदीप्यमान है। जहां पर निजत्व का सरलता से समर्पित करना पुनीत कर्तव्य के रूप में प्रतिष्ठित है। सबल को अत्याचार से मुक्ति तथा न्याय की प्रतिष्ठा करना, तथा जनता की सुख सुविधा को निरूपित करना समाज का प्रथम दायित्व है-

"बिलसती है घर-घर में शांति।
भरा है जन-जन में आनन्द।।
कहीं है कलह न कपटाचार।
न निन्दित-वृत्ति-जनित छल छंद।।" 86

राज्य के प्रति राजा का समग्र दायित्व होता है। राजा से राज्य को निर्मित नही किया जाता बल्कि राष्ट्र से राजा बनता है। ऐसे आदर्श सामाजिक दायित्वों का निर्वाहन जहां प्रजा के विश्वास और निर्भीक अभिव्यक्ति की रक्षा करने हेतु तत्पर आदर्श दायित्व की पूर्ति करता है। सीता अभिव्यक्ति सामाजिक दायित्व हेतु समर्पित है-

''पर प्रजा के विश्वास की
निर्भय अभिव्यक्ति की रक्षा अनिवार्य है।'' [87]

सामाजिक दायित्व के सन्दर्भ में कथा के अंश सीता निर्वासन से जन सामान्य के मन में व्याप्त हुई पीडा का निवारण करने हेतु अश्वमेघ का आयोजन राजा का प्रजा के प्रति प्रकट प्रेम और उत्तर दायित्व प्रस्तुत है-

''ज्योतिषियों ने बताया है कि इस यज्ञ की पूर्णाहुति पर
महाराज चक्रवर्ती होगे/प्रजा को सुख मिलेगा।'' [88]

राज धर्म के दावानल पर राजा को स्वयं का सर्वस्य जलाना पड़ता है। राज्य और समाज के निर्माण और उत्थान का उत्तरदायी शासक होता है। न्याय नीति में स्वजन और परिजन से अनाशक्त होकर नृप को अपने स्वार्थो की आहुति देनी पड़ती है। तब सुन्दर और स्वस्थ समाज का निर्माण होता है-

''सत्ताधर के ही/स्वेद, रक्त, श्रम के कण पा,
जन जीवन में समृद्धि,/शान्ति की तृप्ति दायिनी
फसल सुखद मंगल विधायिनी उगती है।'' [89]

सामाजिक दायित्व का वर्णन करते हुए नागार्जुन ने राजा और राज्यवंश की मर्यादा की रीति-भीति को पूर्ण रूप से जन-मन रंजन के हेतु वर्णित किया है। जहां सम्बन्धों को कोई स्थान नहीं दिया गया-

''मर्यादा का पालन रघुकुल रीति
एक मात्र बस को ही चरम विधेय
कष्ट सहें है जन-मन-रंजन हेतु
आजीवन जिन नरपतियों ने खूब।'' [90]

धर्म और सत्य के शासन की संस्थापना में राजा, प्रजा, सहचरों, पण्डितों, ऋषियों, मुनियों आदि सभी का योगदान है। लोक मंगल की भावना सर्वत्र अहम् के तम का हरणकर रामराज्य को आदित्य के आभा से आलोकित करता है-

''बहु कर्म, अकर्मो के विपाक की छवि को,
इस अश्वमेघ में यज्ञपुरूष को दूंगा।।'' [91]

प्रजा हित साधना जहां राजा का आदर्श है वहीं पर प्रजा का आचरण राजा के आदेशों पर समर्पित होना राजतंत्र का उत्कृष्ट दायित्व है। तभी लक्ष्मण जैसे प्रिय अनुज को अपनी परम वन्दनीया भाभी को निष्कासन हेतु विवश होना पड़ता है-

''लक्ष्मण ! जैसे मैं कहूं उसे ले जाना तुम
गंगा-तट भी वैदेही की दिखलाना तुम

राजा हूं, मेरी आज्ञा को स्वीकार करो

मिथ्या कलंक पर और कालिमा नहीं भरो!'' [92]

राजा का राज्य के प्रति समर्पित कर्तव्य समाज का उत्कृष्ट सामाजिक उत्तरदायित्व होता है। गुप्तचर के द्वारा सीता परिवाद के सम्बन्ध में सूचना देने के पूर्व भयभीत गुप्तचर को उत्साहित कर राज्य का सत्य समाचार प्राप्त करने की राजा की आकांक्षा राज्य के प्रति उत्कृष्ट उत्तरदायित्व का प्रतीक है-

''श्री रामचन्द्र ने कहा कि क्या ऐसा है व्यापा कष्ट तुझे।

तू तोड़ मौन वृत शीघ्र यहां, वृत्तांत सुना भय त्याग मुझे।।'' [93]

समाज के प्रति दायित्व का निर्वाहन राजा का प्रथम कर्तव्य है। भूलोक मंगल हेतु जनक द्वारा अपने हाथों से कृषि कार्य सम्पन्न करना सामाजिक दायित्व का उदाहरण है-

''जनवेश जनता-क्लेश से, कृषि कार्य पर उद्यत हुए।

मलयज तथा मद हेम-मय, हल-फल उभय निर्मित हुए।।'' [94]

सामाजिक दायित्व के प्रति तटस्थ रामराज्य की शासन व्यवस्था सर्व सामानता एवं स्वाधीन चिन्तन और अभिव्यक्ति की पोषक थी। भेदभाव का कहीं स्थान नहीं होता है। आनन्द और उल्लास के साथ अपने कर्तव्य सामाजिक दायित्व के निर्वाहन में उपयोग किया जाता है।

''नारियों का स्थान पुरूषों से न किंचित हीन था

आत्म-निर्णय में रहा, चिन्तन सदा स्वाधीन था।

पूर्ण था अधिकार, केवल भोग सामग्री नहीं,

किन्तु होने दिया उसका दुरूपयोग नहीं कहीं।।'' [95]

राजा :-

रामराज्य में राजा का कर्तव्य सर्वशुभ कर्म युक्त वैदिक धर्म के संरक्षण एवं राज्य धर्म की मर्यादा से युक्त है। बैर-भाव रहित समाज का निर्माण एवं धरा को धन-धान्य से युक्त करने हेतु एवं निरर्थक उत्पात रोकना राजा का प्रिय कर्तब्य है-

''लोक-आराधन है नृप-धर्म।

किन्तु इसका यह आशय है न।।

सुनी जाये उनकी भी बात।

जो वलातला पाते है चैन।।'' [96]

कवि के राजा के द्वारा सीता पर लगाये गये आक्षेप से उद्विग्न मनः राजा राम स्वात्म मंथन करते हुए स्वतंत्र अभिव्यक्ति तथा समदर्शी मानवता वादी न्याय की स्थापन हेतु स्वयं को समर्पित कर मानवीय उदात्तता से इतिहास लिखने का निर्णय करते है-

''इतिहास/खड्ग से नहीं

मानवीय उदात्तता से लिखा जाना चाहिए।'' [97]

राजा एवं राज्य के आदर्श के सम्बन्ध में अग्निलीक का वर्णन संक्षिप्त होते हुय भी विषद है। अयोध्याधिपति राम के धर्म वृत्ति, वीर, साहसी या कीर्तिमान तथा सर्व सामर्थवान के रूप में प्रस्तुत किया है-

''धन्य है हमारे महाराज

जिनका ऐसा अतुल प्रताप है

धन्य है हमारा भाग्य

जो ऐसे वीर, धर्म वृती, कीर्तिवान महाराज मिले है।

मेरे तो नेत्र सफल हो गये।'' [98]

राजा के राज धर्म निर्वाहन में कितने भी संकट क्यों न आये हो या मिथ्या आरोप में ही करना पड़ा हो राजा राम के द्वारा आदर्श राज आचरण करते हुए अपनी न्याय व्यवस्था में किसी तरह का आक्षेप न आने देना तथा सीता को अस्वीकार करने वाले विशेष वर्ग के जनमानस से हुये आन्दोलन के अनुरूप राज्य धर्म की कीर्ति पताका को फहराया है-

''इस भारत भूमि के/तुंग शिखर पर

राजधर्म का कीर्ति केतु/फहराया था।'' [99]

देवी सीता को आत्म विवेचन में राजा के आदर्शो को निरूपित करते हुए। रामराज्य की कुशल राजनैतिक विवेचना की जाती है वह अपनी पीड़ा को इतिहास के लिये न छोड़कर एक ऐसे राजनैतिक समाज और राजा की कल्पना करती है। जहां सहज सुलभ न्याय और असत्य तथा प्रवाद को स्थान न हो-

''झूठ गलेगी जबकि मोम की भांति

सहज सुलभ होगा जब सबको न्याय

स्वेच्छा संयत होगे जन-समुदाय

झूठ-मूठ की ग्लानि, असत्य, प्रवाद

नहीं रहेगें जन जीवन में शेष।'' [100]

राजा का कार्य जनवाणी का सम्मान करते हुए व्यक्त शंकाओं के उन्मूलन में अपना सर्वस्व समर्पित कर राज्य के आदर्शो को समर्पित होता है। स्वयं विदेह नंन्दिनी विरहणी होकर भी अपने पति राम से आदर्श राजा होने की आंकाक्षा रखती है-

''राज्य को पालें प्रजा विश्वास लेकर।

धर्म ध्वज धारे, प्रभु निज सुख देकर।।'' [101]

रामराज्य की राजनैतिक अवधारणा में राजा और जनता के मध्य कर्तव्यों के मर्यादाओं की एक प्राकृतिक रेखा खीर्ची गयी है। इसीलिये राजा के द्वारा अग्नि परीक्षित वैदेही का निष्कासन निर्णय अनुचित होते हुए भी लिया जाना जनवाणी का उत्तरोत्तर सम्मान होता है। जिसमें रामराज्य की सर्वोच्च शासन अवधारणा लोक इच्छा से शासन का संचालन निहित होना प्रतीत होता है-

''चाहे मैं दुखी रहू पर, प्रजा रहे पुलकित

मै करू लोक-इच्छा से ही शासन का हित'' [102]

राजा और रामराज्य के इस चित्रण में कवि का उत्कर्ष लेखन राम को विश्वविजेता और वीरता से परिपूर्ण तेजस्वी राजा के रूप में वर्णित किया है। अश्वमेघ यज्ञ का घोड़ा विश्वविद्यालय अभियान के लिए शत्रुघन के द्वारा ले जाते हुए सर्वत्र रामाज्ञा प्रसारित करना इस बात का सूचक है-

''शत्रुघन साथ में गये एक सेना पीछे पीछे लेकर।
जो गर्भ सहित लड़ने आता, लड़ते चैलेज उसे देकर।।
आज्ञा श्री रामचन्द्र जी की, सबकों शत्रुघन सुनाते थे।
उनकी आज्ञा से विश्व विजय, करने निकला समझाते थे।।'' [103]

राजा का राजनैतिक कर्तव्य धर्म और निष्ठा से पूर्ण था। प्रजा के हित मे कार्य करना सर्वोपरि कर्तव्य माना जाता है। जनक द्वारा प्रस्तुत अभिव्यक्ति से स्पष्ट है-

''धन-धान्य कोष समाप्त है, अब देह यह बलिहार है।
पीड़ित प्रजा जिसकी रहे, उस भूप को धिक्कार है।।'' [104]

कर्तव्य की निष्ठा से युक्त राजा की प्रतिष्ठा लोक हित साधक के रूप में वर्णित है। राम की अन्तस पीडा पत्नी विरह की कल्पना से व्याकुल करती है। परन्तु वह सीता अपवाद को लेकर प्रजा जनों के मध्य उभरी भ्रान्तियों का पटाक्षेप शक्ति की अपेक्षा त्याग से ही करने का निर्णय राजा के उत्कृष्ट कर्तव्य को निरूपित करता है-

''अतः सीता को गहन मे छोड़ देना चाहिए,
मोह के इन बन्धनों को तोड़ देना चाहिए।
लोक-हित के सामने, हित प्रेयसी का गौण सा
अब रहा अतिरिक्त इसके दूसरा पथ कौन सा।'' [105]

संस्कृति एवं सास्कृतिक तत्वों का उल्लेख करते हुए यह कहा गया था कि जीवन में जो कुछ श्रेष्ठ है वरेण्य है, काम्य है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा, ऐसे नियमों को निर्माण विधि निषेध की व्यवस्था इसके अन्तर्गत आते है। इस दृष्टि से सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में प्रतिविंम्बित सामाजिक आदर्शो की व्याख्या की गयी। देखा ये गया है कि मूल वाल्मीकि रामायण में राम के पारिवारिक संगठन का उल्लेख है उसमें पति-पत्नी, भाई, और इनसे निर्मित सम्बन्ध आते है। इनमें राम का परिवार प्रमुख है, सीता उनकी सहधर्मिणी पतिवृता पत्नी है किन्तु परिस्थिति बस यह परिवार विछिन्न हो जाता है। प्रजा के आग्रह से राम सीता का निर्वासन करते है। भारत और लक्ष्मण अपने आदर्श रूप में उपस्थिति हुए है। अतः वे आदर्श देवर एवं सीता, आदर्श भाभी सिद्ध हुई थी यद्यपि कुछ काव्यों में सीता के चारित्रिक विकास की रूपरेखा अंकित की गई है जिसमे वे सामाजिक विद्रोहणी के रूप में राम का विरोध करती है। कुछ काव्यों में राम सीता के पुत्र लवकुश से युद्ध करता हुआ पारिवारिक विषमता का उदाहरण उपस्थित किया है। कौशिल्या सास के रूप में चित्रित है। निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में प्रतिविंम्बित आर्य परिवार त्याग और तपस्या पर आधारित था यद्यपि सीता की पुनः परीक्षा एक प्रश्न वाचक चिन्ह खडा करता है क्योकि इसमें नारी अस्मिता संलग्न है। यह स्थिति संयुक्त परिवार के विघटन के स्वरूप

को प्रतिविंम्बित करता है। यद्यपि राम के आदेश का पालन पूर्ण रूपेण हुआ है। इसलिये यह परिवार संयुक्त परिवार के रूप में माना जा सकता है।

राजा के आदर्श :-

प्रजापति एवं लोकोत्तर नीति का आदर्श प्रस्तुत करते हुए कवि ने राजा राम की लोकाराधन नीति का उदार व उदान्त चित्रण किया है। लक्ष्मण एवं भरत की अभिव्यक्ति ही नहीं गुरू वरिष्ट के द्वारा देवि के सन्दर्भ में लोकापवाद को एक अविवेकी वर्ण का कलुषित प्रपंच मानने पर भी वह इसे जन सद्भाव से विपरीत की संज्ञा देते हुए गुरू वरिष्ट इसे राम के लोकोत्तर हेतु सहनशीलता की सरहना करते हुए कहते है।

''जो हो पर पथ आपका अतुलनीय है।
लोकाराधन की उदार-तम नीति है।।
आत्मत्याग का बड़ा उच्च उपयोग है।
प्रजा-पुंज की उसमें भरी प्रतीति है।।'' [106]

राजा का आदर्श स्वयं की प्रत्येक परीक्षा देकर भी राष्ट्र वर्चस्य को अक्षुण बनाये रखने का उत्तरादयित्व निर्वाहन करना चाहिए-

''हम सब इतिहास-दग्ध/इसीलिए तो हुए कि
हमारे राष्ट्र का वर्चस्व अक्षुण्ण रहे।'' [107]

रामराज्य की प्रतिष्ठा राजा के सात्विकता एवं नैतिकता के लिये सपर्पित होने के कारण राजा के आदर्शो को प्रस्तुत करता है। जहां राजा के द्वारा दुःखों को प्रजा के मध्य कोई स्थान न रखने हेतु निरन्तर प्रयास किये जाते है। राजपुरूष के द्वारा रथवान के दुख को जानने का प्रयास राजा और राज्य कर्मचारी के मध्य राजा के आदर्शो को प्रतिष्ठित करता है-

''आखिर तुम राजा राम की प्रजा हो,
तुम्हारा कष्ट जानना भी हो मेरा काम है
बोलो, मुक्त होकर बोलो,
तुम अचानक दुखी क्यों हो गये?'' [108]

उमाशंकर नगायच जी के राजा राम का आदर्श लोकोत्तर यश से आक्षादित है। वो सर्वथा स्वार्थ सेपरे रहकर त्याग को स्वीकार करना व्यक्ति की महत्वता से परे समाज की महत्तता निरूपित करना चाहे स्वयं य स्वयं के परिवार को कितने भी कष्ट क्यो न झेलने पड़े अर्थात विवेक शून्य जनाक्षेप को झेलना ही राजा के आदर्श होते है। अहिल्या को समाज में आदर देने का कार्य करने वाला राम और जनाक्षेप से सीता को निष्कासित करने वाला शासक राम प्रजा की आकांक्षा पूर्ति हेतु नीति निर्धारण करता है-

''जनता के संकेतो से पा पा कर निदेश
अपना निर्धारित करता रहा अभीष्ट लक्ष्य।
आशा, आकांक्षा पूर्ति प्रजा की करना ही

नृप धर्म, राम का शीर्ष लक्ष्य।'' [109]

राजा के आदर्शों को सनातन इतिहास के वर्णित आदर्शों को राम के द्वारा पूर्ण किया गया है। अपनी प्रियतमा का जन शंकाओं के निवारण में समर्पण ही नहीं लोक विपन्नता एवं अधर्म के विनास हेतु नित नये आयोजन सम्पन्न करना सुनिश्चित करना आदि सीता का त्याग, अश्वमेघ यज्ञ आदि प्रतीक है। रामराज्य का न्याय दण्ड सर्व सामान्य था-

''लक्ष्मण मेरा अभिमंत्र सुनो।
वह राज्यदंड अनुशंस सुनो।।'' [110]

राजा के पावन आदर्श की रूपरेखा का सतत अनुशरण करते हुये कवि ने स्वयं को महाउदार बना लिया है। राजा के आदर्श रूढिवादी जनरव के कारण एक पक्षीय न्याय का सहारा लेकर निष्कासन का कठोर निर्णय लेना पडता है। और जब सीता लवकुश का स्मरण कर इतिहास को दोहरायें जाने की कल्पना से राजा की विवसता को महसूस करती है। तब उनके मुंह से आह निकल जाती है-

''हाय रे राजा! हाय री नीति !
हाय री रूढ़िवादी जन भीति!
हाय रे पुरूष! हाय रे दंभ !
हाय रे एकपक्षीय वह न्याय
इकहरी मर्यादा का बोध।'' [111]

रामराज्य का आदर्श चरित्रिक शासन का निर्माण जन अभिमत का आदर जन कल्याण की भावना राजा ही में नहीं सर्वत्र राजा प्रजा अभियोजन और अभियोगी सर्वत्र विद्यमान है। लोकापवाद से राजा का निष्कासन निर्णय लोक इच्छा का आदर होता है तो दूसरी तरफ निष्कासन के उपरान्त भी अभियोगी परित्यक्त सीता निर्णय को शिरोधार्य कर उनके निष्ठुर निर्णय के बावजूद भी वो अपने राजा के प्रति और अधिक समर्पित होकर समरसता पूर्ण साम्राज्य और जन मानस के सुखमय जीवन की कल्पना करती है-

''समरसता का आनन्द सभी को हो सुप्राप्त
हर घर में बहिर्न्तर प्रशान्ति हो शीघ्र व्याप्त
जीवन की प्रेम-ज्योति नर नारी करें ग्रहण
हो सब प्रकार के सफल समस्त मनुज जीवन।'' [112]

राजा के आदर्शों का बडा ही सुन्दर उदाहरण कवि के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। भक्त का सम्बन्ध जो अपने भगवान से होता है। वही स्नेह भगवान का भक्त से होता है। राजा सुरथ के द्वारा दर्शन की प्रतिज्ञा करने पर राम को बुलाने का निश्चय करना तथा राम का सुरथ के समक्ष पहुंचकर उसका प्रण पूरा करना आदर्श का प्रतीक है-

''शत्रुघन देख यह प्रेम भाव, श्री रामचन्द्र को बुलवा के।
आये श्री राम दिये दर्शन, घोड़ा तुरंत ही छुडवा के।।'' [113]

राजा के आदर्शों का राजनैतिक सन्देश रविवंश राजाओं के द्वारा प्रजा भक्त शासक को प्रतिष्ठित किया

है। जो दमन रीति से विरोध में है-

"यह रवि-वंशी पात्र देश को, देते है अन्तिम सन्देश।
राज-भक्त चाहे जनता, को, प्रजा-भक्त हो रहे नरेश।।
दमन नीति का अर्थ यही है, है वह राज्य-नास प्रस्ताव।
पड़ता नही सतत जनता पर, अश्रु, शत्रु का सफल प्रभाव।।" [114]

राजा की शास्वत नीतियां और उनका संरक्षण राम राज्य का आदर्श बनकर राजा के आदर्शो को चित्रित करता है। जनता की निंदा राजा के लिये अत्याधिक दुस्कर प्रश्न होता है। सीता अपवाद में जनता के द्वारा की जा रही निंदा का पटाक्षेय करने हेतु राम आदर्श राजा की भांति नीति गत निर्णय लेते है। जो राजा के आदर्श को प्रतिष्ठित करती है-

"यह नीति वाक्य सुन राघवेन्द्र
जनता की भ्रान्ति मिटाएंगे।
आगे-पीछे चिन्तन पूर्वक
अत्युत्तम कदम उठाएंगे।" [115]

कर्तव्य :-

रामराज्य में कर्म गंगा का अविरल प्रवाह प्रवाहित होता हुआ धरा के कोने-कोने में आदर्श कर्तव्य की लहलहाती हुई हरियाली को पोषण देता है। राजा का प्रजा के प्रति कर्तव्य प्रजा का राजा के प्रति कर्तव्य सामाजिक, नैतिक, मनुष्यता, नारीत्व, के कर्त्तव्यों का निर्वाहन वृत की तरह किये जाते है। देवि सीता की वन यात्रा में पीड़ित मन से लक्ष्मण को कर्तव्यों के प्रति अपने दृष्टिकोण को उत्कृष्टता सीता के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है-

"स्वलाभ तज लोक-लाभ-साधन।
विपत्ति में भी प्रफुल्ल रहना।।
परार्थ करना न स्वार्थ-चिन्ता।
स्वधर्म-रक्षार्थ क्लेश सहना।।" [116]

कर्तव्य के प्रति कवि के पात्र राम के द्वारा कर्तव्य के प्रति अपना सब कुछ समर्पित कर देते है। और अपने इस निर्मम कर्तव्य को मनुष्य के प्रारब्ध की संज्ञा देकर आत्म विनयोग करते है-

"राम! यही मनुष्य का प्रारब्ध कि/कर्म
निर्मम कर्म/असंग कर्म करता ही चला जाए।" [117]

प्रजा के सुख के लिये रामराज्य के समर्थन में परस्पर कर्तव्य पालन में त्याग को सर्वोपरि स्थान है। रथवान के द्वारा राजपुरूष से अपनी निष्कासन पीड़ा को सामने रखकर राम पर राज्य लिप्सा का अभियोग लगाया जाता है। तो राजपुरूष के द्वारा राजा के त्यागमयी आदर्श का वर्णन किया जाता है-

"तुम भूल से जिसे राज्य का मोह कहते हो
वह कितना बड़ा त्याग था

यह एक दिन पहचानोगे,

और उसी दिन जान पाओगे।'' [118]

आदर्शों के इसी क्रम का अनुशरण करते हुए कवि ने राजा एवं राज वंशीय कर्तव्यों की विवेचना की है। राम के कुल इतिहास इस बात के साक्षी है। जो सदैव जनमन रंजन के लिये समर्पित होता आया है-

''कष्ट सहे है जन-मन रंजन, हेतु

आजीवन जिन नरपतियों ने खूब

उनके कुल का रहा यही इतिहास

उन भवनों मे ढला यही आचार

अब क्यों होगा इस क्रम में व्यतिरेक ?'' [119]

रामराज्य को निर्वासन कथा में कर्तव्यों की व्याख्या कर्तव्य आदर्शों की ऊंचाई है। पति का कर्तव्य के लिये प्रियता का निष्कासन होने के उपरान्त भी वैदेही को आदर्श पत्नी का कर्तव्य निर्वाहन करते हुये सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति को पतिवृता का सन्देश दिया है-

''मैथिली कब राह प्रभु की छोड़ पाई ?

बात क्यों वन की प्रभु मुझसे छिपाई ?'' [120]

''राम पाले वंश की मर्याद जग में।

धारती हूं वंश गौरव मैं हृदय में।।

मैथिली पति धर्म को पहचानती है।

गति, सुहद भर्ता पति को मानती है।।'' [121]

सामाजिक और राजनैतिक अवधारणा के अन्तर्गत रामराज्य के कर्तव्यों की व्याख्या कवि के द्वारा जीवान्त रूप से की गई है। राजा का प्रजा के प्रति कर्तव्य प्रजा का राजा के प्रति कर्तव्य सम्बन्धों का सम्बन्धों में परस्परिक कर्तव्य पति का पत्नी के प्रति और पत्नी का पति के प्रति आदर्शों की ऊंचाइयां छूते है। जो स्वयं को पीड़ा देकर भी दूसरे के हित साध्य में तल्लीन होते है। और इन सब कर्तव्यों का आदर्श कर्तव्य समता मूलक समाज का निर्माण होता है। जिसके संस्थापक श्री राम और संचालक वाल्मीकि है-

''तू स्वतः अमर वरदानमयी शोभा अशेष

मंगलमय विश्व हेतु तेरा आश्रम प्रवेश।'' [122]

प्रजा रंजन के हेतु राजा का समर्पण उसके आदर्शकर का द्योतक है। गुप्तचर से सीता के परिवाद सम्बन्धी धोबी-धोबिन की घटना का समाचार प्राप्त होते ही निष्कासन का निर्णय लेकर लखन को आदेशित करना आदर्श का प्रतीक है-

''रामचन्द्र कहने लगे, सुनो लषण हे तात।

सीता से कहना न तुम, वनोवास की बात।।'' [123]

रामराज्य का समाज कर्म प्रधान समाज है जहां सामाजिक नैतिक कर्तव्यों का निर्वाहन नीति-रीति से

किया जाता है। कृतान्तमुख द्वारा राजाज्ञा से सीता को वन में छोड़ना उसके आत्मीक दुख का कारण होते हुए भी आज्ञा का पालन करना कर्तव्य निष्ठा से करते हुये अपने आपको बार-बार धिक्कारता है-

''वैदेही को मृत समझ, रोता कर अनुताप
मां तूने भी मढ़ दिया, मेरे सर यह पाप।
कौन सुने, किससे कहूं अपनी करूण पुकार
परवश जीवन को अहो ! लाख-लाखधिक्कार।'' [124]

जनता :-

राम के राज्य की जनता सुख चैन से पूरित स्वधर्मरत एवं लोक मर्यादा के हेतु समर्पित होती है। समस्त सुख सुविधायें सम्पन्न एवं महिमावान है। एवं व्यक्तिगत अधिकार पूर्ण सुरक्षित संरक्षित है-

''प्रजा के सकल-वास्तविकता-स्वत्व।
व्यक्तिगत उसके सब अधिकार।।
उसे है प्राप्त सुखी है सर्व।
सुकृत से कर वैभव-विस्तार।।'' [125]

प्रजा की परदुःख कातरता स्पष्ट करते हुये कवि की लेखनी अयोध्या के जनमानस पर अपनी लक्ष्मी के त्यागे जाने की करूणा उनके अन्तःकरण को इतना अहलादित करती है। कि उनके करूणार्द्र हृदय से अपने राजा से बस एक वही कुकृत्य के लिये नाना कुतर्को की विवेचना को जाती रही है। राजा, राजतंत्र और राज्य कार्य संचालन नीति और न्याय संचालन में आदर्श का प्रतीक है-

''जिनका यश तीनों लोको में गूंजता है
जो पिता की भांति पालन करते है
और भाई की भांति स्नेह देते है
जो न्याय के रक्षक और धर्म के अवतार है
उनकी प्रजा होने में दुख ?'' [126]

रामराज्य में जनता का सम्बन्ध राजा के प्रति उतना ही उदात्त था जितना राजा का जनता के प्रति/सीता के सम्बन्ध में प्रचारित अपवाद एक वर्ग विशेष का ही था। परन्तु निष्कासन का संताप अवध के सुख सारिकओं में भी व्याप्त होता है। और वहां के नर नारी स्वयं को बार-बार धिक्कारते हुए अपनी वेदना को प्रकट करते है। परन्तु राजाज्ञा से स्वयं को विवश पाते है-

''आदेश तुम्हारे मौन विवश ढोते होगे,
सीता रानी का विह्वल हो ले नाम किन्तु'' [127]

अयोध्या की जनता की सामृद्धता का रेंखाचित्र खींचकर अपने कल्पना के रंग भर सीता के चिन्तन के माध्यम से जन जीवन की एक झलक प्रस्तुत की है-

''अटे पड़े हो घर-घर में धन-धान्य

स्वर्ण-रजत की लगी हुई हो-ढेर'' [128]

रामराज्य की वर्णित रामकथा में रामराज्य का प्रजा को सत्य धर्म प्राश्रयदाता है। जहां आमोद, प्रमोद व्याप्त होता है जहां निवास की कामना मानव मात्र ही नही अपितु देवता भी करना चाहते है-

''परिपूर्ण प्रजा में मोद आज।
सुरगण को भी प्रिय रामराज्य।।'' [129]

रामराज्य की प्रजा कर्तव्यनिष्ठ, सारल्य, सत्विकता, श्रद्वा, सज्जनता का प्रतीक है। जनहित के कार्य जनमन के अनुरूप होते है। बडे छोटे की उपेक्षा नहीं करते और छोटे बड़ो के आदेश अवहेलना नहीं करते है। ऐसे परस्पर सम्बन्धों पर निहित प्रजा रामराज्य में आनन्द विभोर होती है-

''नहीं करते कभी छोटे, बड़ो की अवहेलना
मानते कर्तव्य है,आदेश उनका झेलना।
बडे छोटों की उपेक्षा, नही करते थे कभी
कार्य होता वही जिसमें पूर्ण सहमत हो सभी।'' [130]

राजा-प्रजा के सम्बन्ध :-

राजनैतिक व्याख्या करते हुये कवि ने समानता से परिपूर्ण सम्बन्धों का अतुलनीय विवेचन किया है। जहां सर्वाधिकार, सर्व सामानता, स्वतंत्रता, एवं मानवता का व्यवहार सर्व व्याप्त है। लोकाराधन की नृपनीति ही पुनीत कर्तव्य है। राजा का प्रजा उपकार करने हेतु निजत्व की समिधा के रूप में समर्पित होती है। और रामराज्य को गौरवान्ति करती है-

''परस्पर प्रीति का समझ लाभ।
हुए मानवता की अनुभूति।।
सुखित है जनता सुख-मुख देख।
पा गये वांछित सफल-विभूति।।'' [131]

जहां पर प्रजा के प्रति राजनीति का उत्कृष्ट सुयोग्य सम्मिलित वर्णन वैदेही वनवास की रामकथा को सुचरित्रित बनाता है। एवं राजा का प्रजा के प्रति नीति गत सम्बन्ध व्यंजित है। वहां पर प्रजा का समर्पण राजा एवं राजवंश के प्रति होना स्वाभाविक है। देवी सीता के प्रस्थान के समय अपार जनता की उपस्थिति इस बात का अमूल सूचक बन जाती है-

''कृपा दिखा आप लोग आये।
कुशल मनाया, हितैषिता की।।
विविध मांगलिक-विधान द्वारा।
समर्चना की दिवांगना की।।'' [132]

काव्य धारा के प्रवाह में कवि का प्रवाद पर्व राजनैतिक सम्बन्धों के विधान को कर्तव्य और धर्म के राष्ट्र और न्याय के तराजू में तौलते हुए इतिहास को समर्पित किया है। अनाम प्रजा और राजा के मध्य सत्य की

बुनियाद पर राज्य की प्राचीरे निर्मित होती है। इसीलिये अनाम प्रजा की उन्मुक्त अभिव्यक्ति हेतु स्वयं को परीक्षा के लिये तैयार करते है-

"अपनी विधि-मण्डित

ऐतिहासिकता की परीक्षा दो राम!" [133]

अयोध्या के जनमानस की पीड़ा और समर्पण के प्रति राम का कृतज्ञ उद्घोष अनाम प्रजा के समर्पण को प्रस्तुत करता है-

"अयोध्या की जनता को

कौन सी परीक्षाएं नहीं देनी पड़ी ?" [134]

राजा के आदर्श स्वयं की किसी भी पीड़ा से परे होते है। वह प्रजा के हेतु अपना सर्वस्व समर्पित कर प्रजा और राज्य को अपने सतकर्मो से संरक्षित करता है। रथवान की पीड़ा पर राजपुरूष का कथन राजा के प्रजा हित कर्मो का प्रकट उदाहरण है-

"अतीत की टीका करना बडा सरल है।

पर हो सकता है

उस समय तुम भी उस पगले का ही समर्थन करते।

बहुतों ने किया भी था।

तुम भूल से जिसे राज्य का मोह कहते हो

वह कितना बडा त्याग था।" [135]

यद्यपि सीता निष्कासन से पीड़ित प्रजा के मन में नाना प्रकार के तर्को ने जन्म लिया है। रथवान की अभिव्यक्ति निष्कासन की पीडा को चित्रित करती है। सिद्धान्ततया अतिसय प्रेम की भावना भी पीड़ा का कारण बन जाती है। रथवान के सभी तर्क स्निग्ध प्रेम चेतना जन्य है। जो प्रेम की पराकाण्ठा को पारकर प्रस्तुत हुये है-

"महाराज ने महारानी को ही नहीं

सारी प्रजा को वनोवास दे रक्खा है।

उधर वे घुलते है।

इधर हम तड़पते है।" [136]

सामाजिक सम्बन्धों के निर्वाहन का दायित्व भार पावन नैतिकता के प्रारूप में आदर्शो को स्थापित करने वाले श्री राम के कार्य शासक के रूप में न होकर जन सेवक के रूप में निक्षेपित होते है। जहां राजा का प्रजा से प्रजा का राजा से अनासक्त सम्बन्ध राजधर्म के आदर्शो को स्थापित करते है। लोक कल्याण के लिये जनता के संकेतो पर विकल्पों की वेदिका में निजत्व की आहुति देना नृप का अभिष्ट धर्म मानते है-

"भारत भू पर जो राजधर्म के स्थापित आदर्श

उन्हे छूने क नभ्र प्रयास किया करता हूं मैं।।" [137]

सीता निर्वासन में राजा और प्रजा के सम्बन्ध अनुपात रहित अन्याय पीड़ा और दंस रहित न्याय की

स्थापना करना मात्र राज्य धर्म का कठोर वृत ही श्री राम का पवित्र उद्देश्य था। राज्य धर्म के क्रूर कठोर वृत के आदर्श राज आचरण का निर्वासिन कर भारत भूमि पर निष्कलंक, अपवाद रहित शासन व्यवस्था, न्याय व्यवस्था का धर्म संमत आचरण राजा का पावन सत्कर्म है। अभिव्यक्ति का स्वतंत्र अधिकार, राज्य कार्य की समीक्षा तथा सर्व जनसामानता, राज्य का उदात्त संविधान होता है-

''रजक राम का प्रिय जन है।
नागरिक अवध का,
प्राप्य जिसे अधिकार
समीक्षा का निर्भय।'' [138]

रामराज्य के सामाजिक सम्बन्धों का वर्णन सामग्री भूमिजा में उदात्तता से वर्णित है। राजा और प्रजा के मध्य सम्बन्ध को अहिल्या के आसिर वचनों से प्रस्तुत है-

''धन्य अयोध्या है ही महाउदार,
पाया जिसने तुम सा राजकुमार
युग युग जियों दयालु, दीन जनबंधु,
होगी तुमसे प्रजा यथार्थ सनाथ'' [139]

रामराज्य में सामाजिक सम्बन्धों का वर्णन-प्रवाह अगाध है। राम के द्वारा राजा का कर्तव्य पालन भारत भूमि के इतिहास का दिव्य स्वरूप है। प्रजा हित साध्य के लिये राजा के द्वारा सर्वस्य निछावर ही आदर्श का प्रतीक है। लोकापवाद की जनवाणी राम के अन्तस तम पीड़ा का कारण होते हुये भी परित्याग का निश्चय जनरव के सम्मान में किया जाना उच्च कोटि का आदर्श है-

''हे तात! यजन कर्मो से धरणी सुखमय,
तपदान अतिथि सम्मान जहां होता है।
धन धान्य सुधा की वर्षा भू पर होती,
इस रामराज्य में प्रजा प्रथम होता है।।'' [140]

रामराज्य में प्रजा का अभिष्ट कर राज्य आचार का परिपालन एवं राजा के कीर्तिमान में अपने स्नेहिल भावों से निरन्तर किया जाता है। सत्य और धर्म की दुहाई का सन्देश चारो ओर प्रसारित होती है-

''सब करते है आचार विमल।
प्रिय प्रजा सुख पाती अविकल।।
हे राम तुम्हारी विमल कीर्ति।
भर देती मन में सुखद प्रीति।।'' [141]

अरूण रामायण की कथा में राजा और प्रजा का पारस्परिक सम्बन्ध आदर्श और निष्ठावान है। प्रजा में आस्था की मर्यादा राजा के लिये सबसे बडा आदर्श है। तभी शंसय के समाप्ति हेतु सीता निर्वासिन का दुखमय निर्णय राजा के द्वारा लिया जाता है-

"दण्डित जो करे स्वयं को भी, है वही नृपति

है अभी तुम्हारी जैसी ही मेरी दुख-गति" [142]

राजा का आदर्श तथा प्रजा हित उत्तरदायित्व एवं भ्रामक प्रतिवाद के प्रति सीता निष्कासन का निर्णय जन अभिव्यक्ति के कारण से लेते है। जिससे उनका व्यक्तिगत कष्ट प्रस्तुत अवश्य होता है। परन्तु विश्व पटल पर इस प्रतिवाद को समाप्त करने हेतु उचित मानते है-

"बोले श्री राम अभी धोबी, केवल कहता है सुन लोगे।

जब विश्व कहेगा फिर बोले किसका किसका मुख पकाडोगे।।" [143]

सामाजिक सम्बन्धों का वर्णनात्मक प्रसंग व्यापक न होकर सूक्ष्म है। जहां राजा का प्रजा के प्रति, और प्रजा का राजा के प्रति बोधगम्य पहलू प्रकट होता है। राम के राजतिलक के उपरान्त प्रजा में राम की लोक प्रियता का वर्णन करते हुये प्रजा का राजा के प्रति प्रेम वर्णित है-

"वन से श्री राम लषण सीता, जब लौट अयोध्या में आये।

उत्सुक सब प्रजा हुई ऐसे, निर्धन धन जैसे पा जाये।।" [144]

राजा का धर्म और कर्तव्य सकुशल प्रजा पालन का होता है। राम के द्वारा राज्य धर्म निर्वाहक नृप नीति का अभिष्ट उद्देश्य होता है-

"वे रत्न-मणि रवि-कोष के है आज असहायक यहां।

कारण?- वहीं कर्तव्य-पथ नृप-नीति का उददेश्य है।" [145]

प्रजा के सन्दर्भ में कवि ने पूर्व चरित में लिखते हुए रामराज्य की प्रजा का गुणगान किया है। जिसमें रामराज्य की प्रजा को राजा के समान बताया है-

"जनतार्थ मानो स्वर्ण-युग, वह सत्व-शासन-काल था।

हैं किंवदन्ती आज भी, राजा यथा-जनता तथा।" [146]

रामराज्य में राजा प्रजा के सम्बन्धों का सुन्दर विवेचन है। राजा, राज्य और प्रजा की एकता,त्याग और आदर्श की पावन प्रतिष्ठा को प्रतिष्ठित कर न्यायोचित शासन प्रबन्ध परस्पर समानता का प्रतीक है-

"वे रत्न, मणि रवि-कोष के है आज असहायक यहां।

कारण? वही कर्तव्य-पथ नृप-नीति का उद्देश्य है।" [144]

प्रजा के सन्दर्भ में कवि ने पूर्व चरित में लिखते हुए रामराज्य की प्रजा का गुणगान किया है। जिसमें रामराज्य की प्रजा को राजा के समान बताया है-

"जनतार्थ मानो स्वर्ण-युग, वह सत्व-शासन-काल था।

है किंवदन्ती आज भी, राजा यथा-जनता तथा।।" [146]

रामराज्य में राजा प्रजा के सम्बन्धो का सुन्दर विवेचन है। राजा राज्य और प्रजा की एकता त्याग और और आदर्श की पावन प्रतिष्ठा को प्रतिष्ठित कर न्यायोचित शासन प्रबन्ध परस्पर समानता का प्रतीक है-

"जनहित के साधन सभी सुलभ

था राज्य-प्रजा में एकोपन
प्रामाणिकता से वृद्धिगत
व्यापार समूचे भारत में
सात्विकता, श्रद्धा, सज्जनता
सारल्य, विनय वत्सल्य भरा,
गऊंचा आचार, विचार विमल
व्यवहार समूचे भारत में
सब न्यायोचित शासन-प्रबन्ध,
सम्बन्ध परस्पर थे सुन्दर
जनता पर हल्के से हल्का
कर-भार समूचे भारत में।'' [147]

2- राजनीतिक अवधारणा :- राजतंत्र :-

वैदेही वनवास का राजतंत्र भरत के अभिव्यक्ति से व्यंजित है। जो पाप वृत्ति के मिटाने एवं अन्याय के विरोध में कार्यरत है। भेदभाव से रहित समाज नम्रता एवं मानवता की अर्चा करते हुये कर्म की निष्ठा का महत्व सर्वोच्य है।

''समझ नृप का उत्तर-दायित्व।
जान कर राज-धर्म का मर्म।।
ग्रहण कर उचित नम्रता भाव।
कर्मचारी करते है कर्म।।'' [148]

प्रवाद पर्व में राजतंत्र जनतंत्र पर आधारित है। सभा सदों की बैठक और विचार मन्थन मानवीयता के लिये अनाम व्यक्ति को न्याय के विशाल परिपेक्ष्य में बहस किया जाना समदर्शी न्याय के दृष्टिकोण जनहित के लिये होता है-

राज्य को सामूहिक आकांक्षा का
प्रतीक बनने दो भरत!
प्रजा के भी अधिकार होते है।'' [149]

अग्निलीक के रामराज्य में राजनैतिक अवधारणा जनतंत्रवादी है। जिसके अर्न्तगत प्रजा के अधिकार, अभिव्यक्ति दुख-सुख आदि के लिये राजा और प्रजा के मध्य विरोधाभास प्रकट होते हुए भी एकत्व का बोध एवं परस्पर समाजस्य को चित्रित करती है।

बोलने की स्वतंत्रता :-

यद्यपि राजतंत्र में बोलने की स्वतंत्रता पर अंकुश रहता है फिर भी भारत भूषण अग्रवाल ने आधुनिक युग बोध से प्रभावित होकर इस प्रकार की स्वतंत्रता का पक्ष किया है। अपने दुखों की व्याख्या करता हुआ रथवान

कहता है कि राम को अपना खोया हुआ राज्य वापस पाना था। सीता को निर्वासित कर उन्होने राज्य का मूल्य चुकाया है-

> ''उन्हें तो अपना खोया राज्य पाना था।
> जिसके लिये वे चौदह बरसों तक जंगलों में भटके थे
> वह अब आंखों के आगे था !
> भूल का नही, दयानिधान,
> उन्होने राज्य का मोल चुकाया है।'' [150]

सीता निर्वासन में रामराज्य की राजनैतिक अवधारणा स्वार्थ रहित त्याग और कर्तव्य के मार्ग पर चलना राज्य धर्म है। राज्य धर्म अत्याधिक कठिन वृत होता है। शासक के ऊपर आरोप और लांछन लगना अनिवार्य होता है। आलोचना में त्याग का मार्ग वरणकर स्वयं की भावनाओं को कुचलकर जनादेशों के अनरूप निर्णय लेना सार्थक त्याग कहलाता है।

> ''यह राजधर्म का शीश चढ़ा कण्टक किरीट
> निर्मम है/क्रूर कठोर धर्म।'' [151]

सीता निर्वासिन में रामराज्य के राजतंत्र का सशक्त आधार धर्म की यथार्थ चेतना से परिपूर्ण राजा और जनता के बीच कर्तव्य और प्रेम का सन्तुलित मिलन था जिस तरह राजतंत्र में समीक्षा का स्वतंत्र अधिकार होता है। वही अधिकार अवध के प्रत्येक नागरिक को प्राप्त था। रजक की निर्मम समीक्षा सीता निर्वासिन का कारण बनकर उपस्थित है। सप्ष्टतः अग्निपरीक्षा के उपरान्त भी समाज का प्रत्येक वर्ग सीता को स्वीकार नही कर सका था-

> ''रजक, राम का प्रिय जन है।
> नागरिक अवध का,
> प्राप्त जिसे अधिकार
> समीक्षा का निर्भय।'' [152]

राजनैतिक अवधारणा का वर्णन करते हुए राजतंत्र की अभिव्यंजना करने में कवि ने उदात्त सफलता प्राप्त की है। देवी सीता रामराज्य के युग प्रारम्भ की कल्पना करते हुये राजतंत्र का रेखाकिंत खीचा है-

> ''सोच रही हूं, कब होगा वह कल्प
> वह मन्वन्तर, युगारम्भ का दौर
> सोच रही हूं परिवर्तित वह काल
> कैसा होगा, क्या होगी युग-रीति
> एक-एक जन बोलेगा जब सत्य
> जब न प्रवादों पर नृप देगे ध्यान'' [153]

रामराज्य की रामकथा में राज्यतंत्र जनतंत्र पर आधारित है। लोक अभिव्यक्ति का सम्मान राजा का श्रेयष्कर दायित्व है। जिसका निर्वाहन करने के लिये राज्य का शीर्षतम व्यक्ति को स्वत्व का त्याग कर धर्म ध्वजा

को ऊंचाई में बनाये रखना होता है-

"प्रभु के समीप आये लक्ष्मण।
रिपुदमन, भरत रघुकुल भूषण।।
बंदन करके बैठे समीप।
थे व्यथित राम मन में अधीर।।" 154

अरूण रामायण की रामकथा में राजनैतिक अवधारणा जनतंत्र वादी है। जहां का राजतंत्र सम्पूर्ण परिषद मण्डल के द्वारा अपने क्रिया कलापों को निर्णीत करता है। परन्तु परिषद का सर्वोच्च व्यक्ति राजा ही है। मन्त्रणा कक्ष में सीता अपवाद सम्बन्धित बहस और प्रश्न करता द्वारा प्रश्न वापस लिये जाने पर भी जनमन को मुदित करने हेतु राजा द्वारा निर्वासन का एकात्मक निर्णय राज्य तंत्र के आदर्श मानता को चित्रित करता है-

"नृप को जग में निर्दोष सदा रहना होगा।
व्यक्तिगत कष्ट को उसे सदा सहना होगा।।" 155

राजतंत्र का स्वरूप निर्धारित करते हुये कवि ने रामराज्य के राजदरबार का चित्रण किया है। जहां से राजा के द्वारा राज्य संचालन का कार्य किया जाता है-

"शौचादिक से हो निवृत राम ने, फिर अपना दरबार किया।
सब समाचार लाने वालों, को सब से पहले बुला लिया।।" 156

राजतंत्र शासन के विधान के अनुरूप जनता के हितो को सर्वोपरि सम्मान देकर संचालित होता है-

"शासक गणो! खोलो नयन, यह शासकीय विधान है।
जनता हृदय के तुल्य है, या वंश प्राण-समान है?" 157

रामराज्य का संचालक राज्य तंत्र पाप वृत्ति और अन्याय से मुक्त भेद भाव रहित व्यवस्थित और अनुशासित है। जहां राजा राम स्वयं किसी भी निर्णय का परामर्श लक्ष्मण से लेते है। इससे राजतंत्र की व्यवस्था स्वेच्छाचार्य से मुक्त परस्पर चिन्तन पर निर्भर है-

"एक गुफा में दो-दो मृगपति एक म्यान में दो तलवार,
शासन एक उभय संचालक, देख हो रहा चित्र अपार।
अवरज अग्रज की आज्ञा के बिना न करते कोई काम,
परामर्श प्रत्येक बात में लेते लक्ष्मण का श्री राम।" 158

3- लोकजीवन एवं दर्शन :-लोकमान्यताये :-

सीता का निष्कासन लोक आराधन के निमित्त हुआ था। इसीलिये कवि ने अपनी रचना में लोक जीवन का वर्णन कर्म क्षेत्र से महत्तता के अनुरूप किया है। नाना प्रकार के गौरव जड़ एवं चेतन का अवश्यकता अनुरूप कर्तव्य का पालन एवं देवि, सीता का वन स्थानान्तरण प्राचीन पुनीत परम्परा के दृष्टिकोण से सन्तान हित आकांक्षा हेतु किया गया था-

"है प्राचीन पुनीत प्रथा यह मंगल की आकांक्षा से।

सब प्रकार की श्रेय दृष्टि से बालक हित की वांछा से।।
गर्भवती-महिला कुलपति-आश्रम में भेजी जाती है।
यथा-काल संस्कारादिक होने पर वापस आती है।।'' [159]

रामराज्य की स्थापना विश्वास की नीव पर स्वतंत्रा के महल बनाकर की गई थी। जिसमें मानवीयता को ही देश काल वा राजा से ऊपर स्थान निरूपित था। जो पूर्ण रूप से पौराणिक एवं वैदिक महत्व से ओत प्रोत है।

''व्यक्ति मात्र को/इतिहास से परिधानित होने दो/लगे कि
इतिहास/मानवीय विष्णु की कष्ठ श्री/वैजयन्ती है।'' [160]

लोक जीवन एवं दर्शन में भाग्य एवं पुरूषार्थ को महत्वता देते हुये भारत भूषण अग्रवाल ने कर्म भाग्य के द्वन्द्व का चित्रण करते हुये लोकमान्यताओं के दर्शन को चित्रित किया है। उसका रथवान जहां अपने कर्म को रोककर भाग्य की चर्चा करता है वही राज्य पुरूष सुख दुख का नियामक स्वयं को सिद्ध करता हुआ पौरूषवादी है-

''अपने कर्मो को रोता हूं दयानिधान! यह सब भाग्य की बात है।''
अरे भाग्य भी कुछ होता है-हमारी ही रचना है।'' [161]

उमाशंकर नगायच के सीता निर्वासन में रामराज्य का लोक जीवन जहां सर्वत्र समानता पर आधारित था। वही जीवन दर्शन के लोक श्रद्धा की चेतना से परिपूर्ण था। राजा का प्रजा के प्रति समर्पण प्रजा का राजा से विश्वास, पानी का पति पर अबाध प्रेम और विश्वास ही रामराज्य के लोक जीवन की अभिष्ट परम्परायें थी-

''यदि मेरा निर्वासन/मेरे प्रभु का अभिष्ट
तो शिरोधार्य, वह सीता का स्वीकार्य धर्म।'' [162]

लोकजीवन एवं दर्शन का यत्र तत्र चेतना पूर्ण वर्णन है। देवी अहिल्या के साप विमोचन में लोक मान्यताओं के अनुचित साप और पाप के वर्णन से प्रकट है-

''अब निश्चित है, पति का अनुचित शाप
अब आप में हो न सका संक्रान्त
कैसे हुएं किसी को कोई शाप
किया नहीं जब सपने मे भी पाप ?'' [163]

लोकजीवन की लोक मान्यताओं को सत्य धर्म से सन्नध्य कर सर्व सामानता में आधारित था- राजा का आचरण पवित्र होते हुये भी सीता अपवाद का जनरव लोकाअभिव्यक्ति रामराज्य के आदर्शो के विपरीत लोक मन का विकार होता है-

''हे तात! लोक मन का विकार।
सुन सका आज मै प्रथम बार।।'' [164]

रामराज्य का समस्त लोक जीवन एवं दर्शन अनाचार के विरूद्ध विचारों से संगठित होता है। सीता का निष्कासन लोक मानस की चारित्रिक विपन्नता का परिणाम होती है वही मुनिगणों को सत्य और मानवता का महामित्र माना जाता है।

"देखेगे-देखेगे महर्षि दिव्यात्म चित्र

समदर्शी मुनिगण मानवता के महामित्र !" [165]

लोक मान्याताओं के अन्तर्गत लवकुश रामकथा का कथानक भाग्यवादी है। निर्वासिन का कष्ट सीता को दुखी करता है। परन्तु वह अपने आपको धैर्य देती हुई लक्ष्मण से भाग्य के अनुसार आगे जीवन को समर्पित करने हेतु उद्धत होती है-

"तृण तुल्य प्राण तज देती मै देवर देरी करती न अभी।

पर क्या मै करूं सगर्भा हूं इससे यह कर सकती न कभी।।

अनुसार भाग्य के ही मिलता दुख सुख इसमें संदेह नहीं।

दीनता हमारे भाग्य लिखी सम्पत्ति फिर पा सकती न कहीं।।" [166]

लोक मान्याताओं में अवतारवाद को स्थापित किया गया है। लक्ष्मण के पीड़ित विचारो में संवेदना का संचार होकर निष्कासन को लोक कल्याण का हेतु बनकर भविष्य के घटना क्रम को आलोकित करेगा। वाल्मीकि के द्वारा अवतारवाद को ही बल दिया जाता है-

"अब भी न जाने और क्या लीला रची जाये कहां?

दोनो विलग-क्रियशील है, राजा वहां रानी यहां।।" [167]

लोकमान्यताओं में कवि ने शारीरिक संकेतो द्वारा शुभ और अशुभ लक्ष्णों के अनुसार भविष्य में घटने वाली घटना का अनुमान लोक मानना का प्रतीक है। कृतान्तमुख द्वारा सीता जी से राम का उपवन बुलाने का संदेश देते ही सीता का दक्षिणी नेत्र फड़कने पर अशुभ घटने का संकेत देता है-

"ज्यो ही चलने को सज्ज हुई

फड़-फड़ फड़का दक्षिण लोचन

यह क्या ? इस मंगल बेला में

क्यो होते हैं ऐसे असुगुन" [168]

विश्वास :-

कवि की रचना में लोकोत्तर त्याग ही उत्सर्गित जीवन धन एवं पावन कर्तव्य है। जहां स्वयं की ललसाओं एवं कल्पनाओं का स्थान न होकर प्रत्येक मानवीय एवं सामाजिक सम्बन्धों में परस्पर विश्वास का अटूट बंधन आबद्ध है। वन भेजने में सीता का पति से कथन विश्वास को स्पष्ट करता है-

"अकुलातायें बार-बार आ मुझको बहुत सतायेगी।

किन्तु धर्म-पथ में धृति-धारण का सन्देश सुनायेंगी।।

अन्तस्तल की विविध-वृत्तियां बहुधा व्यथित बनायेगी।

किन्तु बंद्यता विवुध-वृन्द-वन्दित की बतला जायेगी।" [169]

रामराज्य का लोक दर्शन परस्पर विश्वास सत्य एवं निष्ठा पर आधारित है। जहां दुखों के प्रति समर्पित होते हुये सदाचारी एवं आस्तिक विश्वास को प्रतिष्ठित करता है। कौशकी का देवी सीता के अचेत अवस्था

का विवरण सुनाते हुए कर्म और भाग्य के प्रति विश्वास की विवेचना की गयी है-

''पहले तो वैद्य जी बडे चिन्तित हो गये थे
तुम्हारी नाड़ी भी निस्पद जान पड़ती थी
प्रभु की कृपा है कि अब तुम कुछ स्वस्थ हो।'' [170]

विश्वास का एक वर्णन भूमिजा में पाषाणी प्रतिभा के जीवान्त होने पर गद्-गद् होकर मुनि पत्नी अहिल्या ने कहा था कि यद्यपि पुरूषों से मेरा विश्वास समाप्त हो गया था परन्तु आज तुम्हारे कर कमलों का स्पर्श पाकर निष्प्राण पाषाण शाप मुक्त होकर जीवन्त हो उठा है। तब मेरा विश्वास पुनः प्रतिष्ठित हो गया है-

''कैसे होगा कष्ट कि भू पर, तात !
विद्यमान है तुम-जैसे भी लोग
हरने को तन-मन के सारे रोग
अभिशप्तों के संकट मोचन हेतु।'' [171]

जनता का उन्मात प्रपंचना के उपरान्त राजा राम का न्याय दण्ड तो निष्कासन का निर्णय सुनाता है। परन्तु पति राम का मन अपनी प्रिया को विश्वास के स्नेह पास से मुक्त नहीं कर पाता है। तो वहीं सिया का मन पति के निर्णय को स्वीकार कर राज्य को विश्वास के पालने का संदेश देती है-

''राज्य को पाले प्रजा विश्वास लेकर।
धर्म ध्वज धारें, प्रभू निज सुख देकर।।'' [172]

प्रजा और राजा का सम्बन्ध परस्पर विश्वास में ही कायम होता है। परन्तु इन सबसे परे रामराज्य की संस्कृति ऋषि कुल की भक्ति और सत्यता पर केन्द्रित होती है। अयोध्या का जन मानस अग्नि परीक्षित सीता पर शंका की उगली उठाने के उपरान्त भी महर्षि वाल्मीकि के अश्वमेघ यज्ञ में सीता के चारित्रिक निर्मलता का प्रमाण देने के उपरान्त जन मानस भाव विभोर हो जाता है-

''मै हाथ उठा कर कहता हूं बस, एक बात
पावन सरोजिनी-सा सीता का दिव्य गात'' [173]

रामराज्य के लोक जीवन पर विश्वास का वर्णन परम्परा के अनुरूप वर्णित है। देवी सीता का विश्वास निष्कासन के उपरान्त भी स्वयं के निष्कासन से दुखी होते हुए भी पति पद पर अटल विश्वास प्रकट करती है-

''दुर्भाग्य न होता यदि मेरा तो फिर क्या मै इस रीति से।
त्यागी जाती निर्जन वन में भगवान पदों का प्रीती से।।
वनवास दिया मैं दुख सहती, पर है उन पर विश्वास सदा।
तन है अवश्य मेरा बन में पर मन है प्रभु के पास सदा।।'' [174]

लोक जीवन में अवतार का विश्वास ही बलवती होता है। वाल्मीकि के आश्रम में आरण्या सीता का परिचय शिष्यों को माया के अवतार के रूप में प्रस्तुत करते है। अवतार वाद मे विश्वास का प्रभाव है-

''खुला न हम से भेद वास्तविक, यद्यपि पढ़ा चरित विस्तार।

देव! दया कर फिर समझा दो, माया का कैसा अवतार।।'' [175]

पति और पत्नी के सम्बन्धों का विश्वास लोक जीवन का आदर्श प्रतीक होता है। निर्वासन की असह वेदना को झेलते हुए भी व अपने पति के निर्णय से पीड़ित सीता अपने विश्वास को किंचित मात्र भी चटकने नहीं देती है। एवं अपने पति के लिए अपने सन्देश द्वारा सुसंस्कारिक धर्म युत मार्ग पर चलने को कहती है।

''हो चिरंजीव जय-विजय वरें,
आनन्द करें भारतशेखर।
लक्ष्मण को कहना शुभाशीष
रखना आधीश का पूर्ण ध्यान।'' [176]

रहन सहन :-

वैदेही वनवास का रहन सहन चित्रण धर्म पारायण परमार्थवादी एवं लोक हित साधक एवं ज्ञान व अलौकिक शिक्षा से परिपूर्ण सत्य एवं न्याय पर आधारित है-

''कोई सज्जन, ज्ञानमान, मतिमान, नर।
यथा-शक्ति परहित करना है चाहता।।
देश, जाति, भव-हित अवसर अवलोक कर।
प्रायः वह निज-हित को भी है त्यागता।।'' [177]

रामराज्य की संस्कृति की सोंधी खुशबू लिये हुए कवि का वर्णन ने रहन सहन के वर्णन को सजीव कर दिया है। रामराज्य का समाज पूर्णतयः भारतीय परम्परा रीति रिवाजों के अनरूप है। जिसमें स्वयंवर जैसे सुसंस्कारिक आयोजनों का वर्णन है-

''मेरे पिता ने मेरी आंखे बंद करके
इनके हाथों में मेरा हथ नहीं सौपा था,
मैने स्वयंवर रचाया था
जिसमें सारी भरत-भूमि के युवराज आये थे,'' [178]

रामराज्य का जन जीवन एवं उनके रहन सहन का वर्णन सीता के विचारों में स्वप्नो की तरह तैरते है। वह सोचती है। भविष्य का रामराज्य एवं वहां का जन-जीवन धन-धान्य, स्वास्थ, शिक्षा के ज्ञान से परिपूर्ण हो-

''अटे पड़े हो घर-घर में धन धान्य
स्वर्ण रजत की लगी हुई हो, ढेर
प्रभुता भी हो, यौवन भी हो किन्तु
जन-मन को चाहिए ज्ञान का दीप
सोच रही हूं, कब होगा वह कल्प'' [179]

अयोध्या के रहन सहन का वर्णन लोक मंगल के लिये ही समर्पित होता है-

''लोक मंगल प्रति चरण पर नित समर्पित हो रहा है।

शांति, सुख, वैभव अवध का बीथियों में बह रहा है।'' [180]

अरूण रामायण में वर्णित रहन सहन नगर और वन प्रान्तर के जीवन का मिश्रित वर्णन है-

''सखियों के संग आम्रवन में निर्भय विचरण

वर्षा ऋतु में घन-विद्युत की शोभा अपार

धन खेतों की हरियाली का सुषमा-प्रचार'' [181]

रहन सहन का वर्णन करते हुए कवि ने रामअश्वमेघ यज्ञ को रावण वध से हुई बृम्ह हत्या के प्रायश्चित् हेतु ऋषियों के अनुशंसा पर आयोजित करना रामराज्य के रहन सहन को सनातन धर्मावलम्बन से ओत प्रोत कर प्रस्तुत करता है। धर्म और वीरत्व का सम्मिश्रण प्रतीक रामराज्य का रहन-सहन इस उदाहरण से दृष्टिगोचर होता है-

''कर डालों अश्वमेघ जिससे प्राश्चित पाप का हो जावे।

तुमसे भी कोई बली विश्व में है क्या यह भ्रम खो जावे।'' [182]

सीता स्वयंवर की घटना का चित्रण करते हुए लोक जीवन के रहन सहन का दर्शन प्रस्तुत किया है। इसमें राम द्वारा जनकपुर भ्रमण में उमड़े नर समूह को समरसता का भाव दिखाते हुए नगर की प्रभा का आलोकन करते है जिससे रहन सहन की एक झलक मिलती है-

''रवि शशि सहचरी साम्यवादी बने से

सब पर समता का भाव दर्शा रहे है।।

भवन गगन भेदी शुभ्र श्रङावलम्बी

विधि जिनमें है से प्रभा द्वारिकायें।

रूचिकर उन दोनो आत्म शोभाशयों को

झुक कर उनसे है देखती सदमनाये।।'' [183]

अग्नि परीक्षा का रहन सहन त्याग और सत्य निष्ठा पर आधारित है। मिथ्यावाद से परे जनमन उच्च शिक्षा से परिपूर्ण है-

''त्याग की पावन प्रतिष्ठा, सत्य निष्ठा थी महा

त्यागियों के चरण में नत शीश जन मानस रहा।

विनय और विवेक बढ़ता उच्च शिक्षा साथ में

उलझते थे वे न कोई व्यर्थ मिथ्या बात में।'' [184]

लोक संस्कृति :-

सांस्कृतिक विवेचन करते हुए कवि ने अपनी रचना में राजराज्य के सांस्कृतिक जीवन का सजीव चित्रण किया है। जहां आदर और निष्ठा अपने से बडों का सम्मान लोक संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग है। वन प्रस्थान से पूर्व कौशिल्या के चरण वंदन का सीता अनुमति लेना लोक संस्कृति का अनुपम उदाहरण है-

''पग वंदन कर जनक-नन्दिनी।

उनके पास बैठकर बोली।।

धीरज धर कर विनत-भाव से।

प्रिय-उक्तियां थैलियां खोली।।'' [185]

राष्ट्रप्रेम और प्रिया प्रेम में राम का द्वन्द्व ऐतिहासिकताओं के लिये अनासक्त नहीं होता है। इस द्वन्द्व में सीता का असन्न मातृत्व भी राष्ट्रप्रेम की कर्तव्य निष्ठा से नहीं हिला पाता है। साधारण जन की विश्वास की रक्षार्थ निर्वेद की पीठिका से न्याय तर्को को उदबोधित करते है-

''किसी के भाग्य का निर्णय

आसक्त या पक्षधर बनकर नहीं

बल्कि/निर्वेद की भूमि पर खडे होकर ही

न्याय/निर्णय/सबका अधिकार प्राप्त किया जा सकता है।'' [186]

राजा और प्रजा का परस्परिक समर्पण संस्कृतिक का आदर्श था। सम्बन्धों का सम्मान राजाज्ञा का उलघन धर्म विरूद्व था। लक्ष्मण का भाभी को मां का सम्मान देवी सीता को सासो की सेवा विरत होने का कष्ट संस्कृति की धर्म निष्ठा को परिलक्षित करती है-

''मां तुमको गंगा तीर पार पहुंचाऊं।

मै फसा बीच मझधार घाव दिखलाऊ।।'' [187]

निर्वासिन के उपरान्त भी पति का कुकृत्य, वैदेही का कथन संस्कृति की महानता को प्रस्तुत करता है-

''क्यों चरण रज अंत में, मैं छू न पाई ?

बात क्यों वन की प्रभू मुझसे छिपाई ?'' [188]

कवि का सांस्कृतिक वर्णन उत्कृष्ट है। तत्कालिक लोक जीवन में संस्कृति का स्पष्ट प्रभाव सीता के चिन्तन पर प्रस्तुत हुआ है। जहां सम्बन्धों के प्रति समर्पित सेवा लोक संस्कृति बनकर व्याप्त और सर्वत्र थी। उदाहरण से दृष्टव्य है-

''मै पति सेवा करने ही में, आनन्द मानती रही सदा।

हो गई हमारी बुद्धि भ्रष्ट, निज हाथ बुलाती यह विपदा।'' [189]

सीता स्वयंवर का चित्रण रामराज्य की अनुपमेय संस्कृति की कृति के रूप में स्वयंवर और विवाह का आयोजन परिष्कृति संस्कृति का प्रतीक है-

''कहा जनक ने इष्ट बन्धु जन!, है विवाह लौकिक व्यवहार

गहन विचार युक्ति कृति आश्रित'' है ऐसा धीमन्निधरि।।'' [190]

सीता निर्वासिन के उपरान्त वजृजंघ के द्वारा विदेहजा को गर्भावस्था में धर्म बहन बनाकर परस्पर सम्बन्धो के विश्वास को प्रतिष्ठित कर प्राश्रृय देना लोक संस्कृति का उत्कृष्ट उदाहरण है-

''भाई की आप भावनाएं

वत्सल्य सुधा रस बरसाओं

बाई जी! अपने घर आओ।'' [191]

धर्म, प्रेम, कर्तव्य :-

रामराज्य का धर्म लोक मंगल कामना एवं परहित हेतु स्वा का विसर्जन न्याय और सत्य का धर्म सर्वोपरि होते हुए, वर्णित कर्तव्यों को राज्य और राजा से सर्वोपरि माना गया है-

"सदा करेगा हित सर्व-भूत का।
न लोक आराधन को तजेगा।।
प्रणय-मूर्ति के लिये मुग्ध हो।
आर्त्त-चित्त आरती सजेगा।।" [192]

रामराज्य की लोक मान्यताओं में धर्म और संस्कृति मानववादी न्याय पर आधारित है। भाषा और शब्द को गायत्री शक्ति युक्त तथा मन्त्रों के स्वरूप में देखना राज्य धर्म और न्याय को धर्म के रूप में प्रतिष्ठित करते है-

"देश और काल को
वहन तथा अभिव्यक्ति करने वाली
गायत्री स्वरूप/महाशक्ति/भाषा-
केवल मनुष्य के ही पास है।" [193]

लोक जीवन में स्वधर्म निर्वाहन का आदर्श वर्णन कवि की रचना से अछूता नहीं रहा। चाहे वो राजा का धर्म हो य प्रजा धर्म हो य राज्य कर्मचारी का धर्म हो। देवी सीता भी निष्कासन आज्ञा को शिरोधार्य करना पत्नि व रामराज्य की प्रजा के रूप में अपना धर्म समझती है-

" कि अब उन्हें बनवास मिला था
तो मैं उनके साथ गयी थी।
पर नहीं, /तब हम पति पत्नी थे,
हमारा धर्म एक था।" [194]

रामराज्य की सांस्कृतिक विवेचना को कवि ने सूक्ष्म शब्दों को बीज की तरह बोया है। जो अंकुरित होकर विशाल बट वृक्ष सा अपना अर्थ प्रस्तुत करता है। सीता के चिन्तन से रामराज्य की संस्कृतिक विवेचना मिलती है-

"नर-नारी में मर्यादा के बोध
सम-सम होगे-सम-सम होगा न्याय-
सम-सम होगे विद्या बुद्वि विवेक
टिक सकता है क्योकर वहां प्रवाद
जाग्रत होगी जहां परख की आंच" [195]

रामराज्य में धर्म का स्थान सर्वोच्च है। रामराज्य की प्रजा सत्य को सदा धर्म मानती है। प्रेम रामराज्य का मानव आधार है। पति पत्नी का प्रेम देवर भाभी का प्रेम, मानवता की शास्वत स्वभाव की परिधि से बंधा हुआ

नहीं है। वह उस परिधि से बाहर प्रेम में भालू और बंदरो को भी बांधकर दुस्तर कार्य सम्पन्न करने का वर्णन है। कर्तव्य का उत्कृष्ट वर्णन देवी सीता के चरित्र में वर्णित है। पति वृता देवी सीता मातृत्व के कर्तव्य निर्वाहन के प्रति इतनी सचेष्ट है कि वह मात्रपद लाभ हेतु अवध के राज्य प्रसाद का वैभव त्याग कर पति विहीना जीवन का वरण कर जंगलों में प्रवास हेतु तैयार हो जाती है-

"सत्य शिव संकल्प पलकों में तुम्हारे भर रहा है।
विश्व का मंगल तुम्हारी दृष्टियों से झर रहा है।।
लोक मंगल प्रति चरण पर नित समर्पित हो रहा है।
शांति, सुख, वैभव अवध का वीथियों में बह रहा है।।" [196]

अरूण रामायण की संस्कृति सनातनी प्रवाह से प्रवाहित है। जहां धर्म प्रेम पीडा भी सुसंस्कारों से ओत प्रेत है। जहां प्रजा का हित राजा का अभिष्ट है और जहां पति का अभिष्ट आदर्श प्रेम है। वही पत्नी का अभीष्य पति का चिर चिन्तन सुसंस्कारिक अभिष्ट है। निर्वासिन के उपरान्त विरह वेदना से पीड़ित होते हुए सीता का मन धर्म प्रेम, कर्तव्य की आदर्श संस्कृति की प्रतिमूर्ति प्रतीत होती है-

"अपनी ही ज्योति लिए सीता चल रही आज
वह भा -रत धर्म दीपिका सी जल रही आज!" [197]

कवि ने अपने वर्णन धर्म प्रेम और कर्तव्य का उत्कृष्ट समावेशकर रामराज्य के लोक जीवन को अलंकृत किया है। देवी सीता वन गमन के समय अपने चिन्तन में कहती है-

"हां धर्म विरूद्व स्त्रियों को, मिलना न स्वर्ग में ठौर कहां
स्त्री के लिये पति से बढ़कर, जग में कोई पूज्य नहीं।।" [198]

लोक और जीवन में धर्म प्रेम और कर्तव्य का वर्णन है। जिसमे राजा और वंश के बीच कर्तव्य की समीक्षा प्रेम का मूल्य एवं कर्तव्य की प्रतिष्ठा त्याग की तुला पर रखे हुए प्रतीत होते है-

"द्वै लोक में कुछ भी चहों, कर्तव्य का पालन करो,
दो त्याग ममता प्राण की, सन्मार्ग संचालन करो।।" [199]

धर्म प्रेम और कर्तव्य का अनुपम उदाहरण में बंधा हुआ अग्निपरीक्षा का प्रत्येक पात्र अन्याय के विरोध में है। परन्तु धर्म प्रेम और कर्तव्य के प्रति लवणांकुश की निष्ठा अतुलनीय है। जो अपनी मां के साथ हुए अन्याय का प्रतिशोध लेना सबसे बडा धर्म और कर्तव्य मानते है। मां के प्रति उनका प्रेम पिता राम से युद्धावाहन को प्रेरित करता है-

"है कहां अयोध्या? कहा राम?
लग गई आग सारे तन में।
माता को छोड़ दिया वन में
जिस मां का हमने दूध पिया।
उसका अपमान न देखेगे

चम चमकी इन तलवारों से

हम जाकर के बदला लेगे।'' [200]

राजनीतिक अवधारणाओं तथा तत्वों का मूल्यांकन करते हुए ये कहा गया है कि समाज की सुरक्षा के लिए शासन व्यवस्था अनिवार्य होती है। भारतीय राजनीति राजा प्रधान है। उत्तराधिकार को रूप में प्राप्त राज्य की रक्षा आन्तरिक शासन सुव्यवस्थित रूप से चलाना तथा नियमों का उल्लघन करने वाले को दण्डित करना राजा के कार्य होते है। इस दृष्टि से सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों की समीक्षा करते हुए कहा गया कि रावण वध के पश्चात राम अयोध्या के सार्वभौमिक साम्राट बने भाई भरत और लक्ष्मण आदि उनके सहायक हुए यद्यपि आदर्श राज्य में प्रजा के मनो भावो की महत्वपूर्ण स्थिति होती है। सीता निर्वासन के लिए रजक प्रसंग, शासन दृष्टि से एक आदर्श स्थिति हो सकती है। तथापि व्यक्तिक एवं पति पत्नी की दृष्टि में पुनः परीक्षा न्यायोचित नहीं है। राजा का धर्म है कि वह सीता से भी अपनी सफाई में कुछ पूछता। प्रजा पालन, धर्म रक्षा, कर्मकाण्ड, वर्णाश्रम की व्यवस्था करना, और अश्वमेघ यज्ञ करने का उल्लेख, इन काव्यों में हुआ है। इससे प्रजा राजा के सम्बन्ध, राजा के विरूद्व प्रजा की निर्भीकता, आदर्श प्रजा राजा के सम्बन्धों का देवतन करती है।

सारांश यह कि सांस्कृतिक तत्वो की दृष्टि से इन काव्यों का अध्ययन करते हुए देखा गया है। सीमित कथा परिस्थिति और वातावरण के होने पर भी इनमे आधुनिक सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक मान्यताओं का निदर्शन स्थान स्थान पर हुआ है। संयुक्त परिवार, पति पत्नी के परस्पर विश्वास निष्ठा सम्बन्धों में मइकटय अनुराग प्रदर्शित हुआ है। और इन सबसे ऊपर सम्बन्ध निर्वाह हेतु त्याग बलिदान की भावना निदर्शित हुई है जो किसी भी संस्कृति के लिए श्रेष्ठ आदर्श है। पति-पत्नी की महत्ता, सास बहू, भाभी देवर, इत्यादि सम्बन्धों का निर्वाह विभिन्न काव्यों में आदर्श रूप में व्यंजित हुआ है। प्रजा के सुख समृद्धि और विकास के लिए राजा के श्रेष्ठ कर्तव्य उसके धर्म और मत्रिंमण्डल परिषद य सचिव आमात्यों का परामर्श सर्वोपरि था कहना नहीं होगा कि सांस्कृतिक तत्वों की दृष्टि से वैदेही वनवास, प्रिया या प्रजा, प्रवाद पर्व, अग्निलीक और अरूण रामायण ऐसे महत्वपूर्ण काव्य है जिसमें एक ओर प्राक्तन परम्परित सामाजिक मर्यादायें नारी की त्याग की गौरव गाथा रक्त शुद्ध सम्बन्धी प्राचीन आदर्शो की कामना, वर्ण साकर्य का विरोध वर्णित है। तो दूसरी ओर आधुनिक नारी जीवन व्याप्त अस्मिता आड़म्बर विरोध स्वत्व रक्षा सजकता स्वाधिकार हेतु उद्वेग एवं विद्रोह आदि उचित सांस्कृतिक तत्वो का उल्लेख हुआ है बात यह है कि सामाजिक राजनीतिक धार्मिक विचारकों के सामने यह ज्वलन्त प्रश्न मूर्तित होकर खड़ा है, कि क्या नारी का कोई अस्तित्व नहीं है। बलिदान होना उसकी नियति है कवियों ने मूल कथा का अनुशरण कर यथा अवसर मानसिक द्वंद्वो के मध्य इस प्रकार के प्रश्नो को उठाकर युगीन चेतना और आधुनिक मनोविज्ञान संवत उत्तर देने का प्रयास किया है।

❁ सन्दर्भ सूची ❁

1- सं. परिम्यां करौतौ भूषणे। आटाध्यायी 6/1/37 समवाचे च

"अष्टाध्यायी" 6/1/138

सं परिपूर्वस्य करोतेः सुटस्याद भूषणे संघाते चार्थे

"भट्टोजि दीक्षित कृत सूत्रवृत्ति"

2- संस्कौरः आत्मधर्मादिभिः जीवनं संस्करोतीति संस्कृति।

ऋग्वेद 5/76/2

3- न संस्कृत प्र मिमीतों गमिष्ठान्ति नून मश्विनोपस्तुतेह

यजुर्वेद 4/34

4- तथौ संस्कृतम्

5- सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्वाश।

यजुर्वेद 7/14

6- आत्मसंस्कृत वश्लिपानि एतर्यजमान आत्मानं संस्कुरूथ।

"ऐतरेय वृहाण" 6/5/1

7- धर्म शास्त्र का इतिहास प्रथम भाग डॉ.पी.वी. काणे-पृ. 1761

8- धर्मच्छ। "ऋग्वेद" 5/76/1

परिवृढं धर्म प्रदीप्तं यज्ञम्।

"ऋग्वेद" 5/76/1 का सायण भाष्य

9- अश्विनों सस्कृतं धर्म न प्रमिमीतः। ....धर्मसमीपे नूर्नामदानीमिह यज्ञे।

ऋग्वेद 5/76/2 का सायण भाष्य

10- सा प्रथमा संस्कृतिः साः सोमसंस्कारः क्रियते सोमक्रये।

"ऋग्वेद" 7/14 का उबट भाष्य

11- सा प्रथमा मुख्या संस्कृतिः सोमसंस्कारः।

"यजुर्वेद" 7/14 का महीधर भाष्य

12- भारतीय संस्कृति की रूपरेखा-बाबू गुलाबराय पृ. 1

13- भारतीय संस्कृति रूपरेखा और साहित्य-डॉ.मनमोहन लाल शर्मा पृ. 24

14- "Cultere Cultivation the Sate of flowing-
wltvated refimementolue to result of -
Cultwstion the type of civilization a crop-
to experimentaly green bacteria or the-

like to wltiwate or to imprave chambers-
tuentyith Century Diotionary are the like to."

" Rewis edition 1962" **Page 257**

15 - Oxford dictionary ....

16 - Encyclopaldia of humanities litrature.

" Dr. Nagendra" **Page 7**

17 - Culture is that Complese while which-
includes Knaledge belivef, ort moral, -
law,Costom and other Capabiltives -
and habits acovured by man as a-
member of society.

"E.B. Tailar Primitive Culture" Page 1

18 - Culture is the expression of our nature in -
our modes of living thing in our everyday-
intercause in Art in litrature in relegion in -
recration and enjayment.

समाजशास्त्र के मूल तत्व **"ment"** **Page 175**

19 - Culture is the socially lransmitted system of-
inolealized weigh in knouledge practse and -
bilife along with that knouledge and practise-
produce maintain the chang in type

समाजशास्त्र के मूल तत्व **"A.W. green"** **Page 175**

20 - Our attituole belibed anolioleas our Judgement-
and values our instruction political and legal-
relegious and ecnomic ethical codas of etiguette-
our books and machine ouer sciencere philasphies-
and philosppers all of these and many other things-
constitute culture.

समाजशास्त्र के मूल तत्व **"A.A. Golalem whiser"** **Page 175**

21 - कला और संस्कृति - डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल भूमिजा- पृ. 3

22 - कस्यापि देशस्य समाजस्य वा विभिन्नजीवन व्यापारेषु सामाजिक सम्बन्धेषु व मानवीय दृष्ट्या प्रेरणा

प्रदानं तंतदादर्शाना समष्टिरे व संस्कृतिः।

भारतीय संस्कृति का विकास प्रथम खण्ड -डॉ. मंगलदेव शास्त्री- पृ. 4

23- बृज का संस्कृतिक इतिहास-डॉ. प्रभुदयाल मीतल- पृ. 83

24- भारतीय संस्कृति का इतिहास- चतुरसेन शास्त्री- पृ. 1

25- भारतीय संस्कृति- डॉ. देवराज- पृ. 20

26- भारतीय संस्कृति-डॉ. देवराज- पृ. 21

27- संस्कृति का दार्शनिक विवेचन-डॉ. देवराज- पृ. 30

28- संस्कृति का दार्शनिक विवेचन-डॉ. देवराज- पृ. 173

29- वैदिक संस्कृति और सभ्यता-डॉ. मुंशीराम शर्मा- पृ. 11/12

30- भारतीय संस्कृति का प्रवाह -इन्द्र विद्यावाचस्पति पृ. 1

31- सांस्कृतिक भारत- डा.भगवत शरण उपाध्याय पृ. 11

32- अशोक के फूल-आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी- पृ. 63

33- भारतीय संस्कृति-डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र- पृ. 3

34- भारतीय संस्कृति-डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र- पृ. 5

35- भारत की संस्कृति साधना-डॉ. राम जी उपाध्याय- पृ.

36- वैदिक साहित्य संस्कृति और दर्शन-डा.विशम्भर दयाल अवस्थी पृ. 102

37- भारतीय संस्कृति की रूपरेखा-गुलाबराय- पृ. 6/12

38- भारत की संस्कृति साधना-राम जी उपाध्याय- पृ. 11/13

39- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 26

40- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 23

41- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 53

42- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 64

43- प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्द दास 'विनीत'- पृ. 88

44- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 81

45- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 26

46- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 59

47- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 79

48- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 65

49- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 18

50- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 31

51- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 66

52- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 73
53- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 64
54- रामराज्य रामप्रकाश शर्मा- पृ. 66
55- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 622
56- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 632
57- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 2
58- प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्द दास 'विनीत'- पृ. 86
59- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 87
60- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 36
61- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 92
62- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 17
63- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 24
64- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 34
65- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 68
66- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 76
67- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 623
68- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624
69- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद 'तिवारी'- पृ. 6
70- प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्द दास 'विनीत'- पृ. 84
71- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 15
72- वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 67
73- वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 68
74- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 50/51
75- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 72
76- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 15
77- वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 76
78- वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"- पृ. 159
79- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 68
80- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 14
81- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 15
82- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 65

83- अरूण रामायण-रामावतार पोद्दार- पृ. 624

84- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

85- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 17

86- वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 25

87- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 81

88- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 21/22

89- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 67

90- भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 65

91- रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 75

92- अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624

93- लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 2

94- प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 108

95- अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 23

96- वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 28

97- प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 33

98- अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 28

99- सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 65

100-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 67

101-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा - पृ. 71

102-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 623

103-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 11

104-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 107

105-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 49

106-वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 52

107-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 100

108-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 14

109-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 68

110-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 67

111-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 59

112-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 632/633

113-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 11

114-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 125

115-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी - पृ. 35

116-वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 89

117-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 109

118-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 20

119-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 65

120-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

121-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 72

122-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 633

123-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 3

124-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 60

125-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 29

126-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 15

127-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 40

128-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 67

129-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 65

130-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 22

131-वैदेही वनवास-''हरिऔध''- पृ. 25

132-वैदेही वनवास-''हरिऔध''- पृ. 86

133-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 33

134-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 100

135-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 20

136-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 21

137-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 68

138-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 64

139-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 58

140-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 74

141-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 65

142-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624

143-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 1

144-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 1

145-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 81

146-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 107

147-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 22

148-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 24

149-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 42

150-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 19

151-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 64

152-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 64

153-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 66

154-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 66

155-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 624

156-लवकुश युद्ध-पं. गोविन्द दास 'विनीत'- पृ. 2

157-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 83

158-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 21

159-वैदेही वनवास-अयोध्यासिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 61

160-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 34

161-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 13

162-सीता निर्वासन-उमाशंकर नगायच- पृ. 37

163-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 54

164-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 66

165-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 627

166-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 7

167-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 121

168-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 57

169-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 60

170-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 23/24

171-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 54

172-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71

173-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 640

174-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 7

175-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 104

176-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 67
177-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 67
178-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 46
179-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 67
180-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 64
181-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 629
182-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 10
183-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 118/119
184-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ.
185-वैदेही वनवास-अयोध्या सिंह उपाध्याय ''हरिऔध''- पृ. 66
186-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 53
187-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 70
188-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 71
189-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 5
190-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 114
191-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 81
192-वैदेही वनवास-''हरिऔध''- पृ. 52
193-प्रवाद पर्व-डॉ. नरेश मेहता- पृ. 52
194-अग्निलीक-भारत भूषण अग्रवाल- पृ. 16
195-भूमिजा-नागार्जुन- पृ. 67
196-रामराज्य-रामप्रकाश शर्मा- पृ. 64
197-अरूण रामायण-पोद्दार रामावतार अरूण- पृ. 628
198-लवकुश युद्ध-पं. जगदीश प्रसाद तिवारी- पृ. 5
199-प्रिया या प्रजा-पं. गोविन्ददास 'विनीत'- पृ. 83
200-अग्निपरीक्षा-आचार्य तुलसी- पृ. 117

अध्याय-सप्तम्

उपसंहार

पृष्ठ- 305-312

अध्याय-7

उपसंहार :-

पूर्व अध्यायों में सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों का काव्य शास्त्रीय एवं सांस्कृतिक दृष्टि से अनुशीलन करते हुये यह कहा गया है कि मानव हृदयस्थ रागात्मक अनुभूतियों की विवृत्ति संकेत अथवा शब्दों के माध्यम से करता रहा है। अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिये उसने किसी प्रतीकों का चयन किया है। प्रारम्भ मे ये प्रतीक प्राकृतिक, उनकी शक्तियो के मानवीय रूप तदुपरान्त समाज में नायक रूप में प्रतिष्ठित व्यक्तियों, को चयन किया। राम और कृष्ण ऐसे ही सांस्कृतिक, पौराणिक, ऐतिहासिक महापुरूष और नायक रहे जिनका जीवन आदर्श युग युगान्तर तक समाज को उद्वेलित ही नहीं करता रहा उसका दिशा निर्देशन भी किया है। रामकथा के पात्रों के नाम वैदिक साहित्य में उपलब्ध अवश्य होते है किन्तु उनके बीच कथावस्तु का आभाव है। अतः रामकथा का आदि ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण ही सिद्ध होती है।

वाल्मीकि रामायण में राम के ऐतिहासिक महापुरूष का रूप तो सुरक्षित ही है उनके चरित्र गत विशेषताओं का निर्दशन इसमें मिलता है। साथ ही उनके जीवन में प्राप्त न्यूनताये भी इस काव्य में विन्यस्त है यद्यपि पाश्चात्य और पौरस्त्य विद्वान इन्हे प्रक्षिप्त मानते है तथापि इन घटनाओं की आवृत्ति परवर्ती काव्यों में होती रही है। सीता निर्वासन की घटना ऐसी ही प्रमुख घटना है जिसमें रामचरित कुछ धूमिल प्रतीत होता है क्योकि परीक्षा लेने के पश्चात लोकापवाद का विरोध राम को न्यायोचित ढंग से करना चाहिये था। राम के इस कृत्य को भारतीय नारियों की दुरव्यवस्था के प्रकाश मे देखा गया। साथ ही राम चरित को महिमा मंडित करने के लिये, उनके प्रजा संरक्षण वैयक्तिक सुख दुखों की उपेक्षा के रूप में भी इस कथा का वर्णन संस्कृत अपभृंस और हिन्दी में पर्याप्त रूप में हुआ है। सीता निर्वासन सम्बन्धी इन काव्यों का साहित्यक एवं सांस्कृतिक मूल्यांकन प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में किया गया है इस सम्बन्ध में कथा में हुये परिवर्तन, परिवर्धन, युगीन चेतना उसका प्रभाव, सामाजिक, राजनीतिक और लोक जीवन एवं दर्शन के परिपेक्ष्य मे यह विश्लेषण प्रस्तुत हुआ है इसे उपसंहार के रूप में यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

कथावस्तु सम्बन्धी मौलिक उद्‌भावना एवं युगीन प्रभाव :-

वैदिक साहित्य पुराण संस्कृत के विविध ललित साहित्य प्राकृत और अपभ्रंश तथा हिन्दी के प्रचलित रामकाव्यों की सूची प्रस्तुत कर सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड कालीदास के रघुवंश भवभूति के उत्तरराम चरित आनन्द रामायण, आध्यात्म रामायण पदमपुराण में उपलब्ध ऐतद् विषयक कथा का विस्तृत विवेचन किया है। वहां ये देखा गया है कि सीता निर्वासन के रूप में लोकापवाद सीता का निर्वासन उनका विरह, लवकुश जन्म और दुखान्त य सुखान्त के रूप में कथा का वर्णन है। इसी प्रकार प्राकृत एवं अपभ्रंस काव्यों में बौद्ध और जैन्य धर्माअनुयायियों के कथा के रूप में सीता की कथा परिवर्तित की गई हिन्दी के भक्ति रीति काल में कुछ स्वतंत्र एवं कुछ वाल्मीकि रामायण के भावानुवाद के रूप में सीता निर्वासन की प्राक्तन कथा वर्णित है। आधुनिक काल में देश की राजनीतिक और साहित्यक परिस्थियो के

परिवर्तन के कारण आगत नवीन चेतना पुर्नरूत्थान की भावना के अनुरूप सीता निर्वासन की कथा का वर्णन किया गया जिनमें वैदेही वनवास, प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन, जानकी जीवन, भूमिजा, अग्निपरीक्षा, प्रिया या प्रजा लवकुश युद्ध, अग्निलीक एवं अरूण रामायण की एतद् विषयक कथाएं युगीन परिवर्तन का प्रतिनिधित्व करती है। इस कथा का किस प्रकार मौलिक रूप लेकर युगीन स्वरो को मुखरित किया गया है। यहां कथा के माध्यम से संक्षेप में उल्लिखित किया जा रहा है।

1 - मौलिक उद्भावना को प्रस्तुत करने के मूल में वाल्मीकि और उत्तर रामचरित् की कथाएं मुख्य रही है।

2 - वनगमन के रूप में दोहद तथा कृतज्ञता ज्ञापित करने के लिये ऋषि पत्नियों को सीता द्वारा वन जाकर उपहार देने की कल्पना सर्वथा नवीन रूप में है।

3 - राम द्वारा सीता निर्वासन की सूचना भरत, लक्ष्मण माताएं आदि का आक्रोश मनोवैज्ञानिक भित्ति पर वर्णित हुआ है।

4 - वन प्रस्थान करते समय अपशकुनों की भी चर्चा कुछ काव्यों में की गई है।

5 - हिन्दी के काव्यों में सीता, वाल्मीकि, आश्रम में जाकर अपना परिचय स्वयं देती है। जबकि कुछ काव्यों में लक्ष्मण उन्हें गंगा पार य आश्रम के सन्निकट छोड़ देते है।

6 - लवकुश जन्म के समय सीता का मातृत्व आश्रम वनवासियों का उल्लास, वनस्पतियों में हर्ष के संचार का वर्णन कुछ काव्यों मे मिलता है।

7 - रामाश्वमेघ प्रशंग में लवकुश द्वारा राम सेना को पराजित करना बाद में राम का आकर युद्ध मे तत्पर होना वर्णित है। साथ ही राजनीतिक पृष्ठभूमि के रूप में यह युद्व य अश्वमेघ प्रकरण राम की उच्च्व महात्वाकांक्षा निरंकुश सम्राट बनने की भावना का प्रतीक बन गया है।

8 - कथा के उपसंहार में कुछ काव्यों में इसे सुखान्त और कुछ में दुखान्त का वर्णन है यद्यपि दुखान्त कथा में राम को एक तेजस्वी रूप में वर्णित कर एक नई चेतना का प्रतीक अग्निलीक में कहा गया है।

9 - सीता निर्वासन सम्बन्धी प्रमुख काव्यों की आधिकारिक, प्रासंगिक कथा का विश्लेषण कर कथा में अन्वति वेग, आरोह-अवरोह, की दृष्टि से विश्लेषण कर देखा गया है। कि वैदेही वनवास सीता निर्वासन जानकी जीवन, अग्निलीक, अरूण रामायण, में कथा का प्रवाह सन्तुलित कार्य व्यापार योजना पाठकों पर अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न करने में समर्थ हो चुकी है। प्रवाद पर्व की कथा मानसिक धरातल पर उत्पन्न हुये चिन्तन को अभिव्यंजित करती है इसमें अन्तःपुर में राम भरत मंत्रियों के अन्तर वाह द्वद्वों को विशिष्ट स्थान दिया गया है।

10 - सार यह है कथा संगठन की दृष्टि से द्विवेदी युगीन भावनाओं एवं प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाले काव्य लवकुश युद्ध, प्रिया य प्रजा, रामराज्य की कथा विवरणात्मक है तो भूमिजा, अरूण रामायण, और अग्निलीक की कथा संगठन और विन्यास की दृष्टि से महत्वपूर्ण काव्य है।

पात्र एवं युगीन चेतना :-

ऊपर कहा जा चुका है कि कवि अपने प्रबन्ध काव्यों में लोक विस्तृत ऐतिहासिक य चरित्र नायक

को अपने काव्य का नायक बनाता है। उसी के चतुर्दिक कथा और उसी के चरित्र य व्यक्तित्व के दिग्दर्शन हेतु घटनाओं का विन्यास करता है। भारतीय एवं पाश्चात्य समीक्षकों ने पात्रों के लिये कही चरित्र कही व्यक्तित्व का विश्लेषण आवश्यक आना है। वस्तुतः इन व्यक्तित्वों को नायक प्रतिनायक नायक सहायक तथा नायिका प्रति नायिका और सहायिकाओं के रूप में सैद्धान्तिक विवेचन शास्त्रीय ग्रन्थों में किया गया है। भारतीय परिवेश में धीरोदत्त, धीरललित, धीर प्रशान्त, धीरउधृत, और धृष्टउत्तम, मध्यम, अधम नायकों की परिकल्पना तद्नरूप नायिकाओं के स्वरूप अंगिक सौष्ठव लालित्य अलंकार आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है। मनोविज्ञान के क्षेत्र में **इड इगो, सुपर इगो,** हिनता ग्रन्थि, अन्तरमुखी और वहिर्मुखी, व्यक्तित्व, सम्पन्न पात्रों का सैद्धान्तिक विवेचन किया गया है। यहां भारतीय सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवेश के पृष्ठभूमि में सीता निर्वासन सम्बन्धी पुरूष स्त्री तथा कुछ वर्गीय रूप में पात्रों के चरित्र व्यक्तित्व कार्य व्यवहार और मानसिक चिन्तन के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। इस संदर्भ में निम्न विशेषताएं वर्णित है।

1- आलोच्य काव्यों में राम, सीता, लक्ष्मण, वाल्मीकि, लवकुश, शत्रुघन, भरत, माताएं, कौशिल्या आदि दास परिचर प्रायः पात्र प्रयुक्त है।

2- पात्रों का कथा लिंग वर्गीय एवं प्रतीकात्मक रूप में वर्गीकरण कर प्रस्तुत पात्र के व्यक्तित्व निरूपण में वाह्य सौन्दर्य आन्तरिक सद्गुणों दुर्गुणों एवं परिवेश त्रिआयामी रूप में चरित्र प्रस्तुत किया गया है।

3- राम, लक्ष्मण, भरत, तथा सीता इत्यादि पुरूष स्त्री पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करते हुये राम का सौन्दर्य मानवीय रूप सौन्दर्य नरेश, पति, भाई, प्रेमी, भक्तवत्सल एवं शिष्य रूपों की चर्चा की गई है।

4- सीता के पत्नी, प्रेयसी, वियोगिनी, महारानी, वधू, सुगृहणी, माता बहन, भाभी, तपस्वनी, सती और विद्रोहणी रूप का उल्लेख है।

5- लक्ष्मण, देवर, भाई, आदि वाल्मीकि ऋषि, गुरू पिता, साधक, चिन्तन, रूप में अन्य पात्रों में सत्यवती, आत्रेयी, कौशिकी, चरण राजपुरष आदि पात्रों का चरित्र गत विशेषताएं अंकित की गई है।

6- **फ्रायड** के द्वारा निरूपित अचेतन मस्तिष्क की प्रवृत्तिया **इड़, इगो, सुपर, इगों** का वर्णन हुआ है। तदानुरूप प्रवाद पर्व में राम के इस अन्तर द्वन्द्व को इन्हीं तीन रूपों में वर्णिण कर पात्र गत मौलिकता का निरूपण इस प्रशंग में किया गया है।

7- अरूण रामायण में अश्वमेघ यज्ञ को भारत राष्ट्र को सांस्कृतिक रूपसे सूत्र वध्य करने के रूप में देखा गया है और राम इस दृष्टि से राष्ट्र नायक के रूप में उभरते है।

8- सीता के वर्गीय रूप के साथ ही साथ भारतीय राजनीतिक जीवन में नारी स्वतंत्रता की जो वयार चली एव उसका चित्रांकन सीता निर्वासन, प्रवाद पर्व, अग्निलीक, और अरूण रामायण में मिलता है। परम्परित काव्यों में सीता पति आज्ञा का अक्षरसः पालन करती हुई और पति के कहने से पुनः अग्निपरीक्षा देती है। किन्तु जैसे-जैसे भारतीय राजनीति में नारी की स्वतंत्रता की चेतना उसकी अस्मिता, उसकी महत्तता के स्वर मुखरित होने लगे इन निर्वासन प्रधान काव्यों में सीता को नारी स्वतंत्र की ध्वज वाहिका अस्तित्व बोध के प्रति सजक और विद्रोहिणी रूप में चित्रित किया जाने लगा। सीता जो पुनरूत्थान और नारी

अस्मिता की चर्चा करती थी साम्यवाद के विचार परपेक्ष्य में वह शोषिता बन गई और विद्रोहणी बनकर राम की उच्च महात्वाकांक्षा को पूंजी पतियों की दृष्टि से देखकर उसकी विगर्हण करने लगी क्योकि उसकी मान्यता है, कि यदि रामराज्य लोलुप महात्वाकांक्षी नही होते तो वनवास के समय गद्दी छोड़ पत्नी के साथ स्वयंजंगल चले आते कवियों ने युगीन प्रभावों को बडी मार्मिकता से सीता और राम के चरित्रों मे उत्पन्न अन्तरद्धन्द्व के माध्यम से यह निरूपण किया है। इस दृष्टि से नरेश मेहता, रघुवीर शरण मित्र, उमाशंकर नगायच और पोद्दार रामावतार अरूण, तथा भारत भूषण अग्रवाल प्रमुख कवि है।

रसास्वादन की दृष्टि से आलोच्य काव्यों का महत्त्व :-

आचार्य शुल्क ह्रदय के विस्तार का विधान करने वाले शब्दों को काव्य कहा है। जिसकी आत्मा के रूप में रस की प्रतिष्ठा भारतीय काव्य शास्त्र में हुई है। इस रस का परिपाक विभाव, अनुभाव, संचारी भावों के संयोग से होता है। शोधकर्त्री ने सीता निर्वासन की कथा और उसमें नीहित अंगीरस की शास्त्रीय एवं पाठकीय दृष्टि से भी आलोचना की है। भारतीय शास्त्रकारों ने घटना य फलागम की दृष्टि से अंगीरस का निर्णय किया है। श्रंगार और वीर रस को अंगी रस के रूप में मान्यता सर्वत्र मिली है। जबकि भवभूति करूण रस के एकमात्र य प्रधान अंगी रस मानते है। सीता के उत्तर कालिक घटनाओं का रस शास्त्र की दृष्टि से विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। इस सम्बन्ध में यह निष्कर्ष निकाला गया है।

1 - लोकापवाद के कारण सीता निर्वासन के समय सम्भवतः राम के अचेतन मन में गहरे रूप से एक क्षीण आशा की किरण विद्यमान रही होगी कि भविष्य में कोई ऐसी परिस्थिति पुरवासियों के समक्ष आयेगी जिसमें सीता निष्कलुष सिद्ध होगी। तथा राम सीता का पुर्नमिलन होगा ऐसे काव्यों का अंगी रस श्रंगार विप्रलम्भ श्रंगार तथा राम सीता का विरह प्रवास जन्य विरह कहलायेगा।

2 - इस कथा का उत्तर पक्ष कुछ विचित्राभाष लिए है बात यह है कि परीक्षोपरान्त सीता पृथ्वी गर्भ में समा जाती है। अतः वनवास काल का यह वियोग विप्रलम्भ श्रंगार जनित है या करूण जन्य है।

3 - गर्भ विवर में प्रवेश करते समय राम का अन्तःकरण जहां द्राक्षारस की भांति गलित है वहां तो करूण रस और शेष करूण विप्रलम्भ श्रंगार के स्थल माने जाने चाहिये।

4 - आलोच्य काव्यों के व्यंजना के रूप में करूण, श्रंगार, संयोग एवं वियोग अद्भुत रौद्र, वीर, वात्सल्य, शान्त, भयानक, विभत्स, और संचारी भावों का उल्लेख एक ही स्थल पर कर रस सामग्री की शास्त्रीय विवेचना पूर्ण रूप से की गई है।

5 - अनुभाव, संचारी भाव के साथ करूण रस की मार्मिक व्यंजना करने वाले काव्यों में वैदेही वनवास, जानकी जीवन, अरूण रामायण और अग्निलीक प्रमुख है।

6 - वीर रस प्रधान काव्यों में प्रिया या प्रजा, लवकुश, युद्ध प्रमुख काव्य है।

7 - मुख्य रूप से करूण और विप्रलम्भ श्रंगार को इन काव्यों में महत्ता दी गई है। चिन्ता, आवेग, वितर्क, उन्माद, मूर्छा, अश्रु, शोक आदि भावों की अच्छी व्यंजना इन काव्यों में हुई है।

शिल्प-विधानगत महत्ता :-

रसात्मकता को काव्य का प्रमुख तत्व मानकर उसकी अभिव्यंजना में प्रयुक्त कारक तत्वों में से भाषा अलंकार शब्द शक्तियां, छन्द, गुण, एवं विम्ब विधान को प्रमुख माना गया है। इस दृष्टि से आलोच्य काव्य ग्रन्थों की समीक्षा उदाहरण देकर की गई है। इसे सन्दर्भ में यह निरूपित किया गया है।

1 - हिन्दी भाषा का खडी बोली के रूप में विकास द्विवेदी युग से प्रारम्भ हुआ **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी** के प्रयास एवं प्रभाव के कारण खडी बोली की पूर्ण प्रतिष्ठा हुई किन्तु यह युग उसके शैशव का युग था अतः इस युग के काव्य उपदेश प्रधान विवरणात्मकता से युक्त है। भाषा में अभिधा की प्रधानता है। काव्य में नीहित वक्र व्यापार कम स्थलों पर दिखता है।

2 - इस युग के काव्यों में तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों से शब्द भण्डार को समृद्ध किया गया है। द्विवेदी युगीन काव्यों में वैदेही वनवास, प्रिया य प्रजा लवकुश युद्ध प्रमुख है।

3 - छायावादी काव्य प्रवृत्तियों से सम्मलित प्रवाद पर्व, सीता निर्वासन, अग्निलीक प्रमुख काव्य है। जिनमें तत्सम शब्दों का प्राचुर्य अभिव्यक्ति में लक्षणा एवं व्यंजना का प्रयोग वक्रव्यापार से अभिव्यंजन को शसक्त बनाया गया है। **नरेश मेहता** है तो प्रयोगवादी कवि पर उनके काव्य में शब्द निर्माण की छायावादी प्रवृत्ति दिखाई पडती है।

4 - अलंकारो के रूप में, अनुप्रास, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, व्यतिरेक, अर्थान्तरन्यास, दीपक असंगत, विरोधाभाष, सन्देह, अपन्हुति, मानवीकरण, उल्लेख, दृष्टान्त, निदर्शना, रूपकातिशयोक्ति, परिसंख्या, विभावना, आदि अलंकारो का प्रयोग इन काव्यों में स्वाभाविक ढंग से हुआ है।

5 - अर्थ गम्भीर की दृष्टि से शब्द शक्तियों के लिये रूढ़, योगिक, योगरूढ़ तथा लक्षणा व्यंजना का प्रयोग नरेश मेहता, उमाशंकर नगायच, और रामावतार पोद्दार में अधिक मिलता है।

6 - गुणों की दृष्टि से इन काव्यों में ओज, प्रसाद, माधुर्य के उदाहरण मिलते है। मुख्य रूप से ये काव्य माधुर्य प्रधान है। लवकुश युद्ध के समय सीता निर्वासन के समय भाईयों के आक्रोश अथवा विद्रोहणी सीता की अभिव्यक्ति में ओज गुण मिलता है। व्यंग्यात्मकता अग्निलीक में एक नये आयाम के रूप में दिखाई पड़ती है।

7 - सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में मन हरण, सखी, त्रिलोकी, मत्तसमक, ताटंक, रोला, सवैया, धनाक्षरी,चौपदे, सोरठा, छंदवध्य लय युक्त रचनाएं मुक्त छंद प्रयुक्त है। मुक्त छंद की दृष्टि से सीता निर्वासन प्रवाद पर्व, और अग्निलीक, रचनाएं महत्वपूर्ण है। जबकि अरूण रामायण में लय को प्रमुखता दी गई है।

8 - भारतीय साहित्य शास्त्र में वर्णित काव्य प्रतिमानों के अतिरिक्त पाश्चात्य साहित्य से आयातित विम्ब विधान की दृष्टि से आलोच्य काव्यों की समीक्षा की गई है कहा ये गया है कि कवि अमूर्त के चाक्षुसी प्रत्यक्षी करण हेतु विम्बों का प्रयोग करता है। इन विम्बों में ऐन्द्रिय एवं मानस बिम्ब मुख्य होते है।

9 - ऐन्द्रिय बिम्बों में वस्तुओं के चाक्षुष, सहज, अलंकृत, रंग एवं गत्यात्मक बिम्बों का प्रयोग हुआ है। साथ

ही गन्ध, स्पर्श, ध्वनि, आस्वाद, विम्ब कम संख्या में मिलते है। मानस विम्बों में भाव एवं रस सम्बन्धी संश्लिष्ट एवं विचार सम्बन्धी विम्बों का यत्र-तत्र प्रयोग हुआ है।

10 - शिल्प की दृष्टि से काव्यों की समीक्षा करते हुये ये देखा गया है कि प्रिय प्रवास, अरूण रामायण, और अग्निलीक की भाषा प्रसाद मई सहज ह्रद संवेद है। जबकि प्रवाद पर्व में संस्कृतनिष्ठ एवं नये शब्द का विधान अधिक है। भाषा प्रवाह की सामर्थ से वैदेही वनवास, जानकी जीवन, नाट्य विम्बों की दृष्टि से अग्निलीक तथा आधुनिक भाव बोध एवं नूतन भाषिक प्रतिमानों की दृष्टि से अरूण रामायण व अग्निलीक सारभौमिक रचनाएं है।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से आलोच्य काव्यों का महत्व :-

भारतीय दर्शन में कवि को स्वयं भू प्रजा पति और सृष्टि कर्ता कहा जाता है बात यह है कि जिस प्रकार सृष्टि रचयिता सृष्टि का निर्माण कर उसके क्रिया कलापों के नियमन हेतु कुछ विधि निषेधों की व्यवस्था कर्ता है सामाजिक क्रिया कलापों को नियत्रित सुसंयमित रूप से चलाने के लिये बने विधि निषेध प्रभावी होते है। उसी प्रकार कवि निर्मित साहित्य में बने समाज भी विध निषेधों से परिचालित होता है। इस समाज को समझाने के लिये सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवधारणाओं को ह्रदयंगम करना पड़ता है। प्रत्येक समाज में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, अध्यात्मिक, रहन सहन, रूढ़िया, मान्यताएं, अन्धविश्वास उस समाज की प्रगतिशीलता के मापने के मापदण्ड होते है। इस अध्ययन को ही हम काव्य का सांस्कृतिक अध्ययन कहते है। सभ्यता हमारे वाह जीवन से सम्बन्धित है तो संस्कृति आन्तरिक विचारों, गुणों, व्यवहारों, मान्यताओं, आदि के संस्कृत प्रतीक है। सीता निर्वासन में राम का सामाजिक परिवेश पति-पत्नी भाई के सम्बन्ध राजनीतिक परिवेश के रूप में राजा प्रजा सम्बन्ध तथा धार्मिक य अध्यात्मिक दृष्टि से मान्यताएं सदाचार आदि का उल्लेख मिलता है। इन काव्यों का सांस्कृतिक अध्ययन करते हुये निम्न तथ्य उल्लिखित किये गये है।

1 - सीता निर्वासन सम्बन्धी काव्यों में दशरथ परिवार में से उसकी पत्नी कौशिल्या और उसके चारो पुत्र तथा पुत्र तथा पुत्र वधू के रूप में सीता का उल्लेख है। राम के अपने वैयक्तिक परिवार में राम सीता और लवकुश का वर्णन है। लोकापवाद के कारण राम विवाहिता और परिक्षिता सीता के परित्याग को विवश होते है। कारण चाहे लोक अपवाद रहा हो चाहे गुप्तचरो की सूचनायें सीता का दोहद रहा हो।

2 - यह परिवारिक मर्यादा पति पत्नी देवर भाभी मां पुत्र आदि के रूपों में वर्णित है जिसमें राम परिवार का मुखिया है उसकी आज्ञा का पालन लक्ष्मण करते है। यद्यपि भरत, शत्रुघन, लक्ष्मण, राम के इस कठोर दण्ड का विरोध करते है। फिर भी पारिवारिक मर्यादा स्थिर रहती है। राम के आदेश के कारण जहां सीता अनिश्चित काल के लिये वन जाती है वही माता कौशिल्या की कसक मुखरित ही हो पाती है। इन सामाजिक सम्बन्धों की उदात्तता प्रायः सभी काव्यों में मिलती है।

3 - पति-पत्नी के सम्बन्धों के रूप में राम और सीता के सम्बन्ध व्यंजित है। सीता राम की सहधर्मिणी है, सहचरी है, पूर्व काल में भी वह राम के साथ जंगल गई थी और वह अपने पतिवृत धर्म की पूर्ण प्रतिष्ठा करती हुई धरती के गर्भ में समा जाती है।

4 - माता पुत्रों के सम्बन्धों में राम और कौशिल्या के सम्बन्ध इन काव्यों में कम दिखाया गया है जबकि लवकुश जन्म के समय सीता के मातृत्व वात्सल्य भावनाओं का मार्मिक चित्रण इन काव्यों में हुआ है।

राजनीतिक अवधारणा :-

भारत वर्ष का प्रशासनिक ढाचा राजतंत्र प्रधान है राजा का पुत्र युवराज बनेगा और वही राजपद को प्राप्त करता है सीता निर्वासन की कथा राम के राज्याभिषेक से ही प्रारम्भ होती है इसमें जो राजनीतिक व्यवस्था वर्णित है। उसे संक्षेप में इस प्रकार कहा गया है।

1 - राम के राज्य संचालन हेतु एक मंत्रि परिषद है जिसमें वशिष्ट सहित धर्माधिकारी नगर के आमात्यगण, श्रेष्ठ वर्ग, मंत्री परिषद के सदस्य है। इनके सहयोग से ही राजा अपने कर्तव्य का सुचारू रूप से पालन करता है। रजक प्रशंग य लोकापवाद की चर्चा राम के पारिवारिक घेरे में होती तो अवश्य है किन्तु प्रजा मत को सर्व सम्मति य लोक मत मानकर राम भाइयों और मंत्रियों से परामर्श कर सीता निर्वासन का कठोर आदेश करते है। इन काव्यों में प्रजा और राजा के आदर्श रूपों की व्याख्या हुई है। व्यक्तिगत रूप से सीता को निर्दोष मानते हुये भी राम ने लोक रंजन एवं लोक मत की मान्यता दी।

2 - राम के प्रजा रंजन और अपने राज्य विस्तार की चर्चा अश्वमेघ प्रकरण पर हुई है। जिसमें राम की चतुरंगिणी सेना सैनिको का हर्षोन्माद राम की विजगीस भावना और सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधना यत्र-तत्र इन काव्यों में वर्णित है।

3 - यद्यपि राज्यादर्श का यह बहुत अच्छा उदाहरण नही है कि किसी एक अनाम व्यक्ति के कहने से सीता को दण्ड दे दिया गया। सीता का पक्ष सुना ही नही गया। राजा की यह न्याय व्यवस्था पर एक प्रश्न वाचक चिन्ह खडा किया जा सकता था। अग्निलीक को छोड़कर अन्य काव्यों में इसको उपेक्षित किया गया है। इस दृष्टि से राम को जहां महिमा मंडित प्रजा अनुरंजक कर्तव्य प्रिय शासक, प्रजा प्रिय नरेश की उपाधि से विभूषित एवं अलंकृत किया गया है।

4 - इन काव्यों में राजा प्रजा के सम्बन्धों की आदर्श व्याख्या राजतंत्र को ही जनतंत्र में परिणत करने का प्रयास राजा की अपनी कुछ भी भावनाएं नही होती। इन राजनैतिक अवधारणाओं का वर्णन इन काव्यों में हुआ है। इस दृष्टि से वैदेही वनवास प्रवाद पर्व प्रिया या प्रजा अग्निलीक अरूण रामायण जानकी जीवन प्रमुख रचनाएं है।

5 - इन काव्यों में उच्च वर्ग में राजा उसके सामन्त मंत्रिपरिषद के सदस्य, मध्य वर्ग में सेना पति और निम्नवर्गो में रजक सहित सामान्य जनता दास दासियां आते है।

6 - इन काव्यों में पुरोहित, पंण्डित, कुल गुरू, वाल्मीकि आश्रम के स्त्री पुरूष धार्मिक वातावरण से सम्मिलित है सदाचार, शिक्षा, अस्त्र-शस्त्र संचालन की प्रवीणता, गायन, वादन, प्रवचन भाषण आदि की चर्चा यत्र-तत्र इन काव्यों में हुई है।

7 - आर्थिक दृष्टि से समाज के रहन सहन का सात्विक और राजसी जीवन के परिवेश के लिये आश्रम और राज परिवार का उल्लेख इन रचनाओं में हुआ है।

9- संस्कारों के रूप में पुत्र जन्म के समय नामकरण तथा काव्य रूढ़ि के रूप में सतीत्व परीक्षा का प्राविधान नैतिक और धार्मिक मान्यताये वर्णित है अपने सतीत्व की पुष्टि हेतु सौगन्ध पूर्वक सीता द्वारा पृथ्वी से आश्रय मांगना, लोक मान्यता का ही प्रतिरूप है।

10- इन काव्यों में नारी के पारम्परिक रूप के साथ-साथ उसकी अस्मिता बोध, नारी स्वतंत्र की दिशाये और कर्तव्य बोध की सीमाओं का वर्णन इन काव्यों में यत्र-तत्र हुआ है।

सारांश यह है कि कवि अपनी भावना य कल्पना के अनुसार सीता निर्वासन सम्बन्धी इन काव्यों में कथा का विस्तार पारम्परिक किचिंत परिवर्तन परिवर्धित रूप में वर्णन कर अपनी मौलिक उद्‌भावी कल्पना का परिचय दिया है कथा सम्बन्धी प्रमुख गौड़ पात्रों का आन्तरिक बाह्य सौन्दर्य सद्‌गुण सदाचार सामाजिक मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि के रूप में किया है। विप्रलम्भ श्रंगार करूण रस के समन्वय से उदभूत घटनाएं ह्दयावर्जक रसपेशल और सह्रदयों के मनो को आप्लावित करने में पूर्ण समर्थ है भावानुरूप भाषा में शब्द चयन, नूतन, शब्द निर्माण सरल सामाजिक वाक्य प्रयोग स्वाभाविक अलंकारों का यथा अवसर प्रयोग इन काव्यों के महत्व को बढ़ा देता है। सभी कवियों ने रसानुकूल गुणों के प्रयोग में सिद्धता प्राप्त की है तात्पर्य यह है कि सरल और जटिल मनोभावों की व्यंजना के लिये सीता निर्वासन की कथा को युगानुरूप परिस्थित के अनुरूप घटनाओं का चयन कर त्रिआयामी पात्रों के व्यक्तित्व को प्रस्तुत कर युगानुरूप भाषा का प्रयोग इन काव्यों को प्रभाविष्णु बना देता है। इसमे युगानुरूप सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक मान्यताएं विश्वास आदि का प्रतिफलन सीमित रूप में हुआ है। क्योकि कथा संक्षिप्त होने के कारण इसकी घटनाएं स्वतंत्र रूप में लघु अथवा विस्तृत रामकथा के साथ सीमित रूप मे ही स्थान पा सकी है फिर भी ये कहा नही जा सकता है कि इन रचनाओं में युगीन प्रभाव की वितृप्ति नही हुई है वस्तुतः इन काव्यों के लेखक कुछ अपवादों को छोड़कर अपने-अपने काल के प्रसिद्व कवि रहे है। हरिऔध, राजाराम शुक्ल, राष्ट्रीय आत्मा, नरेश मेहता, भारत भूषण अग्रवाल, रामावतार पोद्दार, आदि कवि अपने अपने युग के सर्वमान्य य बहुमान्य कवि रहे है इस कारण इनके ये काव्य अपने युग के प्रतिनिधि काव्य माने जाते रहे है।

ग्रन्थ-सूची

(क) आलोच्य काव्य ग्रन्थ

1-	अग्निलीक-	भारत भूषण अग्रवाल-	राजकमल प्रकाशन प्र.लि. 8, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली 110002 प्रथम संस्करण-1976
2-	अग्निपरीक्षा-	आचार्य तुलसी-	आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली जालंधर जयपुर, मेरठ, चंडीगढ़ - 1961
3-	अरुण रामायण-	पोद्दार रामऔतार अरुण-	कविनिवास समस्तीपुर, (बिहार) रामनवमी बुधवार, 11अप्रैल 1973
4-	जानकी जीवन-	राजाराम शुक्ल 'राष्ट्रीय आत्मा'	1945
5-	प्रवाद पर्व-	डा. नरेश मेहता-	लोकभारती प्रकाशन 15 ए.महत्मागांधी मार्ग, इलाहाबाद- प्रकाशित 1977
6-	प्रिया या प्रजा-	पं. गोविन्ददास 'विनीत'	विनीत ग्रन्थमाला ताल बेहट, झांसी (यू.पी.) प्रथमावृत्ति 1000
7-	भूमिजा-	नागार्जुन-	राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा.लि.जी. 17 जगतपुरी दिल्ली 110051
8-	रामराज्य-	रामशर्मा-	साहित्य सलाहकार ई. 10/4 कृष्ण नगर नई दिल्ली 110051 प्रथम संस्करण 1983
9-	लवकुश युद्ध-	पं. जगदीश प्रसाद तिवारी-	जगदीश ग्रन्थमाला नारियल बाजार कानपुर (उ.प्र.)
10-	वैदेही वनवास-	अयोध्या सिंह उपाध्याय-	हिन्दी साहित्य कुटीर बनारस चतुर्थ संस्करण बसन्त पंचमी 2007 वि.
11-	सीता निर्वासन-	उमाशंकर नगायच-	सी.बी.एस. पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स 485, भोलानाथ नगर शाहदरा दिल्ली 110032 प्रथम संस्करण 1983

(ख) सहायक ग्रन्थ हिन्दी

12-	अशोक के फूल-	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
13-	कला और संस्कृति-	डा.वासदेव शरण अग्रवाल
14-	काव्य विम्ब-	डा. नरेश मेहता
15-	तुलसी पूर्व राम साहित्य-	डा. अमरपाल सिंह

16- तुलसी पुर्ववर्ती हिन्दी परम्परा का आलोचानत्मक अध्ययन(अप्रकाशित ग्रन्थ) डा. वेद प्रकाश द्विवेदी
17- प्राकृत प्रवेशिका- बनारसी दास जैन
18- प्राकृत भाषा- डा. प्रबोध वेचर दास पंडित
19- बृज का सांस्कृतिक इतिहास- डा. प्रभुदयाल मीतल,
20- भारतीय संस्कृति की रुपरेखा- बाबू गुलाब राय
21- भारतीय संस्कृति रुपरेखा और साहित्य- डा. मनमोहन लाल शर्मा
22- भारतीय संस्कृति का विकास- डा. मंगल देव शास्त्री
23- भारतीय संस्कृति- डा. देवराज
24- भारतीय संस्कृति का इतिहास- चतुरसेन शास्त्री
25- भारतीय संस्कृति का प्रवाह- इन्द्र विद्यावाचस्पति
26- भारतीय वांगमय में सीता का स्वरुप- डा. कृष्ण दत्त अवस्थी
27- भारतीय संस्कृति- डा. बल्देव प्रसाद मिश्रा
28- भारत की संस्कृति साधना- रामजी उपाध्याय
29- रामकथा- डा. कामिल बुलके-इंडियन प्रेस प्रा. लि. इलाहाबाद 1940
30- रामकथा- उत्पत्ति और विकास- डा.कामिल बुलके
31- रामायण कथा- आचार्य पंडित सीताराम चतुर्वेदी
32- रामकाव्य की युगचेतना- पी.डी. शर्मा
33- रामचन्द्रिका का विशिष्ठ अध्ययन- डा.गार्गी गुप्ता
34- वेदों में रामकथा- रामकुमार दास
35- वैदिक संस्कृति और सभ्यता- डा.मुशीराम शर्मा
36- वैदिक साहित्य संस्कृति और दर्शन- डा.विशम्भर दयाल अवशथी
37- सांस्कृतिक भारत- डा. भगवत शरण उपाध्याय
38- संस्कृतिक का दर्शनिक विवेचन- डा. देवराज
39- हिन्दुत्व- श्री रामदास गौड
40- हिन्दी साहित्य- कोश भाग -1 सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा
41- हिन्दी साहित्य- कोश डा. सरयू प्रसाद अग्रवाल

(ग) संस्कृत

42- अध्यात्म रामायण- गीता प्रेस गोरखपुर

43- आनन्द रामायण- भारत प्रेस वाराणसी
44- अष्टाध्यायी- भट्टोजि दिक्षित सूत्रवृति
45- अथर्ववेद
46- उत्तर रामचरित् - भवभूति
47- ऐतरेव बृहमण
48- औपतस्विनि शत्पथ बृहमण
49- क्रातुजातेन- जैमिन उपनिषद बृहमण
50- काव्य प्रकाश- मम्मट
51- काव्य दर्पण- रामदहिन मिश्र
52- काव्यालंकार- भामह
53- काव्यादर्श- दण्डी
54- काव्यदर्पण- डा. जगदीश प्रसाद कौशिक
55- कथा सरित्सागर- गुणाढ्य
56- श्रीमद्भगवत गीता- व्यास
57- छन्द प्रभाकर- साहित्याचार बाबू जगन्नाथ भानु-
58- तैत्तरीय बृहमण
59- तैत्तरीय आरण्यक
60- दशरुपक- धनन्जय
61- धर्मशास्त्र का इतिहास- प्रथम भाग- डा.पी.वी.काणे-ऋग्वेद
62- नाट्यशास्त्र- भरत
63- पद्म पुराण- आचार्यरविषेण- दुर्गाकुण्डमार्ग, वाराणसी-5-1944
64- यर्जुवेद का महीधर भाष्य
65- यर्जुवेद
66- रससिद्धान्तस्वरुप विश्लेषण- डा. अनन्द प्रकाश दीक्षित
67- रसगंगाधर- द्वितीय अध्याय- पं. जगन्नाथ
68- रामायण महर्षि वाल्मीकि- गीता प्रेस गोरखपुर
69- रघुवंश- कालीदास
70- वृहदारण्यक-
71- बृहम पुराण
72- ऋग्वेद का उवट भाष्य
73- ऋग्वेद का सायण भाष्य

74- ऋग्वेद

75- शतपथ बृहमण

76- शब्द कल्पद्रुम

77- शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त- भाग-1-डा. गोविन्द शरण त्रगुणायत

(घ) अंग्रेजी

78- **Rewise Edition** - 1962 (रिवाइज एडीसन)

79- **Oxford Dictionary** (आक्सफोर्ड डिक्सनरी)

80- इनसाइक्लोपीडिया आफ ह्यूमेन लिटरेचर- डा. नागेन्द्र

81- प्रीमीटिव कल्चर- ई.बी.टाइलर